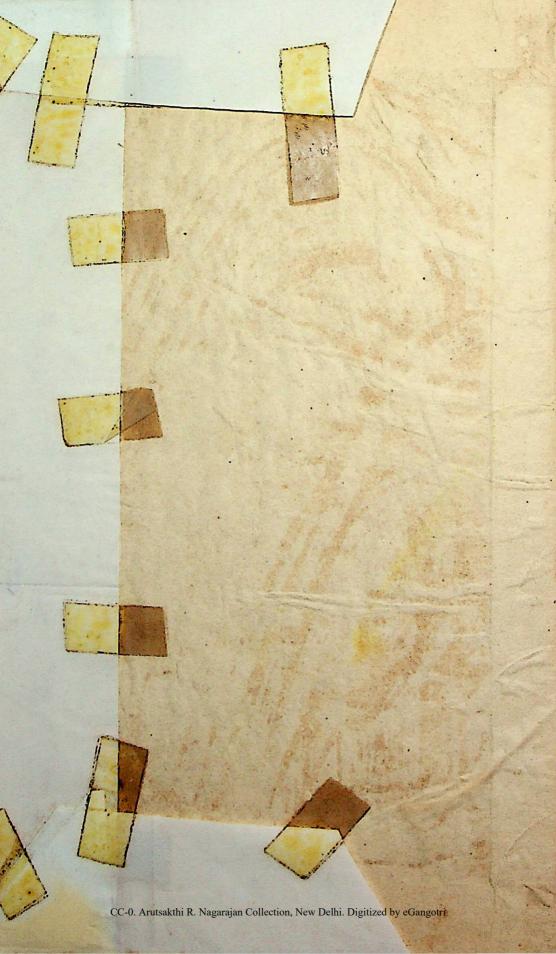


3114143

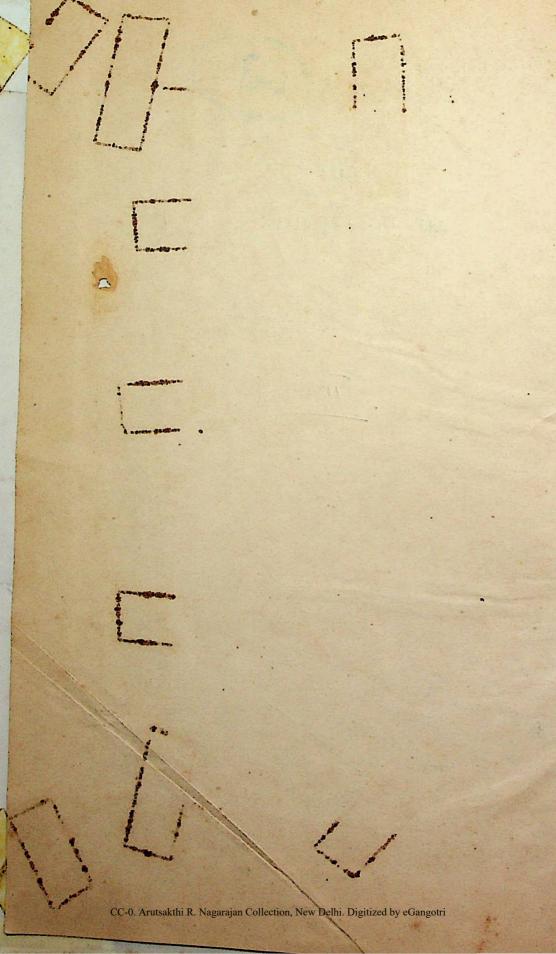
अकलाति सम्सान्



eft: श्री गुजु अयोनम: Joe si f Branzon. with the best compliments
for Soi y. Seether range

for Soi y. Seether range

for 5-11-1983 CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri



राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान सम्पादक-फतहर्सिंह, एम. ए., डी. लिट्. [निदेशक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान] जो घ पु र

ग्रन्थाङ्क ११०

म्राचार्यश्रीसरयूप्रसादद्विवेदप्रगीतस्

श्रागमरहस्यम्

(उत्तराईम्)

सम्पादक
पं श्रीगङ्गाधर द्विवेदी, साहित्याचार्य, व्याकरणतीर्थ, विद्यारत्न,
प्रोफेसर एवं ग्रध्यक्ष साहित्यविभाग, महाराजा संस्कृत कॉलेज,
जयपुर

प्रकाशक राजस्थान-राज्य-संस्थापित

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान) १९६९ ई०

प्रथमावृत्ति १०००

मूल्य १२.००

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

राजस्थानराज्य द्वारा प्रकाशित

सामान्यतः ग्रिखलभारतीय तथा विशेषतः राजस्थानदेशीय पुरातनकालीन संस्कृत, प्राकृत, ग्रपभ्रंश, राजस्थानी, हिन्दी ग्रादि भाषानिवद्ध विविधवाङ्मयप्रकाशिनी विशिष्टग्रन्थावली

> प्रधान-सम्पादक फतहसिंह, एम. ए., डी. लिट्.

> > ग्रन्थाङ्क ११०

ग्राचार्यश्रोसरयूप्रसादद्विवेदप्रग्गीतम्

ग्रागमरहस्यम्

(उत्तरार्द्धम्)

प्रकाशक

राजस्थान-राज्याज्ञानुसार

निदेशक राजस्थान प्राच्यविचा प्रतिष्ठान

जोघपुर (राजस्थान) १६६६ ई०

वि० सं० २०२६

भारतराब्द्रीयशकाब्द १८९१

मुद्रक: -श्री राषेश्याम शर्मी, श्री शंकर आटं प्रिण्टसं, जयपुर।

प्रधान-सम्पाद्कीय

याचार्य श्रीसरयूप्रसाद द्विवेदी द्वारा रचित 'श्रागमरहस्य' के उत्तरार्द्ध को पाठकों के करकमलों में रखते हुये प्रतिष्ठान महान् हर्ष का अनुभव कर रहा है। प्रन्थ का पूर्वार्द्ध विद्वान् सम्पादक की भूमिका-सिहत प्रकाशित किया जा चुका है। पूर्वार्द्ध की भाँति ही उत्तरार्द्ध भी एक महान् संग्रह-ग्रन्थ है जिसमें प्रसिद्ध आगम-परम्परा के विविध सम्प्रदायों के ग्रन्थों का साररूप एकत्र किया गया है। इस ग्रन्थ में विशेष रूप से गौड, केरल तथा कश्मीर प्रदेश की परम्परा का निरूपण प्राप्त है ग्रीर इन तीनों सम्प्रदायों के ग्रन्तर्गत पुरश्चर्या-विधियों ग्रीर मेधासाम्राज्य तथा पूर्णामिषेक-नामक दीक्षाविधियों ग्रादि का सविस्तार वर्णन किया गया है। इसी प्रसङ्ग में ग्रागम की साधना-पद्धति के ग्रन्तर्गत बाह्मी ग्रादि पञ्चमुद्राग्नों एवं उनके द्वादश मेदों के समान ही कमंदूती तथा ज्ञानदूती के यजन ग्रीर पूजन का विधान भी वड़ा मनोरञ्जक है।

यह कहने की ग्रावश्यकता नहीं कि ग्रागम-परम्परा का केन्द्र-विन्दु महाशक्ति है। यह क्रमशः कादि ग्रीर हादि द्विविध ग्राम्नाय ग्रथंसङ्गित के द्वारा व्यक्त की जाती है। इसमें से कादि काली है तो हादि त्रिपुरसुन्दरी। ग्रथवा कादि ब्रह्मरूप है तो हादि शिवरूप। शिक्तसङ्गमतंत्र के ग्रनुसार चिच्छक्ति कादिरूप है ग्रीर चिद्जानगोचराशक्ति को हादि की संज्ञा दी गई है तथा चिदानन्दस्वरूपा नामक शिवशक्त्यात्मक तत्त्व को महः कहा गया है। इसी प्रकार ग्रागम-ग्राम्नाय के मनु, कामराज, सुन्दरी, षोडशी, परा, यम संयम ग्रादि ग्रनेक पारिभाषिक शब्दों के साथ काली, तारा, रक्तकाली, ग्रवना, महिषमिदनी, त्रिपुरा, त्रिपुटा, दुर्गिवद्या तथा प्रत्यङ्गिरा-समेत कालीकुल का समास्थान किया गया है तथा सुन्दरी, भैरवी, बाला, बगला, कमला, धूमावती, मातङ्गीविद्या, स्वप्नावती, महाकाली तथा मधुमती के नाम सेश्रीकुल का वर्णन किया गया है। इसी प्रकार शुद्धविद्या, बाला, द्वादशाद्धी तथा मातङ्गिनी ग्रादि ग्रनेक देवियों के उल्लेख के साथ व्याहृतियों का

ब्रह्मविद्या एवं गायत्री के साथ होने वाले सम्बन्धों की चर्चा करते हुये, गागापत्य, कार्तिकेय, मृत्युञ्जय, नीलकण्ठ, जातवेद ग्रादि देवों का वर्णन किया गया है।

उक्त ग्राध्यात्मिक ग्रीर धार्मिक चर्चा के साथ-साथ कुछ ऐतिहासिक एवं भौगोलिक विषयों का भी उल्लेख हो गया है। इसी प्रसङ्ग में विशेष रूप से शक्ति-सङ्गमतंत्र ग्रावि प्राचीन ग्रन्थों के ५६ देश ५ प्रस्थ यहाँ पर विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, क्योंकि इनसे पता चलता है कि किसी समय में हमारा देश इन्द्रप्रस्थ, वरुण्पप्रस्थ, यमप्रस्थ ग्रावि पाँच प्रस्थों में बँटा हुग्रा था ग्रीर उनके ग्रन्तर्गत जो ५६ देश गिनाये जाते थे उनमें मक्केश्वर (ग्ररब का मक्का) पर्यन्त विस्तृत सैन्धव देश भी ग्राता था।

ग्रन्त में, मैं विद्वान् सम्पादक ग्रीर श्री शङ्कर ग्रार्ट प्रिन्टर्स, जयपुर के व्यवस्थापक को धन्यवाद ग्रीपत करता हूँ जिन्होंने कठिन परिश्रम करके इस कार्य को सम्पादित किया है।

रामनवमी, चैत्र शुक्ला ९, संवत् २०२६ विक जोधपुर

फतहसिंह

O DELLE

ग्रथ ग्रागमरहस्योत्तरार्द्धस्य

स्थूलविषयसूची

	क्रमाङ्काः	विषयाः		पृ० स॰
	4		प्रथमः पटलः	
	₹.	मंगलाचरणम्	1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1	2
	₹.	स्थूलग्रन्थसूची	· The management	8-6
	₹.	कादिहादि-व्यवस्था		६- ७
	. ×¥.	श्रीकुलकालीकुलौ		0
	٧.	षडाम्नायाः		3-0
	Ę.	पूर्वाम्नाय:	The second second	
	٧.	दक्षिणाम्नायदेवाः		
	6.	पश्चिमाम्नायदेवाः		,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,
	٩.	उत्तराम्नायदेवाः	A Company of the Comp	8
	20.	ऊर्घ्वाम्नायदेवाः		
0	22.	पातालाम्नायदेवाः		73
	१२.	अनुत्तराम्नायदेवाः		4-60
0	₹₹.	आम्नायरूपं शाखा गीत्र	ञ्च	20-22
	28.	देशभेदाः		१ २-१६
	१५.	पंचप्रस्थादिदेशाः		25-86
			Calle Tonic	
			द्वितीयः पटलः	
	१६.	संप्रदायत्रयविवेकः:		१८-२१
	१७.	कलशलक्षणम्		78
	86.	पात्रमानम्		77
	१९.	पात्रविसर्जनकृमः		21
	₹0.	पात्राधिकारिणः	10012 (1000)	२३
	२१.'	स्वप्नमन्त्रव्यवस्था	The second of the second	२४
	84.	होमे स्वाहादिव्यवस्था	and the second second second second	74
	२३.	केरले पात्रासादनम्		74-70
	28.	कारमीरे "		70
	२५.	गोडस्य "		27

ऋमा ङ्काः	विषया:		पृ० सं०
२६.	प्राच्यादि व्यवस्था		२७
२७.	संप्रदायभेदेन प्राच्यादिः		२८
₹८.	संप्रदायभेदेन बलिः	And the same	"
78.	संप्रदायत्रये विसर्जनम्		25-28
		ततीयः पटलः	
		तृतीयः पटलः	
₹0.	काम्यपरत्वेन देवा:	Maria San Carallana	79-30
₹₹.	आचारमाहात्म्य म्		३०
~ ₹₹.	कोलाचारमाहात्म्यम्		38
३३.	कौलमार्गाधिकारिएाः		. ३१-३२
₹४.	अनिधकारिणश्च		३२
₹4.	विद्याभेदा युगक्रमेण		33
₹€.	विद्यानामाचाराः		33-38
• ३७.	दीक्षामाहात्म्यम्	The second second	३६-३७
₹८.	गुरोरप्राप्तौ दीक्षाविधिः	articles	३७
₹९.	दीक्षासमयास्तत्ऋमश्च	de la companya de la	₹८-४०
. 80.	दीक्षायां मंत्रक्रमः	The first state	80−8 ₹
. 88"	सर्वसाघारणमन्त्रांगत्रमः	ne Challet.	88-84
AS.	विद्यानां शिवाः	A STATE OF THE PARTY OF THE PAR	
¥₹.	विद्यानां वटुकाः	Assets inne Cont.	80
88.	विद्यानां गरोशाः		
84.	विद्यानां यक्षिण्यः	Marian	
84.	विद्यानां मण्डलानि		36
DOINE.			"
89.	Alfra 2	चतुर्थः पटलः	
86.	कालिकाक्रमदीक्षा		89
. 89.	त्रिशक्तिकमदीक्षा		89-40
40.	मेघादीक्षाक्रमः	THE PARTY OF THE PARTY.	
* 48.	साम्राज्यमेघादीक्षाक्रमः	A STATE OF THE STA	40
97.	पूर्णामिषेकदीक्षाऋमः	A THE PARTY OF THE PERSON	५०-५३
49.	विभिषेक्तृगु रुशिष्यलक्षण	T .	43-44
48.	त्राच्छव्यलक्षणम	The state of the state of the	44-44
99.	उरोयों ग्यायोग्यपरीक्षा		
1.	यथायोग्यगुरुत्यागे दोषः		74-44
			4 3.

ऋमाङ्काः	विषया:	पृ॰ सं॰
903	पंचमः पटलः	
॰ ५६.	गुरुसमीपे सहवासादि	८३-६३
40.	अमिषेकविद्यानम्	६८-७६
. 46.	अभिषेकमन्त्राः (क)	\$3-30
343	षष्ठः पटलः	
, 49.	अभिषेकमन्त्राः (ख)	८३-१०२
ξo	समयाचारोपदेशः	१०२-१०३
201-20	सप्तमः पटलः	
Ę ₹.	पूर्णिमिषिक्तप्रशंसा	. 603
, ६२.	अभिषिक्तानां मपंचकघारणम् आचार्यत्वं च	१०४-१०६
ु ६३.	शक्त्युच्छिष्टादौ नियमाः	800
. ६४.	बीरोच्छिष्टे नियमाः	n
, ६५.	म्पंचके व्यवस्था	१०८
, ६६.	कोलघर्मेव्यवस्था	१०९-११०
६७.	समयाचारः	१११–११२
६८.	कुलवृक्षाः	११३
. ६९.	पुनः समयाचाराः	888-888
. 00.	शमाबष्टकम्	११६-१२२
179	ग्रष्टमः पटलः	
. 08.	अन्तर्यजनम्	१२२-१२७
े २.	श्रीचकपूजाक्रमः	१२७-१२९
· ७३.	मकाराणां शोधनम्	856-830
. vy.	गंघोत्तमोत्पत्तिः	१३०-१३२
७५.	लताबुद्धिमन्त्राः	१३३
७ ६.	स्थापने पात्रसंख्याच्यवस्था	[\$34-\$\$0
99.	संप्रदायभेदेन पात्रव्यवस्था	L n
	नचमः पटलः	
. 00.	त्तर्पणव्यवस्थाः .	१६१-१६४
७९.	वटुकादिबलिः ।	१६४-१६७
€0.	राजराजेश्वरबलिः	१६८
૮૧.	मातंगीव्रलि:	१६९
હર.	उच्छिष्टमैरवबलिः	१६९-१७०
· ८३.	देवीपवर्गि .	\$68

			<u></u>
क्रमाङ्काः	विषया:	units .	पृ० सं०
C8. '	विशेषंदिवसाः	THE WAY	१७२
64.	रात्रीणां निर्णयः		१७२-१७३
८६.	दशहरायां दशयोगाः		१७३-१७५
69.	ऊर्घ्वाम्नायपर्वाणि		१७५-१७६
66.	युगाचा मन्वाचाश्च		१७६
69.	कुलतिथिवारक्षाणि	W. Commercial	१७६-१७७
90.	पूजाया नानामेदाः		१७७-१७९
98.	अष्टाष्टकपूजाकमः		808-868
		दशमः पटलः	T VA
99.	कुलपूजामाहात्म् य म्	Service provide the first	१८५
\$7.	चक्र श्वरयोग्यता	ALCOHOLD STATE	१८६
98.	वीरमन्त्राणां व्यवस्था	A STATE OF THE RESERVE OF THE RESERV	228-826
94	वीरलक्षणम्		228
94.	त्याज्यकीरलक्षग्रम्		
9. 0.	पासण्डिलक्षणम्		71
86	त्याज्यशक्तयः		868
\$5.	निमन्त्रितवीरकार्याणः		:890
100.	पाकभेदाः	The second secon	
१०१.	आम्नायकर्माः		190-191
207.	चक्रे वीरक्षक्तिस्थितिः		799
१०३.	आमंत्रणविधिः		१९२-१९३
\$ 98.	तत्त्वशोधनम्		१९३
804.	पात्राणि तन्मंत्रारच		१९५-१९९
१०६	द्रव्यदाने परिमाणम्		888-508
200.	प्रतिपात्रे विशेषचर्वणा		२०५
१०८.	कुलसन्ध्या		२०६–२०७
१०९	कुलगन्धा ब्टकम्		₹06-5°
280.	श्रीचक्रोदकमाहात्म्यम्		२१०-२१२
		Usigate man	२१३
288.	उल्लासभेदाः	एकादशः पटलः	20
११२.	- उल्लासलक्षणम्	The state of the state of	२१४२१५
११३.	पात्रमेलनव्यवस्था	and the second second second second	. 484
888.	बाम्नायमेलनकमः		. २१६
		The Control of the Co	२१७

११५. वीरावस्थाकमद्येवटा च ११६. पंचकक्रमेदाः ११८. शिक्तिमेदाः ११८. शिक्तिमेदाः ११८. विष्णुव्यवस्था ११९. कुलाचारक्रमे व्यवस्था ११९. कुलाचारक्रमे व्यवस्था १२९-२२१ ११०. चक्रपूजाव्यवस्था च ११९. शिक्तिपुजनम् १६१. शिक्तपुजनम् १२१. शिक्तपुजनेद्रिकारी १२३. शिक्तपुजनेद्रिकारी १२४. कौळतीर्थान १२५. वाक्तिपुजनेद्रिकारा १२५. विक्यवकारिवारा १२५. विक्यवकारिवारा १२५. विव्यवकारिवारा १२५. वीवचक्र तस्कलं च १२५. वीवचक्र तस्कलं च १२५. वाक्तिपुजनेद्रिकारा १३५. कमंद्रतीयागः १३५. कमंद्रतीयागः १३५. कमंद्रतीयागः १३५. वाक्तान्द्रिकारा १३५. वाक्तिपुजिक्तिविद्रिकारा १३५. वाक्तिवार्वादिः १३५. वाक्तिवार्विकारा १३५. वाक्तिवार्विकारा १३५. वाक्तिवार्विकारा १३५. वाक्तिवार्विकारा १३५. काम्ये आसनानि १३५. मुद्रावासनानि १४६. मुद्रावासनानि १४६. मुद्रावासनानि १४६. मुद्रावासनानि। १४६. अञ्चकम्बल्योवनम् १४६. अञ्चकम्बल्योवनम् १३६. अञ्चकम्बल्योवनम् १३६. अञ्चकम्बल्योवनम् १३६. अञ्चलम्बल्योवनम्	ऋमाङ्का:	विषया:	The second	पृ० सं०
११६. पंचचक्रमेदाः २२०- ११७. वर्षिक्रमेदाः २२१-२२५ ११८. वर्षणुष्पलक्षणम् २२५ ११९. कुलाचारक्रमे व्यवस्था २२६-२२७ १२०. चक्रपूजाव्यवस्था च २२८-२३१ हादद्याः पटलः १२१. वर्षिक्रपूजनम् २३१ १२२. वर्षिक्रपूजनम् २३१ १२२. वर्षिक्रपूजनम् २३१-२३५ १२२. वर्षिक्रपूजनेद्यविद्याः २३६-२३५ १२२. वर्षिक्रपूजनेद्यविद्याः २३६-२३५ १२५. वर्ष्णुवजेद्यविद्याः २३९-२३९ १२५. वर्ष्णुवजेद्यविद्याः २३९-२४२ १२५. वर्षिक्रवेद्यः तन्नामानि च २३९-२४२ १२०. वर्षिक्रवेद्यः तन्नामानि च २४८-१४८ १३०. वर्षिक्रवेद्यः तन्नाविद्याः २४९ १३०. वर्षिक्रवेद्यः वर्ष्ण्यांपरागादि २४९ १३२. मपंचक्रप्रतिनिधिः २५८-२६९ १३२. कर्मद्रतीयागः २५९-२६९ १३५. वर्षस्याचनम् २७९-२८९ १३५. वर्षस्याचनम् २०९-२८९ १३५. वर्षस्याचनम् २०९-२८९ १३५. वर्षस्याचनिक्याः १९९-२८९ १३५. वर्षस्याचनिक्याः १९९-२९९ १३५. वर्षस्याचनिविद्यः २८९-२९९ १३५. क्राम्ये व्यासनानि २९९२-२९९ १३५. मृद्याच्यसनिविद्यः २९१-२९३ १४२. मृद्याच्यसनिविद्यः २९१-२९३ १४२. मृद्याच्यसनिविद्यः २९१-२९३ १४२. मृद्याच्यसनानि २९९२-२९३ १४२. मृद्याच्यसनानि २९९२-२९६		वीरावस्थाकमश्चेष्टा च		786-788
११७. विक्रमेदाः २२१-२२५ ११८. वळपुष्पलक्षणम् २२५ ११९. कुलाचारक्रमे व्यवस्था २२६-२२७ १२०. चक्रपूजाव्यवस्था च २२८-२३१ हादद्याः पटलः १२१. विक्रपुजनम् २३१ १२२. विक्रपुजनेदिषकारी २३६-२३५ १२३. विक्रपुजनेदिषकारी २३६-२३५ १२४. कौळतीर्थानि २३७-२३९ १२५. विक्रपेटलक्षणम् २३९-२४९ विक्रपेटलक्षणम् २३९-२४९ १२०. विक्रपेटलक्षणम् २३९-२४९ १२०. जीवचकं तरफलं च २४८ १३०. जीवचकं तरफलं च २४८ १३०. जीवचकं तरफलं च २४८ १३०. विव्यवक्रितिधाः २४९ १३२. मपंचकप्रतिनिधः २५८-२६९ १३३. कमंदूतीयागः २६९-२७४ चतुर्वशः पटलः १३५. वीरसाधनम् २७५-२६९ १३५. वातासनानि २०९-२८५ १३५. वातासनानि २०९-२८५ १३५. कान्ये वासनानि २०९-२८५ १३५. कान्ये वासनानि २०९-२८५ १३९. कान्ये वासनानि २९१-२९१ १३९. कान्ये वासनानि १९१-२९१ १३९. कान्ये वासनानि १९१-२९१ १३९. कान्ये वासनानि १९१-२९१ १३९. कान्ये वासनानि १९१-२९१ १३९. मुढावासनानि १९१-२९३ १४२. मुढावासनानि १९१-२९३	११६.	पंचचक्रभेदाः		२२०
११८. वजपुष्पस्थाम् ११९. कुलाचारक्रमे व्यवस्था १२०. चक्रपूजाव्यवस्था च हादद्याः पटलः हादद्याः पटलः १२१. विक्रपुजनम् १२२. विक्रपुजनेर्याधकारी १२३. विक्रपुजनेर्राधकारी १२४. कौळतीर्थानि १२५. वतुष्पीठलक्षणम् १२५. वतुष्पीठलक्षणम् १२६. विक्रपुजनेर्राधकारी १२५. विक्रपुजनेर्राधकारी १२५. वतुष्पीठलक्षणम् १२६. विक्रपुजनेर्राधकारा १२८. विव्यवक्रादिलक्षणम् १२९. जीवचकं तत्फलं च १३०. जीवचकं तत्फलं च १३०. जीवचकं तत्फलं च १३०. जीवचकं त्रिण्यावादि १३१. साधनानि नानाविधानि १३१. मपंचकप्रतिनिधिः १३२. मपंचकप्रतिनिधिः १३३. कमंद्रतीयागः १३५. वीरसाधनम् १३६. नानासनानि १३५. वातासनानि १३५. वातासनानि १३५. वातासनानि १३५. वातासनानि १३५. काम्ये वासनानि १३९. काम्ये वासनानि १३९. क्षास्तिविधः १३९. काम्ये वासनानि १३९. क्षास्तानिष्पाः १३९. काम्ये वासनानि १४०. मुद्रावासनानि १४०. मुद्रावासनानि १४०. मुद्रावासनानि १४०. मुद्रावासनानि १४०. मुद्रावासनानि		शक्तिभेदाः	A STATE OF THE STA	२२१-२२५
हादशः पटलः १२१. , शक्तिपूजनम् १२२. , शक्तिपूजनम् १२२. , शक्तिपूजनम् १२२. , शक्तिपूजनेऽधिकारी १२३. , शक्तिपूजनेऽधिकारी १२४. कौळतीर्थानि १२५. चतुष्वीठलक्षणम् १२५. चतुष्वीठलक्षणम् १२६. शक्तिवेद्य तन्नामानि च १२५-२४२ १२७. शक्तिदेहे ब्रह्माण्डघटना १२८. दिव्यचन्नादिलक्षणम् १२९. जीवचन्ने पूर्योपरागादि १३१. साधनानि नानाविधानि १३२. मपंचकप्रतिनिधिः १३२. मपंचकप्रतिनिधिः १३३. कमंदूतीयागः १३३. कमंदूतीयागः १३५. जानदूतीयागः १३५. वीरसाधनम् १३६. नानासनानि १३५. वीरसाधनम् १३६. नानासनानि १३५. व्याध्राजिनसुद्धिः १३५. आसनानां कालनियमाः १३९. कम्चे आसनानि १४०. मुद्धासानानि १४०. मुद्धासानानि १४०. मुद्धासानानि १४०. मुद्धासानानि १४०. मुद्धासानानि		वज्रपुष्पलक्षणम्		२२५
हादशः पटलः श्रेशः , बाक्तिपूजनम् १२१ः , बाक्तिपूजनम् १२२ः , बाक्तिपूजनेम् १२२ः , बाक्तिपूजनेशिकारी १२३ः , बाक्तिपूजनेशिकारी १२३ः , बाक्तिपूजनेशिकारी १२४ः , कौळतीर्थानि १२५ः , बाक्तिवेद्या तक्षामानि च १२५ः , बाक्तिवेद्या तक्षामानि च १२६ः , बाक्तिवेद्या तक्षामानि च १२६ः , बाक्तिवेद्या तक्षामानि च १२९ः , बाक्तिवेद्या वक्षामानि च १२९ः , बाक्तिवेद्या तक्षामानि च १२९ः , बाक्तिवेद्या वक्षाप्य १२९ः , बीवचक्रं तत्फळं च १३०ः , बीवचक्रं सूर्योपरागादि १३२ः , साधनानि नानाविधानि १३२ः , साधनानि नानाविधानि १३२ः , साधनानि नानाविधानि १३३ः , कमंदूतीयागः , २५९-२६९ः अयोदशः पटलः १३३ः , कमंदूतीयागः , २५९-२६९ः चतुर्वशः पटलः १३५ः , बात्तावानि । २०९-२८५ः २०९-२८५ः । २०९-२८६ः । २८६-२८९ः । २८६-२८९ः । २९१ः , बासनानो कालनियमाः , १९०-२९१ः १३९ः , बासनानि । १९१ः , मुद्धासानानि । १९१ः , मुद्धासानानामधिकारियाः , १९६-२९६ः । १९४ः , मुद्धासानानामधिकारियाः , १९६-२९६ः । १९६ः , मुद्धासानानामधिकारियाः , १९६-२९६ः । १९६ः , मुद्धासानानामधिकारियाः , १९६ः । १९	११९.	कुलाचारकमे व्यवस्था	The state of the s	२२६-२२७
१२१. शक्तिश्वनम् १२२. शक्तिश्वनम् १२२. शक्तिश्वनम् १२३. शक्तिश्वनि २३१–२३५ १२३. शक्तिश्वनि २३६–२३६ १२४. कौळतीर्थानि २३५–२३६ १२५. चतुष्पीठलक्षणम् १२६. शक्तिवेष्टा तन्नामानि च २३९–२४२ १२७. शक्तिवेष्ट तन्नामानि च २३९–२४२ १२७. शिक्वक त्रिल्लं च २४८ १३०. जीववक सूर्योपरागादि २४९ १३०. जीववक सूर्योपरागादि २४९ १३२. साधनानि नानाविधानि २४९ १३२. मपंचकप्रतिनिधिः २५८ १३३. कर्मदूतीयागः २५९–२६९ १३३. कर्मदूतीयागः २६९–२७४ चतुर्वशः पटलः १३५. वीरसाधनम् १३६. नानासनानि २७९–२८५ १३८. बासनानां कार्लानयमाः १९९–२८९ १३८. बासनानां कार्लानयमाः १९९–२८९ १३८. बासनानां कार्लानयमाः १९९–२८९ १३८. मुद्धाद्यासनानि २९१ १४१. मुद्धाद्यासनानि २९१		चऋपूजाव्यवस्था च		२२८-२३१
१२२. शक्तिव्यजनेऽधिकारी १२३. शक्तिपूजनेऽधिकारी १२४. कौळतीर्थानि १२५. चतुष्पीठलक्षराम् १२६. शक्तिवेद्दा तन्नामानि च १२५. शक्तिवेद्दा तन्नामानि च १२५. शक्तिवेद्दे ब्रह्माण्डघटना १२८. दिव्यचकादिलक्षणम् १२९. जीवचक तत्फलं च १३०. जीवचक पूर्योपरागादि १३१. साधनानि नानाविधानि १३१. मपंचकप्रतिनिधिः १३३. कमंदूतीयागः १३३. कमंदूतीयागः १३५. जानदूतीयागः १३५. वीरसाधनम् १३६. नानासनानि १३५. वासनानां कालनियमाः १३५. वासनानां कालनियमाः १३५. आसनानां कालनियमाः १३५. काम्ये आसनानि १३५. काम्ये आसनानि १३५. मुद्राखासनानि १३५. मुद्राखासनानि १३५. मुद्राखासनानि १३६. मुद्राखासनानामधिकारिणः १३६. अनुद्रकम्बल्होधनम्	45-104		द्वादशः पटलः	
१२२. शक्तिलक्षणानि १२३. शक्तिपूजनेऽधिकारी १२३. शक्तिपूजनेऽधिकारी १२४. कौळतीर्थानि १२५. चतुष्पीठलक्षणम् १२५. शक्तिचेहा तन्नामानि च १२६. शक्तिचेह ब्रह्माण्डघटना १२८. दिव्यचकादिलक्षणम् १२९. जीवचक तत्फळं च १३०. जीवचक पूर्योपरागदि १३२. साधनानि नानाविधानि १३२. मपंचकप्रतिनिधिः १३३. कर्मदूतीयागः १३३. कर्मदूतीयागः १३४. जानदूतीयागः चतुर्वशः पटलः १३५. वीरसाधनम् १३६. नानासनानि १३६. नानासनानि १३६. वाह्माजिनशुद्धिः १३८. बाह्माजिनशुद्धिः १३८. बाह्माजिनशुद्धिः १३८. बाह्मानिनशुद्धिः १३८. वाह्माजिनशुद्धिः १३८. वाह्माजिनशुद्धिः १३८. वाह्माजिनशुद्धिः १३८. मुद्धाद्यासनानि १४१. मुद्धाद्यासनानि १४१. मुद्धाद्यासनानि १४१. मुद्धाद्यासनानि	१२१	शक्तिपूजनम्		२३१
१२३. शक्तियुजनेऽधिकारी १२४. कौळतीर्थानि १२५. चतुष्वीठलक्षरणम् १२६. शक्तिचेट् तन्नामानि च १२६. शक्तिचेट तन्नामानि च १२६. शक्तिचेट तन्नामानि च १२६. शक्तिचेट तन्नामानि च १२८. दिव्यचन्नादिलक्षणम् १२९. जीवचन्नं तत्फलं च १३०. जीवचन्नं पूर्योपरागादि १३१. साधनानि नानाविधानि १३२. मपंचकप्रतिनिधिः १३३. कमंदूतीयागः १३३. कमंदूतीयागः १३३. कमंदूतीयागः १३४. जानदूतीयागः १३५. वीरसाधनम् १३६. नानासनानि १३६. नानासनानि १३६. व्याझाजिनशुद्धिः १३८. आसनानां कालनियमाः १३९. कम्ये आसनानि १३९. कृद्धासानानि १४१. मृद्धाद्यासनानि १४१. मृद्धाद्यासनानि १४१. मृद्धाद्यासनानि १४१. मृद्धाद्यासनानि			的现在分词 医多种子 医多种 医多种	२३१-२३५
१२४. कौळतीर्थानि २३७-२३९ १२५. चतुष्पीठलक्षरणम् २३९ १२६. शक्तिचेष्टा तन्नामानि च २३९-२४२ १२७. शक्तिचेहे ब्रह्माण्डघटना २४७ १२८. दिव्यचकादिलक्षणम् २५९. जीवचक्रं तत्फलं च २४८ १३०. जीवचक्रं सूर्योपरागादि २४९ १३०. जीवचक्रं सूर्योपरागादि २४९ १३१. साधनानि नानाविधानि २४९ १३२. मपंचकप्रतिनिधिः २५८ श्रमे व्याचनिक्षानिः २५८ १३३. कमंदूतीयागः २५९-२६९ १३४. जानदूतीयागः २५९-२६९ १३५. वीरसाधनम् २७५-२०९ चतुदंशः पटलः १३५. वीरसाधनम् २७५-२८९ १३६. नानासनानि २०९-२८५ १३८. बासानानं कालनियमाः १९०-२९१ १३९. काम्ये बासनानि २९१ १३९. कुष्टाचासनानि २९१ १४९. मुद्वाचासनानि २९१ १४२. मुद्वाचासनानि २९१ १४२. मुद्वाचासनानामधिकारिगाः २९४-२९६		शक्तिपूजनेऽधिकारी		२३६
१२५. चतुष्पीठलक्षराम् १२६. शक्तिचेष्टा तन्नामानि च १२९. शक्तिचेहे ब्रह्माण्डघटना १२८. दिव्यचक्रादिलक्षणम् १२९. जीवचक्रे सूर्योपरागादि १३०. जीवचक्रे सूर्योपरागादि १३१. साधनानि नानाविधानि १३२. मपंचकप्रतिनिधिः १३३. कर्मदूतीयागः १३३. कर्मदूतीयागः १३४. जानदूतीयागः १३४. जानदूतीयागः १३५. वीरसाधनम् १३६. नानासनानि १३५. व्याघ्राजिनशुद्धिः १३८. असनानां कालनियमाः १३९. काम्ये आसनानि १४०. मृद्धाद्यासनानि १४१. मृद्धाद्यासनानि १४१. मृद्धाद्यासनानि १४१. मृद्धाद्यासनानि १४१. मृद्धाद्यासनानि १४१. मृद्धाद्यासनानि				730-738
१२६. शक्तिवेष्टा तन्नामानि च २३९-२४२ १२७. शक्तिवेहे ब्रह्माण्डघटना १२८. दिव्यचकादिलक्षणम् १२९. जीवचक सूर्योपरागादि १३१. जीवचक सूर्योपरागादि १३१. मपंचकप्रतिनिधिः २४९ १३३. कमंदूतीयागः १३३. कमंदूतीयागः १३४. जानदूतीयागः १३५. जीरसाधनम् १३५. जीरसाधनम् १३६. नानासनानि १३६. नानासनानि १३६. व्याद्याजिनशुद्धिः १३८. असनानां कालनियमाः १३९. कमंद्रे असनानि १३९. मुद्धाद्यासनानि १४०. मुद्धाद्यासनानि १४१. मुण्डासनविधिः १४२. मुद्धाद्यासनानामधिकारिणः १४३. अन्तुद्धकम्बलशोधनम्	AND THE RESERVE	चतुष्पीठलक्षणम्		२३९
१२७. शक्तिदेहे ब्रह्माण्डघटना १२८. दिव्यचकादिलक्षणम् १२९. जीवचकं तत्फलं च १३०. जीवचकं सूर्योपरागादि १३१. साधनानि नानाविधानि १३२. मपंचकप्रतिनिधिः प्रयोदशः पटलः १३३. कर्मदूतीयागः १३४. जानदूतीयागः चतुर्वशः पटलः १३५. वीरसाधनम् १३६. नानासनानि १३६. नानासनानि १३६. व्याघ्राजिनशुद्धिः १३८. असनानां कालनियमाः १३९. काम्ये आसनानि १४०. मृद्वाद्यासनानि १४१. मृद्वाद्यासनानि १४१. मृद्वाद्यासनानामधिकारिणः १४३. अन्त्रडकम्बलशोधनम्				238-585
१२८. दिव्यक्कादिलक्षणम् १२९. जीवचक्रं तत्फलं च १३०. जीवचक्रं स्थापरागादि १३१. साधनानि नानाविधानि १३२. मपंचकप्रतिनिधिः २५८ २३३. कमंदूतीयागः १३३. कमंदूतीयागः १३४. जानदूतीयागः चतुर्वशः पटलः १३५. वीरसाधनम् १३६. नानासनानि २७९-२८५ १३८. व्याम्राजिनशुद्धिः १३८. वासनानां कालनियमाः १३९. कमंद्रे आसनानि १४९. मृद्धाद्यासनानि १४१. मृद्धाद्यासनानि १४१. मृद्धाद्यासनानि १४१. मृद्धाद्यासनानि १४१. मृद्धाद्यासनानि		शक्तिदेहे ब्रह्माण्डघटना		२४७
१३०. जीवचन्ने सूर्योपरागादि १३१. साधनानि नानाविधानि १३२. मपंचकप्रतिनिधिः २५८ प्रयोदशः पटलः १३३. कमंदूतीयागः २५९-२६९ १३४. जानदूतीयागः चतुर्वशः पटलः १३५. वीरसाधनम् १३६. नानासनानि २७९-२८५ १३८. व्याम्राजिनगुद्धिः १३८. वासनानं कालनियमाः १३९. काम्ये आसनानि १४०. मृद्धाद्यासनानि १४१. मृद्धाद्यासनानि १४१. मृद्धाद्यासनानि १४१. मृद्धाद्यासनानामधिकारिगः १४३. अनुडकम्बलशोधनम्		दिव्यचकादिलक्षणम्		••
१३१. साधनानि नानाविधानि १३२. मपंचकप्रतिनिधिः २५८ त्रयोदशः पटलः १३३. कमंदूतीयागः १३४. जानदूतीयागः चतुर्दशः पटलः १३५. वीरसाधनम् १३६. नानासनानि २७९–२८५ १३६. वासनानां कालनियमाः १३८. बासनानां कालनियमाः १३९. काम्ये बासनानि १४०. मृद्वाद्यासनानि १४१. मृद्वाद्यासनानि १४१. मृद्वाद्यासनानि १४१. मृद्वाद्यासनानामधिकारिगः १४३. अनुडकम्बलशोधनम्	. १२९.	जीवचक्रं तत्फलं च		288
१३२ मपंचकप्रतिनिधिः श्रित्रे स्वरं सम्दूर्तीयागः १३३. कर्मदूर्तीयागः १३४. ज्ञानदूर्तीयागः वर्तुर्वशः पटलः १३५. वीरसाधनम् १३६. नानासनानि २७९-२८५ १३६. व्याघ्राजिनशुद्धिः २८६-२८९ १३८. जासनानां कालनियमाः १३९. काम्ये आसनानि १४०. मृद्धाद्यासनानि १४१. मृद्धाद्यासनिविधः १४१. मृद्धाद्यासनानामधिकारिणः १४३. अनुडकम्बलशोधनम्	The state of the s	जीवचऋे सूर्योपरागादि		588
त्रयोदशः पटलः १३३. कर्मदूतीयागः २५९-२६९ १३४. जानदूतीयागः चतुर्दशः पटलः १३५. वीरसाधनम् २७५-२७९ १३६. नानासनानि २७९-२८५ १३८. व्याघ्राजिनशुद्धिः २८६-२८९ १३८. वासनानां कालनियमाः १९०-२११ १३९. काम्ये आसनानि २९१ १४९. मृद्वाद्यासनानि १४१. मृद्वाद्यासनानामधिकारिणः २९६-२९६ १४३. अन्नुडकम्बलशोधनम्	232.	साधनानि नानाविधानि		588
१३३. , कमंदूतीयागः २५९-२६९ १३४. ज्ञानदूतीयागः चतुर्दशः पटलः १३५. वीरसाधनम् २७५-२७९ १३६. नानासनानि २७९-२८५ १३७. व्याघ्राजिनशुद्धिः २८६-२८९ १३८. आसनानां कालनियमाः १९०-२११ १३९. काम्ये आसनानि २९१ १४०. मृद्धाद्यासनानि २९१ १४१. मृद्धाद्यासनानि २९२ १४२. मृद्धाद्यासनानामधिकारिणः २९६-२९६ १४३. अनूडकम्बलशोधनम्	१३२	मपंचकप्रतिनिधिः		२५८
१३४. ज्ञानदूतीयागः चतुर्दशः पटलः १३५. वीरसाधनम् २७५-२७९ १३६. नानासनानि २०९-२८५ १३७. व्याघ्राजिनशुद्धिः २८६-२८९ १३८. बासनानां कालनियमाः १९०-२९१ १३९. काम्ये आसनानि २९१ १४९. मृद्वाचासनानि १४१. मुण्डासनविधिः २९१-२९३ १४२. मृद्वाचासनानामधिकारिएाः २९४-२९६ १४३. अनुडकम्बलशोधनम्			त्रयोदशः पटलः	
चतुर्दशः पटलः १३५. वीरसाधनम् १३६. नानासनानि २७९-२८५ १३७. व्याघ्राजिनशुद्धिः १३८. आसनानां कालनियमाः १३९. काम्ये आसनानि १४०. मृद्धाद्यासनानि १४१. मुण्डासनविधिः १४२. मृद्धाद्यासनानामधिकारिणः १४३. अनुडकम्बलशोधनम्	१३३. ,	कर्मंदूतीयागः		749-758
१३५. वीरसाधनम् २७५-२७९ १३६. नानासनानि २७९-२८५ १३७. व्याघ्राजिनशुद्धिः २८६-२८९ १३८. आसनानां कालनियमाः ९०-२९१ १३९. काम्ये आसनानि २९१ १४०. मृद्धाद्यासनानि २९२ १४१. मुण्डासनविधिः २९२-२९३ १४२. मृद्धाद्यासनानामधिकारिणः २९६-२९६	१३४.	ज्ञानदूतीयागः		756-508
१३६. नानासनानि २७९-२८५ १३७. व्याघ्राजिनशुद्धिः २८६-२८९ १३८. कासनानां कालनियमाः ९०-२९१ १३९. काम्ये आसनानि १४०. मृद्धाद्यासनानि १४१. मुण्डासनविधिः २९२-२९३ १४२. मृद्धाद्यासनानामधिकारिणः २९४-२९६ १४३. अनुडकम्बलशोधनम्			चतुर्वशः पटलः	
१३७. व्याघ्राजिनशुद्धिः २८६-२८९ १३८. व्यास्तानां कालनियमाः ९०-२९१ १३९. काम्ये आसनानि २९१ १४०. मृद्वाद्यासनानि २९२ १४१. मुण्डासनविधिः २९२-२९३ १४२. मृद्वाद्यासनानामधिकारिणः २९४-२९६ १४३. वनूडकम्बलशोधनम्	१३५.	वीरसाधनम्		
१३८. बासनानां कालनियमाः . ९०-२९१ १३९. काम्ये आसनानि . २९१ १४०. मृद्वाचासनानि . २९२ १४१. मुण्डासनविधिः . २९२-२९३ १४२. मृद्वाचासनानामधिकारिएाः . २९४-२९६ १४३. बनूडकम्बलशोधनम्		नानासनानि		
१३९. काम्ये आसनानि २९१ १३९. मृद्वाचासनानि २९१ १४०. मृद्वाचासनानि २९२ १४१. मुण्डासनविधिः २९२–२९३ १४२. मृद्वाचासनानामधिकारिएाः २९४–२९६ १४३. अनूडकम्बलशोधनम्	30.			
१४०. मृद्वाद्यासनानि २९२ १४१. मुण्डासनविधिः २९२-२९३ १४२. मृद्वाद्यासनानामधिकारिणः २९४-२९६ १४३. अनूडकम्बलशोधनम्	१३८.	आसनानां कालनियमाः		
१४१. मुण्डासनविधिः २९२-२९३ १४२. मृद्वाद्यासनानामधिकारिएाः २९४-२९६ १४३. अनूडकम्बलशोधनम्	१३९.			The second second second
१४२. मृद्वाचासनानामधिकारिएाः २९४-२९६ १४३. अनूडकम्बलशोधनम्	280.			
१४३. अनूडकम्बलशोधनम्	१४१.			
(04. 0) 404144444	१४२.			
१४४. मुण्डासनशुद्धिः २९७–३००	१४३.	अनूडकम्बलशोधनम्		
	१ 88.	.मुण्डासनशुद्धिः		440-400

ملسنيت		mmmi
क्रमाङ्काः	विषया:	पृ० सं०
284.	महाशंखशुद्धिः	२९७-३००
१४६.	चषकशुद्धिः	,
	पञ्चदशः पटलः	
१४७.	वीरमालाविघानम्	₹08-306
१४८.	वीरमालाशोधनम्	३०५-३०९
१४९.	उद्भ्रान्तिधूलिः	320
१५0.	महायन्त्रसंस्कारः	₹\$ F-0\$ F
१५१.	बाणलिङ्गे शालग्रामादौ दोषामावः,	
	बुप्तिचिह्ने मूर्तिभ्रं शे च व्यवस्था प्रायश्चित्तम्	385-586
	षोडशः पटलः	
147.	यंत्रपीठमानम्	३१६
१५३.	पितृभूमिसाघनम्	- ३१६
१५४.	शवसाधनम्	३१७ —३३५
१५५.	अचूडसाघनम्	३३६
१५६.	पुरश्चरणानुकल्पाः	
	सप्तवशः पटलः	३३७-३३८
840.	नवरात्राची	\$39-383
146.	ग्रहणार्चा .	385-388
१५९.	सहस्रनामादिस्तोत्रपुरश्चर्या	384-386
१६०.	कवचादी होमन्यवस्था	
१६१,	देवसंपत्तिवर्गानम्	385
1. 2 37	ग्रष्टादशः पटलः	400
१६२.	उपचाराणां देवता:	288
१६३.	दशिवद्यासु घूपः	
१६४.	नित्यकर्मलोपे नियमा:	11
१६५.	पूजादो तिथिनिग्रांय:	388
१६६.	विद्यानां कुल्लुंकाः	340
१६७.	श्रीकालिकामन्त्रार्थः	३५१-३५२
१६८.	श्रीतारामन्त्रवासना	343
१६९.	श्रीविद्यामंत्रवासना	३५३-३५४
\$60.	शापाद्यमावंकथनम्	३५४-३५६
१७१.	पादुकानां ध्यानम्	३५७
१७२.	पादुकामन्त्राणामुद्धाराः सूक्ष्मस्थूलमहद्भे दात्	३५७
	म एक बात्	. ३५८

क्रमाङ्काः	विषयाः	पृ० सं०
१७३.	गुरुचतुष्टयपादुकोद्धारः	348
१७४.	संप्रदायभेदेन संघट्टमुद्रा	३६०
१७५.	गुरुप्रणामे पंचमुद्राः	3 5 8
१७६.	शावरमंत्रजाग्रतीकरणम्	,,
	एकोनविशः पटलः	
१७७.	वीरमावः	365
१७५	दिव्यवीरयोरभेदः	३६३-१६४
१७९.	पशुमाव:	३६४-३६८
१८0.	मपंचके भेदाभावः	356
१८१.	मपंचकानां पर्यायनामानि	३७१-३७५
	विशः पटलः	2. 细胞体 1. TS
9.43	प्रायश्चित्तम्	३७४
१८२.	गुरुत्यागे प्रायदिचत्तम्	n
१८३. १८४,	अदुष्टमंत्रत्यागे प्रायश्चित्तम्	३७६
१८५.	एकपात्रपाने प्रायश्चित्तम्	३७६
१८६.	n-antannà	३७६
१८७.	जीनजरी	७७ इंज
१८८.	मध्यभीनारे	THE PARTY OF THE P
१८९.		205
880.		b
१९१.	कामादिको	,
१९२.	गोवसब्दो	7
१९३.	जाह्यणादिवर्णां वधे-प्रायश्चित्तम् <u>्</u> र	30₽
868.	अहंदुबौद्धवघे प्रायश्चित्तम्	
864.	नकुलसूकरवधे प्रायश्चित्तम्	4 50
१९६.	देवगुरुद्रव्यापहारे "	•
१९७.	भुरुद्वेजने निन्दने वा ;,	· Landau Allanda
१९८.	समय-वीर-योगिनी-शास्त्र-	
110.	मन्त्रितिन्दाप्रायश्चित्तम्	
१९९.	नान्त्रानन्दात्रापारमस्तत्त्र लिङ्गिनां वधे .,	, - Jan 18
?		
	पशुपाने प्रायश्चित्तम् देवानिवेदितमोजने प्रायश्चित्तम्	705-305
२०१.	दवानिवादतभाषा अध्यारपत्तम्	

क्रमाङ्क <u>ाः</u>	विषया:	पृ० संब
२०२.	दीपनाशे पात्रस्खलने प्रायश्चित्तम्	१७६-३७६
२०३.	यन्त्रे मग्ने चौरापहृते "	n
२०४.	प्रातःकृत्यलोपे "	***
२०५.	सन्ध्यालोपे "	399-20
२०६.	द्वारपूजनादि विसर्जनांतवैगुण्ये प्रायश्चित्तानि	929-986
२०७.	एवं विविधप्रायश्चित्तानि	9)
२०८.	अन्त्येष्टि:	all the second
२०९.	शैवतत्त्वानि (क)	३९१-३९८
	एकविशः पटलः	
	शैवतत्त्वानि (ख)	388-28
२१०.	शैवयोगम्	"
२११.	अक्षराणामधिदेवाः	"
	द्वाविशः पटलः	THE PARTY OF
२१२.	पररूपानुसंघि:	888-850
२१३.	कोलिकावस्था	
	त्रयोविशः पटलः	fireines
588.	गुरुस्तोत्रम् .	876
२१५.	शक्तिस्तोत्रम्	. 826-828
२१६.	पात्रप्रशंसास्तोत्रम्	879-838
२१७.	बान्तिस्तोत्रम्	838-833
२१८.	वीरवन्दनस्तोत्रम्	837-834
२१९.	कुलस्तोत्रम्	834-846
770.	आरात्रिकस्तोत्रम्	846-880
778.	मु जंगसुन्दरस्तोत्रम्	888-883
२२२.	पादुकापंचकस्तोत्रम्	888
	वतुर्वितः पटलः	
२२३.	जाणर्थ मावकथन्म्	Appropriate Control of the Control o
२२४.	श्रीदुर्गानाममाहारम्यम्	४४५-४५३
२२५.	देवीनाम्नां निक्तिः	४५४–४५५
२२६.	दुर्गानाममाहारम्यम्	४५५
770.	ग्रन्थोपसंहार:	४५५-४५७
		४५८

इति श्रीमदागमरहस्योत्तराद्धं सूची संगाता ।

ग्राचार्यश्रीसरयूप्रसादद्विवेदप्रणीतम्

ग्रागम-रहस्यम्

(उत्तराधीं भागः)

विघ्नेशोऽवतु नो विघ्नादपारकरुणार्णवः । यत्कृपालोकने लोका विशोकाः शं प्रपेदिरे ॥१॥ ग्रथागमरहस्याख्ये पूर्णे पूर्वाधंके तथा। परार्धे शक्तितंत्रे च सूचीं वक्ष्ये क्रमोदिताम् ॥२॥ कादिहादिन्यवस्थादौ कालीश्रीकुलयोः क्रमः। षडाम्नायप्रकथनमाम्नायानां स्वरूपकम् ॥३॥ षट्पंचाशद्देशसंज्ञा पंचप्रस्थमतः परम्। प्रथमे पटले ज्ञेयं संप्रदायत्रयस्थितिः ॥४॥ देशभेदात् संप्रदायस्थितिः पात्रस्थितस्तथा । लक्षर्गं कलशस्याथ पात्रमानविसर्जने ॥५॥ पात्राधिकारिएाइचैव तथैवाधारमेदकाः। गौडकेरलकाइमीरे संकल्पनविधिश्च यः ॥६॥ स्वप्नलब्धमनोः कृत्यं संप्रदायत्रये तथा । पुरवचर्याविधिस्तद्वत् प्राचीनियम एव च ।।७॥ द्वितीये पटले ज्ञेयो मनोऽभोष्टप्रदाः सुराः। कोर्तिताश्च तथाचारश्रेष्ठयं कौलप्रशंसनम् ॥६॥ ग्रधिकारी तथा कौलधर्मेऽनर्हस्तथैव च। कुलाकुलविमर्शक्च विद्यामेदास्ततः परम् ॥ ह।। सिद्धविद्या महाविद्या युगभेदात् प्रकीर्तिता । विद्यायां च तथाचारो महाचीनप्रशंसनम् ॥१०॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

दीक्षाप्राशस्त्यमथ च गुरुलक्षरामप्यथ । शिष्यस्यापि स्वरूपं च दीक्षाकालस्तथा विधिः ॥११॥ मंत्रोपदेशकथनं तथैव शक्तिदीक्षराम् । भ्रङ्गभेदाश्च विद्यानां शिवाश्च वदुकास्तथा । तथा दश ग होशाश्च योगिन्योऽपि तथा दश ।। १२।। मण्डलानि क्रमात् तद्वत् तृतीये पटले स्मृताः । ततो दीक्षाप्रमेदाश्च त्रिशक्तिक्रमतस्तथा ॥१३॥ मेघासाम्राज्यपूर्णाख्यमेदा दीक्षाविधौ तथा। श्रमिषेकप्रशंसा च तिंसम्बायोग्यनिर्णयः ॥१४॥ योग्यस्यापि विचारहच योग्यायोग्यगुरुस्तथा । चतुर्थे पटले प्रोक्तस्तद्वद् दीक्षाक्रियाविधिः ।।१५।। ग्रिधवासनपर्यन्तः पंचमे पटले स्मृतः । ग्रिभिषेकविधिः षष्ठे स्मृतः साङ्गक्रियायुतः ।।१६।। ततः पूर्णाभिषिक्तस्य प्रशंसा परिकोतिता । शक्त्युच्छिष्टे विशेषो यः प्रायिश्चत्तेऽप्ययोग्यके ।।१७।। मपंचकस्य स्वीकारः कुलपूजाविधौ तथा। भ्रन्यत्र निदाकथनं कुलार्चागोपनस्य च ॥१८॥ वैशिष्ट्यं लक्षगां तद्वत् कौलस्य कुशलस्य च। कार्याकार्यविचारव्यं कौलानां स्मृतिरूपकः ॥१६॥ ततक्च समयाचारः कुलवृक्षास्तथैव च। चतुष्पथस्य कथनं शाक्तधर्मस्य कीर्तनम् ॥२०॥ धर्माष्टकविचारक्च तथा प्रोक्तं समाष्टकम्। कुलाचार इति प्रोक्तः पटले सप्तमे तथा ।। २१।। श्रंतर्यागबहियांगौ पंचशुद्धिरतः परस्। मुघोत्पत्तिः सुघागुद्धिक्वतुर्गां शोधनं तथा ॥२२॥ शक्तिशुद्धिश्च कलशस्थापनं च ततः परम् । भोपात्रस्थापने चैव ह्याष्ट्रगंघस्य निरायः ॥२३॥

ग्रष्टमे पटले ज्ञेयः पात्रागां स्थापनं तथा । गौडकेरलकाइमीरे व्यवस्था पात्रसंस्थितेः ॥२४॥ षडबलिस्त्वथ मातंगीबलिस्तत्त्वत्रयस्य च। स्वीकारक्च तथा कालो वलेक्चैव विसर्जने ॥२५॥ उच्छिष्टभैरवार्चा च देवीपर्वाण्यतः परम् । रात्रीएगं निर्एयक्चैव योगो दशहराभिधः ॥२६॥ सिद्धिदाश्च तथा योगास्तुर्ध्वाम्नायस्य पर्वगः। कथनं युगमन्वाद्याः क्रमञः परिकोतिताः ॥२७॥ कुलर्क्षतिथिवारादिपूजानियम एव च। पूजाभेदाश्च संप्रोक्तास्तथा समयपूजनम् ॥२८॥ ग्रष्टाष्टकस्य यजनं पूजा मिथुनसंज्ञिका । नवमे पटले ज्ञेया कुलार्चायाः प्रशंसनम् ॥२६॥ चक्रेश्वरविवेकश्च ततः पाशाष्टकं तथा। नियमश्चैव संप्रोक्तो वीरशक्तिनिमंत्रएो ॥३०॥ प्रशस्तत्याज्यवीरागां निर्गयस्त्याज्यशक्तयः। विविधानां च पाकानां करणं कर्दमास्तथा ॥३१॥ विधिश्चैव तथा प्रोक्तः पूजने शक्तिवीरयोः। धारगं विजयायाञ्च स्तोत्रमस्याः शुभप्रदम् ॥३२॥ तत्त्वशुद्धिस्ततः प्रोक्तः समयार्चाव्यवस्थितिः । कुलसंध्या च कौलानामष्टगंधं ततः परम् ॥३३॥ विसर्जनं तथा चक्रपूजायाः परिकोर्तनम्। दशमे पटले तद्वदुल्लासमेदलक्षाो ॥३४॥ पात्रसंमेलनावस्था चक्रभेदक्रमस्तथा। वज्रादिपुष्पजातीनां भेदाश्च परिकोतिताः ॥३५॥ प्राह्माग्राह्मव्यवस्थानं चक्रे संपरिकोतितस्। एकादशे च पटले विज्ञेयमथ पूजनम् ॥३६॥

शक्त रच लक्षरां तद्वत् पूजकस्य च लक्षराम् । श्रयोग्ये दोषबाहुल्यमधिकारिरणमेव च ।।३७॥ शाक्तधर्मे च यत् हेयं शक्तीनां भावनास्तथा । निर्गायो जीवचक्रादेः साधनं विविधं तथा ॥३८॥ बाह्यचादिपंचमुद्रागां भेदाश्च द्वादशे स्मृताः । कर्मदूत्याञ्च यजनं सविधानं प्रकीतितम् ॥३६॥ पुजनं ज्ञानदूत्याश्च पटले वं त्रयोदशे। वीरसाधनकर्मािए। ह्यासनानां व्यवस्थितिः ॥४०॥ व्याघाजिने विशेषश्च फले तत्शोधनेऽपि च। भ्रवरोहासनान्यग्रे तत्कालनियमास्तथा ॥४१॥ महाशंखस्य निर्माएां तत्शोधनमतः परम् । शवसाधनकं कर्म संक्षेपेरा प्रकीतितम् ॥४२॥ श्रुद्धिश्च कंक्णादीनां पटले वै चतुर्दशे। रहस्यमालासंशुद्धिर्महायंत्रस्य शोधनम् ॥४३॥ प्रायश्चित्तं यंत्रभंगे पटले तिथिसंज्ञके । इमशानसाधनं चैव ततश्च शवसाधनम् ॥४४॥ श्रचूडसाधनं तद्वत् पटले षोडशे स्मृतम् । नवरात्रार्चनं चैव संप्रदायविमेदतः ।।४५॥ पुरवचर्यानुकल्पावच कलशस्थापने विधिः। साधनानि नवार्चायामुपरागविधिस्तथा ॥४६॥ स्तोत्रानुष्ठानकथनं तेषामेव च साधनम् । फलस्तुतिप्रयठने निर्णयः संप्रकीतितः ।।४७।। महाराज्ञीविमूतित्वे यागादोनां व्यवस्थितिः। पटले सप्तदशके कीर्तितस्त्वथ उच्यते ।।४८।। उपचाराधिदेवाइच देवीधूपमतः परम्। नियमाञ्च तथा प्रोक्ता लोपे यन्नित्यकर्मणः ॥४६॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

संस्थापने च यंत्रस्य निर्णयः पूजने तथा । देवीनां च तिथेस्तद्वन्निर्गंयइच तथा स्मृतः ।।५०।। कूल्लुका दशविद्यानां मंत्रांगवासनास्तथा। कूलद्वये गुरोर्घ्यानं भेदाः श्रीपादुकामनोः ।।५१।। संघद्दमुद्धाः संप्रोक्ताः संप्रदायपुरस्सराः । साधनं शावरस्याथ पटलेऽष्टादशे स्मृतः ।।५२।। वीरमावोऽभिषिक्तानां पानं मलविमोचनम्। पशुभावस्ततः पंचमकारेऽभेदकोर्तनम् ।।५३।। मपंचकस्य संकेतनाम्नां प्रकथनं तथा। भ्रनुकल्पास्तथैवैषामेकोर्नावंशके स्मृताः ।।५४।। प्रायश्चित्तमथो नानावियं प्रामादिकं ततः। यंत्रभंगे ह्यकरत्। प्रातःकृत्यादिके तथा ।।५५॥ तथैव संध्याकरणो पात्रासादनकर्मिण। निपाते मक्षिकादीनां पात्रस्थापितभ्रंशने ।। १६॥ यंत्रभंगे तथा भ्रंशे पात्रागामुपघातके। चषकस्योपघाते च दीपनाशे तथैव च ।।१७।। दीक्षाकुं भोपघाते च कलशस्योपघातके। तथैवाचार्यपूजायां बलात् स्त्रीग्रहिए तथा ।।५८।। श्राचार्येऽनभिषिक्ते चासंस्कृते मादने तथा। प्राकट्ये समयस्याथ सुवासिन्या ग्रनादरे ।।५६।। वालवृद्धादिविषये प्रायश्चित्तप्रकीर्तनम्। सांतापनं व्रतं चैव तथा चांद्रायग्वतम् ॥६०॥ कृच्छुव्रतं तथान्त्येष्टिविशे च पटले स्मृतम् । एकविशे कौलयोगः समासात् परिकोर्तितः ।।६१।। पररूपानुसंघिश्च कौलयोगिवनिर्णयः। द्वीविशे पटले चैव त्रयोविशे गुरुस्तुतिः।।६२।।

शक्तिस्तोत्रं ततः पात्रप्रशंसा शांतिरेव च ।
वीरवंदनकं स्तोत्रं कुलस्तोत्रमतः परम् ।।६३।।
ग्रारातिकं भुजंगाख्यमुन्दरं स्तोत्रमुत्तमम् ।
पादुकापंचकस्तीत्रं त्रयोविशितमे स्मृतम् ।।६४।।
चतुर्विशे परांबाया नामसंस्मरगं तथा ।
एवं चतुर्विशितिभः पटलेक्त्तरार्धकम् ।।६४।।
ग्रागमांभोधिवाग्रत्नभूषितं साधकेष्टदम् ।
प्रकृतं व्याहरिष्यामि संप्रदायानुसारतः ।।६६।।
कादिहादिवंपुर्यस्या विहारक्च कुलद्वये ।
संप्रदायत्रयं धर्मं सा षडाम्नायगावतु ।।६७।।
संप्रदायत्रयं वक्ष्ये हादिकादिविभूषितम् ।
कुलद्वये स्थितिर्यस्य यद् ज्ञानात् साधकः शिवः ।।६८।।

ग्रथ कादिहादि व्यवस्था यथा शक्तिसंगमे-

कादिहादिप्रमेदेन द्विधाम्नायार्थसंहतिः ।
कादिः काली महाशक्ति हादिस्त्रिपुरसुन्दरी ।।६६।।
कादित्वाद् व्रह्मरूपस्वं हादित्वात् शिवरूपता ।
चिच्छक्तिः कादिरूपा स्यात् हादिश्चिज्ज्ञानगोचरा ।।७०।।
चिदानंदस्वरूपाख्यं शिवशक्तिचात्मकं महः ।
शक्तेः काल्यां च प्राधान्यं सर्वदा परिकोतितम् ।।
सुंदर्यां ब्रह्मचारित्त्वं काल्येवानंदरूपता ।।७१।।

भ्रान्यच-

कादिस्तु कामराजोऽस्ति हादिलींपा पुरेरिता।
इदं वटेशसंमत्या पारिमाषिकमीरितम् ॥७२॥
कादयो मनवः संति बहवः परमेश्वर !।
न तत्र कादिता कापि हादाविप तथेश्वर !॥७३॥
हादयो मनवो देव षट्त्रिंशत्पद्मसंख्यकाः।
न तत्र हादिता कापि षोडश्यामेव हादिता ॥७४॥

कादित्वं कालिकायां च तेन प्रोक्तः कहात्मकः । काल्यामिष हादिकादिमेदाः सन्त्येव भूरिशः ।।७४।। न तत्र कादिहादित्वं लोपायां न तु हादिता । लोपा तु सुन्दरोमेदः कामराजादयो यथा ।।७६।। इत्येवं कादिहादित्त्वं हादिः श्रीषोडशो परा । हादौ तु नियमाः प्रोक्ताः यमसंयमनादयः ।। कादौ तु नियसो नास्ति स्वेच्छ्या धर्ममाचरेत् ।।७७।। इति ।

भ्रथ कुलद्वयनिरूपगां निरुत्तरतंत्रे-

काली तारा रक्तकाली भुवना महिषमिंदनी । त्रिपुरा त्रिपुटा दुर्गा विद्या प्रत्यंगिरा तथा ।।७६।। कालीकुलं समाख्यातं श्रीकुलं च ततः परम् । सुंदरी भैरवी बाला वगला कमला तथा ।।७६।। घूमावती च मातंगी विद्या स्वप्नावती प्रिये । महाकाली मधुमती श्रीकुलं भाषितं मया ।।६०।।

म्रन्यत्रापि-

षडाम्नायविशुद्धात्मा कुलद्वयमथाश्रितः । संप्रदायत्रये गच्छन् देवसायुज्यमाप्नुयात् ।। दशा इति ।

षडाम्नायाश्च समयातंत्रे श्रीक्रमसंहितायामपि-

शुद्धविद्या च बाला च द्वादशार्धा मतंगिनो ।
शुकशारीवेपावीगाहसन्त्युच्छिष्टश्यामलाः ॥६२॥
एताः कामगिरोन्द्रस्थाः पूर्वाम्नायाधिदेवताः ।
गुरुत्रयादिपीठान्तं चतुर्विशत्सहस्रकम् ॥६३॥
व्याहृतीर्ज्ञ ह्मविद्या च गायत्री वेदसूस्तथा ।
गाग्णपत्यं कार्तिकेयं तथा मृत्युं जयाभिधः ॥६४॥
नीलकंठो जातवेदास्तथा प्रत्यंगिरादयः ।
भुवनेशी चान्नपूर्णा श्रीविद्यामेदसंयुता ॥६५॥

७८-०. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangothi

तत्पूर्वप्रत्यये मंत्राः वैदिकास्तु द्विकोटयः । एतदावरगोपेतं पूर्वाम्नायमिदं स्मृतम् ॥६६॥

इति पूर्वाम्नायः।
सौभाग्यविद्या वगला वाराहो वदुकस्तथा।
महिषघ्नी तथा लक्ष्मी त्विरता विद्यानी तथा।।८७।।
श्रीस्तिरस्करिणी प्रोक्ता दक्षिणाम्नायदेवता।
त्रिश्चत्सहस्रसंख्याकाः पूर्वपीठस्थिताः सदा।।८८।।
भैरवादि च सिद्धौष्टा वदुकत्रयमीरिताः।
पदद्वययुता याश्च देवताश्च विशेषतः।।८६।।
श्रघोरं शरभं खङ्गरावणं वीरभद्रकम्।
श्रेवं पाशुपताद्यस्त्रं शास्तारं स्वर्णभैरवम्।।६०।।
दक्षिणामूर्तिमंत्राद्याः शैवागभसमुद्भवाः।
एतदावरणोपेतं दक्षिणाम्नायमीरितम्।।६१।।

इति दक्षिगाः।

लोपामुद्रा महादेवी स्रंबा च भुवनेक्वरी।

ग्रान्तपूर्णा कामकला पीठं जालंधरं तथा।।६२।।

महासरस्वती विद्या तथा वाग्वादिनी पुनः।

प्रत्यंगिरा भवानी च पश्चिमाम्नायदेवताः।।६३।।

दूतीनां च चतुःषिटः सिद्धानां त्रिसहस्रकम्।

सुदर्शनं वैनतेयं कार्तिकेयं नृसिहकम्।।६४।।

नामत्रयं राममंत्रं गोपालं सौरमेव च।

धन्वंतरि चेंद्रजालींमद्राद्याः सुरनायकाः।।६४।।

ग्राष्टादशाक्षरी विद्या द्वादशार्णस्तथेव च।

ग्रान्ये मंत्रा बहुविधाः शेवागमसमुद्भवाः।।६६॥

सद्योजातमुखोद्भूतं तद् द्विकोटिमितं तथा।

ग्राम्नायं पश्चिमं त्वेतत् सर्वदा सर्वकामदम्।।६७॥

इति पश्चिमः।

तुरीया च महार्था च ग्रव्याख्ढा तथैव च।

मिश्रांबा च महादेवी श्रीमद्वाग्वादिनी तथा।।६८।।

एताक्ष्योख्यानपीठस्थाः द्विसहस्रं तु देवताः।

मुद्रावलीनां नवकं दुर्गा कात्यायनी तथा।।६६।।

चण्डो च नकुली चापि ह्यपरे वडवामुखाः।

रेपाुका च तथा लक्ष्मी मातृकाख्या स्वयंवरा।।१००।।

कालिकाभेदसहिता ताराभेदैश्च संयुता।

मातंगी भैरवी खिन्ना तथा धूमावती मता।।१०१।।

एतदावरणोपेतं श्रीविद्या क्षांभवं तथा।

वामदेवमुखोद्भू तं द्विकोटिमंत्रनायकम्।।१०२।।

पंचवीरोवलीयुक्तमाम्नायं चोत्तरं स्मृतम्।

इत्युत्तरः।

समस्तमेदसहिता कालिका या प्रकोतिता ।।१०३।। द्वाविंशत्यक्षरी तासां महाराज्ञी प्रकीतिता । श्रीप्रासादपरामंत्र ऊर्ध्वाम्नाये प्रकीर्तितः ।।१०४।। परापरा च सा देवी परा शांमविका तथा । एताः शांमवपीठस्थाः सहस्रपरिवारिताः ।।१०५॥ स्रारम्य मालिनीपूर्वं मण्डलान्तं महामनुम् । सायुज्यहेतुकं नित्यं ज्ञेयं चोर्ध्वंमकल्मषम् ।।१०६॥ इत्यूर्ध्वम् ।

नागशक्तचादयो मंत्राः पातालाम्नायगाः स्मृताः । शिवस्य मुखपद्मेभ्यः सर्वाम्नायाः प्रकीतिताः ॥१०७॥

केचित् पातालाम्नायमपास्य अनुत्तरमिति पठन्ति, तच्च कादिमतम्।

धनुत्तरो यथा-

पश्चादनुत्तरं ज्ञेयं परब्रह्मस्वरूपिएम् । ईशानमुखसंभूतं सर्वपापहरं परम् ॥१०८॥ अनुत्तरांबा तद्वत् स्याद् राजराजेश्वरो तथा । कालसंकिष्णो विद्या अर्ध्वाद्याश्च ततः परम् ॥१०६॥ nc.

परौघाश्रापि दिव्योघाः तुर्योघाः कामराजकम्। श्रीपराचरणं पश्चात् तुर्याचरणमेव च ॥११०॥ मुद्राचरणमाख्यातं कामराजमनन्तरम्। मिश्रीघचरणं पश्चात् सहजांबा परा तथा ।।१११।। शुक्लविद्या रक्तविद्या मिश्रविद्या ततः परम्। तथा निष्कलिवद्या च परा निष्कलसंयुता ।।११२।। पादुकादशकं चैव तथा श्रीगुरुपादुका। पञ्चांबा नवनाथाश्च मूलविद्याश्च षोडश ।।११३।। म्रादिनाथमनादि च म्रनामयमनंतकम्। चिदाभासं च विज्ञेयाः पंचाम्बा देशिकोत्तमैः ॥११४॥ उन्मना विश्वनी चैव व्यापकः शक्तिरेव च। ध्वनिश्र ध्वनिमात्रा च ग्रनाहत च इन्दुकम् ॥११५॥ चिदाकाशश्च विज्ञेयो नवनाथाः प्रकीर्तिताः । महाविद्या परा चातिरहस्यास्या च योगिनी ।।११६।। कुलपंचाक्षरी पंचदशार्गाऽनुत्तरांबिका । श्रनुत्तरमतं चैव गुरुक्रमविमर्शिनी ।।११७।। ग्रनामाख्या च संकेतविद्यानुत्तरपूर्विका । वाग्वादिनी महाविद्या महात्रिपुरसुन्दरी ।।११८।। महात्रिपुरसु दर्याः षोडशैव प्रकीतिताः। श्राधारविद्याषट्कं च पुनरङ् घ्रिद्वयं तथा ॥११६॥ षडाधारं तथा ज्ञेयं षड्दर्शनमतः परम्। बौद्धं च वैदिकं चैव सौरं वैष्णवशाक्तिके ।।१२०।। षट्त्रिशच्चेव तत्त्वानि मीनकेतुकलादिकम् । श्रनुत्तरिमदं प्रोक्तं स्मर्गान्मोक्षदायकम् ।।१२१।।

श्रत्रैवास्मित्रनुत्तरे श्रानंदाम्नायरहस्याम्नायेति भेदद्वयं कुलकल्याणीकारेण काश्मीरमनुमृत्य त्रिविक्रमेणोक्तम् । तन्मते श्रष्टाम्नायाः तेषां स्वरूपं गोत्रं शास्ता च ।

तद्यथा कौलसर्वत्वे-

पूर्वाम्नायं विदुरूपं षट्कोगं दक्षिणं स्मृतम् ।

प्राच्यां पश्चिमं स्यादुत्तरं षोडशच्छदम् ।।१२२।।

ऊध्वं त्रिकोगारूपं स्यात् पातालं च त्रिवृत्तकम् ।

पराम्नायं च वलयद्वयरूपं ततः परम् ।।१२३।।

प्रानंदं भूपुरैकं स्याद्रहस्यं वलयद्वयम् ।

पूर्वस्य चांजनीगोत्रं मानसी दक्षिगास्य च ॥१२४।।

विभावरो पश्चिमः स्याद्भुतमुत्तरकस्य च ।

ऊध्वंस्य जालपा गोत्रं पातालस्य च स्यामला ।।१२५।।

मातंगिनी पराख्यस्यानंदस्य स्याज्जलंधरी ।

रहस्यस्य निजं गोत्रं क्रमाद् ज्ञेयं च देशिकः ॥१२६॥

पूर्वे सामंतिनी शाखा दक्षिणो च मनोन्मनी ।

पश्चिमे यक्षिगी शाखा चोत्तरे कालिका स्मृता ॥१२७॥

ऊध्वं सौभाग्यशाखा स्यात् पाताले शीतला भवेत् ।

मनस्विनी पराम्नाये ह्यानंदे शृंगिनी मता ॥१२८॥

रहस्ये च स्वयंभू स्यादिति शाखाविनिर्णयः ।

भ्रन्यच्च सारस्वते-

GANNY LANGUE

पूर्वाम्नायः श्वेतरूपो द्विकोटिमनुसंयुतः।
भुवनेशी कोटपालो भैरवी दंडधारिगा।।१२६॥
ग्रन्नपूर्णा पाककर्त्री सोमसूर्यो च साधकौ।
दक्षिगाः पीतरूपो स्यात् त्रिकोटिमनुसंयुतः॥१३०॥
कुब्जेशी कोटपालश्च कालिका दंडधारिगा।।
इंधिका पाककर्त्री च लक्ष्मोशक्तिश्च शारिका ॥१३१॥
पश्चिमोऽक्गारूपी स्यान्मंत्रकोटित्रयान्वितः।
श्यामला कोटपालश्च विध्येशी दंडधारिगा।।१३२॥
लघुश्यामा पाककर्त्री भैरवाः साधकाः स्मृताः।
कृष्णारूप्युत्तरो ज्ञेयो मंत्रकोटिद्वयान्वितः॥१३३॥

ンなんいよ

कोटपालश्चे कवीरा तारा स्याद् दंडधारिगी ।
पाककर्त्री चैकजटा महाकालश्च साधकः ।।१३४।।
फ्रध्विम्नायश्च हरितः कोटिमंत्रविभूषितः ।
ग्रांबका कोटपाला स्यात् क्यामा स्याद्दंडधारिगो ।।१३५।।
ग्रांबका कोटपाला स्यात् क्यामा स्याद्दंडधारिगो ।।१३५।।
जातवेदाः पाककरो महेज्ञः साधको हरिः ।
पराम्नायः श्वे तरूपी कोट्यधंमनुसंयुतः ।।१३६।।
इंदुमा कोटपालश्च हंसिनी दंडधारिगो ।
शारदा पाककर्त्री च कालो यत्र महेश्वरः ।।१३७।।
ग्रानंदः स्वच्छरूपी च द्विकोटिमनुसंयुतः ।
कोटपालो रितर्यत्र वरदा दंडधारिगो ।।१३८।।
मनोमवः पाककरः साधकक्चतुराननः ।
रहस्यः सर्ववर्णामो मनुभिः शतकोटिभिः ।।१३९।।
पुतस्तत् कोटपालश्च षोडशो परिकोतिता ।
कुक्कुल्ला दंडपाग् दंक्षिगामूर्तिरोक्वरः ।।१४०।। इति ।

एतेषां प्रयोजनमग्रे वक्ष्यमाणवीरार्चंने ग्राम्नायमंत्रे भविष्यति । ग्रथ शाक्त-पारंपर्यज्ञानार्थं वक्ष्यमाणसंप्रदायत्रयस्थित्यै देशविभागो लिख्यने । तद्यथा शक्ति-संगमे उद्दंडभैरवीये च—

देशव्यवस्थां देवेशि ! कथ्यते शृणु सांप्रतम् । वैद्यनाथं समारम्य भुवनेशान्तगं शिवे ॥१४१॥ तावदंगाभिधो देशो यात्रायां निह दुष्यति । वज्राकरं समारम्य ब्रह्मपुत्रान्तगं शिवे ॥१४२॥ वंगदेशो मया प्रोक्तः सर्वसिद्धिप्रदर्शकः । जगन्नाथात् पूर्वभागे कृष्णातीरान्तगं शिवे ॥१४३॥ कालगदेशः संप्रोक्तो वाममार्गपरायगः । कालगदेशः संप्रोक्तो वाममार्गपरायगः । कालगदेशमारम्य पंचाष्टयोजनं शिवे ॥१४४॥ दक्षिणस्यां महेशानि कालिगः परिकोत्तितः । सुब्रह्मण्यं समारम्य यावहेनो जनार्वन शिवेश्विप्रमाहणां

तावत् केरलदेशः स्यान्मध्ये च सिद्धकेरलः रामेश्वरो वेंकटेशो हंसकेरलसंज्ञकः ॥१४६॥ श्रनंतसेनमारम्य यावत्स्यादुडुपं परे । तावत् सर्वेशनामा तु केरलः परिकीर्तितः ॥१४७॥ शारदामठमारभ्य कुंकुमाद्रितटान्तकम्। तावत् काश्मीरदेशः स्यात् पंचाशद्योजनान्तकम् ॥१४८॥ कौलेश्वरं श्वेतिगिरि त्रिपुरां नीलपर्वतम्। कामरूपाभिधो देशो गएोशगिरिमूर्धनि। त्रियंबकं समारभ्य मध्ये चोज्जयिनीं शिवे ।।१४६।। मार्जारतीर्थाद्राजेन्द्रकोलापुरनिवासिनी। तावद् देशो महाराष्ट्र: कपटस्याभिगोचर: ॥१५०॥ जगन्नाथादूर्घ्वभागे ग्रर्वाक् श्रीभ्रमरांबिकाम्। तावदन्ध्राभिधो देशः सौराष्ट्रं शृणु सादरम् ॥१५१॥ कोंकरणात् पश्चिमं तीरं समुद्रप्रान्तगोचरम्। हिंगुलाजान्तकं देवि पंचयोजनलेशतः ॥१५२॥ सौराष्ट्रदेशी देवेशि षाण्मातु गुर्जराभिधः। श्रीशैलं तु समारम्य चोलेशान्मध्यभागतः ॥१५३॥ तैलंगदेशो देवेशि घ्यानाध्ययनतत्परः। मूकांबिकां समारम्य मलयाद्रचन्तगं शिवे ।।१५४॥ मलयालामिधो देशो मंत्रसिद्धिप्रवर्तकः। रामनाथं समारभ्य श्रीरंगान्तं तथेश्वरि ॥१५५॥ कार्गाटदेशो देवेशि भोगसाम्राज्यदायकः। ताम्रपर्गी समारभ्य शैलाद्रे रुत्तरोर्ध्वतः ॥१५६॥ श्रवंतीसंज्ञको देशः कालिका यत्र तिष्ठति । मद्रकाली पूर्वभागात् रामदुर्गाच्च पश्चिमे ।।१५७।। श्रोविदर्भाभिधो देशो वैदर्भी यत्र तिष्ठति । गुर्जरात् पूर्वभागे तु द्वारकातश्च दक्षिएो। मरुदेशो महेशानि उष्ट्रोत्पत्तिपरायगः ॥१५८॥

श्रीकोंकरगादधोमागे तापीतः पश्चिमे तथा। ग्राभीरदेशो देवेशि विध्यशैले व्यवस्थितः ॥१५६॥ श्रवन्तीतः पूर्वभागे गोदावर्यास्तथोत्तरे । मालवाख्यो महादेशो धनधान्यपरायगः ।।१६०।। द्रविडतैलंगयो र्मध्ये चोलदेशः प्रकीतितः। लंबकर्णाञ्च ते प्रोक्ता भेदो ह्यावान्तरो भवेत् ॥१६१॥ कुरक्षेत्रात् पश्चिमे तु तथाचोत्तरभागतः। इन्द्रप्रस्थो महेशानि दशत्रियोजनोन्मिते ॥१६२॥ पांचालदेशो देवेशि सौंदर्यगर्वभूषितः। पांचालदेशमारम्य म्लेच्छाद् दक्षिरापूर्वतः ॥१६३॥ कांबोजदेशो देवेशि वाजिराशिपरायगः। वैदर्भदेशादूष्वं च इन्द्रप्रस्थाच्च दक्षिएो ॥१६४॥ मरुदेशात् पूर्वभागे विराट्देशः प्रकीर्तितः। कांबोजाद् दक्षमागे तु इन्द्रप्रस्थाच्च दक्षिएो ॥१६४॥ पाड्यदेशो महेशानि महाशूरत्वकारकः। गंडकीतीरमारम्य चम्पारण्यान्तकं शिवे ॥१६६॥ विदेहभूः समाख्यातः तैरभुक्तामिधः स तु । कांबोजदेशमारम्य महाम्लेच्छात्तु पूर्वके ॥१६७॥ वाल्हीकदेशो देवेशि श्रश्वोत्पत्तिपरायगाः। तत्त्वकुण्डं समारम्य रामक्षेत्रान्तगं शिवे ।।१६८।। किरातदेशो देवेशि विध्यशैले च तिष्ठति । करतोयां समारभ्य हिंगुलाजान्तकं शिवे ।।१६९।। वक्तानदेशो देवेशि महास्लेच्छपरायगाः। हिंगुपीठं समारभ्य मक्केशान्तं महेश्वरि ॥१७०॥ खुरासानामिघो देशो म्लेच्छमार्गपरायगाः। तन्मध्ये चोत्तरे देवि ऐराकः परिकोर्तितः । काइमीरं तु समारम्य काम्ह्याच्च प्रित्नमम्बिर्गर्धे १८०० १० विक्षेत्रकार

भोटान्तदेशो देवेशि मानसेशाच्च दक्षिएो। मानसेशाद् दक्षपूर्वे चीनदेशः प्रकीर्तितः ॥१७२॥ कैलासतीरमारम्य सरयूयोनितः परम् । श्रा मोरंगं महेशानि महाचीनाभिधो भवेत् ।।१७३।। जटेश्वरं समारभ्य योगिन्यन्तं महेश्वरि । नेपालदेशो देवेशि शिलहट्टं शृषाु प्रिये ॥१७४॥ गागुञ्चरं समारभ्य महोदध्यंतगं शिवे। शिलहहासिधो देशः पर्वते तिष्ठति प्रिये ॥१७५॥ वंगदेशं समारभ्य भुवनेशान्तं महेश्वरि । गौडदेशः समाख्यातः सर्वविद्याविशारदः ॥१७६॥ गोकर्णेशात् पूर्वभागे ग्रार्यावर्तात् चोत्तरे। तैरभुक्तात् पश्चिमे तु महापुर्याश्च सर्वतः ।।१७७।। महाकोशलदेशः स्यात् सूर्यवंशपरायगः। व्यासेश्वरं समारभ्य तप्तकुण्डान्तकं शिवे ।।१७८।। मगधाल्यो महादेशो यात्रायां न हि दुष्यति । दक्षोत्तरक्रमेगाँव क्रमात् कीकटमागघौ ॥१७६॥ चरगाद्रिं समारम्य गृध्रकूटान्तकं शिवे। तावत् कोकटदेशः स्यादुद्वण्डो मागघो मतः ॥१८०॥ जगन्नाथप्रांतदेशस्त्वीत्कलः परिकीर्तितः । कामगिरिं समारम्य द्वारकान्तं महेश्वरि ॥१८१॥ श्रीकुन्तलाभिघो देशो हूग्रादेशं शृ्णु प्रिये। कामगिरे दंक्षभागे मरुदेशात्तथोत्तरे ॥१८२॥ हू ग्वेशः समाख्यातः शूरास्तत्र वसन्ति च। श्रथ घट्टं समारभ्य कोटोशस्य तु मध्यगे ॥१८३॥ समुद्रप्रांतदेशो हि कोंकगाः परिकीतितः। ब्रह्मपुत्रात् कामरूपान्मध्यभागे तु कैकयः ॥१८४॥ मागधाद् दक्षमागे तु विष्यात् पश्चिमतः शिवे । सौरसेनामिघो देशः सूरवंशप्रकाशकः ॥१८४॥

हस्तिनापुरमारभ्य कुरुक्षेत्राच्च दक्षिए। पांचालात् पूर्वभागे तु कुरुदेशः प्रकीर्तितः ।।१८६।। मरुदेशात् पूर्वभागे कामाद्रे दक्षिएो शिवे। सिंहलाख्यो महादेशः सर्वदेशोत्तमोत्तमः ।।१८७।। शिलहट्टात् पूर्वभागे कामरूपात् तथोत्तरे । पुलिष्ठदेशा देवेशि नरनारायगः, परः ॥१८८॥ गएोश्वरात् पूर्वमागे समुद्रादुत्तरे शिवे । कच्छदेशः समाख्यातः मत्स्यं शृु्षा महेश्वरि ।।१८६॥ पुलिध्रादुत्तरेमागे कच्छाच्च पश्चिमे शिवे। मत्स्यदेशः समाख्यातो मत्स्यवाहुल्यकारकः ।।१६०।। विराट्पांड्यकयो र्मध्ये पूर्वदक्षक्रमेरण च। मद्रदेशः समाख्यातो मद्रेशस्तत्र तिष्ठति ।।१६१।। सूरसेनात् पूर्वभागे कंटकात् पश्चिमे वरे । सौवीरदेशो देवेशि सर्वदेशोत्तमोत्तमः ।।१६२।। श्रवन्तीतः पिइचमे तु वैदर्भात् दक्षिग्गोत्तरे । लाटदेशः समोख्यातो वर्वरं श्रृणु पार्वति ! ॥१६३॥ मायापुरं समारभ्य सप्तशृंगात् तथोत्तरे । वर्वराख्यो महादेशः सैन्धवं शृ्णु सादरम् ॥१६४॥ लंकाप्रदेशमारम्य मक्कान्तं परमेश्वरि । सैन्धवाख्यो महादेशः पर्वते तिष्ठति प्रिये ॥१६५॥ एते देशाः मया प्रोक्ता षट्पंचाशन्मिता शिवे । एतन्मध्येऽपि देवेशि देशभेदास्त्वनेकशः। कोटिशः सन्ति देवेशि एते मुख्याः प्रकीर्तिताः ।।११६।।

इति षट्पंचाशद् देशाः।

भथात्रैव देशप्रसंगात् पंचप्रस्थसंज्ञदेशनिर्गायः। शक्तिसंगमे देवीवाक्यम्— देवेश श्रोतुमिच्छामि पंचप्रस्थानि सांप्रतस् शिव:--

इन्द्रप्रस्थं यमप्रस्थं वरुएाप्रस्थमेव च। कूर्मप्रस्थं महादेवि देवप्रस्थं च पंचमम् ।। १६७।। महेशानि योगिनीकोटिसंयुतम्। मथुरा गोकुलात् पूर्वभागे तच्च प्रकीर्तितम् ।।१६८।। बृन्दावनं कोरादेशे हस्तिनापुरमुत्तरे। द्वारका पश्चिमायां च गदावर्तस्तु दक्षिएो ॥१६६॥ इन्द्रप्रस्थं मध्यभागे कालिकामुखगोचरम्। वाराहोक्षेत्रमुद्दिण्टं इन्द्रप्रस्थं तदुच्यते ॥२००॥ सिहासनं चादवपतेस्तदेव परिकोर्तितम्। यमप्रस्थं महेशानि दक्षिग्एस्यां व्यवस्थितम् ॥२०१॥ मोरेश्वरः पश्चिमायां सप्तशृङ्गी तु पूर्वगा । मायापुरं वामभागे वेंकटेशस्तु दक्षि ।।२०२॥ यमप्रस्थं भवेन्मध्ये कमलामुखगोचरम्। शंखावर्तो भवेत् तत्र क्षेत्रं मायामिधं भवेत् ।।२०३।। सिहासनं नरपतेस्तद्दक्षे परिकोर्तितम्। ततः पूर्वे जगन्नाथप्रान्ते करिपतेर्भवेत्।।२०४॥ वारुगाल्यं तथा देवि कथ्यते शृणु सांप्रतम्। मक्केश्वरः पश्चिमायामुत्तरे हिंगुला भवेत्। त्रैलोक्यविजया देवी दक्षमागे प्रकीर्तिता ॥२०५॥ राजावतंस्तत्र भवेत् तत्र शोतामुखं च तत्। तदन्ते सागराः सप्त समुद्राञ्च तदन्तके ॥२०६॥ तावच्च श्रोवारुगाख्यं प्रस्थं प्रोक्तं मया तव । कूमें प्रस्थं महेशानि शृणु पार्वति कथ्यते ॥२०७॥ गोकर्णेशो दक्षमागे कानाक्षा पूर्वगोवरा। उत्तरे मानसेशः स्यात् पश्चिमे शारदा मवेत् ॥२०८॥ त्रिगुर्गा वर्तते तद्धि वज्रेश्या मुखमीरितम्। पद्भंचको दिलामुण्डाग्यां व्यक्ति तु तद् भवेत् ।।२०६॥ देवप्रस्थं महेशानि कथ्यते शृणु सांप्रतम् ।
श्वीरंगो दक्षिणे प्रोक्तो गायत्री पश्चिमे भवेत् ।।२१०।।
पूर्वे चैव जगन्नाथश्चोत्तरेऽमरकंटकः ।
कांचोपुरं मध्यभागे मोहनावर्तमेव च ।।२११।।
लिलताया मुखं तच्च विद्यागणिवसूषितम् ।
कामाक्षीक्षेत्रमुद्दिष्टं महामंत्रविसूषितम् ।।२१२।।
नवलक्षमहामेदविद्यागणिवसूषितम् ।
पंचप्रस्थानि देवेशि कथितानि सया तव ।।२१३॥
ब्रह्मा विश्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः ।
पंच प्रस्थेश्वराः प्रोक्ताः क्रमशस्तव सुवते ।।२१४।।

इति श्रीमदागमरहस्ये सत्संग्रहे उत्तरार्घे कुलाम्नायादिदेश-व्यवस्थान्तकथनं नाम प्रथमः पटलः । ग्रादित एकोनित्रशत् ॥

श्रय संप्रदायविवेचनम्। यथा शक्तिसंगमे-

केरलक्ष्वेव काक्मीरो गौडक्ष्वेव तृतीयकः ।
संप्रदायत्रयं प्रोक्तं सर्वसिद्धिप्रदायकम् ।।२१५।।
सम्यक् प्रदीयते ज्ञानं संप्रदायः प्रकीतितः ।
कामादिदोषरिहतः कादिहादिमतानुगः ।।२१६।।
वांछिता कित्पता सिद्धिमंनोरथमयो तथा ।
साधकस्य मवत्येव लोके रत्न इवापरः ।
चतुरसंघ्या समायुक्तः पंचपारायणान्वितः ।।२१७।।
वांछाकल्पलतायुक्तो मंत्रमण्डलसाधकः ।
महाविद्यासमायुक्तः पादुकादक्षकान्वितः ।।२१६।।
पंचषोढासमायुक्तः कादिहादिमतेष्विप ।
षिटिसिद्धीक्वरो यस्तु केरलः परिकीतितः ।।२१६।।
काक्मीरं शृणु देवेशि सावधानतया शिवे ।
कापंण्यरिहतः शान्तः शमादिगुणसंयुतः ।।२२०।।

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

उभयोध्वीम्नाययुक्तो राज्यदातृत्वर्शाक्तवित् । चतुर्विशितिसद्धीनामधिपो नरपुङ्गवः ॥२२१॥ एकत्रोध्वीम्नाययुक्तो महाकाश्मीर ईरितः ॥२२२॥ ग्रम्यत्रोध्वीम्नाययुक्तो महाकाश्मीर ईरितः ॥२२२॥ ग्रम्यत्रोध्वीम्नाययुक्तो महाकाश्मीर ईरितः ॥२२२॥ ग्रम्यत्रीध्वीम्नाययुक्तो महाकाश्मीर ईरितः ॥२२३॥ श्रीमद्ज्ञानसरस्वत्याः पारंगामी नरस्तु यः । भुवनानंदकृद् वीरः स्त्रीमक्तो विजितेन्द्रियः ॥२२४॥ ग्रम्यादिकलायुक्तः पूर्णदीक्षासमन्वितः । ग्रक्ताधिकारसंपन्नः पूर्वमत्रापि पार्वति ॥२२४॥ ग्रष्टाष्टकादिसंयुक्तः सभयाचारपालकः । महावलो महोत्साहो गौड इत्यिमधीयते ॥२२६॥ पूर्णगौडो मध्यगौडो द्विविधः पूर्ववद् मवेत् । इति गौडस्तु सम्प्रोक्तः सर्वसिद्धिप्रदायकः । ग्रिश्माद्यष्टसंयुक्तः श्रीगौडः परिकीर्तितः ॥२२७॥

ग्रन्यच--

शैवकेरलकं देवि शक्तिकेरलकं तथा।
शिवशक्तिकेरलाख्यं त्रितयं परिकीर्तितम् ॥२२८॥
शुद्धोग्रगुप्तमेदेन नवधा केरलं भवेत्।
नवधा चैव काश्मीरं नवधा गौडमेव हि ॥२२६॥
एषां स्थितिक्रमं वक्ष्ये देशमेदेन पार्वति।
षट्पंचाशद्देशमेदात् सर्वत्र व्याप्य तिष्ठति ॥२३०॥
नेपालदेशमारभ्य कलिगातं महेश्वरि।
ग्रष्टादशसु देशेषु गौडमार्गः प्रकीर्तितः ॥२३१॥
ग्रार्यावतं समारभ्य समुद्रान्तं महेश्वरि।
ग्रार्यावतं समारभ्य समुद्रान्तं महेश्वरि।
केरलाख्याः क्रमः प्रोक्तस्तुनविश्वितिदेशके ॥२३२॥
केरलाख्याः क्रमः प्रोक्तस्तुनविश्वतिदेशके ॥२३२॥

orijst godin - untadzi ont zenesti

तदन्यदेशे देवेशि काश्मीराख्यः क्रमः शुभः। संकरस्तु भवेद् वाह्यो वेदवाह्यो द्विजो यथा ॥२३३॥ केरलादिक्रमे चैव सपर्यानिर्एयं शृगु। तत्रादौ पात्रभेदं च संप्रदायत्रिके यथा ।।२३४।। विश्वामित्रकपालं च केरले परिकोर्तितम्। पाशं तुम्बीकपालं तु काश्मीराख्ये क्रमे भवेत् ।।२३५।। महाकपालपात्रं तु गौडमार्गे प्रकीर्तितम्। एवं कपालं त्रिविधं संप्रदायक्रमान्मतम् ।।२३६॥ महाकपालं त्रिविधं शंखशुक्तिकपर्दिकाः। कपर्दिकाभिघं पात्रं सर्वपात्रोत्तमोत्तमम् ।।२३७।। सामान्यार्थे स्फाटिकं स्याद् विश्वामित्रं विशेषके । रौप्यमध्ये महेशानि सौवर्गं गुरुपात्रके ।।२३८।। भैरवे शुक्तिपात्रं च वीरे शंखामिधं भवेत्। शक्तिपात्रं काचमयं योगिनीनां कपालजम् ॥२३६॥ बलिपात्रं ताम्रजं च पाद्यादीनि यथाक्रमात्। रत्नजानि महेशानि तदमावे तु पूर्ववत् ।।२४०।। केरलाख्ये क्रमे प्रोक्तः काश्मीरं शृणु पार्वति । सामान्यार्घं महेशानि ताम्रजेन तु कारयेत् ।।२४१।। तुम्बीमवं विशेषाघें कि वा स्फाटिकमिष्यते। शुक्तिजं गुरुपात्रं स्यात् घटो रौप्यसमुद्भवः ॥२४२॥ भैरवे तु कपालं स्याद् यद्वा मुनिकपालजम्। स्फाटिकं शक्तिपात्रं स्याद् योगिन्यास्तास्त्रजं सवेत् ॥२४३॥ बलिपात्रं काचभवं शुक्तिजं पाद्यकर्मीए। श्रद्याचमनकर्मादौ शंखजं परिकीतिंतम् ॥२४४॥ श्रन्यानि ताम्रपात्राणि शाकरोत्थं च मोगजम्। गौडमार्गे शुक्तिपात्रं सामान्यार्थे प्रकीर्तितम् ॥२४५॥ विशेषार्ध्यं कपालाख्यममावे स्फाटिकं भवेत्। स्वर्गो द्भावो प्रदर्भित्रावसो गुरुपार्श्व राष्ट्र शिष्यजम् ।।२४६।।

भैरवाख्यं महेशानि विश्वामित्राभिधं मतम् । वीरपात्रं काचजं स्यात् शर्करोत्त्यं तु शक्तिकम् ।।२४७॥ रत्नपात्रं तु योगिन्या विलपात्रं तु कूर्मजम् । पाद्यादीनि महेशानि यथालाभं तु कारयेत् ।।२४८॥ सोगपात्रं तु काश्मीरे गौडे स्यादात्मपात्रकम् । दिव्यपात्रं केरले स्यादिति पात्रस्य निर्णयः ।।२४६॥ केरलाख्ये संप्रदाये नारिकेरेऽर्घ्यपूजनम् । काश्मीराख्ये संप्रदाये स्फाटिकेऽर्घ्यपूजनम् । गौडमार्गे महेशानि कपालेऽर्घ्यप्रजनम् ।।२५०॥ इति ॥

अन्यच्च विद्यार्गंवे, देवीयामले-

मंत्राणींषधिचूणैंश्च घटितं पात्रमुत्तमम् ।
तत्पाञेण वरारोहे पूजयेत् परदेवताम् ॥२५१॥
षण्मासाभ्यन्तरे तस्य मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ।
तथा मन्त्राणंनक्षत्रवृक्षोत्त्र्यं पात्रमुत्तमम् ॥२५२॥
तेनोत्तमेन पात्रोण तर्पयेत् परदेवताम् ।
तथेव मन्त्रसिद्धिः स्यान्नात्रकार्या विचारणा ॥२५३॥
एतत् पात्रद्वये देवि न वक्तव्यं कदाचन ।
मंत्रयोन्यर्क्षसंभूतं पात्रं चैवोत्तमोत्तमम् ॥२५४॥
परसिद्धघाह्वानकरं तत्पात्रेण च तर्पणम् ।
पराभिचारशमनं तथा च मंत्रसिद्धिदम् ॥ इति ॥२५४॥

नक्षत्रवृक्षं श्रीशारदातिलकेऽस्त्रप्रकरणे स्पष्टम् ।

श्रय कलशलक्षाएं विज्ञानेश्वरसंहितायाम्—
कलास्तु शेरते यत्र कलशः स च उच्यते ।
धर्मार्थकामदा यत्र पूज्यंते कलशश्च सः ॥२४६॥
पड्विशदंगुलायामं षोडशांगुलमुचकम् ।
चितुरिगुलके कण्ठि मूलं तस्य षडंगुलम् ॥२४७॥
अवविश्वरा

4 Stollan

सौवर्णं राजतं ताम्नं कांस्यजं काचसंभवस् ।

पाषार्णं मृण्मयं वापि घटमत्ररामुत्तमम् ।

कारयेद् देवताप्रीत्यै यथालाभं तु साधकः ॥२५८॥

La Caralla Car

एतत्फलं च-

सौवर्णं मोक्षदं प्रोक्तं राजतं भोगदं स्मृतम् ।
ताम्नं प्रीतिकरं प्रोक्तं कांस्यजं पुष्टिवर्धनम् ॥२४६॥
काचं वश्यकरं प्रोक्तं पाषार्णं स्तंभकर्मिण् ।
मृण्मयं सर्वकार्येषु प्रशस्तं सुपरिष्कृतम् ॥२६०॥
प्रथ पात्राणां मानम्—

चतुरंगुलमुच्छ्रायमायामं द्वादशांगुलम् ।

प्रष्टांगुलं सिवस्तारं द्रोग्णग्राहिजलं तथा ॥२६१॥

तथा पात्रं पूर्णदीक्षा सूर्याघ्यं च प्रकीतितम् ।

विशेषाध्यं महेशानि ग्रायामे वसुसंज्ञकम् ॥२६२॥

षडंगुलं च विस्तीर्णमुत्तानं नौसमाकृति; ।

प्रथवा देवदेवेशि पात्रं च वर्त्तुलीकृतम् ॥२६३॥

प्रश्वतथपत्राकारं वा कृतपाकारमेव वा ।

त्रिकोग्णाकारपात्रं वा त्रित्रियोनिसमन्वितम् ॥२६४॥

मध्यविदुयुतं पात्रं ध्वजिचन्हसमन्वितम् ।

प्रथवा तु मगाकारं ध्वजिवदुं सकेशरम् ।

एवं पात्रं समानीय स्वेष्टदेवं प्रपूजयेत् ॥२६४॥

of

यथ पात्र विसर्जनक्रमः-

सम्प्रदायक्रमेराँव पात्राराां स्थापनं मतम्।
पात्रे संस्थापिते देवि पात्राराां चालनं यदि ॥२६६॥
पुनरादि समारम्य पात्राराां स्थापनं चरेत्।
पात्रसंघट्टनं देवि यदि सूयात् प्रमादतः ॥२६७॥
पुनः पात्राराा संस्थाप्य पूजयेज्जगदंबिकाम्।
संस्थापिते पात्रवरे पात्रोत्सर्जनक हि गार्रि हि ।।

विसर्जनमकृत्वा तु'पुनस्तु पूर्ववद् यजेत् ।

त्रिसंघ्यं पूजयेद् देवि पात्रस्थापनपात्रतः ॥२६६॥

स्थापितैरेव पात्रैस्तु पूजयेत् परमेश्वरीम् ।

विसर्जनोत्तरं देवि पात्राणां च विसर्जनम् ॥२७०

तथैव मंडलं ज्ञेयं रेखया लुप्तकं ज्ञिवे ।

पुनः पुनः स्थापयेच्च यावद्रेखा स्फुटेक्षते ॥२७१॥

लुप्ते पुनर्मण्डलं च कृत्वा संस्थापयेत् क्रमात् ।

नित्ये त्वेवं समाख्यातं काम्ये नैमित्तिके नवम् ॥२७२॥

was and sale

ग्रयः पात्राधिकारिएाः--

वीरपात्रं तु वीराणां शक्तीनां शक्तिपात्रकम् ।

प्रघोराया महेशानि योगिनीपात्रमीरितम् ॥२७३॥

गुरुपात्रं श्रीगुरूणां यतीनां भैरवाभिष्यम् ।

कापालिकानां मुख्यं च विलपात्रं प्रकीतितम् ॥२७४॥

तदभावे तु शूद्राणां सर्वाभावे जले क्षिपेत् ।

दिव्यं देव्यग्रतः पानं वीरं वीरसमागमे ॥२७४॥

प्रन्यथा पशुपानं च नरकार्थं प्रकीतितम् ।

सामान्याद्यं विशेषाद्यंमेकीकृत्य स्वयं पिबेत् ।

घटद्रव्यं तु वीराणां वीरामावे स्वयं पिबेत् ॥२७६॥

याधारमाह—

श्राधारं त्रिविधं प्रोक्तं त्रिपदं वा चतुष्पदम् ।
श्रयवा वर्त्तुलं कुर्याद् रमग्गीयं महेश्वरि ॥२७७॥ इति
केरलाख्ये संप्रदाये संकल्पं शृणु पार्वति ।
श्रीत्यर्थं देवतायाश्च संकल्पः परिकोर्तितः ॥२७६॥
काश्मीराख्ये संप्रदाये विनियोगं शृणु प्रिये ।
श्रत्यक्षदर्शनार्थं हि देवताया महेश्वरि ॥२७६॥
गौडमार्गे महेशानि सर्वसिद्धच्यंमेव हि ।
देवताया यदा प्रीतिस्तदा सर्वं प्रवतंते ॥२६०॥
देवताया यदा प्रीतिस्तदा सर्वं प्रवतंते ॥२६०॥

प्रत्यक्षदर्शनं देवि प्रीतौ लीनं प्रवर्तते । तथान्याः सिद्धयो देवि प्रीतौ लीना हि सर्वदा ॥२८१॥ तस्मात् प्रीति मुंख्यसूता प्रीत्यर्थं विनियोगता । इति ते कथितं किचिदन्यच्च कथयामि ते ॥२८२॥

देव्युवाच-

ऋषिच्छंदोविहीनस्य स्वप्नलब्धस्य वै मनोः । विनियोगः कथं तत्र घ्यानं वा पीठपूजनम् । संप्रदायत्रये शंमो वद संसिद्धिहेतवे ॥२८३॥

शिव:--

संप्रदायत्रये देवि शुणु मेदं समाहिता। ऋषिः शिव इति प्रोक्तो गायत्री छंद ईरितम् ॥२८४॥ चिद्रपा देवता देवि की जकाद्यं न विद्यते। केरलाख्यं क्रमं प्रोक्तं काइमीरं शृ्णु तत्त्वतः ॥२८४॥ ऋषिच्छंदाद्यनुक्ते तु ऋषिक ह्या महेरवरि। गायत्री छंद स्नादिष्टं हलो बीजानि पार्वति ॥२८६॥ स्वराः शक्तय इत्युक्तास्त्वव्यक्तं कीलकं मतम्। पीठं तु मातृकापीठं घ्यानादि मातृकोक्तवत् ॥२८७॥ गौडक्रमे महेशानि सिद्धमंत्रतया शिवे। न ऋष्यादिरिति प्रोक्तो न पूजा नियमादयः ॥२८८॥ जपमात्रेण सिद्धिः स्यान्नात्रकार्या विचारणा । यद्वा मूलषडावृत्त्या षडंगन्यासमाचरेत् । पीठेऽनुक्ते शक्तिपीठं ध्यानेऽनुक्ते तु मातृका ॥२८६॥ पुरक्चर्याद्यनुक्ते तु दिक्सहस्रं जपेत् प्रिये। द्वाविशाक्षरपर्यन्तं दिक्सहस्रं जपेत् प्रिये। तदुत्तरं महादेवि गजांतकसहस्रकम् ॥२६०॥ केरले तु पुरश्रयी दशांगी परिकीतिता। म्रष्टांसी तु ... पुरस्मर्या श्राह्मीरे॥कामित्रः म्या प्राप्त हे भू Gangotri

पंचांगी तु पुरश्रयां गौडमार्गे प्रकीतिता । स्वप्नलब्धे महेशानि त्र्यंगा पुरिष्क्रिया मता ।।२६२।। जपो होमो बाह्मणानां भोजनं त्रितयं त्विदम् । तथा जपविधा देवि सूतकद्वयमोचनम् ।।२६३।। कृत्वा जपेत् स्वप्नलब्धमंत्रं नान्यत् प्रकीर्तितम् । सूतकद्वयमुक्तेश्व सद्पायं ब्रवीमि ते।।२६४।। भूमौ लिखेदष्टदलं तन्मध्ये स्थापयेद् घटम्। घटे संस्थापयेन्मंत्रं लिखितं वटपत्रके ।।२६४।। कुं कुमेन गुरोस्तत्र प्राणान संस्थापयेत् सुधीः। गुरोः सकाशाद् ग्रहरगाज्जातसूतकवाररगम् ।।२६६।। विना पुरिक्रियां देवि मंत्रो मृत इतीरितः। तस्मात् पुरिष्क्रयां कुर्यान्मृतदोषनिवृत्तये ।। २६७।। अनुक्तहोमद्रव्ये तु तिलेहीमः प्रकीतितः । घृतेन कथितो देवि यवेनापि तथैव हि ।।२६८।। केवलं घृतहोमेन वरदाः सर्वशक्तयः। स्वप्नप्राप्तोऽरिमंत्रश्चेत् पल्लवं योजयेत् तदा ॥२६६॥ पल्लवै: संयुतो यो हि मंत्रान्तरमुपाश्रयेत्। होमकर्म श्रृणु प्राज्ञे पूर्वप्रश्नोत्तरं तव ॥३००॥ होमे स्वाहां प्रयुञ्जीत हृन्मंत्रस्तर्पेणे तथा। तथाभिषेके देवेशि हुन्मंत्रः परिकोतितः ॥३०१॥ होमेऽग्निजाया या प्रोक्ता सा होमे परिनिष्ठिता। मंत्रमध्ये यदा वन्हिजाया चेद् वर्तते शिवे ।।३०२॥ मंत्रांते चैव हृन्मंत्रस्तथा वन्हिप्रिया भवेत्। मंत्रेगीव तु निर्वाहो द्वितीया कि प्रयुज्यते ॥३०३॥

श्रीशिव:-

मंत्रांते वन्हिजाया तु सा स्यान्मंत्रस्वरूपिएगो । होमांयत्वेबद्धितोया्बद्धक्तिता संत्रुपारगैः ॥३०४॥

तथैव तर्पेषो विद्धि हुन्मंत्रस्तुं द्वितीयंकः। 🗥 🔭 🔭
एवं न कुरुते यस्तु स हीनायुर्भवेत् जिंवे ॥ई०५॥ कि नक
सैवाग्निजायां चेद् होमें गृह्यते प्रारंगवल्लभे । क
स्वस्य प्रभुत्वमायाति मंत्रः विलन्नो भवेत् तैवा ॥३७६॥
विलन्नदोषिनवृत्यर्थं होमे स्वाहा मयेरिता'।
श्रांतदोषनिवृत्यर्थः हुम्मंत्रस्तर्पणि भतः ॥३०७॥ 🗥 🐧 🧳
जंमे क्षोमे महेशानि हुँफड़ादि तु वर्तते । कार्या पहु
तथापि पल्लवत्वेन युनर्देयं सहेक्वरि ॥३० द्या । । । ह
ह्र-मंत्रेग पुटीकारे क्रियमाणे महेरवरि ।
मंत्रक्षोभितृवृत्तिस्तुःसर्बदा जायते विधि। ।
मंत्रमध्ये नितर्देवि वर्तते व्यद्यपिश्तिये ना ३ व्हा रहा है
तथापि संपुटत्वेन पुनर्देषा महर्द्विष् । प्राप्त विकास
एवं पल्लवषट्कं तु संपुटत्वेस योजयेत्।।३१०॥ वर्षः
तदैव काम्यकर्मस्य सिद्धिर्भवति नात्यथा ।
पात्रासादनकं कर्म केरलाख्यक्रमे शृणुगा३११मा
पात्रषोद्धशकं स्थास्य संपूज्य परदेवताम् ।
तदंते होमयेद रात्री तदंते तर्पणं भवेत् ।।३१२।।
राप राजपुषाग्रस्वतायाः समाच्छेत हर
יייי ייייי פעונטון אוונטון אווער
नना प्या तथा दाव विश्वाख्यः प्रकातितः ।
स्वसामुख्यन क्वामा स्थापयेत् पात्रराशिक्म ।।३ १४८० ः
भाडस्य च भतःदीव नियंककारेगा स्थानिक
ग्रासनादिसमारम्य भूतशुद्धच तम् शिवेशाह १५।।
। सद्ध्याचा तुः संप्राक्ता ततस्त कल्लिका क्रिकेन
ात्यत्याादपात्रकमान्त सिद्धप्राचा प्रकीतिता ॥३१६॥
पुजाया त सहशास काल्यान किल स
ग्रग्नीशिधुरवायंध्यमध्ये विश्वगपूजनम् ॥३१७॥

करलस्य मत प्रांवत काइमीराख्यं मतं शूणा।
अस्मान्यह ।तवायव्यशस्काराषि सध्यतः ॥३१८॥
चत्रविक्ष महेगाति मंद्रलावर्चमार्गनः ।
श्चरितासरवायव्यमध्ये पहले बद्धक्रम ॥३००॥
श्रानीशासुरवायव्यमध्ये पृष्ठे षडङ्गकम् ॥३१६॥ गौडमार्गे विवृदं भट्टे क्रिया क्रियं गणाः
सार्वा का नामारा वर्षाता मुखा
ासळ्माचा।ववा दाव करल गुरुपूजनम् ॥३२०॥
निवाहुन्य महिसामा गुर्यः सात संबंदा ।
कल्प्या त्रिपेड् क्तियाकारेशा देवीपृष्ठे क्रमेंगा च ॥३२१॥
दिव्यादिक्रमयोगेन तद्यः स्वागुरुक्रमम् ।
दक्षोदक् च प्रतीच्यां च रेखींत्रितयक चरेत् ॥३२२॥
दिन्यौघो देवता पृष्ठे तदन्यौ तु स्थलद्वये 🔭 💛 🦠 👭
विद्याया । व्हामभागे तु स्वगुरुं पूजयेत् शिव भि २३॥ 🖙 🖻
काइमीरे किल्पता दिक् स्यात् गौहेऽपि च तथैव सा । केंद्र
कल्पितक्रमयोगेन यदि पूजा भवेत् शिवे ।।३२४॥ 👵
तेषां दिक्पतयो देवि इयुत्क्रमस्था मकंति हि। १ p
देवीवाक्यम्— ॥४००० ।।।। ।।। ।। ।।
स्वामी यत्र समायाति स्नत्रैवांगादिदेवताः ।
न चांगे मुख्यता, देव तृहद्गुजायां तु मुख्यता ॥३२४॥
शिववाक्यम्—
कदा का वागस्थिता प्राची कर्ति जाताः पुरंदराः । गर्
कुत्र के वा स्थिता देवि सर्वुं कथ्य सुवते ए३२६॥
देवीवाक्यम्— ॥ । । । । । । । । । । ।
यदाशामिमुखो भूत्वा स्रक्रराजं समुद्धरेत् 🗁
सैव प्राची विविद्धिष्टा ब्रेवपृष्ठे प्रतीचिका ॥३२७॥
तह्क्षे दक्षिणं ज्ञेयं वामे चैवोत्तरं स्मृतस् ।
यथा। स्था किल्मा कि परिवारास्तथा-तथा ॥३ २८॥ ।
to the restaurance of the second of the seco

यस्याः क्रुपाकटाक्षेगा स्थानं लब्धं च तैः पुरा । ते सेवार्थं समायांति देवतायाः महेश्वर । विलदानविधौ देव सिद्धा वा किल्पता तथा ॥३२६॥ देवतादक्षहस्ताख्यस्वसांमुख्यक्रमेरा च। प्राची प्रोक्ता केरले च गौडे प्राग् दक्षभागतः ॥३३०॥ देव्यग्रदलमारभ्य प्रादक्षिण्यक्रमेग्। तु। काश्मीराख्यक्रमे प्रोक्तं पूजनं तत् क्रमेगा तु ॥३३१॥ वीजानां लेखनं देवि तथैव त्रिविधं मतस्। प्रसिद्धाख्यक्रमेर्गंव केरले परिकोतितम् ॥३३२॥ बीजलेखो गौडमार्गे किल्पतासु दिशामु च। प्रसिद्धास्वेव काश्मीरे बीजलेखक्रमी भवेत् ॥३३३॥ ग्रर्घ्यं पीठपूजा च प्रसिद्धा केरले मता। देवीपृष्ठदलारम्य गौडकाइमीरयोविधिः ॥३३४॥ श्रन्तःपूजोत्तरं देवि वलिदानं च केरले। पीठपूजोत्तरं देवि काश्मोरे वलिदानकस् ॥३३५॥ पंचोपचारोत्तरतो गौडे तु वलिदानकम्। तत्रैवांते होमकर्म समासाद्य प्रहोमयेत् ॥३३६॥ केरलाख्ये संप्रदाये पूजांते होमकर्म च। पंचोपचारपूजांते कावमीरे होमकर्म च ॥३३७॥ नैवेद्यांते होमकर्म गौडमार्गे महेश्वरि । केरलाख्ये संप्रदाये हृदये च विसर्जनम् ॥३३८॥ काइमीराख्ये संप्रदाये सहस्रारे विसर्जनम्। गौडेमार्गे विशेषेगा हृदये च विसर्जनम् ॥३३६॥ गौडे सर्वत्र गमनं कीर्तितं तु मया तव। वडाक्तासे Aसहेसा लिश्काकसीरे गासनं अवेद्यां मिं igitized by eGangotri

कुलाकुलविमेदेन केरले च गमागमः ।।३४०॥ इति ।

इति श्रीमदागमरहस्ये सत्संग्रहे उत्तराघें केरल-काश्मोर-गौड सम्प्रदाय-कथनं नाम द्वितीयः पटलः । ग्रादितस्त्रिशत्।

एवं सम्प्रदायक्रमं ज्ञात्वा पूर्णंदीक्षानुगृहीतस्तत्तत्फलावाप्तये तत्तद्देवतां यजेत्।

यच्च तंत्रे-

धनकामो गरापितमारोग्ये च दिवाकरम् ।
तारापितं च श्रीकामो मुक्तिकामो जनार्दनम् ॥३४१॥
नारायरां सर्वकामः श्रीकामः पुरुषोत्तमम् ।
श्रीविद्यां भोगमोक्षार्थी विद्यार्थी कालिकां यजेत् ॥३४२॥
मातंगीं धनकामस्तु वाराहीं शत्रुनिग्रहे ।
भुवनेशीं राज्यकामस्तथा नीलसरस्वतीम् ॥३४३॥
सर्वकामः कलियुगे श्रीमत्त्रिपुरमुन्दरीम् ।
वंगलां सर्वसिद्धचर्थं स्तंमनार्थं क्रिशेषतः ॥३४४॥
तथा धूमावती प्रोक्ता सर्वशत्रु निवर्हणे ।
प्रत्यंगिरास्त्रहनने परकृत्यानिवारणे ॥३४५॥ इति ।

अन्यत्रापि--

मूतिकामस्तु सततं पूजयेत् त्रिपुरां कलौ ।

कालिकां च महामायां वाणीकामेन चार्चयेत् ॥३४६॥

भुवनेशीं स्वर्गभूत्ये तारां वाग्जालनाशने ।

कमलां धनकामस्तु विद्याकामः सरस्वतीम् ॥३४७॥

कलौ नीलपताका च तथा नीलसरस्वती ।

पूज्या वाक्सिद्धिकामेन शीष्ट्रसिद्धचे तथाचयेत् ॥३४८॥

कर्मणां सिद्धिकामस्तु पूजयेद् वे विनायकम् ।

भोगकामस्तु शशिनं वलकामः समीरणम् ॥३४६॥

संसारमुक्तये यत्नात् पूजयेत् सर्वगं शिवम् ।

स्यामयोगं तथा मोक्षं यहीत्सेद्ध ज्ञानमञ्जयम् ॥३४०॥

ध्यामयोगं तथा मोक्षं यहीत्सेद्ध ज्ञानमञ्जयम् ॥३४०॥

सोऽर्चयेच्च विरूपाक्षं सर्वसत्वस्यं हरम् छिन्नमस्तां राजपूर्वां मातंगीं कामकालिकाम् ॥३४१॥ इमशानकालिकां देवि सर्वसिद्धम् सदा जपेत् । भ्रश्वारूढां कुक्कुटीं च तथा भोग्वतीं शिवे ॥३४२॥ नित्यिक्लिश्रां च मेरुण्डां स्त्रीवश्यार्थं जपेत् प्रियेत्। पर्वा सर्वाकर्षं एकामस्तु कालिक काक्षरीं जपेत् ।।३५३।। तथा मधुमतीं विद्यां सर्वोतकृष्यं जपेत् प्रिये। पराप्रासाद्विद्यां च्रुद्धां षट् शांभवेश्वसीस् ।।३५४।। सर्वकामप्रसिद्धचर्यं जपेद् यत्नेन सुन्दरि । घनदां ऋदिकामेन पादुकां चावनाशने ।।३११।। देवकोपप्रशान्त्यर्थं तद्गायल्गे तद्यु जमेत्। भैरवो मूतरक्षाय शरभो वाथ मारुति: ॥३%६॥ श्रोदुर्गा दु:खहनने नृसिहस्तृद्वदेव हि। चौरमीतिहरो देवः कार्तवीयौ त्रराधिपः ॥३४७॥ प्राप्तदीक्षः प्रसन्नातमा युरोराज्ञापरायएः। 🚶 🚟 श्राचारनिष्ठः संपूज्य देवानिष्टमवाष्नुयात् ॥३,५८०। हेन् ग्रथाचारश्रीष्ठ्यम्— श्रादो तु वैदिकं प्रोक्तं ततो हि वैष्ट्र्णवं परम् । ततो गारापतं प्रोक्तं ततः सौरं प्रकीतितम् ।।३५६।।

श्रादी तु वैदिकं प्रोक्तं ततो हि वैष्ट्रावं परम् ।
ततो गारापतं प्रोक्तं ततः सौरं प्रकीतितम् ॥३४६॥
सौरात् श्रेष्ठं शेवशास्त्रं शैवात् शाक्तं महेश्वरि ।
शाक्ताद् वामं महादेवि श्रेष्ठं संपरिकीतितम् ॥३६०॥
वामात्तु दक्षिरां श्रेष्ठं दक्षिराद वीरमुत्तमम् ।
श्रथ वीराच्चावधूतं कौलपूर्वं प्रकीतितम् ॥३६१॥
कौलात् परतरं देवि नास्ति नास्तीति निश्चितम् ॥
श्रम्यच्य कुलारांवे—

सर्वेभ्यश्चीत्तमा वेदा वेदेभ्यो वैष्णावं परम् । वैष्णावादुत्तमं शैवं शैवाद दक्षिणमुत्तमस्याः ॥ विष्णु Gangotri CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection प्रस्तानिक

दक्षिरणादुत्तमं वामं वामात् सिद्धान्तमुत्तमम्। सिद्धान्तादुत्तमं कौलं कौलात् परतरं ने हि ।।३६३।। गुह्याद गुह्यतरं देवि सारात्सारतरं परम्। साक्षात् परशिवं देवं कर्णात् कर्णगतं कुलम् ॥३६४॥ मिथत्वा ज्ञानमंथेन वेदागममहार्शवस् । सारज्ञेन मया देवि कुलंधर्मः संयुद्धतः ।।३६५।। एकतः सकला धर्माः यज्ञतीर्थवतादयः। एकतः कुलधर्मस्तु तत्र कौलोऽधिकःप्रिये ।।३६६।। प्रविश्वन्ति यथा नद्यः समुद्रमृजुवेकगाः । तथैव समयाः सर्वे प्रविष्टाः कुलमेव हि ।।३६७।। अस्ति चेत् त्वत्समा नारी मत्समः पुरुषोऽस्ति चेत्। कुलेन च समें धर्म कथयेत् स तदा प्रिये ॥३६८॥ कुलधर्मं हि मोहेन योऽन्यधर्मेषु दुर्मतिः। सकृत् साधारणं ब्रूयात् सोऽन्त्यजो नान्त्यजोऽन्त्यजः ॥३६६॥ यो वै कुलाधिकं धर्ममज्ञानाद् वदति प्रिये। ब्रह्महत्याधिकं पापं स प्राप्नोति न संशयः ॥३७०॥ दर्शनेषु च सर्वेषु चिराभ्यासेनं मर्निवाः । मोक्षं लभन्ते कौले तु सद्य एव न संशयः ।।३७१।। योगी चेम्नैवं मोगी स्यात् मोगी चेन्नैव योगमाक्। योगभोगात्मकं कौलं तस्मात् सर्वाधिकं प्रिये ।।३७२।। भोगो योगायते साक्षात् पातकं सुकृतायते । मोक्षायते च संसारः कुलधमें कुलेश्वरि ॥३७३॥ इत्यादीनि वहूनि वाक्यानि तत्रैव द्रष्टव्यानि ।

भविकारिएाश्च तत्रैव-

पूर्वजन्मकृताभ्यासात् कुलज्ञानं प्रकाशते । CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection विनामा विकास का अविकास का प्रविद्या स्थित विनामा विकास का अविकास का अवि जन्मान्तरसहस्रेषु या बुद्धिविहिता नृए॥म् ।
तामेव लमते जन्तुरुपदेशो निरर्थकः ॥३७५॥
श्रीववेष्णवदौर्गार्कगाएणस्यादिसंभवैः ।
एते विशुद्धिचत्तस्य कौलज्ञानं प्रकाशते ॥३७६॥
पुराकृततपोदानयज्ञतीर्थजपत्रतैः ।
क्षीरणाधानां नृर्णां देवि कौलज्ञानं प्रकाशते ॥३७७॥
त्वमहं देवि कल्यािए यस्य तुष्टाबुमाविष ।
देवतागुरुमक्तस्य कौलज्ञानं प्रकाशते ॥३७८॥
श्रीगुरौ गुरुशास्त्रेषु कौलिके तु कुलान्वये ।
यस्य भक्तिर्द्धा तस्य कौलज्ञानं प्रकाशते ॥३७६॥
गुर्वाज्ञापालके धन्ये सदाचारे दृढवते ।
शुद्धचित्ते प्रशान्ते च कुलज्ञानं प्रकाशते ॥३८०॥

Legan

अनिधकारिशश्च तत्रैव-

श्रनहें कुलविज्ञानं न तिष्ठित कदाचन ।
तस्मात् परोक्ष्य वक्तव्यं कुलज्ञानं मयोदितम् ॥३८१॥
चंचलाः कृपणाः लुब्धाः दुराचारावचलेन्द्रियाः ।
निष्ठाहीता दांभिकाश्च पूज्यद्रोहकराश्च ये ॥३८२॥
न तेऽधिकारिण्ञात्र देवताशापभागिनः ।
न त्रूयात् कुलधमं तु श्रयोग्ये शिवशासनम् ॥३८३॥
श्राज्ञाभंगं हि यः कुर्याद् देवताशापमाप्नुयात् ।
श्रवोध्य समयाचारं कुलधमं वदेत् यदि ॥
स गुरुवचिप शिष्यवच योगिनीनां भवेत् पशुः ॥३८४॥ इति ।
कुलशब्दोऽत्र शक्तिवोधकः।

यच्च यामले--

कुलं शक्तिः समाख्यातमकुलं शिव उच्यते । दक्षाधीकोऽकृत्यको प्रोक्तिः वामेको कुलनायिको शाउँ ५।।

तद्धमं कुलधमं स्यान्मादिपंचकसंयुतम् । श्रकुलं तद्विहोनं स्याद् दक्षधर्मं श्रमावहम् ॥३८६॥ इति ।

कुलधर्मं च सद्गुरुमाश्रित्य यथाविधि प्राप्तानुज्ञो यथाशास्त्रमिष्टमारा-ध्यैहिकानन्दानुभवमनुभूय संविद्विभूतिमयोऽन्ते परां गर्ति प्राप्नुयादिति । यच्च यामले—

श्रीगुरोः करुए।लेशमालंब्य तदनुज्ञया । महामायां भजन् मत्यों भुक्ति मुक्ति च विदति ॥३८७॥ 1.9 mg 17 8m 10 सैव विद्या महामाया सृष्टिस्थित्यन्तकारिगो। नानारूपा साधकेष्टदात्री मुक्तिफलाश्रया ॥३८८॥

ग्रथ विद्याभेदाः-

काली तारा छिन्नमस्ता सुन्दरी वगलामुखी । मातंगी भुवना लक्ष्मी धूं म्रा त्रिपुरभैरवी ।।३८६।। एता एव महाविद्याः सिद्धविद्या युगान्तरात्।

अन्यच्च बृहत् तंत्रराजे—

दश संख्या महाविद्यास्तासां नामानि वच्म्यहम् । सिद्धविद्या महाविद्या विद्येत्येवं युगक्रमः ।।३६०।। सत्ये युगे सिद्धविद्या सुन्दरी भुवनेश्वरी। काली तारेति देवेशि सिद्धविद्याः प्रकीर्तिताः ॥३६१॥ छिन्नमस्ता च वगला मातंगी कमला तथा। एता एव महाविद्या विद्यां शृणु महेश्वरि ।।३६२॥ भैरवी घूमावती च विद्यात्वेन प्रतिष्ठिते।

अन्यत्रापि—

सत्ये काली च श्रीविद्या कमला भुवनेश्वरी। .सिद्धविद्या महेशानि त्रिशक्तिर्वगला शिवे ।।३६३।। महाविद्या । सद्यायमे अमुना भेरवी शिवे। Digitized by eGangotri ध्रमावती च विद्या स्यात् त्रेतायां शृणु पार्वति ।।३६४।।

yora aggrans.

(3) 24 gin

काली तारा सुन्दरी च सिद्धविद्याः प्रकीर्तिताः। मातंगी भुवना लक्ष्मी महाविद्याः प्रकीतिताः ।।३६५।। ध्रमावतो भैरवी च विद्यात्वेन महेश्वरि । द्वापरे कालिका तारा रोचनी भैरवी तथा ॥३६६॥ सिद्धविद्या महेशानि सुन्दरी भुवना रमा। ध्रुमावती महाविद्या मातंगी कमला तथा।।३६७॥ विद्यात्वेन महेशानि कलौ काली तु केवला। काली तारा छिन्नमस्ता सिद्धविद्या कलौ मता ।।३६८।। सुन्दरी भैरवी लक्ष्मी मितंगी भुवनेश्वरी। महाविद्या महेशानि धूम्रा च वगला शिवे ।।३६६।। विद्यात्वेन महेशानि कलौ संकीतिता मया। उन्मत्तभैरवमते भेदोऽन्यः कथ्यते शृएा ।।४००।। काली तारा महाविद्या षोडशी भुवनेश्वरी । भेरवी छिन्नमस्ता च विद्या धूमावती तथा ॥४०१॥ वगला भैरवी श्रीइच मातंगी कामकालिका। त्रयोदश महाविद्या युगभेदात् त्रिघाऽपि च ।।४०२॥ एता एव महाविद्या त्रियुगं व्याप्य संति च। येयं श्रीकालिकादेवी विद्याराज्ञी समीरिता ॥४०३॥ यस्या दासस्य च कलिः पादपूजां करोति हि। तेन चितामिएक्रिया कलिदोषविनाशिनी ॥४०४॥ कलिदोषप्रशमनात् तेनेयं कालिका स्मृता । वरदानेषु चतुरा तेनेयं दक्षिए। स्मृता ॥४०५।। कालिका षोडशी तारा वामाचारित्रया मता। छिन्नमस्ता च वंगला वाममार्गाधिदेवता ।।४०६।। मातंग्यपि महादेवि वाममार्गेश सिद्धिदा। कमलि भुवना वाला तथा धूमावता शिव ॥४०७॥

20-15 gm segsi.

दक्षिग्गाचारयोगेन सिद्धचन्त्येव न संशयः। वामाचारेगा च तथा सिद्धिदा भवति ध्रुवम् ॥४०८॥ भैरवी वामसंतुष्टा वाला दक्षिरावामगा। वसंतसु दरी विद्या तथा संगीतसुंदरी ॥४०६॥ वामदक्षिरायोगेन सिध्यन्त्येव न संशयः। रेणुका दक्षिगाचारे त्वन्या देव्यश्च दक्षिणे ॥४१०॥ श्रीविद्या च तथा वाला लोपामुद्रा तथैव च। यथा वामे तथा दक्षे सर्वामीष्टं प्रयच्छति ।।४११॥ मातंग्यां वगलामुख्यां दक्षिणाख्योऽपि वर्तते। मातंगी लघुमातंगी सुमुखी वामतत्परा ।।४१२॥ क्वचिद् गाो्रे रुद्रेऽपि विष्णौ सौरे स्वयंभुवि । वामाचारो वैदिकेऽपि भैरवा वामतत्पराः ॥४१३॥ क्षेत्रपाला वामपरा चीना कापालिकास्तथा। तथा पाशुपता देवि वाममार्गे प्रतिष्ठिताः ॥४१४॥ गोपालसुन्दरो विद्या तथा नृहरिसुंदरो। श्रीब्रह्मसुंदरी विद्या तथैव रामसुन्दरी ।।४१५॥ सुन्दरीगरापो देवि तत्पूर्वौऽपि हयाननः। यक्षिण्याद्याः सर्वविद्या कामिनी योगनायिका ।।४१६॥ वाममार्गेरा सिद्धचन्ति नान्यथा सिद्धिदाः क्वचित्। एवं च दक्षिग्गामूर्तिहयग्रीवगग्रोशकाः ॥४१७॥ वामदक्षिरायोगेन पूज्याः साधकसत्तमेः। शैवे शाक्ते गारापते सौरे स्वायंभुवे तथा ॥४१८॥ चांद्रे चीने पांचरात्रे वैष्णवे वैदिकेऽपि च। कापालिके महेशानि वाममार्गोऽत्र कारएाम् ॥४१६॥ तोतला तुलजा दुर्गा त्रिपुटा त्रिजटाऽऽसुरी। वासाचारेसातस्त्रहात्त्रत्त्व दक्षिणो शोमकारकाः ॥४२०॥

वामाचारं विहायाथ कोलीं तारां च भैरवीस । महापिशाचिनीं देवि छिन्नमस्तामपि प्रिये ॥४२१॥ उपासनां कर्तुकामः तस्य पातो भविष्यति । स दरिद्री ममद्रोही सुतहारी च जायते ।।४२२।। विशेषात् सर्वमंत्रेषु कुलाचारः प्रशस्यते । तदा सिद्धा सर्वविद्या नात्र कार्या विचारगा ॥४२३॥ महानीलक्रमेग्गैव काली शोघ्रफलप्रदा। महाचीनक्रमेग्गैव तारा पूर्णफलप्रदा ॥४२४॥ दिव्यचीनक्रमेर्गेव छिन्नमस्ताविधिः स्मृतः । गंघर्वाख्यक्रमेगौव पश्चमी भुवि दुर्लमा ॥४२५॥ महागंधर्वमार्गेग षोडशी फलदायिनी। सौमाग्यस्य क्रमेग्गैव वगला फलदा कलौ ॥४२६॥ जीवचक्रक्रमेर्णेव भेरवी भुवि कीतिता । महाधूमक्रमेर्गेव फलदा धूम्रनायिका ॥४२७॥ राजमार्गक्रमेर्गेव मातङ्गी सकलेष्टदा । ब्रह्मभावक्रमेरांव भुवना फलदा मता ॥४२८॥ स्वपुष्पक्रममार्गेग्। भैरवी वामसिद्धिदा। कलार्चनक्रमेर्गव महालक्ष्मी फलप्रदा ॥४२६॥ वीरमार्गक्रमेर्गंव दिव्यमार्गक्रमेर्ग वा। पशुमार्गक्रमेगापि मातङ्गी फलदा सदा ॥४३०॥ दशक्रमेए। देवेशि दशविद्या फलप्रदा। कुलीनं गुरुमाश्रित्य दीक्षां प्राप्य क्रमस्थितः ॥४३१॥ कुलाचारपरो मंत्री सततं सिद्धिमाग् भवेत्।

इति यामलादिषु यदुक्तं तस्माद् दीक्षोच्यते । सामान्यविशेषभेदेन दीक्षा द्विविघा, सामान्ये बहवो भेदास्तदग्रे कथयामः । विशेषस्त्वभिषेकारुसकस्तत्रादौ कुलदीक्षाः खिल्ल्यते इस्ति R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by edalligan कस्तत्रादौ प्रचच परारहस्ये—

म्रथाहं निर्एायं वक्ष्ये प्रथमं गुरुशिष्ययोः । विचार्य विधिवद् धीमान् दीक्षाकर्म समाचरेत् ॥४३२॥ ब्रह्मादिकोटपर्यन्तं जगत् स्थावरजङ्गमम्। मोहितं परया देन्या पशुरूपेरा संस्थितम् ॥४३३॥ दीक्षां तस्याः शिवे मंत्री लब्ध्वा गुरुपदार्चनात् । दोक्षितः स भवेद् ज्ञानी दोक्षाहोनः पशुः स्मृतः ॥४३४॥ यस्य दीक्षा शिवे नास्ति जीवनांतं च जन्मिनः। स जातु नोत्तरेद्देवि निरयाम्बुनिधेः क्वचित् ॥४३५॥ दीक्षाहीनस्य देवेशि पशोः कुत्सितजन्मनः। पापौघोऽन्तिकमायाति पुण्यं दूरं पलायते ॥४३६॥ तस्माद् यत्नेन दीक्षेषा ग्राह्या कृतिमिरुत्तमैः। बाल्ये वा यौवने वापि वार्धक्ये वा सुरेश्वरि ॥४३७॥ ग्रन्यथा निरयो पापी पितृन् स्वान्निरयन्नयेत्। श्रन्ते पशुर्मनुष्यः सन् पशुर्योनि व्रजेत् शिवे ॥४३८॥ पूर्वजन्माजितां प्राप्य वासनां परमार्थदास् । गुरुमन्वेषयेत् देवि कौलिकाचारदोक्षितम् ॥४३६॥ गुरुं कुलीनं तंत्रज्ञं सर्वागैः सुमनोहरस्। निरामयं च निर्लोभं निःशेषागमपारगम् ॥४४०॥ लब्ध्वा भक्त् चा प्रग्मयादौ तोषियत्वा विशेषतः। सिद्धसाद्ध्यारिनिर्गोतां दीक्षां देव्या यथाविघि ॥४४१॥ गृह् गोयात् परया भक्त्या साधको येन जायते। गुरुश्र सिष्यं रम्यांगं कुलीनं गर्भदीक्षितम् ॥४४२॥ गुरुभक्तिरतं शांतं पापभीतं कृतात्मकम्। हर्ष्या प्रदेश र प्रमुख्य कृतभागी भवेत्ररः ॥४४३॥

श्रीदेव्युवाच—

मगवन् करुणांभोधे संशयोऽयं महान् मम । यस्य चित्तो परामक्ति गुंरुर्नास्ति यथाविधः ॥४४४॥

कुलीनः सर्वतन्त्रज्ञो मंत्रसाधनसुक्षमः ।

मक्त्या परमया युक्तः स कि देव करिष्यति ॥४४४॥

श्रीशिव उवाच-

अदीक्षित उपाध्यायिवहीनः शक्तिभक्तिमान् । गुरोरभावे देवेशि पुस्तकं गुरुमाश्रयेत् ।।४४६॥

यदि किञ्चद् भवेत् देवि गुरुस्तंत्रविचक्षरणः । दीक्षितः शिवमंत्रेरण वैष्णवः शुभलक्षरणः ॥४४७॥

तं परित्यज्य यो देवि पराभक्तोऽपि भक्तिमान् । पुस्तकं तु गुरुं कुर्यात् स भवेत् शिवघातकः ॥४४८॥

गुरुं कुलीनं तंत्रज्ञं मजेन्मंत्रस्य सिद्धये । मूर्खं लोमात्मकं देवि कुलीनं च परित्यजेत् ॥४४६॥

पितुर्दीक्षां न गृह गायात् तथा मातामहस्य च । सोदरस्य कनिष्ठस्य मातुलस्य विशेषतः ॥४५०॥

दंभं वित्तेच्छया लौल्यं न कुर्यान्मनसापि वा । परलोकेच्छया कुर्यादन्यथा विफलायतः ॥४५१॥

श्रीदेव्युवाच—

भगवन् परमेशान साधकानां हितेच्छ्या । कदा दीक्षा परा ग्राह्या साधकैस्तद् वदस्व मे ॥४४२॥

श्रीशिव उवाच---

सुदिने शुभनक्षत्रे संक्रान्तावयनद्वये।
नवरात्रिदिने पित्रोः श्राद्धे स्वजनिवासरे ॥४५३॥
नववर्षदिने देवि चन्द्रसूर्योपरागके।
तिष्ये स्वजन्मनक्षत्रे दीक्षां दद्याद् विचक्षराः ॥४५४॥
СС-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized V. Kollingotri

12 miles

"merren"

तत्रादौ शुभनक्षत्रे स्नात्वा संपूज्य भैरवम् । गत्वा नदीतदं रम्यं लताकुसुममंडितम् ॥४५५॥ द्वीपं वा परमं पुण्यं चित्तसंतीषकारकम् । देवतायतनं वापि गत्त्वा दीक्षां समारमेत् ॥४५६॥ विलिप्य विधिवत् तत्र गुरुः कुर्यात् कृतान्हिकः । वेदोमीशानदिग्भागे चतुष्कोएां मनोहराम् ।।४५७।। तत्र देवि परादेव्याश्रक्रराजं च संलिखेत्। सिंदूरेगा शिवे यंत्रं मूलमंत्रं समुच्चरन् ।।४५८॥ त्रिकोर्णं विदुसंयुक्तं षट्कोर्णं वृत्तमंडलम्। वसुपत्रं त्रिवृत्तं च भूगृहेग्गोपशोमितम् ॥४५६॥ दोक्षायंत्रमिमं देवि दोक्षाकाले प्रपूजयेत्। संकल्पभूतशुद्धचादिन्यासान्तं कलशार्चनम् ॥४६०॥ कृत्वा पात्राग्णि संस्थाप्य पीठपूजां विधाय च। भ्रन्तर्यागं समाप्याथ वहिर्यागं ततश्चरेत् ॥४६१॥ गएोशधर्मवरुएाः कुवेरसहिताः शिवे । संपूज्य भूपुरे विक्षु प्रार्थयेन्सूलमंत्रतः ।।४६२॥ विंदौ श्रीमूलमंत्रेण परां देवीं प्रपूजयेत्। सदाशिवं महारुद्रं कामेशं कामनेश्वरम् ॥४६३॥ गंधाक्षतप्रसूनाद्ये घू पदीपादितर्पगः। नैवेद्याचमनीयाद्यं स्तांबूलैंश्चं सुवासितैः।।४६४।। संपूज्येशानमारम्य चाग्न्यन्तं वै त्रिकोराके । गंगां च यमुनां देवि तृतीयां च सरस्वतीम् ।।४६५॥ तारमायारमावीजै ग्घाक्षतप्रसूनकैः। संपूज्य पूजयेद् देवि षट्कोणे षट् च देवताः ॥४६६॥ भायां च मोहिनीं मेनां मंगलां सर्वमंगलाम्। महाविद्यां च देवेशि गंधाक्षतंत्रसूनके विशिष्ट्रध्ये by eGangotri

Jane Cons

Non

बाह्म्याद्या देवि मंत्रेग् ह्यष्टभैरवपूर्विकाः ।।४६८।।

माहेश्वरी च चामुण्डा वाराही नार्रासहिका ।।४६९।।

वाह्यी नारायगी चैव कौमारी चापराजिता।

वामावर्तक्रमेग्यैव पूजनीया विधानतः ।
तत्रैव पूजयेदण्टभैरवान् परमेश्वरि ॥४७०॥
महाकालं च कालाग्नि करालं विकरालकम् ।
संहारं रुद्रमीशानि सुप्तमुन्मत्तभैरवम् ॥४७१॥
संपूज्य विधिवत् तत्र तपंयेद् विधिवच्च तान् ।
एवं यंत्रं समभ्यच्यं श्रीगुरुं पूज्य यत्नतः ॥४७२॥
त्रिकोग्णकुण्डके वापि स्थंडिले संस्कृतेऽथवा ।
स्रुक्थुवाविष संपूज्य विन्हिमावाहयेत् ततः ॥४७३॥

तारं विन्हित्रयं चाग्ने वैश्वानरपदं वदेत्।

प्रज्वलेतियुगं पश्चादिहागच्छेति संवदेत्।।४७४॥

श्रष्टपत्रेषु देवेशि संपूज्या श्रष्टमातरः।

इह संनिधिमाधत्स्व वरं मे देहि युग्मकम् । फट् विन्हिजायां प्रोच्चार्य गंधेनाभ्यचंयेत् ततः ॥४७५॥ परादेव्यास्तु मंत्रेग् हुनेदाज्यं तथा शिवे । मूलेनाग्नौ शिवे दद्यादाहुतीनां शतं परम् ॥४७६॥

State of the state

घृतलंडा दिमृद्धीक लर्जू रांबुजपायसैः ।
तत्र देवीं समावाह्य परां घ्यात्वा यथाविधि ॥३७७॥
प्राङ्मुलो गुरुरासीन उत्तरामिमुलं शिशुम् ।
संस्थाप्य विधिवद् देवि कृत्वा विष्टरशोधनम् ॥४७८॥
भूतशुद्धिक्रमोपेतं प्राग्णार्थग्यविधि चरेत् ।
प्राग्णायामत्रयं कृत्वा विधायाचमनत्रयम् ॥४७६॥
तत्र मूलेन देवेशि दिशो बद्ध्वा परां स्मरेत् ।
गुरुः शिष्यायाक्षांतस्य प्रशासीस्य प्रमहेरविष्णा हिन्विधा

eni plus

वन्हेः समक्षं यंत्राग्रे दीक्षां परमदुर्लभाम् ।

ग्रानंदासक्तहृदयः शनैस्त्रः स्त्रः समपंयेत् ।

तती देव्यादच गायत्रीं ततो मूलं महेदवरि ।

कर्णामूले महाविद्यां श्रीविद्यां साधकेश्वरः ।।४८१।।

प्रथमं तु गाोशस्य मंत्रं सांगं समर्पयेतु ।।४८२।।

एवं समर्प्य देवेशि कृत्वा होमं यथाविधि ।।४८३।। शिष्यायार्घ्यस्य शेषं च दद्यादानंदनिभैरः। व्यादेवं कृपादृष्ट्या विलोक्य प्रोतमानसः ।।४८४।। उत्तिष्ठ वत्स मुक्तोऽसि सम्यगाचारवान् भव। दीर्घायुक्च सदारोग्यं देवता भक्तिरस्तु ते ॥४८५॥ आवयोस्तुल्यफलदो भवत्वेवमुदीरयेत्। पूर्गाहुति च संपाद्य बदुकं योगिनीगराम् ॥४८६॥ भूतान् संतर्प्य विलना देवि देवीं विसर्जयेत्।

> शिष्यो दोक्षां च संप्राप्य गुरुमम्यच्यं शक्तितः ॥४८८॥ तोषियत्वा प्रणामैश्च दक्षिणामिः शुभावरैः। तदाज्ञां शिरसादाय जपाय परमेश्वरि ।।४४८६।। यंत्रं मंत्रं च मालां च तंत्रं पंचांगमीवविर ।

सदाचारं मंत्रविधि चोपदिश्य शिवं स्मरेत्।

एवं समाप्य दीक्षां च विसृज्य हृदि देवताम्।।४८७।।

पुनर्जातु शिवे शिष्ये गुरवेऽपि न दर्शयेत् ॥४६०॥

श्रोदेव्युवाच-

भगवन् देव देवेश भक्तानुग्रहकारक । गाोशं चैव गायत्रीं मूलविद्यां जपेत् परास् ।।४६१।। श्रीपादुका तथा देवी शिवो वा वदुकस्तथा। सौरो वा वंष्णवो वापि कथं क च जपो मवेत्। को कां विद्यां च गृह्योयात् कः कस्यांग्रहसा स्मृत्ः ॥४६

श्रीशिव उवाच--

प्रथमेऽहनि देवेशि साधको गुरुभक्तितः। गएोशं देवि गायत्रीं मूलविद्यां जपेत् पराम् ॥४६३॥ मुहर्ते शुभदे देवि गुरुं संपूज्य प्रार्थयेत्। श्रंगमंत्रांश्च मे देहि सिद्धये कुलनायक ॥४६४॥ श्रंगमत्रांस्ततो लब्ध्वा जपेदिष्टफलाप्तये। ततो गुरुं शिवे भक्तचा वंदनैः पूजनैस्तथा ॥४९५॥ प्रार्थनामिश्च संतोष्य श्रीविद्यां प्रार्थयेत् ततः। विना श्रीविद्यया देवि साधकोऽदीक्षितः स्मृतः ॥४६६॥ श्रदोक्षितः पशुः प्रोक्तः पशुत्वान्निरयी भवेत् । स्वजन्मिन शिवे तस्माद् गुरुमभ्यच्यं मक्तितः ॥४६७॥ श्रीविद्यां प्रार्थियत्वादौ गृहग्गीयात् सर्वसिद्धये । नोपदेशक्रमे प्राह्मा श्रोविद्याऽपि कदाचन ॥४६८॥ विना पूर्णामिषेकेन न पूर्णफलदा हि सा। महात्रिपुरसुन्दर्याः श्रोविद्यां प्राप्य दुर्लभास् ।।४६६॥ सिशवां गिरिजे सांगां प्रार्थयेद् दक्षिएां ततः। विना क्यामां न सिद्धिः स्यान्ममापि परमेश्वरि ॥५००॥ द्वाविशत्यक्षरीं विद्यां प्रजपेत् साधकोत्तमः। इयामाविद्याजपेनाशु श्रीविद्या सिद्धिमेष्यति ॥५०१॥ तामसी कालिका प्रोक्ता राजसी वोडशाक्षरी। सात्विकी च परादेवी श्रीमहाषोडशाक्षरी ॥५०२॥ राज्यं देयं शिरो देयं देयं संततिर्थिने। वसुपूर्णं गृहं देयं न देया षोडशाक्षरी ॥५०३॥ विद्यां त्रिपुरसुन्दर्या लब्ब्वा गुरुप्रसादतः। मनसापीति नो व्यात श्रीविद्योपासकोऽसम्प्रह्म् । १६० का

3000,00

इयामां भजेत् परां विद्यां श्रीविद्याभेदरूपिग्गोम् । तेन सिद्धिर्भवेदाञ्च देवानामपि दुर्लमा ॥५०५॥ एवं देवि पराभक्तो दीक्षितो गुरुपुजकः। गुरूपदेशतः कुर्याद् जपपूजामहनिशम् ॥५०६॥ गुरुरेव परादेवी गुरुरेव परागतिः। गुरुमुल्लंघ्य यः कुर्यात् किचित् स नरकं व्रजेत् ।।४०७।। स्वयं दीक्षां गुरोलंब्ध्वा दीक्षितः पुण्यमाजनम्। गुरुमभ्यच्यं संप्रार्थ्यं शक्तिदीक्षार्थमीश्वरि । १५०८।। दीक्षिता यस्य नो शक्तिस्तस्य दीक्षा तु निष्फला। जन्मकोटिषु जप्त्वापि तस्य विद्या न सिद्धचित ॥५०६॥ ततः शिवे गुरुः शिष्यमाहूय परमार्थवित्। शिष्यस्त्रियं परारूपां देवीरूपां विचित्य च ॥५१०॥ अभ्यर्च्य परमां शिंक परावद् वंदनैः स्तवैः। श्रावृत्य मातृवद् देवि कन्यावद् वीक्षयेत् तदा ॥५११॥ परावत् पूजियत्वादौ ततो विद्यां समर्पयेत्। उपविश्य गुरुस्तत्र पश्चिमाभिमुखः शिवे ॥५१२॥ दोक्षाये प्राङ्मुखीं कृत्वा पूजयेद् यंत्रराजवत् । ततः सम्पूज्य देवेशि यंत्राग्रे देवतागृहे ।।५१३।। शिवो भूत्त्वा परां विद्यां कर्णमूले समपंयेत्। संप्राप्य सशिवां विद्यां गुरुं पितृवदर्चयेत् ॥५१४॥ गंघाक्षतप्रसूनाद्यं देक्षिग्गांवरपूर्वकैः। तदाज्ञां शिरसादाय जपं कुर्यात्तु सर्वदा ।। १११।। शक्तिश्च दीक्षिता भूत्वा दीक्षितोऽपि स्वयं शिवे। मंत्रं जपन् शिवे जन्तुरमरत्वमवाप्नुयात् ॥५१६॥ गुरोः पादप्रसादेन श्रीविद्या यदि लम्यते। CC-0. Arutsakthi R शिवो केवि तस्य वर्मा जंगाद्व सक्ते ।। ११९।। इति। स र्यामा स शिवो केवि तस्य वर्मा जंगाद्व सक्ते श्रयांगविद्या । तत्र सर्वसाधारएां निरुत्तरतंत्रे--

श्रीगुरुं श्रीगिए। च श्रीशिवं श्रीपरांबिकास्। दंडपारिंग ततो दद्यात् सर्वसाधारराः स्मृतः ।। ५१८।।

विशेषश्च श्रीविद्यायां, उद्ंडभैरवीये--

श्रादौ वाला विनिदिष्टा ततः पंचदशी मता। ततो नित्यामंडलं स्यात् ततश्च दर्शनानि षट् ॥५१६॥

पंचपंचिकया युक्ताः चतुःसमयदेवताः ।

युवतीषट्कसहिता ततः श्रीषोडशी स्मृता ।। १२०।।

तदुत्तरं पराविद्या ततश्ररणसुंदरी।

निर्वासादोक्षरां पश्चात् षट्शांभवमतः परम् ॥५२१॥इति।

श्यामाविद्यायाम्—

श्रीगुरुं गरापं दुर्गां वदुकं शरभं शिवम् । मंजुघोषं च सुमुखीं कालिकां तदनन्तरम् ।।५२२।।इति। दुर्गामष्टाक्षरीम् । ताराविद्यायाम्--

वदुकः क्षेत्रपालश्च गाोशो योगिनी तथा । श्रक्षोम्यश्चार्द्रपटिका घोरं पाशुपतं तथा ।।४२३।।

ततः पद्मावती प्रोक्ता मंजुघोषो महेश्वरः। सार्घपंचाक्षरी तारा रक्तचामुंडिका तथा ॥४२४॥इति।

भ्रय छिन्नायाः—

श्रीगुरुर्मालिनी चैव दीपिनी परिकीर्तिता । गएोशो भ्रामको यक्षो वटुकः क्रोधराजकः ।।४२४।। महिषघ्नी मवानी च कमला छिन्नमस्तका ।।इति। श्रथ श्रीसुन्दर्याः—

श्रव्वारूढा महादेवी संपत्कर्षा तथेव च। श्रीतिरष्करणो चेव दंडिनी मंत्रनायिका ॥५२६॥ वाला च परमेशानी नकुली कुरकुल्लुका। तारांबिका कामकला नित्याषोडशकं तथा ॥५२७ Serger San

1 No Non

Bern

विद्या तुरीया सुमुखी रिंगिविद्या तथैव च।
नवचक्रेश्वरी चैव चतुश्चरणदेवताः ॥५२८॥
पंचपंचिकसंज्ञा च षडासनमयी तथा।
समयाम्बा सुन्दरी च ग्राशादि च पूर्ववत् ॥५२६॥इति।

अथ वगलामूख्या:--

मृत्युं जयश्च वदुको पंचास्त्रं कुल्लुका तथा । तथापराजिता श्यामा चांडाली च हरिद्रकः ।।५३०॥ विडालयक्षिरणी देवी त्वरिता स्तंभनाशुगः । स्वप्नेश्वरी गणोशश्च ततः श्रीवगलाम्बिका ।।५३१॥इति।

ग्रथ लक्ष्म्याः-

श्रीविष्णुश्च गणेशश्च वैनतेयस्तथैव च । धनदा च कुवेरश्च निधिमंत्रास्तथैव च ॥५३२॥ विद्या भोगवती देवी लक्ष्मीनारायणः परः । कामाक्षी धनदा चैव भुवनाश्रीस्ततः परम् ॥५३३॥इति।

अथ मातंग्याः---

गुरुमंत्रश्च नकुली तथैव च सरस्वती । लघुश्यामा कामिनी च वीरमद्रो मतंगकः ॥५३४॥ प्रमदा मोहिनी चैव भोगेशो यक्ष एव च । ततो मातंगिनी प्रोक्ता इत्येवं क्रम ईरितः ॥५३५॥

अथ भुवनेश्याः--

गणोशस्य च गायत्र्यास्तथा मृत्युजयस्य च । वदुकस्य शिवस्यापि ततो विद्यां समर्पयेत् ॥५३६॥ अन्यदिष भूवनेशोसर्वस्वे—

शिवः शिवा विधाता च त्रिपुटा बदुकस्तथा ।
कुल्लुका च तथा देवि पंचायतनमेव च ॥५३७॥
गौरी श्रीरंजिनी मंत्रो विद्यामेदाः सशक्तयः ।
लोकपालादिमनवो बुग्गीमंत्रास्तथैव च ॥५३८॥
लोकपालादिमनवो बुग्गीमंत्रास्तथैव च ॥५३८॥

100 mg

Willera

हयग्रीवः पिंगली च खड्गरावर्ग एव च । ततः श्रीभुवनेशानी तत्त्वविद्या ततः परम् ॥५३६॥इति। ग्रय श्रीधूमायाः—

धूमावत्यंगमंत्राक्च वीरेको वदुकस्तथा।
प्रत्यंगिरा च कारभस्तथा पाशुपतो मनुः ॥३४०॥
संहारास्त्रं च ककुदी तथा च त्वरिता मता।
ततो धूमावती प्रोक्ता गएोक्सादि च पूर्ववत् ॥५४१॥इति।

अथ विद्यानां शिवा:—

कालिकायाः महाकालः सुन्दर्या लिलतेश्वरः । तारायाश्च तथाक्षोभ्यश्चित्रायाः क्रीधभैरवः ॥५४२॥ भुवनाया महादेवो धूमायाः कालभैरवः । नारायगो महालक्ष्म्या भैरव्या वदुकः स्मृतः ॥५४३॥ मातंग्याश्च मतंगः स्यादथवा स्यात् सदाशिवः । मृत्युञ्जयस्तु वगलाविद्यायाः परिकीर्तितः ॥५४४॥इति। भ्रायत्रापि परारहस्ये—

कालिकाया महाकालः सुमुख्या ग्रमृतेश्वरः ।
कामेश्वरिक्षकृटायाः शिव इत्येवमीरितः ॥१४४॥
छिन्नाया कालख्द्रस्तु शारदायाः शिव स्मृतः ।
श्रीभैरवः कालरात्र्याः शिव इत्यिमधीयते ।
मेडायास्तु विरूपाक्षः शिव इत्यिमधीयते ॥१४६॥
विश्वनाथोन्नपूर्णाया राज्ञाः मूतेश्वरः शिवः ।
नीलकण्ठस्तु दुर्गायाः शीलाया वामदेवकः ॥१४७॥
सद्योजातस्तु ताराया भुवनायास्तथेश्वरः ।
यस्या देव्यास्तु यो देवः शिवस्तस्मात् शिवं मजेत् ॥१४४॥
तेन विद्या महादेवि सिद्धिमाण्नोति सत्वरम् ।
केवलं यो जपेत् शाक्तं मनुं शैवं तु नो जपेत् ।
जन्मकोटिषु जप्तोऽपि न मनुः सिद्धिमाग् मुदेव्या । प्रिकेशियाः ।

ग्रन्यदपि चोद्ण्डभैरवीये---

कालिकाया महाकालश्चाक्षोभ्यस्तारिग्गीमनौ। त्रिपुरायां च राजेशो वगलायां च त्र्यम्बकः ।।४४०।। मातंग्याश्च महेशश्च भुवनेश्या महेश्वरः। नारायगो महालक्ष्म्या महादेवश्च वा प्रिये ।।१५१।। छिन्नायां तु करालः स्यात् शिवायां कुक्कुटेश्वरः। धूम्रायां तु ग्रघोरः स्यादिति संक्षेपतो मतम् ।। ४४२।। शक्त्या विना शिवे सूक्ष्मे नामधाम न विद्यते। शिवं विना चित्कलायां न कलात्वं क्वचिद् भवेत् ॥५५३॥ वीजांकुरन्याययोगात् शिवशक्तचात्मकं महः । इति ।

अथ दशवदुकाः -

ग्रथाद्यो हेतुबदुको द्वितीयो वदुकः स्मृतः । त्रिपुरांतकवदुकस्तृतीयः परिकोर्तितः ॥५५४॥ वन्हिवेतालवदुकश्चतुर्थः कोतितः शिवे । अथाग्निजिह्ववदुकः पंचमः परिकीर्तितः ॥५५५॥ श्रीकालवदुकस्तद्वत् करान्वदुकस्तथा । तथैकपाँदवदुकः श्रीभीमृवदुकस्तथा ॥५५६॥ त्रेलोक्यवदुकरचेव श्रीसिद्धवदुकस्तथा। दश वै वदुका ख्याताः सर्वसिद्धिप्रदायकाः ॥५५७॥ इति ।

अथ दशगगोशाः-

एकाक्षरो गरापित द्वं चक्षरश्च तथा स्मृतः। वल्लभागगापक्चैव तथा स्याच्चतुरक्षरः ॥४५८॥ महागरापितिश्चेव तथा वीरगरााधिपः। प्रोक्तो वश्यगाोशस्च तथा क्षिप्रप्रसादनः ॥ हरिद्रागरापः सिंहगणोशस्य तथा दश ।। ४४६॥ इति । ajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

ग्रथ दशविद्यायक्षिण्य:--

यद्विद्यायाश्र या यक्षी सा तस्या सेवकी स्मृता। तस्याश्चोपासको यो हि तस्य सा सिद्धचित ध्रुवम् ॥५६०॥ श्रन्यमंत्रं सेवमानो श्रन्यां सेवेत यक्षिग्गीम् । न तस्य फलिसिद्धिः स्याद् यक्षिग्गीकोपमाप्नुयात् ॥ ५६१॥ श्रादौ काली च तद्यक्षी महामधुमती परा। द्वितीया भ्रमरांबा च सुंदर्याः सुरसुंदरी ॥ ४६२॥ भैरव्याश्चन्द्ररेखा च यक्षिगा परिकीर्तिता । तारायास्तारिगा यक्षी विकटा पद्मनायिका ।। ५६३।। छिन्नाया लंपटा यक्षी वगलाया विडालिका। कमलायास्तु धनदा भुवनेश्याः शृणु प्रिये । त्रैलोक्यमोहिनी यक्षी मातंग्याः शृणु पार्वति ॥५६४॥ . श्रीमनोहारिग्गो प्रोक्ता घूमावत्याः श्रृणु प्रिये। भीषा्गी यक्षिग्गी प्रोक्ता प्रोक्तेयं दश यक्षिग्गी ॥५६५॥ एतदज्ञानतो देवि न हि सिद्ध्यन्ति कुत्रचित्। एतद् यो वै न जानाति कापि यक्षी न सिद्ध्यति ।। ४६६।।

अथ दश मण्डलानि-

दशविद्याक्रमेग्गैव प्रोच्यन्ते मण्डलान्यथ । एतद् ज्ञानवशाद् देवि सर्वा विद्या प्रसिद्ध्यति ।। १६७।। श्रप्सरो मण्डलं देवि किन्नरीमण्डलं तथा। गंधवँमण्डलं देवि सिद्धगुह्यकमण्डलस् ॥५६८॥ पिशाचमण्डलं चैव भूतिनीमण्डलं तथा। नागिनीमण्डलं देवि डाकिनीमण्डलं तथा ।। १६६।। कूष्माण्डमण्डलं देवि तथा शावरमण्डलम्। दशविद्याक्रमेर्एव श्रीक्रोधमण्डलेन वा ॥५७०॥ पार्षन्मण्डलयोगेन सर्वाः सिद्ध्यन्त सिद्धयः। मण्डलितये देवि श्रप्सराद्याः सुसिद्धिदाः ।।५७१।।इति

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

अन्यच्च

काली तारा छिन्नमस्ता वीरसाधनमार्गतः। याममात्रेग सिद्ध्यन्ति नात्र कार्या विचारगा ।।५७२।। साधनारहिते देवि वर्गालक्षद्वये शिवे। कालिका सिद्धिदा प्रोक्ता तारा श्री शिवतत्त्वकैः ।। ५७३।। छिन्नमस्ता चतुःषष्टिलक्षजापेन सिद्ध्यति । चतुराशीतिलक्षेस्तु सुन्दरी साधनं विना ।।५७४।। वाला कोर्ह्यर्धजापेन वगला पश्चसप्ततिः। श्रीमहाराजमातङ्गी वर्णलक्षेस्तु सिद्ध्यति । सिद्धविद्या महेशानि मासलक्षेण सिद्ध्यति । महालक्ष्मी च भुवना तथा घूमावती प्रिये ।।५७५।। विद्यागुरानयोगेन सिद्ध्यन्तेव न चान्यथा। विद्यामात्रे महेशानि विद्यानामार्गयोगतः ।।५७६।। मातृकार्एकृतेनैव गुरानं भाजनं भवेत्। तावल्लक्षे मंहेशानि सिध्यत्येव न चान्यथा। भैरवस्य तु योगेन शावरं सिद्धिदायकम्। एका चेद् देवता सिद्धा तदा सिद्धं जगत्त्रयम् ।।५७७।। इति । इति श्रीमदागमरहस्ये सत्संग्रहे उत्तराघें दीक्षादिकथनं

नाम तृतीयः पटलः। ग्रादित एकत्रिशत्।।

ग्रय चतुर्थः पटलः ।

श्रथ दीक्षाभेदाः। तत्रादौ कालिकाऋमः निरुत्तरे— पादुका त्रिविधा देवि स्थूलं मध्यं तथा लघु। महागरापतिश्चैव दुर्गा स्यात् वसुर्कीराका ।।५७८।। श्रापदुद्धारकश्चेव शरभश्च ततः परम्। महाकालश्च सुमुखी कुरुकुल्ला च कालिका।। कालिकाक्रम एष स्यात् देवताप्रोतिकारकः ॥५७६॥

अथ त्रिशक्तिकमः-श्रोविद्या षोडशी चैव श्यामा द्वाविशदक्षरी। सार्वपञ्चाक्षयोः तार्युक्तिक्रम ईरितः ॥५५०॥

अन्यच्च शक्तिसंगमे-

कालिका तारिगा चैव सुन्दरी गरापस्तथा। शरमो मंजुघोषश्च महाकालस्तथैव च ॥ ४८१॥

दुर्गाभैरवश्रीनाथत्रयमम्बावनांतिसस् । त्रिशक्तिक्रममाख्यातं देवानामपि दुर्लभम् ॥४८२॥ इति ।

ग्रथ मेधादीक्षाक्रमः—

कालिका च तथा तारा छिन्नमस्ता च षोडशो। वगलेति च मेघाल्या दीक्षा सर्वोत्तमा स्मृता ॥ १८३॥

ग्रन्यच्चोद्ण्डभैरवीये-

श्रादौ कामकला प्रोक्ता तत्तिश्चन्तामिंग्भिवेत्। ततो वाला स्पर्शमिंगः कामेशी सिद्धिकालिका ॥४८४॥

विद्याराज्ञी षोडशी च पश्यन्ती कामकालिका । चरापेशो हंसकाली चतुश्चरगरूपिगा।। कुब्जिका गुह्यकाली च मेघा दीक्षा त्वियं भवेत् ॥४८४॥ इति

यथ साम्राज्यमेघा—

वाला तारा च वगला छिन्ना प्रत्यङ्गिरा तथा। साम्राज्यमेघा कथिता साधकाभोष्टदायिनी ॥ ५८६॥ इति । र्रे

ग्रथ पूर्णाभिषेके मन्त्रक्रमो निरुत्तरतन्त्रे—

श्रीविद्या मेदसहिता बाला च त्रिपुरा तथा। भगमाला तथा नित्यक्लिचा चैब स्वयंवरा ॥४८७॥

मधुमत्युन्मनी मेडा शारिका सुरसुन्दरी।
ग्रदवारूढा महामाया कुरुकुल्ला सुरेश्वरि ॥४८८॥

भुवनेश्यन्नपूर्णा च पूर्वाम्नायाधिदेवता ।

शिवपञ्चाक्षरीमेदाः प्रासादाख्यशिवस्तथा ॥ ५८६॥

विष्णोरष्टाक्षरीमेदा वासुदेवाह्वयस्तथा । गारापत्यं तथैकार्णमेदा वृत्तिमनुस्तथा ।। ५६०।।

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

पूर्वाम्नायेषु कथिताः साधकाभोष्टदायकाः। वगला विश्वामीमेदा त्वरिता च तथा स्मृता ।।५६१।। वाराही भेदसीहता भोगिनी भेदसंयुता। कामेश्वरी च भेरुण्डा वज्रेशी विह्नवासिनी ।।५६२।। शिवदूती विचित्रा च विजया सर्वमङ्गला। महिषघ्नो महालक्ष्मो दक्षिरणाम्नायदेवताः ॥५६३॥ पुं मंत्राइचैव वक्ष्यंते वाराहस्तुम्बुरस्तथा। हरिद्रागरापक्चैव वदुकः क्षेत्रपालकः ।।५६४।। शास्ता चैव नृसिंहरच दिधवामनसंज्ञकः। श्रीकृष्णमंत्रभेदाश्च तथा हरिहरात्मकः ॥५६५॥ दक्षिग्गाम्नायसंस्थाश्च सर्वसिद्धिप्रदायिनः। महासरस्वतीदेवी ततो वाग्वादिनी मता ॥ १६६॥ तथा नीलपताका च भैरवीभेदसंयुता। चामुंडा रक्तचामुंडा ब्राहम्चादि दश देवताः ॥५६७॥ प्रत्यंगिरा भवानी च पश्चिमाम्नायदेवताः। पुंमंत्राश्चैव विख्यातास्तथोच्छिष्टविनायकः ॥५६८॥ पुरुषोत्तममंत्राश्च मालामंत्रास्तथैव च। श्रघोररुद्रभेदाश्च जैनवौद्धप्रभेदकाः ॥५६६॥ पश्चिमाम्नायविख्याताः सर्वाभोष्टफलप्रदाः। कालिकाभेदसहिता ताराभेदेश्च संयुता ॥६००॥ मातंगी भैरवी छिन्ना तथा घ्रमावती मता। उत्तराम्नायकथिता दक्षिगापूर्तिरेव च ॥६०१॥ ग्रहाराां लोकपालानां मंत्राश्चण्डेश्वरस्य तु । बेतालः चेटकश्चेव वीरभद्रस्तथैव च ॥६०२॥ सुव्रह्मण्यमातृपुत्रा ्उत्तराम्नायमुंस्थिताः । पराप्रासावमंत्रका श्रीविद्या होड्याक्षरो ॥६०३॥ shired any ulgrangus namingens

कालिका दक्षिए। चैव मालिली श्रीगुरोर्मनुः। चरगं नवनाथाश्च मूलिवद्याश्च षोडश ।।६०४।। श्राधारषट्कविद्याश्च संविद्देवी तथैव च। चतुःषष्टिमहामंत्रा अध्विम्नाये व्यवस्थिताः ॥६०५॥ पराप्रासादमंत्रश्च लक्ष्मीनारायग्रस्तथा । चिदंबरमहामंत्रः पक्षिरूपाश्च शारमाः ॥६०६॥ षडेव शांभवाश्चेव महामृत्युंजयस्तथा । लक्ष्मीजनार्दनो लक्ष्मीवासुदेवस्तथैव च ।।६०७॥ राजराजेक्चरक्चैव पंचवक्रोऽथ भारुतेः। मार्तंडभैरवश्चैव महागरापितस्तथा। उच्छिष्टगरानाथइच वक्रतुंडस्तथैव च ॥६०८॥ गाग्णपत्यः श्रियायुक्तो सीतारामस्तथैव च। नृसिहानुष्टुभश्चैव पंचवार्णास्तथैव च ॥६०१॥ पंचकामाश्र देवेशि जैना वौद्धास्तथैव च। शंभोरूव्वंमुखादेव निर्गता वीरवंदिते ॥६१०॥ एते मंत्राः पूर्णदोक्षाधिकारे संप्रकीर्तिताः । अन्यापि दीक्षा श्रीनाथादिश्लोकमंत्रक्रमेग सा ॥६११॥ श्रघोरपादुकामंत्रादाघोरी परिकीर्तिता । निर्वाणपादुकायोगान् निर्वाणाख्या प्रकीतिता ॥६१२॥ निर्वाणात्त् परं देवि नास्ति ज्ञाने तु मामके । षोडक्यां पूर्णदीक्षा तु संप्रदायपरा मता ॥६१३॥ पूर्णाभिषेकी स्राचार्यो नाधिकारी तथापरः। श्रन्यदीक्षासमायुक्तो देवीं पूज्य क्रमेगा हि ॥६१४॥ तत्त्वं संशोध्य तं दद्यात् किनष्ठाय त्रियाय च। श्रंतःशुद्धि वंहिःशुद्धि द्विविधा परिकोतिता ॥६१५॥ श्रंतस्तत्त्वत्रयाच्छुद्धि वंहिःशुद्धिसतु दीक्षया। दीक्षामोक्षोपदेशेन चांडालोऽपि वियुच्यते ॥६१६॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri स्राभ्यां विना कुलेशानि कौलिकोऽपि न मुच्यते ।

मंत्रौषधैर्यथा हन्यात् विषशिक्तं कुलेश्वरि ।।६१७॥

पशुपाशं तथा छिद्यात् दोक्षाया मंत्रविद् गुरुः ।

उपपातकलक्षािण महापातकोटयः ।।६१८॥

क्षिणात् वहति देवेशि दोक्षा हि विधिना कृता ।

यया दोक्षितमात्रेंण जायते प्रत्ययः शिवे ।।६१६॥

सा दोक्षा मोक्षदा श्रेया शेषास्तु जलसेचकाः ।

उपासनाशतेनािप यां विना नैव सिघ्यति ।।६२०॥

तां दोक्षामाश्रयेद् यत्नात् श्रीगुरोमंत्रसिद्धये ।

दोक्षागिनदण्धकर्माणो मायाविच्छिन्नबंधनाः ।

गतः परां ज्ञानकाष्ठां निर्वोजस्तु शिवो मवेत् ॥६२१॥

दिजो वा दोक्षितः पश्चादन्त्यजः पूर्वदोक्षितः ।

दिजः किनष्ठः स ज्येष्ठ इति शास्त्रस्य निश्चयः ॥६२२॥

Editions.

गुरुशक्तिसुतानां च यो भवेत् पूर्ववीक्षितः । गुरुवत् तेन ते पूज्या नावमान्याः कदाचन ॥६२३॥ शिष्योऽदीक्षितमात्रश्चेद् यदि स्वर्गं गतो गुरुः । एतत् संतानजेनेव पूर्णदीक्षां समाश्रयेत् ॥६२४॥ इति कुलार्णवयामलकौलसर्वस्वादिष्विति ।

ग्रन्यच्च —

ग्रभिषेक्ता गुरुः कीहक् कीहग्यमिषेचयेत्। तयोश्च लक्षगां ब्रूहि येन देवी प्रसीदति ॥६२५॥

अथ शिष्यलक्षराम्। यदाह शिवः—

प्रथमं लक्ष्मणं वक्ष्ये शिष्यस्य वरर्वाणिनि । यस्य श्रवणमात्रेण शिष्यज्ञानं प्रजायते ॥६२६॥

अथ शिष्यदूषगानि कुलार्णं वे—
कुष्ठांगं वायुसंदुष्टं गुग्होनं विरूपिग्गम्।
परिवर्षां क्रामाखंडं नुग्होनं विरूपिग्गम्।
परिवर्षां क्रामाखंडं नुग्हे पण्डितमानिनम्।।६२७॥
परिवर्षां क्रामाखंडं नुग्हे निर्वर्णां है स्वाप्तिनिम्

Amad March

होनाधिकविकारांगं विकलावयवान्वितम् । पंगुमंधं च विघरं मिलनं व्याधिपीडितम् ॥६२८॥ उच्छिष्टं दुर्मु खं वापि स्वेच्छावेषधरं प्रिये। दुर्विकारांगचेष्टेहागतिभाष्यावीक्षर्णा ॥६२६॥ निद्रातन्द्राजडालस्यद्यूतादिच्यसनान्वितस् । कपाटकुब्जः स्तंभादौ तिरोहिततनुं तथा ॥६३०॥ शोलभक्तिहरं क्षुद्रं बाह्यभक्तिविवर्जितम्। क्रूरैकवादिनं स्तब्धं प्रेषकं प्रेषितं शठम् ॥६३१॥ धनस्त्रीशुद्धि रहितं निषेधविधिवींजतम् । रहस्यमेदकं चापि देवकार्यार्थसेवकम्। मार्जारबकवृत्ति च रंध्रान्वेषरातत्परम् ॥६३२॥ मायाविनं कृतघ्नं च प्रच्छन्नांतरदायकम्। विश्वासघातकं स्वामिद्रोहिंगां पापकारिंगाम् ॥६३३॥ श्रविद्वासकरं शुद्धमात्मानं सिद्धिकाङ्क्षिराम् । श्राततायिनमादित्सुं कुत्सितं कूटसाक्षिर्गम् ॥६३४॥ सर्वप्रतारकं देवि सर्वोत्कृष्टाभिमानिनम्। **त्र**सूयुं निष्ठुरासह्यं ग्राम्यादिबहुभाषिराम् ॥६३४॥ दुर्विवादकुतर्कादिकारिग्गं कलहप्रियम्। बृद्धाक्षेपकरं मूर्खं चपलं वाग्विडंबकम् ॥६३६॥ परोक्षदूषराकरं प्रत्यक्षप्रियवादिनम्। वाग्ब्रह्मवादिनं विद्याचोरमात्मप्रशंसकम् ।।६३७।। गुणासहिष्णुमहितमात्तं क्रोधनमंबिके । चार्वाकं दुर्जनसखं सर्वलोकविगहितस् ॥६३८॥ पिशुनं परसंतापं संविदप्रग्यं तथा। स्वक्लेशवादिनं स्वामिद्रोहिएां स्वामिवंचकम् ॥६३६॥ जिह्वोपस्थपरं देवि तस्करं पशुचेष्टितम्। श्रकारणद्वेषहास्यक्लेशक्रोधादिकारियाम् ॥६४०॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

es of the

श्रितसाहसकर्माणं मर्गातपिरहासकम्।
कामुकं चातिनिर्लज्जं मिथ्यादुश्चेष्टसूचकम् ॥६४१॥
श्रसूयामदमात्सर्यं दम्भाहंकारसंयुतम्।
ईष्यीपारुष्यपैशुन्यकार्पण्यक्रीर्यभानसम् ॥६४२॥
श्रधीनं दुःखितं भोरुमशक्तं स्तब्धमातुरम्।
श्रप्रबुद्धं मंदमित मूढं चिताकुलं विटम् ॥६४३॥
तृष्णालोभयुतं दीनमतुष्टं सर्वयाचकम् ।
वह्याशिनं कपिटनं भ्रामकं कुटिलं प्रिये ॥६४४॥
मितिश्रद्धादयाशांतिधर्माचारादिवर्जितम् ।
मातापितृगुरुप्राज्ञसद्वचोहास्यकारिण्म् ।
कुलद्रव्यादिबीभत्सुं गुरुसेवामिमानिनम् ॥६४५॥
स्विद्धिष्टं समयभ्रष्टं गुरुशप्तं कुलेश्वरि ।
इत्यादि दुर्गुग्गोपेतं गुरुः शिष्यं परित्यजेत् ॥६४६॥

अथ सच्छिष्यलक्षराम्—

सिन्छिष्यं लु कुलेशानि शुमलक्षरणसंयुतम् ।
शमादिसाधनोपेतं गुरौ शोलसमन्वितम् ॥६४७॥
स्वन्छदेहांबरधरं धामिकं शुद्धमानसम् ।
हढव्रतं हढाचारं श्रद्धाभक्तिदयान्वितम् ॥६४८॥
कृतज्ञं पापभोष्ठं च साधुसज्जनसंमतम् ।
श्रास्तिकं दानशीलं च सर्वभूतिहते रतम् ॥६४६॥
विश्वासविनयोपेतं धनदेहाद्यवंचकम् ।
श्रसाध्यसाधकं शूरमुत्साहबलसंयुतम् ॥६५०॥
श्रनुकूलक्रियोद्युक्तमप्रमत्तं विचक्षरणम् ।
हितसत्यमितस्मेरभाषिरणं मुक्तदूषरणम् ॥६५१॥
सकृदुक्तगृहोताशं चतुरं बुद्धिवस्तरम् ।
दक्षमल्पाशिनंश्रूढिच्दां जिल्लाज्ञिसेवक्षम् ॥६५२॥

निमृत्यकारिएां वीरं मनोद्दारिद्वचर्वाजतम् ।
सर्वकार्यातिकुशलं स्वच्छं सर्वोपकारकम् ॥६४३॥
स्वस्तुतौ परिनिदायां विमुखं सुमुखं प्रिये ।
जितेन्द्रियं सुसंतुष्टं धीमन्तं ब्रह्मचारिएाम् ॥६४४॥
त्यक्ताधिव्याधिचापत्यं दुःशंकार्त्ति ससंशयम् ।
गुरुध्यानस्तुतिकथासेवाचिवंदनोत्सुकम् ॥६४४॥
गुरुदेवतसद्भवतं कामिनीपूजनिप्रयम् ।
नित्यं गुरुसनीपस्थं गुरुसंतोषकारकस् ॥६५६॥
मनोवाक्तनुभि नित्यं गुरुकार्यसमुद्यतम् ।
गुर्वाज्ञापालकं देवि गुरुकोर्तिप्रकाशकम् ।
गुरुवाक्यप्रमारां च गुरुगुश्रूषण् रतम् ॥६४७॥
चित्तानुर्वातनं प्रेक्ष्यकारिएां कुलनायिके ।
लज्जाभिमानगर्वादिर्वाजतं गुरुसंनिधौ ॥६४८॥

निरपेक्षं गुरुद्रव्ये तत्प्रसादाभिलाषिराम् । कुलघमंकथायोगियोगिनोकौलिकप्रियम् ।।६५६।। कुलार्चनादिसहितं कुलद्रव्याजुगुप्सकम् । जपघ्यानादिनिरतं मोक्षमार्गाभिलाषिराम् ।।६५०।।

कुलशास्त्रप्रियं देवि पशुशास्त्रपराङ्मुखम् । इत्यादिलक्षग्गोपेतं गुरुः शिष्यं परिग्रहेत् ।।६४१ ॥ इति । ग्रयगुरो योंग्यायोग्यलक्षग्णं तत्रैव—

श्रीगुरुः परमेशानि शुद्धवेषो मनोहरः । सर्वेलक्षग्रसंपन्नः सर्वावयवशोभितः ॥६६२॥

सर्वागमार्थतस्वज्ञः सर्वमंत्रविधानवित् । लोकसंमोहनकरो देववत् प्रियदर्शनः ॥६६३॥

सुमुखः सुलभः स्वच्छः संशयच्छिदसंशयः।

इ गिताकारचेष्ट्रजः उहापोहविद्युज्यस्य Delli द्वार्ट्स by eGangotri

Ban you

श्रीशिव उवाच-

श्रंतर्मुखो बहिर्द िटः सर्वज्ञो देशकालवित्। **त्राज्ञासिद्धस्त्रिकालज्ञो निग्रहानुग्रहक्षमः ।।६६**५।। वेधको बोधकः शांतः सर्वजीवदयापरः । स्वाधीनेन्द्रियसंचारः षड्वर्गविजये क्षमः ॥६६६॥ श्रयगण्योऽतिगंभीरः पात्रापात्रविशेषवित्। शिवविष्णुसमः साधुनं च दर्शनदूषकः ॥६६७॥ निर्ममो नित्यसंतुष्टः स्वतंत्रो नित्यशक्तिमान् । सद्भक्तवत्सलो धीरः कृपालुः स्मितपूर्ववाक् ॥६६८॥ भक्तिप्रियः सर्वसमो गंभीरः शिष्यशासिता। स्वेष्टदेवगुरुप्राज्ञवनितापूजनोत्सुकः ॥६६६॥ नित्ये नैमित्तिके काम्ये रतः कर्मण्यतिनद्रतः। रागद्वेषभयक्लेशदंभाहंकारवीजतः ।।६७०॥ स्वविद्यानुष्ठानतपोधमिग्गामप्रकाशकः। वर्णाश्रमज्ञानतपोधर्मार्गां च प्रकाशकः ॥६७१॥ यहच्छालाभसंतुष्टो गुग्रदोषविवेचकः। स्त्रीधनादिष्वनासक्तो दुःसंगव्यसनोजिभतः ॥६७२॥ सर्वाहंभावनिर्मुक्तो निर्द्वन्द्वो नियतवतः। **अलोलुपोर्ऽाहंसक**इच पक्षपाते विचक्षगः ॥६७३॥ निःसंकल्पविकल्पइच विनीतात्मातिधार्मिकः। सेवाभक्तिपर्गैः मैत्रयंत्रतंत्रादिविक्रयो ॥६७४॥ तुल्यनिदास्तुति मौनी निरपेक्षो नियामकः। इत्यादिलक्षरगोपेतः श्रोगुरुः कथितः प्रिये ।।६७५।। यः सर्वगः शिवः सूक्ष्मश्चोन्मना निष्कलोऽन्ययः । व्योमाकारोह्यजोऽनन्तः स कथं पूज्यते प्रिये ।।६७६॥ अतएक किवः स्साधात् गुज्रक्षं, समाश्रितः । भक्त्या संपूजितो देवि भुक्तिमुक्ती प्रयच्छति ।।६७७।।

Parker.

शिवो दिव्याकृति देंवि नरहग्गोचरो न हि । तस्मात् श्रीगुरुरूपेगा शिष्यान् रक्षति धार्मिकान् ॥६७८॥

मनुष्यचर्मगा बद्धः साक्षात् परिश्वः स्वयम् । स्विशिष्यानुग्रहार्थं तु गूढः पर्यटिति क्षितौ ।।६७६।।

सद्भक्तरक्षरायेव निराकारोऽपि साकृतिः। शिवः कृपानिधि लोंके संसारीव हि चेष्टते ।।६८०।।

ललाटलोचनं चांद्रीं कलामिप च दोईयम्। स्रन्तिनिधाय वर्तीयं गुरुरूपो महोतले ।।६८१।।

ग्रित्रनेत्रः शिवः साक्षात् अचतुर्वाहुरच्युतः । श्रचतुर्वदनो ब्रह्मा श्रीगुरुः कथितः प्रिये ।।६८२।।

नरवद्दृश्यते लोके नरागां पापकर्मगाम् । शिववद्दृश्यते साक्षान्नरागां पुण्यकर्मगाम् । श्रोगुरुं परमं तत्त्वं तिष्ठन्तं चक्षुरग्रतः ।।६८३।।

मंदमाग्या न पश्यंति ह्यन्धाः सूर्यमिवोदितम् । गुरुः सदाशिवः साक्षात् सत्यमेव न संशयः ॥६८४॥

शिवश्च स्वगुरु नोंचेत् भुक्तिमुक्ति ददाति कः। सदाशिवस्य देवस्य श्रीगुरोरपि पार्वति ।।६८४।।

उभयोरंतरं नास्ति यः करोति स पातकी। देशिकाकृतिमास्थाय पशोः पाशानशेषतः।।६८६।।

मित्वा परं पदं देवो नयत्येव इति श्रुतिः । सर्वानुप्रहकर्नृ त्वादीश्वरः करुणानिधिः ॥६८७॥

म्राचार्यरूपमास्थाय दीक्षया मोक्षतां नयेत् । यथा घटरच कलशः कुंमरचेकार्थवाचकः ॥६८८॥

तथा देवरच मंत्ररच गुरुरचेकार्थ उच्यते । यथा देवं तथानमंत्रं यथानमंत्रं तथान गुरुस् Delhi. Digitized by eGangotri , देवमंत्रगुरूगां च पूजया सहशं फलम्। गुरुरूपं समास्थाय पूजां गृह्णाति पार्वति ।।६६०।। सिद्धान्तसारवेत्ताहं बीजहा स्थिरबोधकृत्। श्रविच्छिन्नः सदानुग्रहप्रदो गुरुरुच्यते ।।६६१।। यो विलंघ्याश्रमान् वर्गानात्मन्येव सदास्थितः। सोऽतिवर्गाश्रमी योगी सद्गुरुः कथितः प्रिये ।।६६२॥ हृश्यं विना स्थिरे हृष्टि मंनश्चालंवनं विना । विनावासं स्थिरो वायुर्यस्य स्यात् स गुरुः प्रिये ।।६६३।। यत्त संवित्तिजननं परानंदसमुद्भवम्। तत्तत्त्वं विदितं येन स गुरु: कुलनायिके ॥६९४॥ भूतभव्यौ मंत्ररौद्रौ शाक्तशांभवौ वेत्ति यः। वेघं च षड्विघं देवि स हि वेधकरो गुरुः ।।६९४।। पदवर्शकलामंत्रसतत्त्वभुवनाह्वयम् । शोधयेद् यः षडध्वानं स गुरुः कथितः प्रिये । षडाधारनवाधारषोडशाधारनिर्एायम् ।।६१६॥ यो जानाति विधानेन स गुरुः कथितः प्रिये। जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तीश्च तुर्यां च तदतीतकम् ॥६९७॥ यो वेत्ति पंचकं देवि स गुरुः परिकोर्तितः। पिंडं पदं तथा रूपं रूपातीतं चतुष्टयम् ।।६६८।। यो वा सम्यग् विजानाति स गुरुः कथितः प्रिये। यो वा परां च पश्यंतीं मध्यमां वेखरीमपि ॥६९९॥ चतुष्टयं विजानाति स गुरुः कथितः प्रिये। श्रात्मविद्या शिवः सर्वमिति तत्त्वचतुष्टयम् ॥७००॥ यो वेत्ति परमेशानि स गुरुः परिकोतितः। पाशस्तं मं वेद्यवीक्षां पशुप्रहर्णमेव च ॥७०१॥ CC-0: Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

त्रिविधं यो विजानाति स गुरुः कथितः प्रिये। बाह्योत्तरमयीं व्याख्यां लिगं त्रितयसंस्थितस् ।।७०२।। तत्त्वतो यो विजानाति स गुरुः कथितः प्रिये। श्राग्वं कार्मिकं चैव मायिकं च मलत्रयम् ॥७०३॥ यो विशोधियतुं शक्तः स गुरुः कथितः प्रिये। सरक्तगुक्लिमश्राख्यचरगात्रयवासनाम् ।।७०४।। यो जानाति महादेवि स गुरुः परिकोतितः। चक्रसंकेतकं मंत्रं पूजासंकेतकं तथा ॥७०५॥ त्रिविधं यो विजानाति स गुरुः कथितः प्रिये। महामुद्रां नभोमुद्रां चोड्डियानं जलंधरम् ॥७०६॥ मूलबन्धं च यो वेत्ति स गुरुः कथितः प्रिये। शिवादिक्षितिपर्यन्तं षट्त्रिंशत्तत्त्वनिर्णयम् ॥७०७॥ यो विजानाति तत्त्वेन स गुरुः कथितः प्रिये। भ्रन्तर्यागं बहिर्यागं कालज्ञानस्थितं प्रिये। राधायंत्रविधानं च यो वेत्ति स गुरुः प्रिये ॥७०८॥ पिडब्रह्मांडयोरैक्यं स्थिति यो वेत्ति तत्त्वतः। शिरास्थिरोमसंमज्जा स गुरुः कथितः प्रिये ॥७०१॥ पद्मादिचतुराशीतिनानासनविचक्षराः। यमाद्यष्टांगयोगज्ञः स गुरुः कथितः प्रिये ॥७१०॥ घृएगा शंका मयं लज्जा जुगुप्सा चेति पंचमी। कुलशीलं तथा जातिरष्टौ पाशाः प्रकीर्तिताः ॥७११॥ पाशबद्धः पशुः प्रोक्तः पाशमुक्तो महेश्वरः । तस्मात् पाशहरो योऽत्र स गुरुः कथितः प्रिये ।।७१२।।

मंत्राद्यं तत्स्वरूपं च यो वेत्ति स गुरुः प्रिये ॥७१३ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

बंधनं योनिमुद्राया मंत्रचैतन्यदर्शनम्।

विनिक्षिप्तं गण्ययानं संश्लिष्टं सुविनीयकम् । चतुर्विधां मनोवस्थां यो वेत्ति स गुरुः प्रिये ॥७१४॥ मूलादिब्रह्मरंध्रांतं सप्तांभोजदलेषु यः । जीवचारफलं वेत्ति स गुरु नीपरः प्रिये ॥७१५॥

शिवादिक्षितिपर्यन्तं पारंपर्यक्रमेग् यः ।
ग्रवाप्ततत्त्वसद्भावः स गुरुः कथितः प्रिये ॥७१६॥
येन वा दिशते तत्त्वे तत्क्षगात् तन्मयो भवेत् ।
मन्यते मुक्तमात्मानं स गुरुः कथितः प्रिये ॥७१७॥
ये दत्वा सहजानन्दं हरंतीन्द्रियजं सुखम् ।
सेव्यास्ते गुरवः शिष्यैरन्ये त्याज्याः प्रतारकाः ॥७१८॥

ये मनस्थां स्विधाष्येषु दर्पागेष्विव रूपताम् । संक्रामयन्ति ते धन्या गुरवोऽन्ये प्रतारकाः ॥७१६॥

यः प्रसन्नः क्षणार्धेन मोक्षलक्ष्मीं प्रयच्छति ।
दुर्लभं तं विजानीयाद् गुरुं संसारतारकम् ॥७२०॥
यः क्षणोनात्मसामर्थ्यं स्वशिष्याय ददाति हि ।
क्रियायासादिरहितं स गुरुदुंर्लभः प्रिये ।
क्षुधितस्य यथा तृप्तिराहोरादाशु जायते ॥७२१॥
तथोपदेशमात्रेण ज्ञानदो दुर्लभो गुरुः ।
गुरवो बहवः संन्ति दीपवच्च गृहे गृहे ॥७२२॥
दुर्लभोऽयं गुरुदेवि सूर्यवत् सर्वदीपकः ।
गुरो यंस्यैव संपर्कात् परानंदो हि जायते ॥७२३॥

गुरुं तमेव वृषाुयात् नापरं मितमात् नरः । शंकया मक्षितं सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥७२४॥

सा शंका भक्षिता येन स गुरुर्देवि दुर्लभः। सर्वलक्षरणसंपन्नो वेदशास्त्रविशारदः॥७२५॥

सर्वोपायविधानज्ञः तत्त्वहोनो गुरुर्निह । पूजाहोमाश्रमाचारतपस्तीर्थव्रतादिकम्। मंत्रागमादिविज्ञानं तत्त्वहोनस्य निष्फलम् ॥७२६॥ स्वसंवेद्ये परे तत्त्वे स्वात्मनिष्ठेन निश्चयः। म्रात्मन्यनुग्रहो नास्ति परस्यानुग्रहः कुतः ॥७२७॥ षटप्रकारं मनोरूपं प्रत्यक्षं स्वात्मनि स्थितम् । यो न जानाति चान्यस्य कथं मोक्षं ददात्यसौ ॥७२८॥ सर्वलक्षरणहीनोऽपि तत्त्वज्ञानी गुरुः स्मृतः । तस्मात् तत्त्वविदो देही मुक्तो मोचक एव हि ॥७२६॥ यस्तत्त्वविन्महेशानि स पशुं बोधयत्यपि । तत्त्वहोने कुतो बोधः कुतो ह्यात्मपरिग्रहः ॥७३०॥ तत्त्वज्ञैरुपदिष्टा ये तत्त्वज्ञास्ते न संशयः । पशुभिक्चोपिदष्टा ये ते देवि पशवः स्मृताः ॥७३१॥ बुद्धस्तु बोधयेह्वि नाबुद्धो बोधको भवेत्। मुक्तस्तु मोचयेद् द्वन्द्वममुक्तो मोचकः कथम् ॥७३२॥ मितमांश्चोद्धरेन्मूखं न मूलां मूर्खमुद्धरेत्। शेवे गुरुत्रयं प्रोक्तं वैष्ण्वे गुरुपंचकम् ॥७३३॥ वेदशास्त्रेषु शतशो गुरुरेकः कुलान्वये । थ्रेरकः सूचकव्चेव वाचको दर्शकस्तथा ।।७३४॥ शिक्षको बोधकश्चेति षडेते गुरवः स्मृताः पंचेते कार्यमूताः स्युः कारणं बोधको भवेत् ॥७३४॥ पूर्णामिषेककर्ता यो गुरुस्तस्यैव पादुका। पूजनीया महेशानि बहुत्वेऽपि न संशयः ।।७३६।। श्रीगुरुं लक्षराीपेतं संशयच्छेदकारराम् । लब्ध्वा ज्ञानप्रदं देवि न गुर्वन्तरमाश्रयेत् ॥७३७॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

ग्रनिभज्ञं गुरुं प्राप्य संशयाच्छेदकारकम् । शिष्यो गुर्वन्तरं गत्वा तहोषै र्नानुलिप्यते ॥७३८॥ मधुलुब्धो यथा भृंगः पुष्पात् पुष्पान्तरं व्रजेत् । ज्ञानलुब्धस्तथा शिष्यो गुरो गुर्वन्तरं व्रजेत् ॥७३९॥ इति ।

यथायोग्यगुरुत्यागे दोषः श्रीकुलार्णवे—

गुरुत्यागात् भवेन् मृत्यु मैत्रत्यागाद् दरिद्रता । गुरुमंत्रपरित्यागात् रौरवं नरकं व्रजेत् ॥७४०॥ इति

इति श्रीमदागमरहस्ये सत्संग्रहे उत्तरार्धे शिष्यगुरुविवेचनं नाम चतुर्थः पटलः । ग्रादितो द्वात्रिशत्।

ग्रथ पंचमः पटलः ।

एवं लब्ध्वा श्रीगुरुं च सहवासेन सेवया । निवेद्य मानसीं वृत्ति प्राप्तानुज्ञस्तदा चरेत् ।।७४१।।

एतच्च कुलागमे-

तिना दीक्षां न मोक्षः स्यात् प्राण्तिनां शिवशासनम् ।
सा च न स्याद्विनाचार्यमित्याचार्यपरंपरा ।
ज्ञेया सिद्धान्तशास्त्रार्थसंप्रदायादिहेतुना ।।७४२।।
ग्रान्तरेणोपदिष्टाश्च मंत्राः स्युनिष्फला यतः ।
देवास्तमेव शंसन्ति पारंपर्यप्रवर्तकम् ।।७४३।।
गुरुं मंत्रागमाभिज्ञं समयाचारपालकम् ।
गुरुः शिष्याधिकारार्थं विरक्तोऽपि शिवाज्ञया ।।७४४।।
किचित्कालं विधायतत् स्वशिष्याय समप्येत् ।
तस्यापिताधिकारस्य योगः साक्षात् परे शिवे ।।७४४।।
तदन्ते शाश्वतोमुक्तिरिति शंकरभाषितम् ।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन साक्षात् परशिवोदितम् ।।७४६।।
संप्रदायमविच्छिन्नं सदा कुर्याद् गुरुः प्रिये ।
संप्रदायमविच्छिन्नं सदा कुर्याद् गुरुः प्रिये ।
संप्रदायमविच्छिन्नं सदा कुर्याद् गुरुः प्रिये ।

पश्चादुपदिशेन्मंत्रमन्यथा निष्फलं भवेत्। श्रन्यायेन तु यो दद्यात् गृह्णात्य त्यायतक्च यः ।।७४८।। ददतो गृह्हतो देवि कुलशापो भविष्यति । गुरुशिष्यावुभौ मोहादपरीक्ष्य परस्परम् ॥७४६॥ उपदेशं ददन् गृह्हन् प्राप्येतां तौ पिशाचताम् । श्रशास्त्रीयोपदेशं तु यो गृह्णाति ददाति च ।।७५०।। भुं जाते ताबुभौ घोरान् नरकानेकविंशतिः। श्रसंस्कृत्योपदेशं तु यः करोति विमूढधीः ।।७५१।। विनश्यत्येव तन्मंत्रः सैकते शालिबीजवत्। श्रनहें मंत्रविज्ञानं न तिष्ठति कदाचन ॥७५२॥ तस्मात् परीक्ष्य वक्तव्यमन्यथा निष्फलं भवेत्। कृत्वा समयदीक्षां च दत्वा समयपादुकाम्। संविधायात्मनः शिष्यं वदेन्मंत्रं न चान्यथा ।।७५३।। श्रसत् शिष्येष्वभक्तेषु यद् ज्ञानमुपदिश्यते । तत् प्रयात्यपवित्रत्वं गोक्षोरं श्वहताविव ॥७५४॥ धनेच्छालाभलोभाद्येरयोग्यं यदि दीक्षयेत्। देवताशापमाप्नोति कृतं च विफलं भवेत् ।।७५५।। ज्ञानेन क्रियया वापि गुरुः शिष्यं परीक्षयेत्। संवत्सरं तदधं वा तदधं वा प्रयत्नतः ॥७५६॥ उत्तमांश्चाधमे कुर्यान्नीचानुत्तमकर्मिण । प्राराद्रव्यप्रदानाद्येरादेशेश्च समासमैः ॥७५७॥ तन्मर्मसूचकेर्वाक्यै मीयामिः क्रूरचेष्टितैः। पक्षपातैरुदासीनैरनेकैश्च मुहुर्मुहुः ।।७५८।। श्राक्रोशितस्ताडितश्र यो विषादं न याति हि

गुरुः क्रिपां करोतिति मुदा सचितयेत् संता ॥७५६॥ .

四十六

श्रीगुरुस्मरएो चापि कीर्तने दर्शनेऽपि च। वंदने परिचर्यायामाह्वाने प्रेषे ।। १६०॥ श्रानंदकंपरोमांचस्वरनेत्रादिविक्रियाः। येषां स्यात् तत्र ते योग्या दोक्षासंस्कारकर्मसु ॥७६१॥ शिष्योऽपि लक्षर्गैरेतैः कुर्याद् गुरुपरीक्षराम्। श्रानंदाद्ये जंपैः स्तोत्रे ध्यानहोमार्चनादिषु ॥७६२॥ ज्ञानोपदेशसामर्थ्यं मंत्रसिद्धिमथो पराम । वोधकत्वं च विज्ञाय शिष्यो भूयान्नचान्यथा ।।७६३॥ श्रादिमध्यावसानेषु योग्यः शिष्यस्त्रिधा मतः । श्रधमो मध्यमः श्रेष्ठः शिष्यः शक्तिनिपातने ॥७६४॥ श्रादौ मिक्त भवेत् देवि दीक्षार्थ संवदन्ति ये। पुनिवलुप्ता भक्तास्ते म्रादियोग्या इतीरिताः ॥७६५॥ दोक्षासमयसंप्राप्तज्ञानविज्ञानरंजिताः। भक्तचा प्रवृद्धवीर्या ये मध्ययोग्याश्च ते स्मृताः ॥७६६॥ ग्रादौ भक्तिविहोना ये मध्ये भक्तिस्तु वा नवा। श्रंते प्रभूतभक्तिस्ते श्रंतयींग्या भवंति हि ॥७६७॥ कर्मोपदेशो भक्तिश्र ज्ञानश्रोति त्रिधा प्रिये। यथा पिपोलिका मन्दं मन्दं वृक्षाग्रगं फलम् ॥७६८॥ चिरेगाप्नोति कर्मोपदेशश्चापि तथाविधः। यथा कपिश्च शाखायाः शाखामुल्लंध्य यत्नतः ॥७६६॥

फलं प्राप्नोति भक्तचा स्यादुपदेशस्तथा प्रिये। यथा विहंगमः शोद्रं फलमेव प्रसोदित ॥७७०॥ तथा ज्ञानोपदेशस्तु कथितः कुलनायिके। स्पर्शाख्या देवि हक्संज्ञा मानसाख्या महेश्वरि।

क्रियासामित्रहित्यु देवि दीक्षा त्रिघा स्मृता ।।७७१॥ व

यथा स्वपक्षी पक्षाभ्यां शिशून् संवर्धयेत् शनैः । स्पर्शदीक्षोपदेशस्तु ताहशः कथितः प्रिये ॥७७२॥

स्वापत्यानि यथा मत्स्यो वीक्षण्वेनव पोषयेत्। हग्दीक्षाख्योपदेशस्तु ताहशः कथितः प्रिये ।।७७३।।

यथा कूर्मः स्वतनयान् ध्यानमात्रेश पोषयेत् । वेधदीक्षोपदेशस्तु मानसः स्यात्तथाविधः ॥७७४॥

शक्तिपातानुसारेगा शिष्योऽनुग्रहमहंति । यत्र शक्तिनं पतिता तत्र सिद्धिनं जायते ॥७७५॥

क्रियावर्णकलास्पर्शवाक् हङ्मानससंज्ञकाः । उ दोक्षा मोक्षप्रदा देवि स्प्तधा परिकोतिताः ॥७७६॥

समयाख्या विशेषाख्या साधकापुत्रकाह्वया । वोधका पूर्णसंज्ञाख्या दया निर्वाणसंज्ञका ॥७७७॥

क्रिया दीक्षाष्ट्या प्रोक्ता कुण्डमंडपपूर्विका । कलशादिसमायुक्ता कर्तव्या गुरुएगा बहिः ।।७७८।।

देवेशि देहशुद्धचर्थ पूर्वोक्तविधिना चरेत् । अञ्चर्णदोक्षा त्रिधा प्रोक्ताष्टचत्वारिशदक्षरैः ॥७७६॥

एकपंचाशद्वर्गोर्वा त्रिषिटि लिपिमिस्तु वा। वर्गान् शिष्यतनौ न्यस्य प्रतिलोमेन संहरेत्।।७८०।। परमात्मति संयोज्य वज्नेवन्यं शियोज्य वर्षः

परमात्मिन संयोज्य तच्चैतन्यं क्षिपेद् बुधः । तस्मादुत्पादितान् वर्णान् न्यसेत् शिष्यतनौ पुनः ॥७८१॥

सृष्टिक्रमेगा विधिना तच्चैतन्यं नियोजयेत्। जायते देवताभावः परानंदमयः शिशोः ॥७८२॥

एषा व्रामयो दीक्षा प्रोक्ता पाशापहा प्रिये।

कला दीक्षा त्रिधा ज्ञेया कर्तव्या विधिवत् प्रिये।

निवृत्ति ज्ञितुपर्यंत्तां तलादारम्य संस्थिता ॥ । । ।

Sold of the sold o

Mary Sura

जानुनो नीभिपर्यन्तं प्रतिष्ठा तिष्ठति प्रिये। नाभेः कंठावधि व्याप्ता विद्याशांतिस्ततः प्रिये ॥७५४॥ कंठाल्ललाटपर्यन्तं व्याप्ता तस्मात् शिरोविध । शान्त्यतीता कला ज्ञेया कलाव्याप्तिरितीरिता ॥७८५॥ संहारक्रमयोगेन स्थानात् स्थानान्तरं प्रिये। संयोज्य वेधयेत् सम्यग् विधिवत् ताः शिवावधि ॥७८६॥ इयं प्रोक्ता कुलेशानि दिव्यभावप्रदायिनी। श्रष्टात्रिंशत् कलाभिवा पंचाशद्भिरथापि वा ।।७८७।। तत्त्वन्यासक्रमेग्गैव मृष्टिसंहारमार्गतः। ज्ञात्वा गुरुमुखाद् देवि शिष्ये संयोज्य वेधयेत् ।।७८८।। जायते देवताभावो योगिनीवीरसंगमः। कला दीक्षा समुद्दिष्टा पशुपाशापहारिग्गी ॥७८६॥ हस्ते शिवं परं ध्यात्वा जपन् मूलांगमालिनीम्। गुरुः स्पृशेत् शिष्यतनुं स्पर्शदीक्षा भवेदियम् ।।७६०।। चित्तं तत्त्वे समाधाय परतत्त्वोपवृंहितात्। उच्चरेत् सहितान् मंत्रान् वाग्दीक्षेति निगद्यते ॥७६१॥ निमील्य नयने घ्यात्वा परतत्त्वं प्रसन्नधीः। सम्यक् पञ्चेद् गुरुः शिष्यं हग्दीक्षा सा मवेत् प्रिये ।।७६२॥ गुरोरालोकमात्रेग भाषगात् स्पर्शनादि । सद्यः संजायते ज्ञानं सा दीक्षा शांभवी स्मृता ॥७६३॥ मनोदीक्षा द्विधा प्रोक्ता तीव्रा तीव्रतरेति च। श्रध्वानं षड्विधं ज्ञात्वा शिष्यदेहे स्मरेत् प्रिये ॥७६४॥ कल्पयेद् भुवनं तत्त्वं कलां (तत्त्वे पदं मनुम्। स्वजानुनामिहृत्कण्ठतालुमूर्घान्तमंबिर्के ॥६६५॥ गुरूपदिष्टमार्गेगा वेधं कुर्याद् विचक्षगः। पाशमुक्तः क्षर्णात् शिष्यः परानंदमयो भवेत्। एका मुक्तिमदा क्रीकृत offenon, New Delm. Digitized by eGangotri

देवि तीवतरा चापि गुरुएगा स्मृतिमात्रतः। सम्यक् संबोधितः शिष्यशिखन्नपाशस्तदा भवेत् ॥७६७॥ बाह्यव्यापारनिर्मुक्तो भूमौ पतित तत्क्षरणात्। संजातदिव्यभावोऽसौ सर्वं वदति शांभवि ॥७६८॥ यदस्ति वेधकाले तत् स्वयमेवानुभूयते । प्रबुद्धस्तु न शक्नोति तत् सौख्यं वक्तुमोइवरि ।।७६६।। वेधविद्धः शिवः साक्षान्नपुनर्जन्मतां व्रजेत् । एषा तीव्रतरा दीक्षा भवबंधविमोचिनी। शिवभावप्रदा साक्षात् दीक्षा सा कुलनायिके ।। ८००।। ग्रानंदश्चेव कंपश्च द्रवो घूर्गः कुलेश्वरि । निद्रा मूर्छा च तद्र्पाः षडवस्थाः प्रकीतिताः ।।८०१।। दृश्यन्ते षड्गुगा ह्ये ते वेधकाले कुलेश्वरि वेधितो यत्र कुत्रापि तिष्ठन् मुक्तो न संशयः ।।८०२।। वेधदीक्षाकरो लोके श्रीगुरुदुं लंभः प्रिये। शिष्योऽपि दुर्लभस्ताहक् पुण्ययोगेन लभ्यते ।। ८०३।। न दद्याद् यस्य कस्यापि चेत्याज्ञा पारमेश्वरी। कुलद्रव्यैः समभ्यर्च्य कुलचक्रं विधानतः ।। ८०४।। शिष्याय दर्शयेद् देवि दीक्षेषा कौलिकी स्मृता। सिद्धद्रव्यं मुखे पूर्य पंचव्योमामृतान्वितम् ॥५०५॥ श्रमिषिचेत् प्रियं शिष्यं गंडूषाख्येयमीरिता । सजीवमीनयुक्तेन सुरया पूरितेन च ।।८०६।। पंचामृतैः सुसंपूर्णशंखेन कलशेन वा । म्रमिषेकं ततः कुर्याद् बाह्येन कथिता पुनः ।।८०७।।

मीनं तु लंबिका देवि वक्त्रं कलश उच्यते।

पंचव्योम्। मृतापूर्वं शिष्यं तेन जिल्लास्य पादिक स्ता by eGangotri

श्रयं सिद्धाभिषेकः स्यादाचार्याख्यस्य पार्वति । स्वीकारो दंतकाष्ठं च पुष्पांजलिरिप प्रिये।।८०१।। शंखो वेधश्राभिषेकस्तथाज्ञा षड्विधा भवेत् । समयो दंतकाष्ठेन साधकः कुसुमांजलिः ॥ ८१०॥ पुत्रः शंखाभिषेकेरण बोधको वेधसंज्ञया । पूर्णाभिषेकेगाचार्यः पंचावस्थाः प्रकीतिताः ॥ ८११॥ कुलाचारैकनिरता गुरुभक्ता दृढव्रताः। पूर्णिभिषेके पूता ये ते मुक्ताश्राशुजन्मनि ।। ८१२।। पूर्णाभिषेकहोना ये मृताश्च कुलनायिके। पुनर्लंब्ध्वोत्तमं जन्म गुरुणा शिवरूपिणा ॥८१३॥ शुद्धः पूर्गाभिषेकेगा शिवसायुज्यदायिना । ते मुक्ति तु व्रजन्त्येव शांभवो वाक्यडिडिमा ।। ६१४।। पूर्णिमिषेकहोनो यः कौलिको म्रियते यदि । पिशाचत्वमवाप्नोति यावदाभूतसंप्लवम् ॥६१४॥ इदानी मिभषेकस्य विधानमभिधीयते। नाधिकारी विना येन साधकः साधने मनोः ।। ८१६।। यदुक्तमुत्तरातंत्रे यामले च कुलार्गवे। तंत्रे निरुत्तराख्ये च कामाख्यातंत्रकेऽपि च ॥ द१७॥

श्रोदेव्युवाच—

श्रीमन्नाथ जगन्नाथ सर्वसंतापहारक। यदुक्तमभिषेकस्य विधानं कथय प्रभो ॥६१८॥

भोशिव:---

लक्षवारसहस्राणि वारितासि पुनः पुनः ।
स्त्रीस्वभावान् महादेवि पुनस्त्वं परिपृच्छिसि ॥५१६॥ विक्रियां च सर्वतंत्रेषु तवस्नेहात् महेश्वरि ।
प्रित्रे भूगास्विको प्रविद्यामि सर्वदीषविनाश्चम्।।।। हारिश्वरि ।
प्रित्रे भूगास्विको प्रविद्यामि सर्वदीषविनाश्चम्।।।। हारिश्वरी ।

घन्यं यशस्यमायुष्यं महापातकनाशनम् । श्रमिषेकेए। सर्वेषामधिकारी भवेद् ध्रुवम् ।। ८२१।। नित्ये नैमित्तिके काम्ये चक्रराजार्चनादिषु । श्रन्यथा नाधिकारी स्याज्जपयज्ञार्चनादिषु ।। ८२२।। स्रभिषेकं च द्विविधं राज्ञो वा ज्ञानिनामि । राज्ञोऽभिषेके देवेशि वैदिकादिक्रियां चरेत् ॥ ८२३॥ ज्ञानिनामिमषेकं तु सर्वतंत्रेषु गोपितम्। कुलचक्रक्रमेर्गंव त्विमषेकं चरेत् सुधीः ।। ८२४।। कुलनाथं गुरुं वीक्ष्य त्विभषेकं तु संचरेत्। पूर्णाभिषेकी यो न स्यान्नाभिषेके प्रवर्तते ॥ ८२५॥ वैष्णावो गागापत्यश्च सौरः शैवः कुलेश्वरि । म्रमिषेकं प्रकुर्वीत शाक्तश्च कुलभूषणः ॥८२६॥ ग्रभिषेककृतो विप्रो ब्रह्मत्वं लभते ध्रुवम् । अभिषिक्तस्तथा क्षत्री विप्रधर्मत्वमागतः ॥६२७॥ वैश्यः क्षत्रियतां याति शूद्रो वैश्यत्वमाप्नुयात्। ग्रागमः पंचमो वेदः कुलं च पंचमाश्रमः ॥ ८२८॥ शिवोऽपि पंचमो वर्गः सिद्धविद्यां जपेद् यतः। स्वस्ववर्णं परित्यज्य सुरत्वं च प्रजायते ।। ८२६।। श्रमिषेकं विना देवि शिवत्वं लमते कथम् । शिवत्वेन विना देवि कुलपूजां कथं चरेत्।।८३०।। कुलपूजां विना देवि पितृभूमि कथं व्रजेत्। पितृभूमि विना मंत्री प्रांतरं वा चतुष्पथम् ।। ८३१।। कथं वै प्राप्नुयात् सिद्धि शाश्वतीं मंत्रयंत्रयोः। श्रतो ह्यवश्यं कुर्वीत श्रभिषेकं सुसिद्धये ॥८३२॥ श्रमिषेकं विना देवि कुलधर्मं करोति यः। तस्य मंत्रादिकं सर्वमिसचाराय कल्प्यते । इत्रुह्मिस् by eGangotri

Care of Justin

3/0/20- 5 24/02/21.

स्रभिषेकं विना देवि सिद्धविद्यां दद्याति यः।
स भवेत् पातको सद्यो देवता न प्रसीदित ।
ब्रह्मत्वं चैव विष्णुत्त्वं शिवत्वं च कुलेश्विरि ॥६३४॥
सर्वसिद्धीश्वरत्वं च स्रभिषेकेण् जायते ।
दिव्यो वीरश्च देवेशि कुलधर्मपरायणः ॥६३४॥
स्रभिषेकं चरेद् धीमान् मोक्षार्थी कुलवर्त्मसु ।
गुप्तालये समाहूय यथोक्तान् शिक्तसाधकान् ॥६३६॥
नवरात्रं सप्तरात्रं पंचरात्रं त्रिरात्रकम् ।
स्रथवा चैकरात्रं च स्रभिषेकं समाचरेत् ॥६३७॥
नदीतीरे पुण्यभूमौ विल्वमूले चतुष्पथे ।
देवतायतने वापि सिद्धक्षेत्रं वनान्तरे ॥६३६॥
पर्वतोपवने रम्ये मंडपे वा निजालये ।
शून्यागारे प्रांतरे वा पितृभूमौ च निर्जनः ॥६३६॥ इति ।
नदीतीराद्यं स्थानमेकरात्रिषरम् । गुप्तालय इत्यादि त्रिरात्र्यादिनवरात्रान्त-परम् ।

स्रिमिषेकं चरेत् देवि स्रिधिवासपुरःसरम्।
वृद्धिश्राद्धं ततः कृत्वा पूजयेत् शिक्तसाधकान्॥ ६४०॥
संपाद्य सर्वसामग्रीं श्रीगुरुं पूजयेत् ततः।
वस्त्रालंकारभूषाद्येः प्रार्थनाभिश्च साधकः ॥ ६४१॥
ततः संकल्प्य विधिना गुरूणां वरणं चरेत्।
वृतो गुरुः सुप्रसन्नः सर्वालंकारभूषितः ॥ ६४२॥
पंचघोषपुतः श्रीमान् स्वस्तिवाक्यपुरःसरः।
यायाद् दीक्षामंडपस्य प्राशि दिग्द्वारि साधकः ॥ ६४३॥

प्रक्षाल्य पादावाचम्य प्राङ्मुखश्च शुभासने । उपविश्य च सामान्यं ग्रर्घं तत्र निधापयेत् ॥६४४॥ ग्रशको ताम्रपात्रस्थं जलं धेन्वाभिमंत्रयेत् । ग्रशको मुलमंत्रेश्यास्त्राचंद्वाद्वाद्वेतताः॥६५५॥ ग्रह्शो मुलमंत्रेश्यास्त्राचंद्वाद्वाद्वेतताः॥६५५॥ 4)

. &

्रचतुस्तारीं पुनर्ङेऽन्तं धातारं वियुतं पुनः । दक्षे संपूज्य वामे च गंगां च यमुनामि ।। ८४६।। अध्वे द्वारिश्ययं पूज्य तथाधो देहलीं यजेत्। तन्मध्ये वास्तुपुरुषं पूजयेच्च समाहितः ॥८४७॥ संकोचयन् स्ववामांगं प्रविशेद् यागमंडपम्। तत्रास्त्रमंत्रमुच्चार्यं विघ्नान् निःसार्यं यत्नतः ॥८४८॥ वेदीं प्रोक्ष्य समास्तीर्य स्वासनं परिशोध्य च। संपूज्यासनमंत्रोगा उपविश्य समाहितः ॥८४६॥ श्रथाग्नेये गएोशानं यजेद् दुर्गां च निऋ तौ। वायौ सरस्वतीं पूज्य ईशं क्षेत्रो समर्चयेत् ।।८५०।। ततः पद्माद्यासनस्थः संविर्द सेवयेत् सुधीः। सर्वाभरणसंपन्नो रक्तगंथाबरावृतः। स्वर्णस्रजा परिवृतः तांवूलपूरिताननः ॥८५१॥ कर्पू रागरुकाश्मीरमृगनाभिसुवासितः। स्मितास्यः स्वं शिवं ध्यायन् गरानाथं सरस्वतीम् ।। ८५२।। पूजयेद् विघ्ननाशाय तथा कार्यसमृद्धये। ततः स्वपुरतो भूमौ शालिपिष्टेन संलिखेत्।।८५३।। पद्ममष्टदलं तत्र मध्ये पूगफलं न्यसेत्। तिसमन् गाोदवरं देवं ध्यात्वा पदचाच्च दिग्दले ।। ८४४।। नंदिनों सुभगां मद्रां तथा च सर्वमंगलाम्। पूजियत्वा पुनस्तासां पूजा तद्वद् विदिग्दले ।।८५५५।। कर्णिकायां गएोशानं ततो ध्यायेत् समाहितः। ब्रक्षसूत्रांकुशौ दन्तं लड्डुपात्रं गर्ऐदवरः ।।८४६।। भुजैश्चतुर्मिः पाशं च द्विदंष्ट्रः सिहवाहनः।

ध्येयो विष्नहरः सद्यो भक्तानामभयप्रदः ॥८५७॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangori एवं ध्यात्वा समावाह्य यथालब्धोपचारकै:। संपूज्य प्रार्थयेद् देवं कर्मंसांगत्वसिद्धये। ततो विसुज्य देवेशं वागीशीं पुस्तके यजेतु ॥ ६५ ६॥ हस्तमात्रे भद्रपीठे पूर्ववद् रचिते दले। पुस्तकं तत्र संस्थाप्य ध्यायेत् कुंडलिनीं पराम् ॥ ५५६॥ श्रीगुरुं च सहस्रारे ध्यात्वा नत्वा च मानसैः। संपुज्याज्ञां तदादाय परां शक्ति स्वमूलतः ।। द६०।। उत्थाप्य पुस्तके योज्य यथालब्धोपचारकैः। संपूज्य पुस्तके देवीं पश्चात् ध्यायेत् सुरेश्वरीम् ॥६६१॥ श्रथो मूलमयीं देवीं पंचाशद्वर्णविग्रहास्। यथाभिमतरूपां तां देवदेवीं कृशोदरीम् ॥८६२॥ संविद्रूपां तिडिद्भासां तारहारयुतां तथा। स्वस्वरूपस्वरूपेग् शोमितां सुस्मिताननाम् ॥ ६६३॥ एवं घ्यात्वाथ संप्रार्थ्यं पुस्तके पूजयेदिमाः। वाग्मवेशों च तत् पश्चाद् देवीं वाग्वादिनीं यजेत् ॥ ५६४॥ वागोश्वरीं स्वस्वबीजयुक्तां लब्धोपचारकैः। पश्चादष्टदले पूज्याः तथैवाष्ट्रसरस्वती । वर्गाष्टकेन संयुक्ता हंसा चित्रा ततः परम् ॥६६५॥ मरण्याख्या कदंबा च कमला चैव नित्यका। सुमगा च तथा गौरी ग्रष्टमी परिकोर्तिताः ॥८६६॥ वर्गादिमांश्च वागीश्यशब्दान्ता ङेनमोन्विताः। सर्वाइचंद्रोपमा देव्यः सर्वाः प्रेतकृतासनाः ॥८६७॥ सर्वाश्चतुर्भुजा ज्ञेयाः पाशांकुशघराश्च ताः। देव्या नुतिपराः सर्वाः सर्वामरग्रमूषिताः ॥द६८॥ यथाभिमतरूपेए। मध्ये देव्यत्र भेरवी। सानुकाकादसंस्थाना स्तेकाद्भुत्वशंना ॥६६६॥
सानुकाकादसंस्थाना स्तेकाद्भुत्वशंना ॥६६६॥

2. & Tropa

ग्रिधवासार्थमाहृत्य नैवेद्यादिकमाचरेत्। ंगंधपुष्पादिभिः पूज्य शर्कराज्यघृतं दिशेत्। ततक्च प्रार्थयेद् देवीं समाहितमना गुरुः ॥८७०॥ श्रापिचमिमदं जन्म यन्मया पुस्तकं गुभम्। श्रवाप्तं पुण्यनिचयै र्देव देव्याः प्रसादतः ॥८७१॥ चतुर्भु जे महापद्मसंस्थे कमलमालिनि । वर्णमालाश्रये नित्ये शूलमालासमायुते ॥८७२॥ मंत्रहोनं क्रियाहोनं विधिहोनं च यद्गतम्। त्वया तत् क्षम्यतां देवि कृपां कुरु सरस्वति ॥ ८७३॥ इति संप्रार्थ्य वाग्देवीं स्वात्ममंत्रं ततः पठेत्। नौमि स्वात्मप्रकाशं प्रशमितविषमक्लेशराशि महेशं वंदे वाग्देवतां तां कलयति किल या मूलतो वाग्लतायाः विघ्नग्रासप्रबंधादिव वृहदुदरं नौमि विघ्नाधिराजं दत्तप्राग्दीक्षमेकं गुरुवरमपरं ज्ञानदं च प्रपद्ये ॥८७४॥ इति प्रार्थ्य स्वीयदक्षे सामान्यार्घं विघाय च। तज्जलेन तथाभ्युक्षेत् पूजोपकरगां सुधीः ॥८७४॥ तत्तनमंत्रैश्च ते मन्त्राः कथ्यन्ते च क्रमादिह । प्रणवं च ततः फट् स्यात् सर्वद्रव्योपचारकम् ॥५७६॥ शुद्धिरस्तु ततः स्वाहा सर्वत्राभ्युक्षएो मनुः। एवमम्युक्ष्य पुष्पं तु पुष्पमंत्रेग मंत्रयेत् ॥५७७॥ प्राण्यं तत श्राष्ट्रस्रयुग्मं जीवयुगं च सः। सर्वासां पुष्पजातीनामंते जीवं समुद्धरेत् ॥८७८॥ श्रागच्छतु प्रिया वह्नेः पुष्पमंत्रः प्रकीतितः । भ्रनेन दशघामन्त्र्य ध्रुपमामन्त्रयेत् ततः ॥८७६॥ कालाग्निरद्ररूपाय जगद्भपसुगन्धिने। सर्वगंधवहायान्ते हृदयं प्रगावादिकः ॥ श्रनेन द्राधामंत्र्य दीपं चाप्यसिमंत्र्यत् ।।। प्रश्नानिक elled by eGangotri

Jan 18 de

प्रग्वं च जगज्ज्योतीरूपाय हृदयं ततः। श्रनेन दीपमामंत्र्य गंधमामंत्रयेत् ततः ॥**५**८१॥ प्रग्वं गंधशब्दांते मादिनीति समुच्चरेत्। गंधं जीवापयत्वन्ते स्वाहाशब्दमुदीरयेत् ॥८८२॥ प्ररावं भुवनेशानींपुनः पावकगेहिनीस । ग्रनेन गंधं संशोध्य मूलेनाप्यभिमंत्रयेत। दूतीं सौम्यां चतुर्वाहुं सुघोषां मंत्रघीषिणीम् । श्रक्षमालापुस्तकस्रग्वराभयकरां स्मरेत् ॥८८३॥ एवं ध्यात्वार्च्ययेद् घंटां शांभवव्याप्तिदृतिकाम्। प्ररावं कवचं शुद्धविद्याये मंत्रशब्दतः ॥ ८८४॥ मात्रे दृत्ये नमींतं स्यादनेनाभ्यर्चयेच्च तास्। प्रग्वं भ्वनेशीं च लक्ष्मीमन्ते शिवेति च ॥ ५५ ४॥ दूत्यै नमस्तथा घंटामंत्रेगानेन वादयेत्। विकराँस्तत्र विकिरेदस्त्रमंत्राभिमंत्रितात् ॥८८६॥ ग्रस्त्रं समुच्चरन् मार्ज्यं मार्जन्या कुज्ञजातया । ईशानकोणो मतिमानेकीकृत्य निघापयेत् ॥ दद७॥ ततस्त्रिहस्तविस्तारां गोमयालिप्तवेदिकास्। मूलेन वीक्ष्य तस्यां वे चक्रराजं समुद्धरेत् ॥ ददद॥ सिंदूररजसा शुद्धं सुस्पष्टं सुमनोहरम्। तत्रासनं समास्तीर्य संपूज्य प्राङ्मुखो गुरुः ॥दद६॥ पद्मासनेनोपविश्य स्वपद्धत्युक्तमार्गतः। पादुकास्मरएां चैव शिवहस्तविधि पुनः ॥८६०॥ करशुद्धचादिकं भूतोत्सारएां प्राग्।संयमम्। सूतशुद्धि तथा प्राग्पप्रतिष्ठां मातृकां ततः ॥ ६६१॥ श्रन्तर्बेहिश्च विन्यस्य लघुषोढां ततो न्यसेत्। महाषोढां हतत ह राजिए आंचक्सं जन्म ।।८६२॥

न्यासं ततश्च चरगान्यासं षट्शांभवाभिषम् । विधाय ध्यात्वा श्रीदेवीमन्तर्यागं समाचरेत् ॥द१३॥ मूलं जिपत्वा श्रीदेव्ये समर्प्याज्ञां च प्रार्थयेत्। बहिः पूजां करोम्यद्य पूर्णं स्यात् कृपया तव ।।८९४।। एवं प्रार्थ्य च स्वात्मानं संपूज्य कुसुमादिभिः। पुर्व्याजील समादाय समस्तप्रकटेति च ।। ८६४।। समष्टियोगिनीमूलविद्यया चक्रराजके। पुष्पांजींल क्षिपेत् तत्र मूलिवद्यां जपेत् ततः । पुनस्तथैव श्रीचक्रे दद्यात् पुष्पांजींल गुरुः ॥८६६॥ मध्यत्रिकोरणं शालीभिरापूर्यं तंदुलान् क्षिपेत्। सप्तविशतिसंख्याके कुशे च ब्रह्मग्रंथिकम् ।।८९७।। विधाय मूलंमंत्रेग दूर्वागंधाक्षतैर्युतम् । तत् कूच्चं स्थापयेत् तत्र शालिपुंजे कुशास्तृते ॥ ८६८॥ पीठं तत्राचंयेद् धीमान् पीठशक्तचन्तकं तदा । योगपीठं ततोऽभ्यर्चेन्मनुनानेन साधकः ॥८६६॥ तत्त्वात्मकं च श्रीचकं चितयत् कुसुमादिभिः। मातृकांते च षट्त्रिशत्तत्त्वमुच्चार्य श्रीपदम् ।।६००।। महात्रिपुरशब्दान्ते सुंदर्या योगपीठतः । श्रासनाय नमोऽन्तः स्यान्मंत्रस्तत्पीठपूजने ।।६०१।। पीठे पुष्पाजींल दत्वा घटमानीय मंत्रवित । स्वर्णादिनिर्मितं श्लक्ष्णमत्ररणं शोभनाकृतिस् ।।६०२।। 🖟 षट्जिशदंगुलोच्छ्रायं मुखमष्टांगुलैर्युतम् । तूत्नं रत्नयुतं खारी तोयग्राहि मनोहरम् ।।६०३।।

सुधूपवासितं कृत्वा त्रिगुगोकृततंतुना ।

विष्टितं एक्तवर्गोनः कामबीजेनः मोक्यः सत्। श्रहां ४११ Gangotri

bus ortans

why his a coage

वाग्भवेनैव संताड्य शक्त्या कुशाक्षतादिकम्। न्यस्य शत्तचासने स्थाप्य प्रगावं मूलमुच्चरत् ॥६०५॥ प्रादक्षिण्येन सूर्यस्य कलाः कुंभे प्रपूज्य च । मूलेन मायया चैव कुलतीर्थं विनिःक्षिपेत् ।। १०६।। वर्गौषधिक्वाथतोयं कर्पूरं गंधपुष्पकम्। दद्यात् पठन् विलोमेन मातृकां विदुसंयुताम् ॥६०७॥ श्रंते मूलं स्मरन्नेवं कुंभमापूर्य यत्नतः । गंगाद्याः सरितः सर्वाः समुद्राश्च सरांसि च ।।६०८।।

ह्रदप्रश्रवरााः पुण्याः सपातालमहोगताः। सर्वतीर्थानि पुण्यानि घटे कुर्वन्तु संनिधिम्। इति मंत्रं पठन् स्पृष्ट्वा लक्ष्म्या च पंचपल्लवस्।।६०६।। कूर्चेन पूगं निक्षिप्य स्त्रीबोजेन स्थिरं स्मरेत्। हृदाणुना गंधवस्त्रे सिंदूरं ललनाणुना ॥ ११०॥ कामबीजेन पुष्पं तु दूर्वां प्रग्वमुच्चरत्। देवरूपं स्मरत् प्राज्ञस्तत्राचेंत् स्वरजाः कलाः ॥ ११॥

अमृताद्याश्च संपूज्य प्रादक्षिण्येन साधकः। तदग्रे स्थापयेत् शंखं सामान्यार्घविधानतः ॥ १२॥

शंखं कलशजातीयजलेन परिपूरयेत्। तत्र चंदनकर्प् रकाश्मीररोचनास्तथा ।। १३।।

जटामासीं सिल्हकं च निःक्षिपेदर्घ्यपात्रके । वन्हेर्दशकलास्तत्र सूर्यस्य द्वादश स्मृताः ॥६१४॥

षोडशेन्दोः कलास्तद्वत् समावाह्य विधानतः। तासां प्राणांत् प्रतिष्ठाप्य पूजयेच्च विधानवित् ॥६१५॥

अगावस्य कलास्तद्वत् पंचाशत् पूर्ववत्मंना । पंचभागोना a त्राह्म पंचयतिन च यथाविधि ।। ६१६।। पंचभागोना a त्राह्म पंचयतिन च यथाविधि ।। E१६।।

おうしている

मूलविद्यां त्रिः सकृद्वा जपेत् अंखं च संस्पृशन् । श्रीदेवीं हृदये घ्यात्वा तज्जलं कुंभके क्षिपेत् ।। १९।। कल्पद्रुमधिया तत्र विल्वपत्राशि चाक्षिपेत्। तत् सजातीयमपरं पात्रं तंडुलपूरितस् ।। ६१८।। निधाय कुंभवदने नारिकेलसमन्वितम् । कल्पवृक्षफलाकारं ध्यायन्नेकाग्रमानसः ।। ६१६।। नीलरक्तक्षौमवस्त्रयुग्मेन परिवेष्टयेत्। एवं प्रधानकुंभं च संस्थाप्याशामु चाष्ट्रमु ।। ६२०।। कुंमाष्ट्रकं तथैवात्र स्थापयेत् क्रमशः सुधोः। पूर्वकुंमे ध्रुवं पूज्य दक्षिणो च घरां यजेत् ।। ६२१।।

पश्चिमे वाक्पति तद्वदुत्तरे विष्णुमीश्वरम्। श्रमृतामिनकोणे तु दुर्जयां निऋंतौ यजेत्। सिद्धार्थां वायुकोएो च मंगलामीशकोएक ॥ ६२२॥ क्ंमेष्वेवं समभ्यच्यं दिग्धवान् पूर्वतोऽर्चयेत्। स्वबोजसहितान् ङेन्तान् स्वशक्तिसहितानिष ।।६२३।।

स्वाधिपत्ययुतान् सास्त्रान् यजेत् कुंभे स्वदिग्गते । एवं संपूज्य च पुनः पूर्वाद्यष्टघटे यजेत् ॥६२४॥

गुजानष्टौ यथान्यायं तेषां नामानि चोच्यते । ऐरावतः पुंडरीको वामनः कुमुदोञ्जनः ।। १२४।।

पुष्पदंतः सार्वमौमः सुव्रतीकश्च ते गजाः । इत्थं संपूज्य च गुरुः शंखाद् दक्षिरगतः क्रमात् ।। ६१६।।

श्रीपात्रादिक्रमेग्पैव पात्राग्गि स्थापयेत् ततः । गुरो: स्वर्णभवं तद्वत् तच्छक्तयं राजतादिजम् ६२७॥

भोगपात्रं नारिकेलमवं कापालजं तथा। विलपात्रं योगिनोनां पात्रं वीरादिकं तथा ॥६२८॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

एवं पात्रािंग संस्थाप्य स्वपद्धत्युक्तमार्गतः। समष्टिविद्यया मूर्ति परिकल्प्य समाहितः ॥६२६॥ श्रावाहयेन्मध्यकुं मे श्रावाहिन्यादि दर्शयेत् । स्रावाहिनीं स्थापिनीं च सिन्नधीं संनिरोधिनीम् ॥६३०॥ अवगुंठनिकां तद्वत् सकलीकरर्गीं तथा। परमीकरणीं कृत्वा प्राणस्थापनमा वरेत ।। ६३१।। ततः सर्वोपचारैश्च समाराध्य विधानवित् । नवेद्यान्ते तिथिनित्यां श्रीचक्रदेवतायुतास् ।।६३२।। संपूज्य तर्पयेत् तद्वदमृतैः पात्रसंभवेः । तृष्तां परिशावां ध्यात्वा विलदानं विधाय च ॥ १३३॥ श्रापोशानं च संपाद्य राजपूजां विधाय च। तांबूलं विनिवेद्याथ कृत्वात्रारात्रिकं ततः ।। ६३४॥ मूलविद्यामष्टपूर्वशतं जप्त्वा समाहितः। जपं देव्ये समर्प्याथ नत्वा स्तुत्वा ततो गुरुः। ग्रग्निस्थापनकं कर्म कुर्यात् कुंभसमीपके ॥१३४॥ कुंडं वा स्थंडिलं वापि निर्माय चतुरस्रकम्। प्राङ्मुखः श्रुक्श्रुवौ तत्र संस्थाप्य चार्घ्यपात्रकम् ॥ ६३६॥ कुशान् पवित्रत्रितयं शुष्ककाष्ठं यथोदितम्। आज्यस्थालीमाज्यपूर्गां घूपदीपादिकं तु यत् ॥ ६३७॥ स्ववामे स्थाप्य तत् सर्वं गुर्वादिवंदनं चरेत्। प्रागायामं ततः कृत्वा षडंगानि विधाय च ॥ ६३८॥ देवीं ध्यात्वा स्वहृत्पद्मे मानसेः पूज्य संयतः। कुशस्थानि च पात्राणि ग्रघोमुखगतानि च। कुशोदकेन चाभ्युक्य स्ववामे जलभाजनम् ॥ ६३६॥ साधारं सजलं तत्र निधाय मूलमंत्रतः। अभिर्मित्र्योमृतीकृत्य प्रोक्षिण्यां निः क्षिपेण्य वृत्त्रित्याः राजापुरा तज्जलेन कुदौ: कुंडं स्थंडिलं वा यथाविधि। प्रोक्ष्य मूलं समुच्चार्य दिननित्यां तथैव च ॥६४१॥ प्रागग्रं चोदगग्रं च कुर्याद् रेखाचतुष्टयम्। कुशमूलेन ताः प्रोक्ष्य सूर्यकान्तोद्भवं तथा ॥१४२॥ श्रोत्रियागारजं वापि शिलोद्भवमथापि वा। कांस्यपात्रे समानीय ज्वलनं घूमर्वाजतम् ॥६४३॥ चतुस्तारीं च क्रव्यादेभ्यो हुँ फट् मंत्रमुच्चरत्। क्रव्यादांशं च नैऋँत्यां त्यजेत् किंचित् ततः परम् ।।६४४।। शेषं देवांशकं ज्ञात्वा निधायाग्रे अभमंत्र्य तम्। मूलेनामृतदृष्या च संचित्यादाय पात्रकम् ।। ६४५।। जानुभ्यामवनीं गत्वा त्रिःपरिभ्राम्य क्ंडकम्। शिवरेतो धिया मध्यकोष्ठेऽग्नि स्थापयेद् गुरुः ।। ६४६।। कुशांस्तदुपरि स्थाप्य तथा शुष्केन्धनानि च। मूलं च दिननित्यां च संस्मरत् मुखती धमेत् ।। ६४७।। प्रज्वाल्य प्रण्मेद् वन्हि वह्मिनंत्रेण मंत्रवित्। भ्रांग्न प्रज्वलितं वंदे जातवेदं हुताशनम् ॥६४८॥ सुवर्णवर्णममलं समिद्धं विश्वतो मुखम् । प्रराम्य सप्तजिह्वाख्यां मुद्रां वध्वा पठेन्मनुम् ॥६४६॥ चतुस्तारीं च सकलजगत्कारणशब्दतः। वन्हे गंभाधानशब्दादादिकाश्च क्रिया वदेत् ॥ १५०॥ संपाद्यतामिति प्रोच्य मुद्रां संदर्शयेद् गुरुः। उत्तानीकृत्य पात्राणि प्रोक्षयेत् प्रोक्षणीजलैः ।।६५१।। प्रोक्ष्य प्रग्रीतापात्रं च ग्रस्त्रमुच्चार्यं पूरयेत् । कुशोदकेनाक्षतांश्र पवित्रं तत्र निःक्षिपेत् ।।९५२।। शक्तिबीजं ततोऽस्त्राय फडित्युक्त्वा ततो गुरुः। उत्तानहस्त्रयुगलांगुष्ठाना सिक्या च तत् ॥६५३॥ अध्याना सिक्या च तत् ॥६५३॥

पवित्राप्रभूते संघृत्य जलबिन्दुं भुवि क्षिपेत्। कुशेषु स्थापयेत् तच्च स्ववामे कुंडसन्नियौ ॥ १५४॥ प्रग्गोतामपि प्रक्षाल्य समापूर्य कुशोदकैः। तत्र किंचित् प्रग्गीतास्थं जलं निक्षिप्य तेन च ॥ १५४॥ सर्वोपकरणं प्रोक्ष्य त्रिभागं तच्च कारयेत्। प्रोक्षिण्यां भागमेकं तु संपाताज्यस्य पात्रके ॥ १५६॥ श्रपरं निजभागं च तत्रैव स्थापयेत् क्रमात् । संपाताज्यस्य पात्रं तु कुशोपरि निधापयेत ॥ ६५७॥ प्रोक्षिण्या वन्हिमासिचेन्मूलेन दिननित्यया। दर्भैरीशादिमारभ्य तदन्तं च परिस्तरेत ।।६५८।। ब्रह्मासनं समास्तीर्य स्वदक्षे ब्रह्मचारिराम्। दीक्षितं तत्र मितमानुपवेश्यातिभक्तितः ।। १५६॥ सोपकरगौरच वृणुयात् ब्रह्मत्वेन तमर्चयेत्। त्वं मे ब्रह्मा भवेत्युक्तवा कर्मण्यस्मिन् समाहितः।।१६०।। तदलाभे कुशवदुं षट्पंचाशन्मितं तथा। पूज्य वन्हि हेमवर्गं ध्यायेत् तत्र यथोदितम् । वराभयकरं देवं शक्तिस्वस्तिकभूषितम् ।। ६६१।। मूलदेवीस्वरूपं च त्रिनेत्रं भूषर्गान्वितम्। इति घ्यात्वावाहनादिपरमीकरणाविघ ।।१६२।। विधाय चारिन मतिमान् पूजयेन् नाममंत्रतः। पुष्पाञ्जलित्रयं दत्वा पुनस्त्रिस्तं प्रपूजयेत् ॥६६३॥ श्रासनं च तथाव्यं च तत ग्राचमनीयकम्। मधुपर्कमाचमनीयं स्नानादिकमथो दिशेत् ।। ६६४।। नवेद्यान्तं च संपाद्य पूर्वादिसप्तकोष्ठके । प्राविकारमें प्रयासिक्षियोग्री स्वाद्यास्त्र प्रथाक्रमात् । १६६४।। Engres.

हिरण्या कनका रक्ता कृष्णा च सुप्रभा तथा। म्रतिरक्ता बहुरूपा यथालब्धोपचारकैः ।। ६६६।। पूज्यास्त्रक्षालितायां च स्थाल्यामाज्यं निधाय च । मूलेन त्रिः समामंत्र्य ग्रमृतीकृत्य मुद्रया ।। ६६७।। दक्षे पवित्रं संगृह्य कुशमुध्टि च वामके। स्रुवमादाय दक्षेरा घृतेन जुहुयाद् गुरुः ।।६६८।। श्रग्नये चैव सोमाय श्रग्नीषोमात्मने ततः। स्विष्टकृते पुनर्हुत्वा वामे दक्षे ललाटके ॥६६६॥ मुखे च क्रमशो हुत्वा एककामाहुति ततः। स्रुवलग्नं हिवःशेषं संपाताज्यस्य पात्रके ।।६७०।। निक्षिप्य पश्चाज्जुहुयादग्नये वायवे पुनः । सूर्याय व्याहतीस्तिस्रो त्रिष्वप्यादौ नियोज्य च ।।६७१।। एककामाहुति तद्वत् सप्तजिह्वासु वे हुनेत्। वन्हौ यथोक्तं श्रीचक्रं विभाव्य पीठपूजनम् ॥६७२॥ कृत्वा देवीं समावाह्य परिवारसमन्विताम्। वन्हिदैवतयोरैक्यं भावयन् पंचविश्वतिम् ।। ६७३।। चक्रं कीकरएार्थं च मूलेनाज्याहुति हुनेत्। नाडीसंघानसिद्धचर्यं हुत्वा चेकादशाहुतीः ।।१७४॥ नवावरएकाक्तीनामेककामाहुति विशेत्। ततः समिष्टमंत्रेण समस्तप्रकटादिना ॥६७५॥ वौषडंतेन जुहुयात् ततः पूर्णाहुति गुरुः । तत्र स्थाल्यां ताम्रमय्यां संस्कृताग्नी चरुं पचेत् ॥६७६॥ गुरुवचरं त्रिमागं च कृत्वां तत्र कुशास्तरे। ग्रस्त्रामिमंत्रितं वेद्यां यथान्यायं निधाय च ॥६७७॥ एकं भागं तथा देग्यं निवेद्य च तथापरम्। भागं घृतान्नपयसा तिलतंडुलसंयुतम् ॥६७८॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri रक्तपुष्पयुतं कृत्वा तदानौ मूलविद्यया । जुहुयात् पंचिविश्वत्या हुतो राज्याहुतीस्तथा ॥६७६॥ तृतीयभागं शिष्येग् स्वयं भुक्त्वा गुरुस्तदा । शिष्यं मूलषडंगेन सकलीकृत्य संयतः ॥६८०॥

सुप्यात् तथासने शुद्धे स्वापयेत् शिष्यमन्तिके । स्रिधवासनमेतद्धि यथाविधमुदीरितम् ॥६८१॥

इति श्रीमदागमरंहस्ये सत्संग्रहे उत्तरार्धे दोक्षाभिषेके ग्रधिवासान्तकथनं नाम पंचमः पटलः । ग्रादितस्त्रयस्त्रिंशत् ॥

ग्रथ षष्ठः पटलः ।

प्रातरुस्थाय च गुरुः विधायावश्यकं तथा। नित्यकृत्यं समाप्याथ शिष्यमाहूय रात्रिजम् ॥६८२॥ पृष्ट्वा स्वप्नं तद्विचार्यं शांतियोग्यं च तच्चरेत्। घृतेन सिंहमंत्रेगा जुहुयात् पंचविश्वतिम् ॥६८३॥ तेन सुस्वप्नतां याति दुःस्वप्नोऽपि न संशय: । सद्योघिवासपक्षे तु गुरुशिष्यौ पुनस्तथा ।।६८४।। चरुशेषं न भूं जीतामाजिद्येतां यथाविधि। ततो घृतादिना देव्ये प्रदद्यात् षोडशाहुतीः ॥६५५॥ एकैकामाहुति दद्यादंगदेवात् यथाविधि । ततः षोडशनित्यानां गुरुपङ्क्तित्रयस्य च ॥१८६६ ॥ षडंगयवतीनां च नवावरग्रदेवताः। श्रन्यासामिप देवानामेकैकाहुतिमादिशेत् ।। ६८७।। प्रग्गवादिचतुर्थंतनाम्ना स्वाहांतकेन च। एवं संपाद्य वे होमं ततः कुंडस्य दक्षिए।।१६८८।। निवेश्य शिष्यं मूलेन प्रणवासनमंडले । कुरोनिर्डी विनिर्माय सार्धहस्तव्यां लहां hill हार ही by eGangotri

मूलाभिमंत्रितां कृत्वा तन्मूलं च शिशोः करे। दत्वा संवेष्टितां वामभागेन च तदग्रकम् ।। ६६०।। स्वजानुमध्ये संवेश्य तथावष्टम्य जंघिकाम्। निर्गच्छंतीं शिष्यदेहान् मध्यनाडीं सुषुम्गिकाम् ।। ६६१।। विलीनां भावयेदात्मनाड्यामेवं ततो गुरुः। मूलमुच्चार्यामुकस्य मध्यनाडी ततः परम् ।। १६२।। मन्मध्यनाड्यां लीनांते भवत्वनलवल्लभा । इत्याहुतित्रयं दत्वा पुनर्मूलं समुच्चरेत् ।। ६६३।। श्रमुकस्य मध्यनाडी मन्मध्यनाड्यां ततः परम्। लीना तथा च संपन्ना भवत्वनलगेहिनी ।।६६४।। प्रवेशनिर्गमत्य गग्रह्गाकर्षहेतवे । नाडीसंघानिमत्युक्तं संपातमाहुतेश्च यत् ।। ६६५।। देयं तत् शिष्यशिरसि मंत्रमेनं तथोच्चरन्। वाग्भवं प्रथमं कूटं संपातं च करोमितः ।। ६६६।। स्वाहाशब्दं प्रयुंजीत कामान्ते स्याद् द्वितीयकम् । कूटमुच्चार्यं च पुनः पूर्ववत् शक्तिबीजकम् ।। ६६७।। कूटं तृतीयमामाष्य पूर्ववत् पुनरुच्चरेत्। वालाप्रत्येकबीजेन संपातित्रतयं पुनः ॥६६८॥ मूलेनान्ते च संपातमन्यदुक्तवदाचरेत्। एवं च शिष्यशिरसि संपातामृतमाक्षिपेत् ॥ ६६६॥ ततो मूलदशांशेन हुनेदंगेन व पुनः। ततः शिष्यं दिव्यहष्ट्या विलोक्य योगमार्गतः ॥१०००॥ तदीयं हृदयं विश्य तच्चेतन्यं च स्वात्मिन । संयोज्य शिष्यशिरसि श्रीचक्रं च विभावयेत् ॥१००१॥ षडध्वरूपं शिष्यस्य षडध्वानं विशोधयेत्। निवृत्त्यादिकलाः पंचयुक्त शिष्यस्य पादयोः ॥१००२॥

Jakes Jakes

कलाध्वानं विचित्याथ तथैव लिगदेशके।

श्रात्मविद्याशिवैस्तद्वदेतैरुत्क्रंमयोगतः ॥१००३॥ समस्तैः सप्तसंख्याकैस्तत्त्वाध्वानं विभाव्य च। पुनस्तथा नाभिदेशे भुवनामि चतुर्दश ॥१००४॥ तन्मयं भुवनाध्वानं परिकल्प्य तथा हृदि। श्रकारादिक्षकारांतमातृकावर्गारूपकम् ॥१००५॥ वर्गाध्वानं विचित्याथ पुनस्तस्य ललाटके । वर्गाव्यूहमयं ध्यायेत् पदाध्वानं तथा पुनः ॥१००६॥ मंत्रराशिमयं ध्यायेत् मंत्राध्वानं च मूर्धनि । इत्यध्वषट्कं शिष्यस्य देहे ध्यात्वा ततो गुरुः ॥१००७॥ स्पृशन् शिष्यं च कूर्चेन तिलैः साज्येरथाहुतोः। श्रव्टौ च जुहुयान्मंत्री मंत्रमेनं तथोच्चरत्। प्ररावं भ्रमुकस्येति कलाध्वानं ततः परम् ॥१००८॥ शोधयामि तथा स्वाहा तत एवं समाचरेत्। तत्त्वाध्विन कलाध्वानं लीनं संभाव्य पूर्ववत् ॥१००६॥ प्रग्वं ग्रमुकस्येति तत्त्वाध्वानं ततः परम्। शोधयामि तथा स्वाहा इत्यव्टावाहुतीहुंनेत्। ततो विभावयेल्लीनमेनं च भुवनाध्वनि ॥१०१०॥ प्ररावं पूर्ववन्नामषष्ठयंतं च समुज्यरन्। भुवनाध्वानं शोधयामि स्वाहांते पुनराहुतीः ॥१०११॥ श्रष्टौ हुत्वा तमध्वानं वर्गाध्वित विलापयत्। पूर्ववत् शब्दमुच्चार्य वर्गाध्वानं समुच्चरेत् ॥१०१२॥ स्वाहांतं शोधयामीति हुनेदष्टौ तथाहुतीः। लोनं विभावयेत् तद्वद् वर्गाध्वानं पदाध्विन ॥१०१३॥ पूर्ववज्जुहुयादष्टावाहुतीमैत्रमुञ्चरत्।

पूर्वविष् शांक्षमुण्यार्थः पद्माध्वातंत्रतः परम ॥१०१४॥

Siere Siere

vija

स्वाहांतं शोधयामीति ततो लीनममुं स्मरन् ।
मंत्राध्वित तथैवाष्टावाहुतीर्जु हुयाद् गुरुः ॥१०१४॥
प्रग्णवं पूर्ववत् नाम मंत्राध्वानं ततः परम् ।
शोधयामि तथा स्वाहा मंत्रमेनं समुच्चरन् ॥१०१६॥
विलीनं भावयेन् मंत्राध्वानं च परमात्मिन् ।
अध्वानमेवं संशोध्य पुनः सृष्टिक्रमेग् च ॥१०१७॥
प्रत्येकमाहुतीरष्टौ दद्यादेवंक्रमेग् च ॥
तारांते ग्रमुकस्येति सर्वत्र क्रमयोगतः ॥१०१८॥

षड्मंत्राः संभवन्त्येते स्वाहान्ताः शोधयामितः । किंचिद् विशेषो मध्ये स्यात् प्रत्येकं प्रथमे तथा ॥१०१६॥

परमात्मिन लीनं च मंत्राध्वानं द्वितीयके।
मंत्राध्विन तथा लीनं पदाध्वानं नृतीयके।।१०२०।।
पदाध्विन तथा लीनं वर्णाध्वानं चतुर्थके।
वर्णाध्विन च भुवनाध्वानं लीनं च पंचमे।।१०२१।।
भुवनाध्विन लीनं च तत्त्वाध्वानं च षष्ठके।
तत्त्वाध्विन तथा लीनं कलाध्वानिमिति स्मृताः।१०२२।।
षण्मंत्राश्च ततः स्थाने तत्त्वानि योजयेद् गुरुः।
स्वात्मस्थं शिष्यचैतन्यं ब्रह्मरंध्रेण तत् तनौ।।१०२३।।

सुषुम्गावत्मंनावेश्य शिष्यस्य हृदये तदा । स्थापयेद् योगमार्गेण दिन्यहष्ट्या विलोकयन् ॥१०२४॥ शूद्रसंकरजातीनां संस्कारेगाध्वशोधनम् । किंतु पाशनिवृत्त्यर्थं तस्मै वद्यात् पदोदकम् ॥१०२४॥

तेनैव मुक्तजन्मानस्ते भवंति न संशयः । एवं शोध्य षडध्वानं जुहुयादाहुतोः पुनः ॥१०२६॥ प्रथमां व्याहृति प्रोक्ता ङेन्तोऽग्निः पृथिवी तथा । महांस्तृद्वत् तथा स्वाहाः मंत्रोऽपं प्रथमाहुती गार्व o २ ७॥ द्वितीया व्याहृतिस्तद्वत् ङेऽन्तो वायुस्तथा पुनः । अंतरिक्षं मरुत् तद्वत् स्वाहान्तः स्याद्, द्वितीयकः ॥१०२८॥

तृतीया व्याहृतिस्तद्वत् ङेऽन्तः सूर्यो दिवं महत्। स्वाहान्तः स्यात् तृतोयेयं पुनस्तद्वत् चतुर्थकः ।।१०२६।। ब्याहृतित्रयमुच्चार्य ङेऽन्तश्चैव प्रजापतिः। त्रिलोकाइच मरुत् तद्वत् स्वाहातः स्याच्चतुर्थकः ॥१०३०॥ एवं प्रत्येकस्वाहांते ङेनमोऽन्तं तथाधिपम्। उच्चार्य जुहुयादेवं चतुस्तारादिकं तथा ॥१०३१॥

कर्मबंधविमुक्तचर्यं घृतेनैकाहुति चरेत्। ब्रह्मार्पिपोन मनुना ततश्च पावकं नमेत् ॥१०३२॥ ॐ सहस्राचिर्महातेजा नमस्ते सर्वेरूपघृक्। सर्वाशिने सर्वगाय पावकाय नमोऽस्तु ते ।।१०३३।। एवमिंन प्रणम्याथ मंत्रेगानेन प्रार्थयेत्। ॐ त्वं रौद्रघोरकर्मा च घोरहा त्वं नमामि ते।।१०३४।। विष्णुस्त्वं लोकपालोऽसि शांतिमत्र प्रयच्छ मे। इत्येवमिंन संप्रार्थ्य घृतेनापूर्य वै स्रुचम् ॥१०३४॥

पुष्पं दत्वा तदुपरि न्यस्य चाघोमुखं स्नुवम् । कराम्यां स्नुक्श्रुवौ घृत्वा संपुटाम्यां च शंखवत् ॥१०३६॥ निधाय च तयोर्मू लं स्वनाभौ वामपादकम्। कृत्वाग्रे वौषडंतेन मूलेन च परामुखे ॥१०३७॥

परमामृतबुद्धचा तु जुहुयाद् गुरुसत्तमः। एवं पूर्णाहुति दत्त्वा देवीमग्नौ पुनर्यजेत् ॥१०३८॥

Nugirta सांगां सावरगां चैव देवीं कुं में विसर्जयेत्। मो भो वन्हे च मन्त्रेग् स्वात्मन्युद्वासयेत् वसुम् ॥१०३६॥

विभूतिधारणं कृत्वा वौषट्मंत्रं समुज्यरत्। वस्त्रेग् शिष्यनेत्रे च समाच्छाद्य च तत्करौ ॥१०४०॥

Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

S. S. Charles

गृहीत्वापूर्य पुष्पैस्तदंजील मूलमुच्चरन्। कुं भस्थदेवतायं तदंजील दापयेद् गुरुः ।।१०४१।। नेत्रबन्धं विमृज्याथ संवेश्य कुशसंस्तरे। पाठयेत् मंत्रमज्ञानितिमिरांघस्यसंज्ञकम् ॥१०४२॥ पंचोपचारैः श्रीदेवीं गुरुः संपूज्य वे पुनः । भूतशुद्धिविधानेन शिष्यदे ंवशोध्य च ॥१०४३॥ तस्य प्रागान् प्रतिष्ठाप्य मातृकां च तदंगके। न्यस्त्वा च कलशे देवीं सकलीकृत्य मंत्रवित् ।।१०४४।। साधकैः शक्तिभिश्चैव पंचवाद्यपुरःसरम्। चालयेत् तद्घटं मंत्री मंत्रमेनं समुच्चरन् ॥१०४५॥ उत्तिष्ठ ब्रह्मत् कलश साधकाभीष्टसिद्धिद । कुलतीर्थां बुसंपूर्ण पूरयास्य मनोरथान् ।।१०४६।। एवं कुम्भं समुद्धृत्य मूलमंत्रं समुच्चरत्। तन्मुबस्थपत्रपुष्पान् शिष्यमूर्घिन निधाय च ॥१०४७॥ विलोममातृकां मूलमुत्तराभिमुखो जपन् ।

And of the same of

स्थितं शिष्यं पूर्वमुखमिसिंचेद् यथाविधि ।।१०४८।।

ग्रथामिषेकमंत्राणां दक्षिणामूर्तिरोरितः ।

ग्रह्मिष्ठछुन्दस्तथानुष्टुपू श्रीशक्तिर्देवता स्मृता ।
बोजं स्याद् वाग्मवं कृटं शक्तिकृटं च शक्तिकम् ।।१०४६।।

कामकृटं कीलकं च नियोगः सर्वसिद्धये ।
ॐ राजराजेश्वरोशक्तिभैरवी रह्मभरवी ।।१०५०।।

श्मशानमेरवी देवी त्रिपुरानंदभरवी ।

त्रिकुटा त्रिपुरादेबी तथा त्रिपुरमुंदरी ।।६०५१।।

त्रिपुरानंदिती देवी तथा त्रिपुरमुंति।।

त्रिपुरानंदिती देवी तथा त्रिपुरमुंति।।।१०५२।।

एतास्त्वामिभिषचंतु मंत्रपूतेन वारिएगा। छिन्नमस्ता महादेवी तथा चैकजटेश्वरी ।।१०५३।। तारा च जयदुर्गा च शूलिनी भुवनेश्वरी। त्वरिताख्या महादेवी तथा बाला त्रिकंटकी ।।१०५४।। नित्या च नित्यरूपा च वज्रप्रस्तारिर्गो तथा। एतास्त्वामिभिषचंतु मंत्रपूतेन वारिगा।।१०५५॥ श्रश्वारूढा महेशानी नित्या महिषमदिनी । दुर्गा च वनदुर्गा च श्रोदुर्गा भगमालिनी ।।१०५६।। तथा भगंदरी देवी भगक्किन्ना भगेदवरी। सर्वचक्रेश्वरी मद्रा तथा नीलसरस्वती ।।१०५७॥ सर्वसिद्धिकरी देवी सिद्धगंधर्वसेविता। उग्रतारा महादेवी तथा दक्षिरणकालिका ॥१०५८॥ एतास्त्वामिमिषचंतु मंत्रपूतेन वारिएा। क्षेमंकरी महामाया ग्रनिरुद्धसरस्वती ।।१०५६।। मातंगी चान्नपूर्णा च मद्रकालो महेरवरी। एतास्त्वामभिषिचंतु मंत्रपूतेन वारिगा।।१०६०।। उप्रचंडा प्रचंडा च चंडोग्रा चंडनायिका । चंडा चंडवती चैव चामुंडा चंडिका तथा।।१०६१।। एतास्त्वामिमिषचंतु मंत्रपूतेन वारिग्गा ।।१०६२॥ उप्रदंष्ट्रा महादंष्ट्रा शुभदंष्ट्रा करालिका। भोमसेना विशालाक्षी मंगला विजया जया ॥१०६३॥ एतास्त्वामिभषिचंतु मंत्रपूतेन वारिएा। मंगला नंदिनी भद्रा लक्ष्मी: कीर्ति यंशिश्वनी ।।१०६४।। पुष्टिर्मेधा शिवा साध्वी यशःशोमा जया घृतिः। श्रीनंदा च सुनंदा च नंदिनी नंदप्रजिता ॥१०६५॥ CC-0. Arus ktm R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

एतास्त्वामभिषिचंतु मंत्रपूतेन वारिएगा। विजया मंगला भद्रा घृतिः शांतिः शिवा क्षमा ।।१०६६॥ सिद्धिस्तुष्टिरुमा बुद्धिः श्रोसिद्धिश्च रतिस्तथा। एतास्त्वामिभिषंचंतु मंत्रपूतेन वारिगा।।१०६७।। विद्या कांति यंशोलक्ष्मीरीश्वरी विश्वरूपिग्गी। शाक्री जयावती स्वाहा जयंती चापराजिता ॥१०६८॥ एतास्त्वामिभविचंतु मंत्रपूतेत वारिगा। श्रजिता मानवी सीता दितिश्रादितिरेव च ।। १०६६।। मायावती महामाया मोहिनी क्षोभिग्गी तथा। वैवस्वतो च कौमारो तथा माहेश्वरी परा ॥१०७१॥ वैष्णवी च महालक्ष्मीः कार्तिकी कौशिकी तथा। शिवदूती च चामुंडा मुंडमालाविभूषर्गा ॥१०७१॥ एतास्त्वामिभाषचंतु मंत्रपूतेन वारिगा। श्ररुणा विमला गौरी शरण्यामितरेव च ॥१०७२॥ दुर्गा क्रियारं घती च घंटाकर्गा कपालिनी। रौद्री कृष्णा च कौमारी त्रिनेत्रा चापराजिता ॥१०७३॥ स्वरूपा बहुरूपा च रिपुघ्नो सुरपूजिता। र्चीचका चापरा सर्वी भ्रंबिका सुरनायिका ॥१०७४॥ एतास्त्वामिभिषचंतु मंत्रपूतेन वारिग्गा। वाग्वादिनी च कामाख्या कमला बहुरूपिग्गी। प्रत्यंगिरा भवानी च बाला घूमावती तथा ॥१०७५॥ षट्कूटा भैरवी बाला तथा त्रिपुरभैरवी। चैतन्यभैरवी रुद्रभैरवी रुरुभैरवी ॥१७०६॥ भुवनेश्वरी भैरवी च तथालपूर्णभैरवी। विमला वरदा बासी विषया आर्भरवासिनी Digitized by Gangotri

एतास्त्वामिभिषचंतु मंत्रपूतेन वारिर्णा। इन्द्रो वन्हिर्यमञ्जैव निऋति वंचग्रस्तथा ॥१०७८॥ पवनो धनदेशानौ ब्रह्मानंतो दिगीश्वराः। एते त्वामिभिषिचंतु मंत्रपूर्तेन वारिएा।।१०७६।। संवत्सरक्चायनं च मासपक्षदिनानि च। तिथयक्चाभिषिचंतु मंत्रपूतेन वारिग्गा ।।१०८०।। रविः सोमः कुजः सौम्यो गुरुशुक्रशनैश्चराः। राहुः केतुक्च सततमिभिष्चित्तंतु ते ग्रहाः ।।१०८१।। नक्षत्रं करएां योगः श्रमृतं सिद्धिरेव च । दुग्धं पापं तथा मद्रा योगवारक्षर्णास्तथा ।।१०८२।। वारवेला कालवेला दंडा वृद्धोदयास्तथा। श्रभिषिचंतु सततं मंत्रपूर्तेन वारिगा ।।१०८३।। श्रसितांगो रुरुव्चंडः क्रोध उन्मत्तसंज्ञकाः। कपाली भोषएएइचैव संहारोऽज्टौ च भैरवाः ।।१०८४।। श्रभिषिचंतु सततं मंत्रपूतेन वारिएा। डाकिनीपुत्रकाश्चैव राकिनीपुत्रकास्तथा ।।१०८४।। शाकिनोपुत्रकाश्चान्ये लाकिनोपुत्रकाः परे। काकिनीपुत्रकाः ये च हाकिनीपुत्रकास्तथा ।।१०८६।। ततश्च याकिनीपुत्राः देवीपुत्रास्ततः परम्। मातृ गां च तथा पुत्रा अर्ध्वमुख्याः सुताश्च ये ।।१०८७।। श्रधोमुख्याः सुताश्चान्ये कालमुख्याः सुताः परे । श्रभिषिचंतु सततं मंत्रपूतेन वारिएा।।१०८८।। ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः । देव्याः पंचमहाप्रेता भ्रभिषिचंतु सर्वदा ॥१०८९॥

पुरुषः प्रकृतिश्चैव विकाराश्चैव षोडरा ।

श्रात्मनश्च गुगाइचेव स्थलं सक्ष्मं ततः परम् ॥१०६०॥ CC-0. Arusakini R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

एते त्वामिभिषचंतु मंत्रपूतेन वारिगा। वेदादिबीजं श्रीबीजं बीजं मकरकेतनम् ।।१०६१।। शक्तिबोजं रमाबोजं बी जं चैव सुधाकरम्। चितारत्नं महाबीजं नारसिंहं च शांकरम् ।।१०६२।। मार्तंडं भैरवं दौर्गं बीजं श्रीपुरुषोत्तमम्। गारापत्यं वराहं च कालीबीजं भयापहम् ।।१०६३।। एते त्वामिभिषचंतु मंत्रपूतेन वारिगा। गंगा गोदावरी रेवा नर्मदा च सरस्वतो ।।१०६४।। श्रात्रेयी भारती चैव सरयू गंडकी तथा। करतोया चंद्रमागा इवेतगंगा च कौशिकी ।।१०६४।। भोगवती च पाताले स्वर्गे मंदाकिनी तथा। एतास्त्वामिभषिचंतु मंत्रपूतेन वारिग्गा ।।१०६६।। भैरवो मोमरूपश्च शोग्गो घर्घर एव च। सिंधुइचैव नदाइचैव तथा पातालसंभवाः ॥१०६७॥ एते त्वामिभिषचंतु मंत्रपूतेन वारिग्गा। यानि कानि च तीर्थानि पुण्यान्यायतनानि च ।।१०६८।। एते त्वामिभिषचंतु मंत्रपूतेन वारिए।। जंबूद्वीपादयो द्वीपाः सागराः लवगादयः ।।१०६६।। श्रनंताद्यास्तथा नागाः सर्पाः ये तक्षकादयः । एते त्वामिभविचंतु मंत्रपूतेन वारिगा।।११००।। रतिक्च वल्लमा वन्हे वंषट्कूर्चमतःपरम्। वौषट्कारं च फट्कारमिषिचंतु वारिएा।।११०१।। नश्यंतु प्रेतकूष्मांडा राक्षसा दानवाइच ये। पिशाचाः गुह्यका भूता श्रमिषेकेन ताडिताः ।।११०२।। ग्रलक्षका लक्षकाश्च पापानि सुमहांति च। नश्यंतु चाभिषेकेन ताराबीजेन ताडिताः। रोगाः शोकश्च दारिदृश्यं दोर्बहर्यः चित्तविक्रियाः ।। ११७३॥ नश्यंतु चाभिषेकेन वाग्बीजेनैव ताडिताः । लोकानुरागत्यागाश्च दौर्भाग्यमपि दुर्यशः । नश्यंतु चाभिषेकेन मन्मथेनैव ताडिताः ॥११०४॥

तेजोह्नासो बुद्धिह्नासो शक्तिह्नासस्तथैव च । नश्यंतु चाभिषेकेन कालीबोजेन ताडिताः ॥११०५॥

नक्यंतु विपदः सर्वाः संपदः संतु सुस्थिराः । श्रभिषेचनमात्रेगा पूर्णाः संतु मनोरथाः ॥११०६॥

शिष्यं दंतिमते मंत्रैरिमिषिच्य यथाविधि । षडंगमंत्रैः सकलीकुर्यात् तं गुरुसत्तमः ॥११०७॥ तत उत्तथाप्य तं धौते वाससी परिघाप्य च । कृतांजिल तथा मौनमाचमय्य स्वसन्तिधौ ॥११०८॥ स्थापियत्वा विनीतं च बोधयेदेवमेव हि । एवं भावय स्वात्मानं गतमायीयकंचुकम् ॥११०६॥

प्रकाशरूपं परमं शिवाकारमकल्मषम् । ततो गुरुस्तमुत्त्थाप्य श्रीचक्रे सूपवेश्य तस् ॥१११०॥

प्रागुद्धृते च संक्रान्तां तस्मिन् वै स्वेष्टदेवताम् । पंचोपचारै: संपूज्य सावधानेन चेतसा ॥११११॥

शिष्यदैवतयोरैक्यं चितयत् करुगानिधिः । गुरुः श्रोपात्रतत्त्वेन शिष्यस्य तत्त्वशोधनम् ॥१११२॥

कारियत्वा तस्य पाशच्छेदं कुर्यात् समाहितः । शिष्यदेहे तथा मूलाघारादिध्रुवमंडलस् ॥१११३॥

यावत् तावत् षोडशार्गाबीजानि षोडशस्थले । संचित्य षोडशीं दद्यात् सृष्टिमार्गेग देशिकः ॥१११४॥

पंचवश्युपदेशे तु तस्य पंचवशस्थले । न्यसेत पंचवशार्गानि बोडशान्त्रे तु वै पुनः ॥१११५॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

12 RANG

विंद्रयुक्तं वामनेत्रस्वरं कामकलाभिधम् ।
विंद्रित्य दद्यात् शिष्याय श्रीमत्पंचदशाक्षरीम् ॥१११६॥
षोडशाक्षरसंलीनाः सत्त्वादिगुग्गरूपिगः ।
गुग्गातीतस्वरूपाञ्च जाग्रदादिचतुष्कजाः ॥१११७॥
कलाः षोडश संचित्य दिव्यदृष्ट्या विलोकयन् ।
धनपुत्राबद्धमूले नानापातकपत्रके ॥१११८॥
ग्रिमलाषाप्रसूनाढ्ये पुण्यपापफलान्विते ।
दृष्टादृष्टस्थूलशाखाद्वये संसारवृक्षके ॥१११६॥
निषण्गं मोहमात्सर्यकामक्रोधमदात्मकैः ।

कल्यहंकारलोभादिच्छदैर्युक्तं तु पक्षिग्गम् ॥११२०॥ मनोरूपं च संकल्पविकल्पाभ्यां क्रमेगा च । पक्षाभ्यां शोभितं तद्वत् चंचलाभ्यां विशेषतः ॥११२१॥

तृष्णाचंचुपुटं कृत्याकृत्यरूपपदद्वयम् । एवं शिष्यमनोरूपपक्षिणं चित्य वै गुरुः ॥११२२॥ ज्ञानोपदेशपाशेन बद्ध् वा ज्ञात्वा सुनिश्चलम् । संवीक्ष्य करुणादृष्ट्या छिन्नपाशं च पक्षिणम् ॥११२३॥

एवं शिष्यं विचित्याथ सुपुष्पेग् फलेन वा ॥११२४॥
ब्रह्मरंध्रं स्पृश्चत् तस्य दक्षहस्तेन वं गुरुः ।
स्वस्वरूपं च यद्वस्तु तिच्छिष्ये संप्रयोज्य च ॥११२५॥
ब्रह्मं वायमित्यवेहि संबोध्येवं ततो गुरुः ।
सहस्रारस्थितं तत्त्वं गुरुरूपं प्रबोध्य च ॥११२६॥
तत्राजपायाः संकल्पं षट्चक्रस्य निरूपग्म् ।
यथातथं निरूप्याथ स्मृत्वा देवीं च पादुकाम् ॥११२७॥
शिष्यमस्तकमाच्छाद्य गुरुरूचं नववाससा ।
तस्य दक्षिग्णकर्गों च प्रथमं प्रादुकां विशेक् १६१९६६।।

TIN'S

Maria Cui

かかのかり

ग एोशादीच् ततो दत्वा ततो बालां समर्पयेत्। sm.f पंचपंचिकविद्यां च पुनश्चक्रेश्वरीं दिशेत् ॥११२६॥॥ ろったっ いうつうかん ततः पंचवशीं चैव नित्यामंत्रास्ततःपरम्। rething. चतुराम्नायविद्याश्च ततश्चरएारूपिर्णीम् ॥११३०॥ ving पराप्रासादमंत्राक्च ततः श्रीषोडशाक्षरीम्। दत्वा महापादुकां च महावाक्यादिसंयुतास् ॥११३१॥ यथान्यायं यथाम्नायं श्रीविद्यायामयं क्रमः । स्यात् कुलद्वयदीक्षायां षडाम्नायविधिक्रमः ।।११३२।। (My or wind, ce दोक्षां दत्वा स्नुक्सुवौ च ज्ञानखड्गं च पुस्तकस्। छत्रं च पादुकां दत्वा पुनश्चोपदिशेदिदस् ॥११३३॥ शैवेन विधिना स्नानं संध्या तर्परापूजने । विधिना प्रत्यहं कार्यमाशौचेऽपि न हापय ॥११३४॥ सूतके मृतके वापि नित्यकर्म न हापय। यदि त्यजसि वै मोहाल्लोमाद् वा स्मृतिदर्शनात् ॥११३५॥ शिवस्याध्वशतं जप्त्वा ततः शुद्धो भविष्यसि ।

तथा च स्वायंभुवे—

श्रादौ ब्राह्मीं ततः शैवीं संध्यां कुर्यादतंद्रितः । नित्यं संध्यामुपासीत लोपे चोपवसेद् दिनस् ॥११३६॥ निरुजः सरुजञ्चापि सद्योजातं शतं जपेत्। EU BENEVE एवं शिष्यं श्रावियत्वानंदनाथान्तकं शुभम् ॥११३७॥ तन्नाथोदयनाम्ना वा तन्नामाद्यक्षरादिकस्। यद्वा तत्स्पृष्टस्वांगोत्त्थमातृकाक्षरसंभवस् ॥११३८ नाम कुर्याद् यथाम्नायं तत्र शिष्याय बोधयेत्। श्रमुकानंदनाथोऽसि शिष्यो वाढं तदा वुवत्।

गुरोराजां पुरस्कृत्य तत्रेव गुरुसन्निधौ ॥११३६॥ पुरोराजां पुरस्कृत्य तत्रेव गुरुसन्निधौ ॥११३६॥

Last Andrews

प्राग्गायामं विधायाथ ऋष्यादिन्यासपूर्वकस् । षडंगं चैव विन्यस्य ध्यात्वा देवीं च मानसैः ॥११४०॥ उपचारै: प्रपूज्याथ सावधानेन चेतसा । श्रीमूलविद्यां च ततो जपेदष्टोत्तरं शतम् ।।११४१।। गुरुदेवतमंत्रागामैक्यं संभावयन् धिया । देवात्मकं गुरुं ध्यायत् दण्डवत् प्रिंगपत्य च ।।११४२।। तत् पादपद्मं शिरसि निधायैवं मुहुर्वदेत्। कृतार्थोऽस्मि कृतार्थोऽस्मि कृपया तव शंकर ।।११४३।। त्राहि नाथ कुलाचारपवित्रत्राग्।कारक । त्वत्पादांबुरुहच्छायां मूघ्नि देहि यशोधनम् ।।११४४।। उत्त्थापयेद् गुरुस्तं च वदन्नेवं प्रहर्षितः । उत्तिष्ठ वत्स मुक्तोऽसि सम्यगाचारवान् भव ।।११४५।। कीर्तिः श्रीकांतिमेघायु बंलारोग्यं सदास्तु ते । समुत्त्थाप्य च मूर्घानं जिद्रन् तं परिरम्य च ।।११४६।। यथाधिकारं समयाचारांश्च परिबोधयेत्। मंत्रंमुद्रामात्मनाम शिष्यादन्यत्र नो वद ।।११४७।। मत्तेभं सहकारं च ग्रशोकं पुष्पितद्रुमस्। इमशानं द्रव्यसौगंध्यमेकवृक्षं च कोकिलम् ।।११४८।। सुवासिनीकुमारी एां समूहं मदिराघटम्। श्राममांसं कौलशास्त्रपुस्तकं दर्शने नमः ।।११४६।। पशुहस्तगतं नैव कार्यं च कुलपुस्तकम्। श्रद्धामक्तिकराम्यां तु कौलिको भवसागरम् ।।११५०।। तरत्येकेन होनोऽपि गभोरे मज्जति ध्रुवस्। कुलशास्त्रप्रमाराोक्तं कुर्यात् शत्तचनुरोधतः ।।११५१।। भ्रालस्येन त्यजन् सद्यः पतत्येव न संशयः। कुल्बास्त्रंतस्ववेवयवित्रात्तिमीर्यं प्रयत्नतः ॥११४२॥

offer of

10,00

is in

Cast Cinci

पशुशास्त्रारिंग सर्वारिंग दूरतः परिवर्जयेत् । पशोस्तु रक्षगां तद्वत् धर्मस्यास्य तथाचरेत् ॥११५३॥ गुह्यर्थं कर्मगां लोपे न पापं विद्यते क्वचित्। मातृदोषो यथा गोप्यस्तथा धर्मः स्वयं सदा । योषितामप्रियं नैव कुर्यात् कार्यं प्रियं सदा ।।११५४।। श्रपराधसहस्रेऽपि स्विस्त्रयं वा परिस्नयम् । न क्लेशयेन् मंडले तु सर्वेषां प्रियमाचरेत् ।।११५५॥ काम्यकर्म न कर्तव्यं नित्यं नैमित्तिकं चरेत्। भक्त्या शक्त्या कृतं कर्म देवतायै समर्पयेत् ।।११५६।। अन्यमंत्रार्चने श्रद्धां न कुर्यात् तु कदाचन । न नग्नां स्त्रियमीक्षेत कुरूपां प्रकटस्तनीम् ।।११५७।। हष्ट्वा तु विकृतां वापि नोपहासं समाचरेत्। मंडले तु स्नियात्युक्तस्ताडितोऽपि तु तां नमेत् । ११५८।। न स्वपेत् कुलवृक्षाधस्तत्पत्रे नेव भोजनम्। तच्छेदं नैव कुर्याच्य नमस्कुर्याच्च दर्शने ।।११५६।। कुलशास्त्रं तदाचारं कदापि न विकल्पयेत्। विभोतकार्ककारंजस्तुहोछायां न संश्रयेत् ।।११६०।। पुंड्रेक्षुभक्षरां तद्वत् छेदनं च परित्यजेत्। गुरुस्त्रिवारमाचारं शिष्याय कथयेत् स्फुटम् ।।११६१।। तन्न गृह्णाति शिष्यश्चेत् तदा पापं गुरो नंहि। गुरूपदिष्टं संघार्य शिष्यः संहृष्टमानसः ।।११६२।। ततः शिष्यश्च स्वात्मानं गुरवे विनिवेद्य च। प्रतिज्ञापूर्वकं दद्याद् दक्षिएां गुरवे च सः ॥११६३॥ सर्वस्वं वा तदधं वा तदधं वा दशांशकम्। वित्तशाट्येन रहितो गां पृथ्वीं च हिरण्यकम् ।।११६४।। वस्नाभरराभूषादि गजमक्वं गृहादिकम्। स्रारामं च तथा दासं दासीं दत्वा प्रणम्य तम् ॥११६५॥
C. J. Arusakhi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri Carl &

विनयेन च संतोष्य कारयेद् वीरमंडलस्।
यथाविधि समाह्य कुमारोश्च सुवासिनीः ।।११६६।।
ततः सामयिकांश्चेव यथान्यायं प्रपूज्य तान्।
उन्मनोल्लासपर्यन्तं संतर्प्यं शक्तिसाधकान् ।।११६७।।
संप्रार्थ्यं दोक्षासाफल्यं वस्त्रालंकारभूषर्गैः।
नानाविधे भंक्ष्यभोज्ये लेह्यपेयेश्च तोष्य तान् ।।११६८।।

Constitution of the second

श्रीगुरुं प्रार्थ्यं तत्कर्म संप्राप्ताशीः समापयेत्।
ततोऽपरिवने कुर्यात् पिवत्रारोपगां गुरुः।
ज्ञानार्ग्यवोक्तमार्गेग् कर्मसांगत्वपूर्त्तये।।११६६।।
नवतंतुमयं कुर्यादेकहस्तप्रमाग्गकम्।
स्वर्ग्जं रौप्यजं वापि यद्वा कार्पासजं शुभम्।।११७०।।
नवग्रंथियुतं कृत्वा तदेकादशमाचरेत्।
उपविश्यासने शुद्धे नित्यकृत्यं समाप्य च।।११७१।।
पात्रे पिवत्रे संस्थाप्य तथास्त्रेग् च प्रोक्षग्गम्।
कवचेनावगुंठ्याथ वर्मगा वेष्टयेच्च तम्।।११७२।।
सिविधिस्थापिते वह्नौ सलेनेन प्राप्ता

सिविधिस्थ्रापिते वह्नौ मूलेनेव प्रतापनम् ।
कृत्वा पात्रे च संस्थाप्य ससंपातं घृतं हुनेत् ॥११७३॥
पुनस्तिस्मन् यजेच्चेता क्रमयोगेन देशिकः ।
प्रगावाद्यं च प्रगावं विधुं विह्न यजेत् तथा ॥११७४॥
ब्रह्माणं च तथा नागान् गुहं चेव रिवं तथा ।
ततः सदाशिवं चेव सर्वान् देवान् ततः परम् ॥११७५॥
शिवतत्त्वं तथा ह्योते देवनामाणंसंयुताः ।
छेनमोन्ताश्च ते पूज्याः पिवत्रे दशदिक्षु च ॥११७६॥
प्राकाशाद्यं सदा पूर्वं शिवतत्त्वं तथेश्वरम् ।
ईकाराद्यं तथा मायात्त्वं मुखाणंस्रुवितम्वी १९७७॥
СС-0. Агитзакти R. Nagarajan Conectio मुखाणंस्रुवितम्वी १९७७॥

पृथ्वोमुखं कालतत्त्वं तथा नियतितत्त्वकम् । वरुगाद्यं तत् पुरुषतत्त्वं वायुमुखं तथा ॥११७८॥

कामं च कर्णविद्वाद्यं तथा प्रकृतितत्त्वकम् । वायुयुक्तं पृथिच्यादि मायांतच्यापकार्णकम् । ङेऽन्तं तथात्मतत्त्वं च नमोन्तं पूजयेत् ततः ॥११७९॥

जटालं कर्णिबिन्दुस्थं विद्यादिशब्दतः सदा । शिवान्तव्यापकायान्ते विद्यातत्त्वाय वै नमः ॥११८०॥

भृगुः सर्गी शिवतत्त्वच्यापकाय ततः शिवः। तत्त्वायांते नमश्चैवं संपूज्य भैरवात् यजेत् ।।११८१।। कपालेशं च प्रथमं द्वितीयं शिखिवाहनम्। तृतीयं क्रोधराजं च विकरालं चतुर्थकम् ।।११८२।।

पंचमं मन्मथं चैव मेघनादं च षष्ठकम्। सप्तमं सोमराजं च विद्याराजं तथाष्ट्रमम् ॥११८३॥

स्वनाम्नोऽन्ते तथाष्टौ ते भैरवान्ताः प्रकीर्तिताः । ङेनमोऽन्ताः स्वस्वबीजयुताद्य प्ररावादिकाः ॥११८४॥

तानि बीजानि कथ्यन्ते योज्यानि क्रमशो बुधैः। संवर्तकमहाकालवायवः केशसंस्थिताः॥११८४॥

कथितं प्रथमं बीजं द्वितीयं कूर्चबीजकम् । तृतीयं वामकर्णस्थक्रोधं स्याच्चान्तिमं तथा ॥११८६॥

चतुर्थं पंचमं तद्वद् व्योमवारुएषष्ठगम् । व्योमवायू केशसंस्थौ षष्ठं वर्म च सप्तमम् ॥११८७॥

व्योमाग्न्यंत्यमहाकालशक्रतोययशस्कराः । केशस्थाञ्चाष्टमं प्रोक्तं बीजाष्टकमुदीरितम् ॥११८८॥

बिंदुयुक्तानि ज्ञेयानि ततः पूज्याश्च मातरः । तासां मंत्राः अवक्यंते क्रिकेस्पात्र गुसप्रदाः । १११९६ हुः ॥

संवर्तकस्तथा वायु र्नु सिहोऽग्निश्चतुर्थकः । एते मनुस्वरोपेता नादींबदुविसूषिताः ।।११६०।। ग्रक्षोम्याद्यष्टकपदं सहिताये ततो वदेत्। ब्राह्मण्ये नम इत्यन्तमंत्रेगोंतां प्रपूजयेत् ।।११६१।। तारं वज्रीवामनेत्रचंद्राढ्यश्च कलामयो । बिदुयुक्ता महोकोर्तिविद्वाढ्या च ततः परम् ॥११६२॥ इलाद्यष्टकमाभाष्य सहितायै पुन वंदेत् । माहेश्वर्ये नमोतेन मंत्रेगौनां प्रपूजयेत् ॥११६३॥ क्चं बिदुयुतं केशं मुखवृत्तं सचंद्रकम् । वामनेत्रं चन्द्रयुतं हुताशनपदं ततः ॥११६४॥ श्राद्यष्टकान्ते सहिताये कौमार्ये नमः पदम् । संपूज्येतेन कौमारीं वैष्णवीं च ततो यजेत् ।।११६४।। प्रण्वं दार्दुरं नासां विन्द्वाढ्यां च रविं तथा। नारायणोन्दुसंयुक्तं वामाक्षीं नादभूषिताम् ॥११६६॥ सर्वज्ञानाद्यष्टकान्ते सहितायै पुन वंदेत्। वैष्णव्ये हृदयांतोऽयं मंत्रस्तस्याः प्रपूजने ॥११६७॥ प्राण्वं षण्मुखं चंद्रभूषितं गण्डयुग्मकम् । सचंद्रं च वकं चंद्रभूषितं वामनेत्रकम् ॥११६८॥ बिदुयुक्तं ततश्चांते तालजंघा पदं वदेत्। म्राद्यष्टकसमायुक्तं सहितायै ततः परम् ॥११६६॥ वाराह्यं च नमोन्तोऽयं मंत्रेगानेन तां यजेत्। तारं दामोदरारूढं वृषं वाग्भवमेव च ॥१२००॥ नेत्रे सिबन्दुके दक्षवामे स्यात् तदनन्तरम्। स्यात् चम्बाद्यब्टकपदात् सहिताये पुनर्वदेत् ॥१२०१॥ ऐन्द्रच नमश्च मंत्रोऽयमैन्द्रोमेतेन पूजयेत्। cc-मृनुनंद्रयुतं तोयं कत्युवं कामनं तथा गां १००४ शाविता

सचन्द्रं मन्मथकलाबीजं स्यात् तदनन्तरम् । वामन्याद्यष्टकपदं सहिताये पदं पुनः ॥१२०३॥ चामुंडाये च हृदयं मंत्रः तस्याः समर्चने । श्रनंतिंबदुसंयुक्तशक्रसंपुटिताव्ययम् ॥१२०४॥ सविसर्गं च वामाक्षीं सचन्द्रां तदनन्तरम्। यमजिह्वाद्यष्टकाग्रे सहितायै पुन वंदेत् । महालक्ष्मये नमोऽन्तोयं मंत्रो लक्ष्मीप्रपूजने ॥१२०५॥ एवं मातृः समाराध्य मातृकां दफमालिनीम्। संपूज्य पूजियेद् देवं नियमेश्वरसंज्ञकम् ॥१२०६॥ स्वस्वमंत्रेगा ते मंत्राः कथ्यन्ते क्रमशस्तथा। जीवः प्राराः कृष्णवर्मा नादवृत्तसमन्वितः ॥१२०७॥ कादिक्षान्ताः पंचित्रज्ञन्मातृकान्ते ततः परम्। स्यात् प्रासादपरे चैव मनुनादविसूषिते ॥१२०८॥ मात्कायै नमोऽन्तोयं मात्कापूजने मनुः। प्ररावं च तथा नादि नासिके गंडसंस्थिते ॥१२०६॥ तां तं कूर्मं तथा मीनमींन सेवनमेव च। कर्गं तोयं कवर्गं च नेत्रं केशवमम्बु च ॥१२१०॥ कुंडलं च तथा वायुं कौमारीं निर्गुएं तथा। कुंडलं किंकरं चैव कृशानुं कालसंज्ञकम् ॥१२११॥ कार्तिकेयं तथा कुक्षि कुलीरं च तथा क्रियास । नारायणं कालमद्रं रेफाक्रान्तं सर्साग तत् ॥१२१२॥ व्योमकोषं तथा कोपं श्रवएां च तथा वकम्। पाशं कर्णमथोऽज्टौ च पश्चात् सद्यमन् पुनः ॥१२१३॥ ङेन्तां नमोंतां प्रवदेत् तथैव दफमालिनीम्। स्वेनाम्बर्धेस्त्रम्पद्मान्द्राक्ष्मालितीम् ॥१२१४॥

पश्चादनेन प्रयजेन्नियमेश्वरसंज्ञकम्। तारमान नंदिपादं मनुबिदुविभूषितम् ॥१२१५॥ द्विवारमनलं पांतकर्णचन्द्रविभूषितम्। व्योमाग्न्यंत्यमहाकालवज्रीवरुग्वायवः ।।१२१६।। वामकर्गं बिंदुयुतं हंसः पूरय युग्मकम्। मुखवृत्तं च नियमेश्वरं ङेन्तं द्विठान्तिमम् ॥१२१७॥ प्रग्वं च परासर्ग्जी भृगुः पवित्रशब्दतः। कर्मार्पयामि हृदयं मंत्रोऽयं समुदीरितः। एमि मंनूत्तमैः देवान् पवित्रे पूज्य प्रार्थयेत् ॥१२१८॥ श्रामंत्रितोऽसि देवेश महादेव्या मरुद्गगौः। मंत्रेशे लोकपालैश्च सहितः परिचारकैः ।।१२१६।। निवेदयास्यहं तुम्यं प्रमाते तु पवित्रकम् । नियमं च करिष्यामि परमेश तवाज्ञया ॥१२२०॥ कालात्मना त्वया देव यत् कृतं मामके विधौ। कृतं कृष्टं समुत्कृष्टं व्रतं गुप्तं च सत्कृतम् ॥१२२१॥ तदस्तु कृष्टमुत्कृष्टं कृतं चेष्टं तवाज्ञया । सर्वात्मनामुना शंभो पवित्रोग् त्वदिच्छ्या ॥१२२२॥ ससूत्रस्त्वं महेशान पवित्रः पापनाशनः। त्वया पवित्रितं सर्वं जगत् स्थावरजंगमम् ॥१२२३॥ खंडितं यन्मया देव कृतं केवल्ययोगतः। एकीमवतु तत् सर्वं तवाज्ञा सूत्रगुंफितम् ॥१२२४॥ श्रपवित्रे तु सर्वत्र पवित्रे तु प्रकाशकः। ब्रस्पृहाय नमस्तुभ्यं पवित्राय चिदात्मने ॥१२२४॥ सर्वसंकरदोषव्नीं सर्वलोककघातिनीम्। शक्तिसूत्रपरित्पंदप्रसुद्धां संविदं स्तुम् hippita र्ह्णि (Gangotri

त्वं गतिः सर्वभूतानां संस्थितस्त्वं चराचरे । श्रंतक्चारेरा भूतानां स्रष्टा त्वं परमेश्वर ॥१२२७॥ कर्मगा मनसा वाचा त्वत्तो नान्या गति र्मम। मंत्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहोनं च यद्गतम् ।।१२२८।। जपहोमार्चनै हींनं कृतं नित्यं मया तव। श्रकृतं विधिहीनं च तत् पूरय महेश्वर ।।१२२६।। एवं प्रार्थ्य ततः शिष्यः पवित्रानपंयेत् क्रमात् । प्रत्येकमंत्रसंपातयुतान् श्रीगुरवे ततः ।।१२३०।। कलशाय ततश्चैव श्रीचक्राय च ब्रह्मणे। पुस्तकाय तथा क्षेत्रपालेभ्यश्च ततः परम् ॥१२३१॥ Charles wowld एकं शिष्याय च ततः स्नुच्यग्रे विनिधाय तत्। मूलमुच्चार्यं सघृतं मंत्रमेनं समुच्चरत् ॥१२३२॥ प्ररावं च ततः कूर्चं पूरय द्वितयं पुनः । मखव्रतं च नियमेश्वरायात्मपदं ततः ॥१२३३॥ विद्याशिवान्ते तत्त्वाधिपतये भैरवाय च । वौषडंतेन मनुना दद्यात् पूर्णाहुति गुरुः ॥१२३४॥ शेषं कृत्यं समाप्याथ वैश्वदेवादिकं चरेत्। ब्राह्माए। भोजियत्वाथ दत्त्वा तेभ्यश्च दक्षिए। । क्षेत्रपालं समभ्यच्यं यथाम्नायं समापयेत् ॥१२३५॥ इति श्रीमदागमरहस्ये सत्संग्रहे उत्तरार्घे ग्रभिषेककथनं नाम षष्टः पटलः । म्रादितश्चतुर्सित्रशत् ॥

श्रथ सप्तमः पटलः।

ष्यथ प्रसंगात् पूर्णाभिषिक्तप्रशंसा कुलाणंवे—
एकेकाम्नायजा मंत्राः भुक्तिमुक्तिफलप्रदाः ।
उपमंत्राश्च तावंतः शावराः समुदीरिताः ॥१२३६॥
मयेव कथितास्तेऽपि लोकानुग्रहकारकाः ।
सर्वेषामिषि मेन्नीर्गा देवतास्तत्फलप्रदाः ॥१२३७॥ ॥१०००

ग्रावयोरंशसंभूताः षडाम्नायभिदि स्थिताः। सर्वमंत्रानहं वेद्यि नान्यो जानाति कश्चन ॥१२३८॥ मत्प्रसादेन यः कोऽपि वेत्ति मानवकोटिषु । एकाम्नायं च यो वेत्ति स मुक्तो नात्र संशयः ॥१२३६॥ कि पुनश्रतराम्नायवेत्ता साक्षात् ज्ञिवो भवेत्। चतुराम्नायविज्ञानादुर्ध्वाम्नायः परः स्मृतः ॥१२४०॥ तस्मात् तदेव जानीयाद् यदीच्छेत् सिद्धिमात्मनः । ऊर्घ्वत्वात् सर्वधर्मागामूर्घ्वाम्नायः प्रशस्यते ॥१२४१॥ अर्ध्वं नयत्यधस्स्थं च अर्ध्वाम्नाय इतीरितः । र्क्कीजतत्वात् कुलेशानि ध्वस्तसंसारसंकटात् ॥१२४२॥ अर्ध्वलोकैकसेव्यत्वादूर्ध्वाम्नायः प्रकीतितः। तस्माद् देवेशि जानीहि भोगमोक्षैकसाधनम् ।।१२४३॥ सर्वाम्नायाधिकं पुण्यमूर्ध्वाम्नायं परात्परम् । नानाजन्माजिताचारपुण्यकर्मफलोदयात् ।।१२४४।। ऊर्घ्वाम्नायं विजानीयान् नान्यथा वीरवंदिते । धन्यो मनुष्यलक्षेषु जानाति कुलदर्शनम् ।।१२४४।। तेषां लक्षेषु यः किवचूर्ध्वाम्नायं प्रवेत्ति वै। अध्विम्नायं विजानाति यः किञ्चच्छ्रीगुरोर्मुखात् ।।१२४६॥ शास्त्रमार्गेण स नरो जीवन्मुक्तो न संशयः । अर्ध्वाम्नायमीहशं हि यो जानातीह तत्त्वतः ।।१२४७॥ स वंद्यः स गुरुः सोऽच्यंः स देवज्ञः स मांत्रिकः । स सेव्यः स च संस्तुत्यः स द्रष्टच्यः स सात्विकः ।।१२४८।। स वती सं तपस्वी च साऽनुष्ठाता स पूजकः। स वेदागमशास्त्रादिसर्वविद्याविशारदः ।।१२४६।। स चाचार्यः स मतिमान् स यतिः स च कौलिकः। स च यज्वा स पुतात्मा स जापी अस जिम्हा का भारत है। ११११ प्रा

स योगी स कृतार्थस्तु स वीरः स च सत्तमः। स पुण्यातमा स सर्वज्ञः स मुक्तः स ज्ञिवः प्रिये ।।१२५१।। तत्कुलं पावनं देवि धन्या तज्जननी स्मृता। तित्पता च कृतार्थः स्यात् मुक्तास्तित्पतरः प्रिये ॥१२५२॥ पुण्यास्तद्वं शजाः सर्वे पूतास्तन्मित्रबांधवाः । बहुनेह किमुक्तेन चोर्घ्वाम्नायपरस्य च। पूर्णाभिषेकयुक्तस्य दर्शनं वंदनं तथा ।।१२५३।। संभाषगां च कुरुते राजसूयफलं लमेत्। पूर्वाम्नायः सृष्टिरूपः स्थितिरूपश्च दक्षिगः ।।१२५४॥ संहारः पश्चिमो देवि उत्तरोऽनुग्रहो भवेत्। मंत्रयोगं विदुः पूर्वं भक्तियोगं च दक्षिरणम् ।।१२५५।। पश्चिमं कर्मयोगं तु ज्ञानयोगं तथोत्तरम्। पूर्वाम्नायस्य संकेतश्चर्तुविशतिरीरितः ।।१२५६।। दक्षिगाम्नायसंकेतः पंचविश्वतिरीरितः। पश्चिमाम्नायसंकेतो द्वात्रिशत् समुदीरितः ।।१२५७।। बिंदुः षट्त्रिशदाम्नाये संकेतः श्रीमदुत्तरे । ऊध्विम्नायस्य चैतानि न संति कुलनायिके ॥१२५८॥ साक्षात् ज्ञानस्वरूपत्वात् न किंचित् कर्म विद्यते । ऊघ्विम्नायस्य माहात्म्यमहं वेद्मि न चेतरः ।।१२५६।। मत्स्नेहात् त्वं च जानासि सत्यमेतद् वरानने । श्रावयोः करुणा यत्र सुलमोऽन्यत्र दुर्लमः । अर्ध्वाम्नायस्य माहात्म्यमिति ते कथितं मया ।।१२६०।।इति। तथा च कौलतंत्रे-

पूर्णाभिषेकसंयुक्तः षडाम्नायक्रमस्थितः । ग्रिधिकारी भवेद् देवि देवार्चासु च सर्वदा । नित्ये नैमिक्तिके काम्यक्षिकास्त्रस्य निरुच्याः॥१२६३॥॥

योगिनीये-

ग्रिभिषेकं विना यस्तु पुरव्चर्यां समाचरेत् । पुरव्चर्याशतेनापि तस्य सिद्धि र्न जायते ।।१२६२।।

कुब्जिकातंत्रे-

ग्रमिषेकं विना विष्ठः प्रधानत्वं चरेत् यः । चत्वारि तस्य नश्यन्ति ग्रायुविद्यायशोधनम् । ग्रंते च नरकं याति योनौ भ्रमति नित्यशः ।।१२६३॥

प्रधानत्वं पंचाधिकारित्वम् । यच्च समयातंत्रे-

ग्रमिषेकविहोनैश्च मपंचव्रतथारिभिः। चक्रमध्येऽचिता देवी रुष्टा सर्वान् विनाशयेत् ।।१२६४।।

कुलार्चनतंत्रे च-

स्रिमिषेकविहीनस्तु पशुरेव न संशयः । तेन पृष्टा च दृष्टा च पूजा सा निष्फला यते । तस्मात् सर्व प्रयत्नेन तत्संगं परिवर्जयेत् ।।१२६५।।

निरुत्तरतंत्रे—

ग्रमिषेकं विना विष्रो मपंचकमथाचरेत्। स महापातकी च स्यान्न स्पृशेत् तं कदाचन ।।१२६६।।

कालीकुलसद्भावेऽपि-

ग्रमिषेकं विना विश्रो न सेवेन् मादिपंचकम् । ग्रमिषेके कृते विश्रे सुरापानो विधीयते ।।१२६७।। विजयां वानुकल्पे च सुरामावे निवेदयेत् । ग्रमिषेकं विना देवि महामायां यजेत्तु यः । तावत् कालं वसेद् घोरे यावच्चन्द्रदिवाकरौ ।।१२६८।। कुलागमे—

स्रमिषेकं विना विद्रो नाधिकारी मर्पचसु । विशोध्य प्रोक्तमार्गेरा समस्यच्यं कुलेश्वरीस । निवेद्य सक्तिवीरेश्यश्यश्यक्षित्र एक्टांण, New Delhi, Digitized by eGangotri मिवेद्य सक्तिवीरेश्यश्यश्यक्षित्र स्वयं पिबेत् ।।१२६६॥

The state of the s

300

कुलार्गंवेऽपि-

शक्तयुच्छिष्टं पिबेद् द्रव्यं वीरोच्छिष्टं तु चर्वग्गस् । शत्तचुच्छिष्टं विना देवि देहशुद्धि नं जायते ।।१२७०।।

अतएव कुलावली-कालीकुलसर्वस्व-कौलसर्वस्व-श्रीक्रमसंहिता-यामलादिषु शक्त्युच्छिष्टस्यावश्यकत्वमुक्तम् । तत्र तत्रैव चोच्छिष्टयोग्या शक्तिरप्युक्ता । यच्च यामले—

शक्तयुच्छिष्टमविचार्य पिबेत् चक्रेश्वरो यदि । घोरं च नरकं याति यावदिद्राश्चतुर्दश ॥१२७१॥

विचारणा तु इयमभिषिक्ता किमनभिषिक्ते ति । चक्र श्वर इत्युपलक्षणम् ।
श्रभिषिक्तोऽनभिषिक्ताया न पिबेदिति रहस्यविदः । यच्चानभिषिक्तशक्त्युच्छिष्टग्रहणे कालीकल्पलताकारेणायुतसंख्याकतत्तद्देवतागायत्रीजपपूर्वाकं
पुनरभिषेकः साधकार्थमुद्दिष्टः । ग्रतस्तन्महदनर्थंकरम् । एतदेव समयातंत्रे
विजयाकल्पेऽप्युक्तम्—

लक्षं श्रीपादुकां जप्त्वा तस्मात् पापाद् विमुच्यते । प्रजप्यायुतगायत्रीमभिषेकं पुनश्चरेत् ।।१२७२।।

यामलेऽपि-

पिबेदनभिषिक्तायाश्चोच्छिष्टं यदि साधकः। तस्याभिषेकजा शक्ती रुष्टानर्थकरी सदा ॥१२७३॥

वीरोच्छिष्टबिषये तु—

परोच्छिष्टं यदा चक्रे कौलिको भक्षयेत् प्रिये। सिद्धिहानि भेवेत् सद्यो योगिन्यो भक्षयंति तम् ॥१२७४॥

श्रतएव—

म्रात्मोच्छिष्टं न दातव्यं परोच्छिष्टं न मक्षयेत्। समयाचारतंत्रेऽपि—

महद् रागाच्च दंभाच्च स्वोच्छिष्टं गौरवाय चेत्। दद्यात् स नारकी च स्यादंते चापि पशुर्भवेत्।।१२७४।।

तेनात्र कनिष्ठश्रद्धालवे देयं न ज्येष्ठेम्यः। CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri कामाख्यातंत्र-

10.03/20 मद्ये माँसैस्तथा मत्स्यैर्मुद्राभिर्मेथुनैरपि। स्त्रिया साकं सदा साधुरचयेत् जगदंविकाम् । ग्रन्यत्र तु महानिदा गीयते त्रिदशैरपि ॥१२७६॥ भ्रत्रान्यत्रेति ग्रह्णात् पूजनादन्यत्रेति ।

यच्च समयाचारतंत्रे-

सौत्रामण्यां कुलाचारे बाह्यशो मदिरां पिबेत्। श्रन्यत्र कामतः पीत्वा प्रायश्चित्तीभवेद् द्विजः ।।१२७७।।

कुलाचारे कुलार्चनकाले, तदन्यत्र नेति । स्वेच्छ्या यस्मिन् कस्मिन् समये निवेद्य पीत्वा प्रायश्चित्तीभवेदित्यर्थः।

एतदेव कुलावल्याम्, कुञ्जिकातांत्रे च-

पूजाकालं विनान्यत्र न मया परिकोर्तितम् । भ्रन्यत्र कालतः पोत्वा प्रायिवचतः समाचरेत् ॥१२७८॥ कौलसर्वस्वे--

मत्स्यमांससुरादीनां पदार्थानां विशेषतः । पूजाकालं विनान्यत्र न मया परिकोतितम् ।।१२७६॥ ग्रहण्मिति शेषः।

समयाचारे, ग्राचारसारतंत्रेच-

पूजाकालं विनान्यत्र सुरां पीत्वा द्विजोत्तमः। बाह्मण्यं हीयते तद्वद् दीक्षापि विफलायते ।।१२८०।। म्रागमकल्पद्रुमेऽपि-

पूजाकालं विनान्यत्र सुरां यो दुर्मितः पिबेत्। स याति नरकं घोरमेकविंशतिभिः कुलैः ।।१२८१।। बाह्मणो मदिरां दद्याद् यथाविधि विधानतः। निषेधविधिमुल्लंघ्य योऽर्चयेत् स तु पातको ।।१२८२॥ येनेव नरकं याति तेनेव मुक्तिसाधनम्। तस्मात् सावहितो विप्रः कुलधमं समाचरेत् हालाहलं हिता वेकं हाला जु साधिपी रूपम् ।।१२८३।।

कुलार्गवेऽपि--

श्रोगुरोः कुलशास्त्रेभ्यः सम्यग् विज्ञाय वासनाम् । पंचमुद्रां निषेवेत चान्यथा पातकी भवेत् ।।१२८४।। म्रावृत्ति गुरुपङ्क्ति च वदुकादीनपूज्य यः। वीरोऽप्येवं वृथा पानाद् देवताशापमाप्नुयात् ।।१२८४।। श्रयष्ट्रा भैरवीं देवीमकृत्वा मंत्रतर्पेराम् । पशुपानविधौ पीत्वा वीरोऽपि नरकं व्रजेत् । १२८६।। अज्ञात्वा कौलिकाचारमयंष्ट्रा गुरुपादुकाम्। योऽस्मिन् शास्त्रे प्रवर्तेत तं त्वं पीडयसि ध्रुवम् ।।१२८७।। यः शास्त्रविधिमृत्सुज्य वर्तते कामचारतः । स सिद्धिमिह नाप्नोति न सुखं न परां गतिम् ।।१२८८।।इति। ग्रथैतत् धर्मलक्षणम् ग्रागमकल्पलतायाम्, कौलसर्वस्वेऽपि-अप्रतिगुप्तेन कर्तव्यं कुलार्चनकुलीनकैः। गोपनात् धर्मरक्षा स्यात् व्यक्तात् धर्मो विनव्यति ।।१२८६॥ प्रकाशात् सिद्धिहानिः स्यात् प्रकाशात् मृत्युरेवच । प्रकाशात् कुप्यते देवी घनं पुत्रान् विनाशयेत् ॥१२६०॥ पंचतत्त्वेन कौलानां समो नास्ति जगत्त्रये। विपरीतफलं तत्र प्रकाशान्नास्ति संशयः ॥१२६१॥ निशीथे पूजनं कार्यं नो दिवा तु कदाचन। दिवा कृता चेत् भवति विफला सर्वथा हि सा ॥१२६२॥ पंचतत्त्वे दिवा पूजा ग्रभिचाराय कल्प्यते । श्रुतिस्मृतिविधानेन दिवाधर्मप्रवर्तकः ।।१२६३।। रात्रौ द्वितीयप्रहरात् कर्तव्यं गोपनेन च। प्रकाशात् साधकानां तु कुलधर्मो विनश्यति ॥१२६४॥ कुलमागं समासाद्य यः करोति प्रकाशनम्।

सहस्रकोटियोगिन्यस्तावंतो भैरवा श्रिप । नियुक्ताः परयोगेन धर्मसंरक्षगाय च । श्रतः सावहितो मंत्री कुलधर्मं समाचरेत् ॥१२९६॥

नोलतंत्रे, कुलचूडामणाविप-

म्रतिगुप्तस्थले देवि देवीपूजां समाचरेत् । पातालमंडपे वापि गह्वरे वा नियंत्रिते ॥१२६७॥

निश्चिद्रमंडपे वापि न कार्यं जनसिन्नधौ। किंवा पक्षिपतंगादिदर्शनेनैव कारयेत्।।१२६८।।

कुलपुष्पं कुलद्रव्यं कुलपूजां कुलस्मृतिम् । कुलं कुलपति चैव कुलमालां कुलाकुलम् ॥१२६६॥

कुलचकं कुलध्यानं सर्वथा न प्रकाशयेत्।

प्रकाशात् सिद्धिहानिः स्यात् प्रकाशान्निर्धनो भवेत् ।।१३००।।

प्रकाशात् मंत्रनाशः स्यात् प्रकाशात् कुलिंहसनम् । प्रकाशात् मूलनाशः स्यात् न प्रकाश्यं कदाचन ।।१३०१।।

पूजाकाले यदा दैवात् कोऽप्यागच्छति शांकरि । दर्शयेद् वैष्णवीं मुद्रां विष्णोर्नामोञ्चरेद् भृशस् ॥ १३०२॥ गोपनेऽपि यदि व्यक्तिस्तत् प्रकाशात् न दूषराम् । प्रमादात् स्नेहतो वापि न प्रकाश्यं कदाचन ॥१३०३॥

वरं पूजापरित्यागो न च व्यक्तिः कदाचन । गोपयेत् सर्वतोपास्ति पशुम्यो मातृजारवत् ।।१३०४॥ गुह्यर्थं कर्मलोपेऽपि न तद् दोषमवाप्नुयात् ।

अन्यच्च कुलचूडामग्गी—

श्रंतःशाक्तो बहिःशैवः सभायां वैष्णवोत्तमः । सर्वदा विष्णुभावस्तु भवेत् साधकपुंगवः ॥१३०५॥

प्रथ कौलानां कार्याकार्यनिरूपग्रम्—

कार्यं च समयाचारपालनं धर्मरक्षर्गम् । श्रकार्यं तीर्थयात्रादि मनुष्यसेवनादिकम् । ११३७६। Ingotri CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan olkalinini दिकम्

ग्रथ समयाचार:-

कुलागमे कौलतंत्रे कुलावल्यां कुलार्गावे। यदुक्तं समयाचारे तदेव कथ्यतेऽधुना ।।१३०७।।

शिववाक्यम्-

श्रथातः संप्रवक्ष्यामि समयाचारमुत्तमम् ।

येन होना न सिध्यन्ति कुलचर्यापरायणाः ॥१३०८।

उदारचित्तः सर्वत्र वैष्णवाचारतत्परः ।

परनिन्दासहिष्णुः स्यादुपकाररतः सदा ॥१३०६॥

सर्वस्माद् देवतायां तु भक्तिः कार्या विशेषतः ।

मुख्याभक्तिस्तदेकात्मदृष्टिः सर्वत्र सर्वदा ॥१३१०॥

मध्या तद् दृष्टिरहितः काले तु सगुगात्मके ।

देवताग्रहराध्यानमानसार्चाक्रमाश्रयः ॥१३११॥

श्रधमाल्पभावनादियोगेन सगुगात्मके ।

भ्राश्रित्य सेवकस्वं वे तत् कर्मपरता भवेत् ॥१११२॥

यथा देव्यां गुरौ तद्वत् यतितव्यं न चान्यथा। स्वशास्त्रार्थेषु विश्वासः सर्वसंशयवर्जनात् ॥१३१३॥

योषित्सु देवताभावपूर्वकं प्रियमाचरेत्।

पशुभ्यो गोपयेत् स्वस्योपास्ति लोकोत्तरां सदा ॥१३१४॥

स्यजेत् तृष्णां शास्त्रवर्त्मविषद्धां सर्वनाशिनीम् ।

प्रातःकृत्यादिकं कर्म शक्तचा कुर्यान्त लोपयेत् ।।१३१५।।

सर्वस्वं देवतार्थं वं भावयेन् नान्यथा क्वचित्।

गुरुं यथोक्तकाले तु प्रग्मिद् मिक्तमावतः ॥१३१६॥

स्थिरमूर्त्यादिकं देव्या गुरुं वा चिरकालतः।

रिक्तहस्तो नोपगच्छेद् दर्शनार्थं च साधकः ।।१३१७।।

गुरुं शिवात्मकं घ्यायन् हितं तस्य सदा चरेत्। गुरौ मनुष्यबुद्धि च मन्त्रे चाक्षरबुद्धिताम्।

प्रतिमासुत्रशिलाहुद्धि कुर्वागो नरकं त्रजेत् ।।१३१८।। प्रतिमासुत्रशिलाहुद्धि कुर्वागो नरकं त्रजेत् ।।१३१८।।

विविक्षुर्देशिकावासं शांतिचत्तोऽतिभक्तिमान्। व्यजनं पादुकां छत्रं वसनं वाहनादिकस् ।। १३१६।। Con war will तांबूलमुल्वरां वेषमुत्सृज्य प्रविशेत् शनैः। पादप्रक्षालनं स्नानमभ्यंगं दंतधावनम् ॥१३२०॥ सूत्रं निष्ठीवनं क्षौरं शयनं स्त्रीनिषेवनम् । वीरासनं च दुर्वाक्यमितहासांगमोटनम् ॥१३२१॥ केशमोचनमुष्णीषं कंचुकं नग्नता तथा। पादप्रसारगां चैव कलहं दूषगां प्रिये ॥१३२२॥ श्रंगवाद्यांगभंगादिकरस्पर्शनघूननम् । द्यूतं कुक्कुटमल्लादियुद्धमित्यादि वाम्बिके ॥१३२३॥ गुरुयोगिमहासिद्धपीठक्षेत्राश्रमादिषु । नाचरेदाचरेन् मोहात् देवता शापमाप्नुयात् ।।१३२४।। सच्छास्त्रधर्म देवादिनिदां न शुणुयात् क्वचित् क्वचित् स्यात् घर्मगुप्त्यर्थं मुखवैवर्ण्यमुत्सृजेत् ॥१३२५॥ श्रलक्षितो नयेत् तांश्च वार्तयान्यप्रसंगके । सर्वथा तां न शृणुयात् व्रजेद्वान्यत्र युक्तितः ।।१३२६।। समर्थं इचेत् निदकांस्तु युक्त्या दंडेन योजयेत्। गुरूगां समवाये तु पूर्वं निजगुरुं यजेत् ॥१३२७॥ तदाज्ञया च परमादीन् पश्चाद भक्तितो यजेद् । शिष्यान्यं न वदेद् दीक्षां नाममुद्रां मनुं क्वचित् ।।१३२८।।२००० न दर्शयेत् पशुभ्यस्तु कुलशास्त्रं कदाचन । श्राद्यात्रयं सुवासिन्या मंडलं कुलशाखिनम् ।।१३२६।। इमशानमत्तेभाशोककोकिलान् पुष्पितद्रुमान्। द्रव्यगंधमेकवृक्षं कुमारीगरामेव च ।।१३३०।। कुलशास्त्रादिकं तद्वद् दर्शनात् प्रग्रामेत् सदा । कुलवृक्षस्य छायायां स्वापं पर्गोषु भोजनम्। देवतार्थं विना शाखाछेतनं तिवर्जयेस्। गृङ्गं इस्प्रिश्वीव (CC-0. Arutsakthi R. Nagarajah collecti तिवर्जयेस्। गृङ्गं इस्प्रिश्वीव (CC-0. Arutsakthi R. Nagarajah collecti तिवर्जयेस्।

कुलवृक्षास्तु—

अशोकः केसरः करिएकारश्चतः तिलस्तथा। नमेरुश्च प्रियालश्च सिंधुवारकदंबकौ।

मरुचः चंपकशमो कुलवृक्षाश्च द्वादश ॥१३३२॥

तिलः = तिलकः = नमेरः = रुद्राक्षः । केसरो = वकुलः । करिंगकारः = लघुकृतमालः । प्रियालः = राजादनः ।

तिष्ठन्ति कुलयोगिन्यः सर्वेष्वेतेषु सर्वतः ।
पर्वते विपिने चैव निर्जने शून्यमंडपे ॥१३३३॥
चतुष्पथे लतामध्ये यदि दैवाद् गतिभंवेत् ।
क्षरां स्थित्वा मनुं जप्त्वा नत्त्वा गच्छेत् यथासुखम् ॥१३३४॥
चतुष्पथे=देव्या पीठे ।

यथोक्तं यामले—

चतुष्पथः स विज्ञेयो यत्रास्ते तारिग्गी ज्ञिला ।

तारएाकर्नृ त्वात् तारिएगित्यर्थः । पीठं त्वेकपंचाशत् । पीठन्यासे तूक्तमेव न्यासप्रकरएा ।

कुलार्गावे च-

प्कालगं इमशानं च समूहं योषितामि ।
नारों च रक्तवसनां हृष्ट्वा वंद्य मनुं जपेत् ।।१३३४।।
गृध्रं वीक्ष्य महाकालीं जंबुकीं यमदूतिकाम् ।
कृष्णमार्जारभूकाकौ श्येनं क्षेमंकरीं तथा ।।१३३६।।
कुररीं च नमस्कुर्यादिवं मंत्रं समुच्चरन् ।
घोरवंष्ट्रे कोटराक्षि किटि शब्दप्रसारिण् ।।१३३७।।
गुरुघोररवास्फाले नमस्ते चितिवासिनि ।
रक्तवस्त्रं रक्तपुष्पं विलोक्ष्य त्रिपुरांबिकाम् ।।१३३६।।
प्रणम्य दण्डवद् भूमाविमं मंत्रं समुच्चरेत् ।
वंधूकपुष्पसंकाशे त्रिपुरे भयनाशिनि ।।१३३६।।
भाग्योदयसमुत्पन्ने नमस्ते वरविणिनि ।
कृष्णावस्त्रं क्राध्राप्रप्रं त्राज्ञानं राजपूत्रकम् ।।१३३४०।।
कृष्णावस्त्रं क्राध्राप्रप्रं त्राज्ञानं राजपूत्रकम् ।।१३३४०।।

200

1.00

Barrie Con Maria

हस्त्यश्वरथशस्त्राणि फलकान् वीरपूरुषान्। महिषं कुलदेवीं च दृष्ट्वा महिषमिदनीम्। प्ररामेत् जयदुर्गां च स च विघ्नैर्न लिप्यते ॥१३४१॥ फलकान् = नटान्। जयदेवि जगद्धात्रि त्रिपुरेशि त्रिदैक्ते । मक्ते भ्यो वरदे देवि महिषध्नि नमोऽस्तु ते ॥१३४२॥ मद्यभाण्डं समालोक्य मत्स्यं मांसं वरस्त्रियम्। हृष्ट्वा च भैरवीं देवीं प्ररामेद् विमृशत् मनुस् ॥१३४३॥ घोरविघ्नविनाशाय कुलाचारसमृद्धये। नमामि वरदे देवि मुण्डमालाविभूषिते ॥१३४४॥ रक्तधारासमाकीर्गे वरदे त्वां नमाम्यहम्। सर्वविष्नहरे देवि नमस्ते हरवल्लभे ॥१३४५॥ यः शिवारुदितं श्रुत्वा शिवदूतीं शुभप्रदाम् । प्रराम्य संस्मरेत् मूलं तस्य कामः करे स्थितः ॥१३४६॥ एतेषां दर्शनेनैव यदि नैवं प्रकुर्वते । शक्तिमंत्रं पुरस्कृत्य तस्य सिद्धिनं जायते ॥१३४७॥ एतेषां मारगोच्चाटे भत्संनं क्रूरचेष्ट्रितम् । कुरुते यदि पापात्मा देवीभक्तः कथं भवेत्। एवं कर्तुमशक्तो यः कुलस्तोत्रं सदा पठेत् ॥१३४८॥ कुलस्तोत्रं कुलचूडामणितंत्रोक्तम्, तत् पश्चाल्लिखामः। विग्प्मूत्रोच्छिष्टशंकामियुंक्तः कर्म करोति यत्। तपोऽर्चनावि तत् सर्वमपवित्रं भवेत् प्रिये ।

एतान् धर्मान् सर्वर्थेव शक्तचा सेवेत साधकः ॥१३४६॥ ग्रन्यच्च तंत्रान्तरे—

ज्ञानश्रद्धांशक्तिहीनं कुतर्केकसमाश्रयम् । पञ्जास्त्रं वर्ज्ञसेम्ब्कुलकास्त्रपरो भवेत् ॥१३४०॥

वर्जयेत् काम्यकर्मारिंग तथान्यदेवतार्चनम् । स्त्रियं तुं सर्वथा पश्येत् देवतारूपिएगीं सदा ॥१३५१॥ पुजाकालं विना नैव पश्येत शक्ति दिगंबराम् । पूजाकालं विना नैवमुपेया सा हि साधकैः ।।१३४२।। पुंड्रे क्षुच्छेदनं साक्षाद् भक्षएां तद्विवर्जनम् । पित्रादिजनसंबन्धिजर्ने सति सलक्षए। ।। १३५३।। कुर्यान् नान्यं गुरुं क्वांपि चान्यथा गुरुघातकः। तथा गुरोः सन्तिधाने तदाज्ञामन्तरा क्वचित् ।।१३५४।। मंत्रप्रदानं नो कुर्यात तद्योग्ये च तथेतरे। विद्याया ग्रप्रदानेन प्रदानेनापि शास्त्रहा ।।१३५५॥ सर्वत्रादौ गुरुज्येष्ट्रो ज्येष्ट्रानादौ तदाज्ञया। ऋ गादिव्यवहारं तु वर्जयेद् गुरुभिः सह ।।१३५६।। पांदुकीपांसकी भार नं वहेत मस्तके क्वचित्। देवतागुरुसान्निध्ये प्रपदं नैव दर्शयेत् ।।१३५७।। गुरोरासनवस्त्रांगच्छायां न च विलंघयेत्। गुरोरुच्चे नोपविशेत् वर्जयेत् कलहादिकम् । गुरुनाम न भाषेत जपकालाहते क्वचित् ॥१३५६॥ प्रकाशं श्रीगुरोः कुर्यात् मंत्रगुप्ति तथैव च। स्वनामसंयुतां योग्यादपि दीक्षां विवर्जयेत् ॥१३५६॥ दत्वा योग्ये संप्रदायमदत्वार्हे च तं पुनः । Daymore & विद्याद्रोही च पतितो भवेत् सर्वगुर्गोऽपि संन् ॥१३६०॥ रहस्यधर्माष्टकं च साधकस्य निरूप्यते। श्राद्यो मंडलरक्षा च तदुच्छिष्टप्रमार्जनम् ॥१३६१॥

द्वितीयं श्रीगुरोराज्ञापालनं स्यात् तृतीयकम् ।

पूजोपस्करदानं तु चतुर्थं स्त्रीषु मातृवत् ॥१३६२॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

वर्तनं पंचमं षष्ठं मंडले सर्वतोषराम् । सप्तमं देवताबुद्धिः सर्वत्र स्यात् तथाष्ट्रमम् ।।१३६३।। कौलशास्त्रे परा श्रद्धा चैवं धर्माष्टकं स्मृतस् । एतद् धर्मसमायुक्तः साक्षात् शिवपदं लभेत् ।।१३६४।। ग्रधर्माष्टकमप्येवं महानर्थकरं भवेत्। श्राद्यं स्त्री एां मंडले तु प्रेक्ष एां कामपूर्वक स्। द्वितीयं कामवत्या वै योग्यायाः प्रतिषेधनम् ।।१३६५।। पशुसंगं तृतीयं स्यात् तुर्यो विघ्नस्तु मंडले । निर्माल्यस्य स्वीकृतस्य पदास्पर्शस्तु पंचमः ।।१३६६।। नैवेद्यस्य परित्यागः षष्ठः स्यात् सप्तमस्ततः । निदनं कुलमार्गस्य मंडले कदुभाषग्रम्। ग्रष्टमं चेति संप्रोक्तं वर्ज्यास्त्वेते च सर्वथा ।।१३६७।। श्रथ साधकानां शमाष्टकम्, यथा कुलावल्याम्— गोपयेद् घातयेद् देवि न निदेन् न निरीक्षयेत्। पूजयेत् वर्जयेच्चैव भावयेच्च जुगुप्सयेत् ।१३६८।। ग्रय गोपनम्—

मंत्रं मुद्रां तथा मालां मपंचकमतः परम् । योगिनीवोरमेलापं वीराचारं च गोपयेत् ॥१३६६॥ घातनम्—

कामं क्रोधं च मात्सर्यं विकारमिन्द्रियोद्भवम् । निद्रां तन्द्रां तथा शंकां लज्जां च घातयेत् सदा ।।१३७०।। ग्रनिंद्यम्—

देवं गुरुं तथा विद्याज्येष्ठं वीरं च योषितम् । संकेतवीरकर्माणि निदयेन् न कदाचन ।।१३७१।। ग्रनिरीक्ष्यम्—

कन्यायोनि पशुक्रीडामुन्मत्तां प्रकटस्तनीम् । धिक्कृतं पापिनं क्रीबं नानिस्थित् १० कदांचनं ११११ १९३७ २।।

पूज्यम्—

देव।त् गुरूत् तथा साधूत् मातरं पितरं तथा । कन्यकां वदुकं चैव वीरात् नारीं यजेत् सदा ॥१३७३॥ चज्यंम्—

रागं मोहं तथा क्षोभं धूर्तमुन्मत्तवंचकौ । तद्गोष्ठीं च तथा द्यूतं वर्जयेत् साधकोत्तमः ॥१३७४॥ भावनीयम्—

गुरुवाक्यं शास्त्रवाक्यं सिद्धोक्तं तीर्थदेवते । स्वधमं च कुलाचारं भावयेत् साधकोत्तमः ।।१३७५॥

जुगुप्स्यम्—

विरामूत्रं समयाचार्रानंदकं वीरदूषकम् । वीरघ्नं च तथा गोघ्नं ब्रह्मद्यां च जुगुप्सयेत् ।।१३७६॥ कौलतंत्रे—

रात्रों पर्येटनं चैव रात्रौ च शक्तिपूजनम् । इमशानगमनं चैव शिवावितमतः परम् ॥१३७७॥ कुमारीपूजनं चैव तथैव मुंडसाधनम् । न करोति यदेवैतत् साधकः कौलिकः कथम् ॥१३७८॥

कुलागाँवे-

श्रीगुरं कुलशास्त्राणि पूज्यस्थानानि यानि च।

मक्तचा श्रीपूर्वकं देवि प्रणम्य परिकोर्तयेत् ॥१३७६॥

गुरुं नाम्ना न भाषेत जपकालाहते क्वचित्।

श्रोनाथ देव स्वामीति विवादे साधने वदेत् ॥१३८०॥

श्रीगुरोः पादुकां मुद्रां मूलमंत्रं स्वपादुकास्।

शिष्यादन्यत्र देवेशि न वदेद् यस्य कस्यिवत् ॥१३८१॥

पारंपर्यागमाम्नायमंत्राचारादिकं प्रिये।

सर्वं गुरुमुखाल्लब्धं सफलं स्यान् न चान्यथा ॥१३८२॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

N.

श्रीशास्त्रांश्रयसूतं च पुस्तकं देववत् प्रिये। नित्यं समर्चयेद् भक्तचा पशुगेहे न निःक्षिपेत् ॥१३८३॥ स्वदारवत् निषेवेत कुलशास्त्राग्गि पार्वति । पश्चशास्त्रारिं सर्वारिंग वर्जयेद् परदारवत् ॥१३८४॥ स्वचर्मस्थं यथाक्षीरमपेयं स्याद् द्विजोत्तमैः। तथा पशुमुखो धर्मो न श्रोतन्यश्च कौलिकैः ॥१३८५॥ यः शृरगोति कुलाचारं यथांशास्त्रं च यो वदेत्। ताबुभौ गच्छतः साक्षाद् योगिनीवीरमेलनम् ॥१३८६॥ ग्रश्रद्धाना ये चात्र कुलधर्मे कुलेश्वरि । नरकान् न निवर्तन्ते यावदाभूतसंप्लवम् ॥१३८७॥ ऊढाहता च प्रीता च मौल्येन च समावृता । सकृत् कामगतावापि पंचधा गुरुयोषितः ॥१३८८॥ श्रलंघ्याः पूजनीयाः स्युर्गु रुवद् गुरुयोषितः । गुरुशक्ति वीरभार्यां कुमारीं व्रतधारिग्गीम् ॥१३८९॥ व्यंगांगीं विकृतांगीं च क्षुब्धामिप न कामयेत्। संततं मिननीं पुत्रीं स्नुषां भ्रातृप्रियामिष ॥१३६०॥ न कामयेद् गुरोरग्रे कुर्यात् नान्योपगूहनस् । कृष्णां शुक्तीं कृष्णावर्णां, कुमारीं च कृशोदरीम् ॥१३६१॥ मनोहरां यौवनस्थामचंयेद् देवताधिया । एकदापि न सेवेत बलेन कुलयोगिनीम् ॥१३६२॥ चक्रमध्ये स्वयं क्षुब्धां कामयेन् न कदाचन । श्राममांसं सुराकुं भं मत्तेभं सिंहदर्शनम्। सहकारमशोकं च क्रीडालोलाः कुमारिकाः ॥१३६३॥ एकवृक्षं इमशानं च समूहं योषितामपि। नारीं च रक्तवसनां हुठ्टवा CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, स्टामिन स्टामिन स्टिशा पर

गुरुशक्तिसुतज्येष्ठकनिष्ठकुलदेशिकान् । कुलदर्शनशास्त्राणि कुलद्रव्याणि कौलिकान् ॥१३९५॥ घ्रेरकात् सूचकाँशापि वाचकात् दर्शकात् तथा। शिक्षकान् बोधकान् योगियोगिनोसिद्धपूरुषान् ।। १३६६।।

कन्याः कुमारकान् नग्नानुन्मत्तानपि योषितः। न निदेन न जुगुप्सेत न हसेत् नावमानयेत् ।।१३९७।। ं नाप्रियं नानृतं ब्र्यात् कस्यापि कुलयोषितः । कुरूपेत्यतिकृष्णोति न वदेत् कुलयोषितम् ।।१३६८।। परीक्षयेत् न भक्तानां वीराणां च कृताकृते। न पश्येत् पतितां नग्नामुन्मत्तां प्रकटस्तनोम् ॥१३९६॥ न दिवा सेवयेन्नारीं न तद्योनि निरीक्षयेत्। या काचिदंगना लोके सा मातृकुलसंभवा ॥१४००॥ कुप्यन्ति कुलयोगिन्यो वनितानामतिक्रमात्। िस्त्रियं शतापराधां वा पुष्पेनापि न ताडयेत् ॥१४०१॥ दोषान् न गरायेत् स्त्रोगां गुराानेव प्रकाशयेत्। तिष्ठन्ति कुलयोगिन्यः कुलयोगेषु सर्वदा ।।१४०२।।

प्रायश्चित्तं भृगोः पातं सन्यासं व्रतधारराम् । तीर्थयात्रामिगमनं कौलः पंच विवर्जयेत् ॥१४०३॥

वीरहत्या वृथापानं वीरस्त्रीगमनं तथा। वीरद्रव्यापहरगां तत् संसर्गश्च पंचमः। महापातकमित्युक्तं कौलिकानां कुलान्वये ।।१४०४।।

ग्रस्यायमर्थः-प्रायश्चित्तं तंत्रोक्तभिन्नम्। व्रतधारण्मपि तथव । तौर्थं-पोठयात्रायास्तंत्रेषु विहितत्वात्। यात्राभिगमनमिति स्मार्तप्रकारेण। स्त्रीगमनं च तत्स्वाम्यनुज्ञाभिन्नम्।

यच कुलार्गावे—

भगिनीं वा सुतां भार्यां यो दद्यात् कुलयोगिने । मधुमत्ताय देवेशि तस्य पुण्यं न गण्यते ॥१४०५॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

ا محر

देवतागुरुशास्त्रादिसिद्धाचारविडंबकः ।
विद्याचौरो गुरुद्रोही ब्रह्मराक्षसतां व्रजेत् ।।१४०६।।
गुरुं तुंकृत्य हुंकृत्य वीरान् निर्भत्त्यं वा प्रिये ।
विकल्प्य गुरुशास्त्राणि भवति ब्रह्मराक्षसः ।।१४०७॥
श्रीचक्रगतवृत्तांतं शुभं वा यदि वाशुभम् ।
कदाचिन् नैव वक्तव्यमित्याज्ञा पारमेश्वरी ।।१४०८॥
कुलधमंप्रसंगं तु पश्नां पुरतः शिवे ।
कदाचिन्नैव कुर्वीत श्रूद्राग्रे वेदपाठवत् ।।१४०६॥

फेरकारिग्गीतंत्रे च-

K

सर्वदा गोपयेदेनं मनुं च गुरुमेव च।
तेन वीर्यवती विद्या निर्वीया स्यात् प्रकाशतः ।(१४१०)
एनं पूर्वोक्तधर्मम्।

नोपवेश्यं महानीरे न शय्या तिमिरान्तरे ।

सस्मस्तानं प्रकुर्वीत ह्यन्तर्वृत्तः सदा मवेत् ।।१४११।।

वज्यपुष्पाकितं यंत्रं वज्यपुष्पेगा पूजयेत् ।

पूजाकाले विशेषेगा न स्मरेत् हरिनाम च ।।१४१२।।

प्रज्ञाकाले विशेषेगा न स्मरेत् हरिनाम च ।।१४१२।।

प्रज्ञाकाले विशेषेगा न स्मरेत् हरिनाम च ।।१४१३।।

प्रत्मपुष्पेगार्चयेद् वा विल्वपत्रेगा वार्चयेत् ।।१४१३।।

तुलसी मालतो धात्री मख्वकेन नार्चयेत् ।

श्रृत्ति विनापि देवेशि जपहोमादितपंग्गम्।।१४१४।।

ध्यानपूजादिकं सर्वं सिद्धिरोधाय जायते ।

पृष्टी पौष्पादिकं द्रव्यं सर्ववा च परित्यजेत् ।।१४११।।

नोपवासं प्रकुर्वीत न चान्यद् व्रतमाचरेत् ।

पौठक्षेत्रागमाम्नायसिद्धद्याचारकौलिकान् ।

कुलद्रव्यादिकं देवि न वदेत् पशुसन्निधौ ।।१४१६।।

यथा रक्षन्ति चौरेम्यो धनं धान्यांबरादिकम् ।

कुलप्रमं तथा देवि पशुम्यः परिपालयेत् ।।१४१७।।

N

13:6

कुलधर्ममिदं देवि सर्वावस्थासु सर्वदा। गोपयेच्च प्रयत्नेन जननीजारगर्भवत् ॥१४१८॥ सुगुप्तकौलिकाचारमनुगृह्धन्ति देवताः। वाञ्छासिद्धि प्रयच्छन्ति नाशयन्ति प्रकाशकान् ॥१४१६॥ गुरुं प्रकाशयेन मंत्री मंत्रं यत्नेन गोपयेत । अप्रकाशप्रकाशाभ्यां क्षीयते संपदायुषम् ॥१४२०॥ शास्त्रेषु निष्कृतिर्दृष्टा महापातिकनां प्रिये। कुलभ्रष्टस्य देवेशि न दृष्टा निष्कृतिः स्वचित् ॥१४२१॥ कुलधमं समाश्रित्य ह्याचारं यो न पालयेत । यथेष्टाचारिएास्तस्य महापातकिनः प्रिये ।।१४२२।। श्रापदो दुरितं रोगा दारिद्रचं कलहो भयम । योगिनोनां प्रकोपश्च स्खलितानि पदे पदे ।।१४२३।। ध्वस्तमानः प्रनष्टश्च तेजोहोनोऽतिदुःखितः । निदितः सर्वविद्विष्टो विह्वलः संगर्वीजतः ॥१४२४॥ देशदेशान्तरं याति कार्यहानिश्च सर्वदा । तत्रापि कुलमार्गस्थाः शाकिन्यः कूलपालिकाः । मक्षयन्ति पुरा तासां वरो दत्तो मयेव तु ॥१४२४॥ तस्मादाचारवात् देवि योगिनीनां प्रियो भवेत्। सदाचारेगा देवत्वं योगिनीवीरमेलनम् ॥१४२६॥ संप्राप्तुवन्ति तिर्यकृत्वं कौलिकास्तद्विपर्ययात् । श्राज्ञासिद्धमिदं कौलमताचाराद् विनश्यति ॥१४२७॥ श्राचारपालनात् सत्यमाज्ञासिद्धि भीविष्यति । नामिषेको न मंत्रो वा न शास्त्रपठनादिकस् ॥१४२८॥ कारएां कुलधर्मस्य सदाचारं कुलेश्वरि । बालां श्रीपादकां तत्त्वत्रयाचारादिवासनाम् ॥१४२६॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

यो वेत्ति स महेशः स्यात् कौलिकश्चापि शांभवि । तावन्न कौलिको देवि यावन्न समयोकृतः ॥१४३०॥ देहपाते विमोक्षः स्यात् समयाचारपालनात् । संस्कारेण विहोनत्वाद् गुरुवाक्यस्य लंघनात् । ग्राचारवर्जनाद् देवि कौलिकः पतितो भवेत् ॥१४३१॥

इति श्रीमदागमरहस्ये सत्संग्रहे कौलाचारकथनं नाम सप्तमः पटलः । ग्रादितः पञ्चित्रशत् ।

ग्रष्टमः पटलः ।

कौलाचारश्च द्विविधः परश्चापर एव च । श्रंतर्यागः परो ज्ञेयो बाह्याचारस्तथापरः ॥१४३२॥ तद्यया मामले—

म्रात्मस्यां देवतां त्यक्तवा बहिर्देवं विचितयेत् ।

करस्यं कौस्तुभं त्यक्तवा भ्रमते काचतृष्ण्या ।।१४३३।।

प्रत्यक्षीकृत्य हृदये सर्वात्मानं समर्चयेत् ।

यस्य यस्य च देवस्य यथाभूषण्वाहनम् ।।१४३४।।

तदेव चितंनं तस्य पूजनं परिकोतितम् ।

प्रथान्तर्यंजनं वक्ष्ये येन देवमयो भवेत् ।।१४३५।।

सुखासने समासीनः प्राङ्मुखो वाप्युदङ्मुखः ।

स्वकोयहृदये घ्यायेत् सुधासागरमुत्तमम् ।।१४३६।।

रत्नद्वीपं तु तन्मध्ये सुवर्णवालुकामयम् ।

मंदारपारिजाताद्यः कल्पवृक्षः सुपुष्पितः ।।१४३७।।

सर्वतोऽलंकृतं दिव्यं नित्यपुष्पफलद्वमः ।

नानासुगंधकुसुमगंधामोदितदिङ्मुखम् ।।१४३८।।

उत्पुल्लकुसुमामोदभहृष्टमृगसंकुलम् ।

कृजत्कोकिलसंयैश्च वाचालितदिगन्तरम् ।

सर्वतोऽलंकृतं दिव्यं लस्तव्कास्तर्यंकजम् ।

कृजत्कोकिलसंयैश्च वाचालितदिगन्तरम् ।

सर्वतोऽलंकृतं दिव्यं लस्तव्कास्तर्यंकजम् ।

कृजत्कोकिलसंयैश्च वाचालितदिगन्तरम् ।

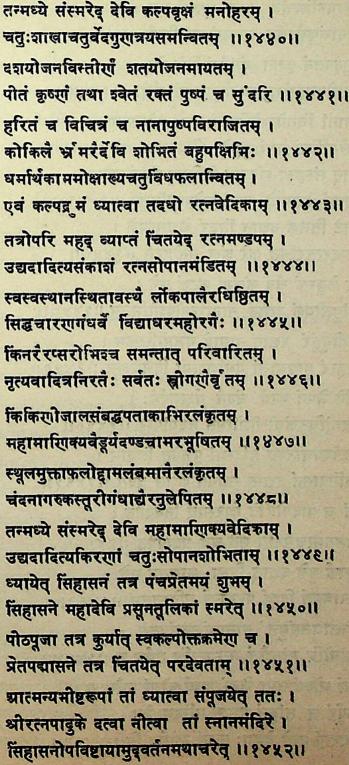
सर्वतोऽलंकृतं दिव्यं लस्तव्कास्तर्यंकजम् ।

सर्वतोऽलंकृतं दिव्यं लस्तव्कास्तर्यंकजम् ।

सर्वतोऽलंकृतं दिव्यं लस्तव्कास्तर्यंकजम् ।

सर्वतोऽलंकृतं दिव्यं लस्तव्कास्तर्यंकजम् ।

Las ine



CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

कर्प्रागरुभिश्चैव तथा मृगमदेन च। रोचनाकुंकुमैश्चैव नानागंधसमन्वितः ।।१४५३।। एवमुद्वर्तनं कृत्वा गंधतैलं विलेपयेत्। देव्यानीतसहस्रैस्तु स्वर्शकुंभामृते ज्लै: ।।१४५४।। सुस्नातां चितयेद् देवि तथा च प्रदेवताम् । दुकूलैर्माजितं गात्रं दुकूले परिधाय च ।।१४५५।। केशान् संस्कृत्य कंकत्या विधिवद् बंधनं तथा। पट्टगुच्छं केशपाशे नानारत्नोपशोभितम् ।।१४५६।। ललाटे तिलकं दद्यात् सिंदूरं केशमध्यके । नागेन्द्ररत्नरिचतं करे शंखं मनोहरम् ॥१४५७॥ तथा केयूरकं चैव कंकरां कटकं करे। पादांगुलीयकं दद्यात् नानारत्नोपशोभितम् ॥१४५८॥ पादयोर्न्पुरं दद्यान् नासाग्रे गजमौक्तिकम्। तारहारं पुष्पमालां यथाशक्त्या विभूषराम् ॥१४५६॥ सर्वांगे लेपनं कार्यं चंदने यंक्षकर्दमैः। कांचनांचितकंचोलीशोमितं हृदयोपरि ।।१४६०।। षोडशैरुपचारैस्तु हृदिस्थां पूजयेत् शिवाम् । रत्निसिहासनं दद्यात् स्वागतं कुशलं वदेत् ।।१४६१।। पाद्यं च पादयोर्दे वि शिरस्यघं निवेदयेत्। परामृतमाचमनीयं मुखे चैवं प्रदापयेत् ॥१४६२॥ मधुपकं मुखे दद्यात् त्रिधा ग्राचमनं मुखे। हेमपात्रगतं दिव्यं परमान्नं सुविस्तृतम् ।।१४६३।। कपिलाघृतसंयुक्तं नानाव्यंजनसंयुतम्। सुघांमोघि मांसशैलं मत्स्यराशि तथैव च ।।१४६४।। भक्ष्यं मोज्यं तथा लेह्यं चर्यं चोष्यं तथेव च। सकर्पूरं च तांबूलं मानसं परिकल्पयेत्। प्रावरणं ततो देव्याः पूजनं मनसेव हि। । शिक्षा Gangotri In S

इत्थमंतः समाराध्य मनसैव जपेन मनुम्। सहस्रादिजपं कृत्वा देव्ये सोदकमपंयेत् ।।१४६६।। ब्रह्मा विष्णुरच रुद्ररच ईश्वरश्च सदाशिवः। एतदेव महादेव्याः पर्यंकत्वमुदाहृतम् ॥१४६७॥ ततः फेनिनभां गय्यां नानापुष्पोपशोभिताम् । पुष्पराय्यां च संस्कृत्य तत्र देवीं सुरेश्वरीम् ।।१४६८।। चितयेत् साधको योगी नानासुखविलासिनीम्। नृत्यगीतैश्व वाद्यश्च तोषयेत् परमेश्वरीम् ।।१४६९।। ततो होमं प्रकुर्वीत पूजासाफल्यहेतवे । ग्रथ होमं प्रवक्ष्यामि येन चिन्मयत लमेत् ।।१४७०।। ग्रथाधारमये कुंडे चिदग्नौ होमयेत् ततः। श्रात्मान्तरात्मा ज्ञानात्मा परमात्मा प्रकीर्तितः ।।१४७१।। एतद्रपं तु चित्कुंडं चतुरस्रं विभावयेत्। श्रानंदमेखलारम्यं बिदुत्रिवलयान्वितम् ।।१४७२।। श्चर्धमात्रायोनिरूपं ब्रह्मानंदमयं भवेत् । वामभागे इडानाडी दक्षिएो पिंगला पुनः ॥१४७३॥ सुषुम्णां मध्यतो ध्यात्वा कुर्याद् होमं यथाविधि । धर्माधर्मी साधकेन्द्रो हविष्ट्रेन प्रकल्पयेत् ॥१४७४॥ मूलमंत्रं समुचार्यं ततः श्लोकं पठेदमुम् । नाभिचैतन्यरूपाग्नौ हविषा मनसा स्नुचा ॥१४७५॥ ज्ञानप्रदोपिते वन्हावक्षवृत्तीर्जु होम्यहम् । वन्हिजायान्तमंत्रेगा दद्याच्च प्रथमाहुतिम् ॥१४७६॥ मूलान्ते मंत्रमपरमुच्चार्य होमयेत् ततः । 🔇 धर्माधर्महविदीप्तमात्माग्नौ मनसा स्नुचा ॥१४७७॥ सुषुम्णा वर्त्मना नित्यमक्षवृत्तीर्जुहोम्यहम् । वन्हिजायान्तमंत्रेग् द्वितोयाहुतिमादिशेत् । मूलमंत्रं समुच्चायं ततः श्लोकं पठेदमुम् ॥१४७८॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

On Jen

प्रकाशाकाशहस्ताम्यामवलंब्योन्मनीस्नु चम् । ज्ञानप्रदोपितेवन्हावक्षवृत्ती र्जु होम्यहम् ॥१४७६॥ विन्हजायान्तमंत्रेण तृतीयाहुतिमाचरेत् । मूलमंत्रं समुच्चार्यं ततः क्लोकं पठेदमुम् ॥१४८०॥

श्रन्तिनरंतरिनिरंघनमेधमाने
मायांधकारपरिपंथिनि संविद्यनौ ।
किंस्मिद्दिबद्धुतमरोचिविकाशिभूमौ
विद्द्वं जुहोमि वसुधादि शिवावसानम् ।।१४८१।।

स्रनेन मनुना कृत्वा पूर्णाहुतिमनंतरम् । लिगत्रयविशेषज्ञः षडायारविभेदतः ॥१४८२॥

पीठस्थानानि चागत्य महापद्मवनं व्रजेत् । ग्रामूलाधारमाब्रह्मरंध्रं गत्वा पुनः पुनः ॥१४८३॥ चिच्चन्द्रकुंडलीशक्तिसामरस्यसुखोदयः । व्योमपंचकनिष्यंदसुधापानरतो भवेत् ॥१४८४॥

इदंतापात्रमरितमहंतापरमामृतम् । पराहंतामये वन्हौ जुहोमि शिवताप्तये ॥१४८५॥

विन्हिजायान्तमंत्रेग् दद्यात् पंचाहुति प्रिये । मधुपानिमदं प्रोक्तमितरे मद्यपायिनः ॥१४८६॥

पुण्यापुण्यपशुं हत्वा ज्ञानखड्गेन योगवित् । परे लयं नयेच्चित्तं पलाशो स निगद्यते ॥१४८७॥ मानसादिद्रियगर्गं संयम्यात्मिन योजयेत् । स मोनाशो भवेत् देवि शेषाः स्युः प्राशिहिसकाः ॥१४८८॥

म्रप्रबुद्धा पशोः शक्तिः प्रबुद्धा कौलिकस्य च ।

वाक्ति तां सेवयेद् यस्तु स भवेत् वाक्तिसेवकः ॥१४८६॥

पराशक्त्यात्मिम्युनसंयोगानंदनिभंरः।
य श्रास्ते मैथुनं तत स्यात्मरे की

य प्रास्ते मेथुनं तत् स्यादप्रदेश्वीनिषेवका Pipipy & CC-0. Arutsarthi R प्रान्थितप्रदेश स्थितिषेवका Pipipy & E Colli

s II

25

H

La Soli

इत्यादि पंचमुद्राणां वासनां कुलनायिके । ज्ञात्वा गुरुमुखाद् देवि यः सेवेत स मुच्यते ॥१४६१॥ इत्यन्तर्यजनं कृत्वा साक्षाद् ब्रह्ममयो भवेत् । एवमेव महेशानि पूजयन्ति परेश्वरीम् ॥१४६२॥ योगिनो मुनयश्चैव सदा तद्भावमाश्चिताः । सर्वासु बाह्यपूजासु ग्रन्तःपूजा विशिष्यते । ग्रन्तःपूजा महेशानि बाह्यात् कोटिगुणा स्मृता ॥१४६३॥इति।

भूतशुद्धौ-

यदि बाह्यार्चनद्रव्यैः संपत्तिरस्ति पार्वति ।
ग्रंग्तर्यागं विधायेत्थं वहिर्यागं समाचरेत् ॥१४६४॥
पूजाभावे महेशानि हृदये चितयेत् शिवास् ।
सर्वपूजाफलं देवि प्राप्नोति पूजकः प्रियः ॥१४६५॥
न केवलं मानसेन फलमाप्नोति वै गृही ।
ग्रन्तर्यागवहिर्यागौ गृहस्थः सर्वदा चरेत्।

ततः सिद्धिमवाप्नोति नान्यथा कल्पकोटिमिः ।।१४६६।।

परारहस्ये, कुलार्गावे च-

दीक्षाभिषेकसिहतो वेदशास्त्रार्थतस्वित् ।
देवतागुरुमक्तश्च नियतात्मार्चनित्रयः ॥१४६७॥
कुलागमरहस्यज्ञो देवताराधनोत्सुकः ।
गुरूपदेशसंयुक्तः पूजयेत् कुलनायिके ॥१४६६॥
शुद्धात्मा चातिसंतुष्टः क्रौर्यलौल्यविविज्ञतः ।
पशुव्रतादिविमुखः सुमुखस्तर्पयेत् प्रिये ॥१४६६॥
तदा पुंसः कृतार्थस्य कालेन वहुना प्रिये ।
मत्प्रसादेन सूयाच्चेद् दृढमक्तिसमागमः ॥१५००॥
तदूष्ट्वं तर्पणं कुर्याद् द्रव्यः श्रीभैरवोदितेः ।
गुरूपदेशविधिना चान्यथा पतनं भवेत् ॥१५०१॥

167

18/22

at of the state of

मंत्रयोगेन देवेशि कुर्यात् श्रीचक्रपूजनम्। तदहं च त्वया सार्धं गृह्णामि स्वयमादरात् । भैरवोऽहमिति ज्ञात्वा सर्वज्ञोऽहं गुगान्वितः ।।१५०२।। इति संचित्य योगीन्द्रः कुलपूजां समारभेत्। एकान्ते विजने रम्यदेशे बाधाविवर्जिते ।।१५०३।। सुखासने समासोनः प्राङ्मुखो वाप्युदङ्मुखः । श्रमृताब्धौ मिएाद्वीपे कल्पवृक्षवनो उज्वले ।।१५०४।। वज्रप्राकारसंदीप्तं स्मरेन् माशिक्यमंडपम्। पुष्पमालावितानाढ्यं दिन्यपट्टांबरावृतम् ।।१५०५।। कर्प्रदीपोज्ज्वलितं घ्रुपामोदसुवासितम्। तन्मंडपस्थमात्मानं ध्यात्वानाकुलचेतसा ।।१५०६॥ श्रीगुर्वानुज्ञया देवि कुलपूजां समाचरेत्। ग्रात्मस्थानमनुद्रव्यदेवशुद्धिश्च पंचमी ।।१५०७।। यावन् न कुरुते देवि तावद् देवार्चनं न हि। सुस्नानमूतसंशुद्धिप्रागायामादिमिः प्रिये ।।१५०८।। षडंगाद्यिलन्यासैरात्मशुद्धिरुदीरिता। संमार्जनोपलेपाद्यं र्दर्पगोदंरवत् कृतम् ॥१५०६॥ वितानधूपदीपादिपुष्पमालादि शोभितम्। पंचवर्णरजिश्रत्रं स्थानशुद्धिरितोरिता ।।१५१०।। ग्रथित्वा मातृकावर्गीः मूलमंत्राक्षरािंग च। क्रमोत्क्रमात् त्रिरावृत्तिमंत्रशुद्धिरियं भवेत् ।।१५११।। पूजाद्रव्याणि संप्रोक्ष्य मूलाख्नाम्यां विधानवित्। दर्शयेद् धेनुमुद्रां च द्रव्यशुद्धिः प्रकीतिता ।।१५१२।। पीठे देवं प्रतिष्ठाप्य सकलीकृत्य मंत्रवित्। मूलमंत्रेग दीपिन्या मालिन्यार्घोदकेत ज्ञानि दिश्व श्री Gangotri CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New ज्ञानि दिश्व श्री Gangotri

त्रिवारं प्रोक्षयेद् विद्वान् देवशुद्धिरियं प्रिये। पंचर्जीद्ध विधायेत्यं पश्चाद् यजनमाचरेत्।।१५१४।। सा पूजा सफला ज्ञेया चान्यथा निष्फला भवेत् । शुण्य देवि प्रवक्ष्यामि शोधनं च यथाक्रमात् । सकाराणां च सर्वेषां सर्वसाधारणं शिवे ।।१५१५॥ यैरेव पातकी देवि साधको द्रव्यसंकरैः। शुद्धैस्तैरेव पूजायां मवेद् मोगापवर्गमाक् ॥१५१६॥ यदा प्रभृति लोकेऽस्मिन् सुरा ख्यातिमुपागता। तदा सर्वे सुरा देवि ब्रह्मविष्णुहरादयः ॥१५१७॥ तत् संसर्गोद्भवानंदनिर्भरान्तरमानसाः । ग्रसुरा राक्षसा यक्षा गंधर्वा मानवादयः ॥१५१८॥ भजन्ति च सुरां दिव्यां मंत्रसंस्कारमंत्रिताम्। कालेन कलशस्थाभूत् पुरा देवी सुरेश्वरि ॥१५१६॥ कलिना कालरूपेरण बाधिते जगति प्रिये। शप्ता शुक्रे ए। देवेशि कचकारए।हत्यया ॥१५२०॥ शुक्रशापवशाद् देवाः ब्रह्मविष्णुशिवादयः। ब्रह्मर्षयः सुराये च ददुः शापं सुदुःसहस् ॥१५२१॥ ब्रह्महत्या सुरापानं समं ज्ञेयं महेश्वरि । 🦪 💛 👫 सुरा शप्ता यदा देवेस्तवा देत्या मुदं ययुः ॥१५२२॥ सुरां पीत्वा तु दितिजै देवा बलविवर्जिताः। स्वर्गात् निराकृता देवि पुरंदरपुरःसराः ॥१५२३॥ तदा विष्णुं पुरस्कृत्य देवा यज्ञमतन्वत । तदा सदाशिवो देवि प्रादुर्भूत्वाब्रवीच्च तस् ॥१५२४॥ वरं वृत्तु यथाऽभीष्टं देवनायक सांप्रतस्। तं तवाशु प्रयच्छामो गच्छामो निलयं स्वक्तम् ॥१५२५॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

तदा शक्रोऽब्रवीद् देवि पुरस्कृत्य गुरुं तथा। तृ्गाप्रविदुमात्रेग सुरायाः प्रासितेन च ।।१५२६।। या तृष्ति जीयतेऽस्माकं न साऽमृतघटीशतैः । सा शप्ता ब्रह्मां देवि विष्णुना शंकरेंगा च ।।१५२७।। तां विना निर्बला याता वयं सर्वे पराजिताः। तदर्थं देवदेवेश स्तुमस्त्वां प्रमेश्वरम् । एकाक्षराय रुद्राय प्रकारायात्मरूपिए।।१४२८।। उकारायाधिदेवाय विद्यादेहाय वै नमः। तृतीयाय मकाराय शिवाय परमात्मने ।।१५२६।। सूर्याग्निसोमवर्गाय यजमानाय व नमः। नमस्ते भगवन् रुद्र मास्करामिततेजसे ॥१५३०॥ नमो भवाय देवाय शर्वाय च कर्पादने । शिवाय क्षितिरूपाय सदा सुरभये नमः । १५३१।। ईशानाय नमस्तुभ्यं संस्पर्शाय नमोनमः । पश्नां पतये चैव पावकामिततेजसे ॥१५३२॥ मीमाय व्योमरूपाय शब्दमात्राय ते नमः। महादेवाय सोमाय ग्रमृताय नमोनमः ।।१५३३॥ उग्राय यजमानाय नमस्ते कर्मरूपिए। इति स्तुत्वा परं देवं भैरवं शिवमोश्वरम् ।।१५३४।। प्राप्तेमुः सकला देवाः ब्रह्मविष्णुहरादयः । तदा वागुदमूद् व्योम्नः पंच व्योमशरीरिग्गी ।।१५३५॥

सुरेयं सर्वदा सेव्या सकलंस्तु मुमुश्रुमिः । युक्तयानया प्रसंगेन यथावदनुपूर्वशः ॥१४३६॥ चतुर्घा वेदरूपोऽहमृग्यजुःसामरूपवान् । प्रथ्वाऽहं च मंत्रातमा पुरसात्माः शिवोऽत्ययः Picitized by eGangotri CC-0. Arutsakthi R. Vagananicatic शिवोऽत्ययः शिर्ध्र ३७॥ वेदानालोड्य वेदार्थं मंत्ररूपं विधाय च ।
कुरुकुल्लां महाविद्यां सदाशिव प्रकाशय ।।१५३८।।
ग्रागमं नाम शास्त्रं च चतुःषष्ट्यात्मकं परम् ।
तिस्मन् सुरादिशुद्धि तु प्रकाशय मनूत्तमैः ।।१५३६॥
इति वाग्गी शिवोद्भूता विरराम यदा तदा ।
सदाशिवं महेशानं तुष्दुवुः प्रग्गताः सुराः ।।१५४०॥

ॐकाररूपिए। देव नमस्ते विश्वरूपिए। ।
नमो देवाधिदेवाय महादेवाय वे नमः ॥१५४१॥
ग्रर्धनारीशरीराय सांख्ययोगप्रवर्तिने ।
वेदशास्त्रार्थगम्याय शाश्वताय नमोनमः ॥१५४२॥
दीनात्तित्राएकर्त्रे च नमस्ते दिव्यचक्षुषे ।
नमः सहस्रशीर्षाय नमः सहस्रकाङ्घ्रये ॥१५४३॥
नमो मंत्राय चिद्व्योमवासिने परमात्मने ।
इति स्तुत्वा महादेवं महात्मा श्रीसदाशिवः ॥१५४४॥
प्रोवाचागमशास्त्रं तु मोक्षमार्गं महात्मनाम् ।
देव देवीति या देवी मवानी शास्त्रविश्रुता ॥१५४४॥

सदाशिव प्रग्राम्याशुं प्रोवाचं श्रक्ष्ण्या गिरा। वद देवागमं शास्त्रं रहस्यं परमाद्भुतम् ।।१५४६॥ यस्योच्चारणमात्रेण शापहीना भवेत् सुरा। शृणु देवि प्रवक्ष्यामि सुराशुद्धि यथाक्रमम् ।।१५४७॥

मकाराणां तु सर्वेषां शोधनं सिद्धिवर्धनम् । वेदो निष्कलशब्दो वै वेदार्थश्वागमः प्रिये ।।१५४८।। वेदागमार्थतत्त्वज्ञेः सुरा सेव्या मुमुक्षुभिः । न वेदागमयोर्भेदः सर्वथेति विनिश्चयः ॥१५४९॥इति।

सूर्यमंडलसंसूता यथेयमभवत् पुरा । उमाबीजमयी चेयं तदेवात्र विविच्यते ।।१५५०।। यदुक्त' कुलोत्तरे देवीव।क्यम्-

सुरा देवी कथं देव सूर्यमंडलसंभवा। समुद्रजाता सा देवी सूर्यमंडलसंश्रया। केन वे कारणेनेश वद मे करुणानिधे।।१५५१।।

भैरव उवाच-

शृ्णु देवि प्रवक्ष्यामि गुह्याद् गुह्यतरं महत्। समुद्रमथने जाता सुरा देवी पुरा शिवे ।।१५५२।।

भ्रानंदरूपिएगी सर्वलोकानां च प्रियंकरी। सा देव तैर्यदा शप्ता स्वात्मानं लोप्तुमिच्छती ।।१४५३।।

कांतारं तं समाधित्य तपस्तेषे सुदाव्याम् । तपंतीं तपसा तां तु साक्षाल्लक्ष्मोसहोदरीम् । तक्यों चारुसर्वांगीमुपतस्थे दिवाकरः ॥१५५४॥

सा प्राथिता तु सूर्येग् सम्यगाश्वासिता तदा। विवेश मंडलं तस्य तत्र संमाविता सुरा ॥११५५।

स्थिता बहुतिथं पश्चात् सुराहीना वसुंधरा । नराः सुरास्तथा देवि निरानंदास्तदामवन् ॥१५५६॥

प्रसाद्य तपसा लोकघातारं तेन चोदिताः तपसाराध्य मार्तंडं सुरां देवीं तु विविरे ।।१५५७॥

तदा सुरोत्तमेनोक्ता गच्छ देवि महीतलम् । संमाविता सर्वलोकैरित्युक्ता सा परतिपरा ॥१५५८॥

तरुणारुणवर्णामा चारुसर्वागसुंदरी। निर्गता दिननाथस्य मंडलात् परमेश्वरी ।।१५५६।।

वरात् लब्ध्वा स्वामिमतात् लोकानंदनहेतवे। ग्रागता वसुधायां सा सर्वलोक्तियंक्त्रीः अधिकार्यक्ति। CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, Tew Del March 1 उमावीजमयत्वमपि तत्रैवोक्तम्—

शुणु देवि प्रवक्ष्यामि यथोमा बीजतां गता। पुरा कैलासशिखरे लोलाखेलनतत्परा ।।१५६१।। सुरया प्रियया सख्या चोमा शंकरवल्लभा। सुप्रीता सिक्तभावेन वरं तस्यै ददौ तदा ।।१५६२।। सा वत्रे च सुरादेवी गौरीं शिवसतीं तदा। देवि गौरि नमस्तुभ्यं यदि तुष्टासि मे शिवे ।।१५६३।। वरं ददासि चेन मह्यमहं शप्ता पुरा किल। बुद्धिभ्रंशकरी चेति जनानामस्मि शांकरि ।।१५६४।। मां समुद्धर तस्मात्तु शापात् परशिवप्रिये। श्रात्मविद्यास्वरूपा त्वमुमा भगवती मता ।।१५६५।। ग्रहं पीता येन तस्मै प्रसीद त्वं च सत्वरस्। मया संतर्पिता च त्वं द्रुतं प्रीति समावह ।।१५६६।। इति तद्वाक्यमाकर्ण्य संतुष्टा प्राह शांकरी। शृणु वत्से सुरे देवि न यावत् तर्पिता त्वया। न मे प्रीति भंवेत् तावत् सत्यं सत्यं न संशयः ।।१५६७।। यस्त्वां मह्यं समर्प्याथ सेवते मिक्तभावतः । प्रविष्टा त्वं तस्य चान्तविद्यां मां जनियव्यसि ।।१५६८।। मम विद्यास्वरूपायाः कारगं भव सत्वरम्। ब्रधुना शृणु देवेशि सुराशोधनमुत्तमम् ।।१५६६।। येन शोधनमात्रेग सर्वदेवप्रिया भवेत्। मंडलं वामतः कृत्वा जलेन रजसापि वा ।।१५७०।। कुं कुमेनाष्टगंघेन ह्यथवा वीरभस्मना । त्रिकोगां बिंदुसंयुक्तं वृत्तं च चतुरस्रकम् ॥१५७१॥ प्रग्वं भुवनेशानीं तत ग्राधारशक्तये। न्मोऽन्तेनार्चयेत् तं च गंधाक्षतप्रसूनकैः ।।१५७२।।

And Hare why are

सामान्यार्घोदकेनास्त्रं पठत् प्रोक्ष्य च सुन्दरि । तत्राधारं च संस्थाप्य वन्हिमंडलमर्चयेत् ।।१५७३।। रकारं बिदुसंयुक्तं ङेयुतं वन्हिमंडलम्। दशकलात्मने विश्वमिति मंत्रेग पूजयेत् ।।१५७४।। प्रादक्षिण्याद् दशाग्नेयोस्तदुपर्यच्चयेत् कलाः । धूम्राज्यिक्षमा ज्वलिनी ज्वालिनो विस्फुलिंगिनो ।।१५७५।। सुश्री सुरूपा कपिला हब्यकव्यवहे तथा। पूज्या गंघादिभि यादिदशवर्णादिकाश्च ताः ॥१५७६॥ कलाश्रीपादुकां पूजयामीति पदमुच्चरेत् । नाम्नामन्ते ततस्तासां प्राग्स्थापनमाचरेत् ।।१५७७।। ततः कलशमानीय यथालाभं सुशोभनम् । हैमं वा राजतं मार्तं संक्षाल्यास्त्रं समुच्चरन् ।।१५७८।। षट्त्रिशदंगुलायामं षोडशांगुलमुच्चकम् । चतुरंगुलकं कंठं मूलं तस्य षडंगुलम् ॥१५७६॥ घूपितं पुरकर्पूरचंदनागरुभिस्तथा। रक्तवस्त्रेगा संवेष्टच स्थापयेद् वीरमुद्रया। शोमितं पुष्पमालामि मैत्रमेनं समुज्यरन् ।।१५८०।। शंभुना च यथा पूर्वं विष्णुना च यथा पुरा। ब्रह्मराा च यथा पूर्वं तथा त्वां स्थापयाम्यहम् ॥१५८१॥ इति संस्थाप्य कलशं सूर्यमंडलमर्चयेत्। श्रमकंमंडलं ङेन्तं द्वादशान्ते कलात्मने ॥१५८२॥ विश्वमन्ते प्रयोक्तव्यं मनुनानेन पूजयेत्। कला द्वादश तत्पश्चात् कभाद्याः चठडान्तगाः ॥१५५३॥ प्रदक्षिरएकमादर्च्यास्ताः क्रमेरगोच्यतेऽघुना । तपिनी तापिनी भूमा आही जिल्लालिनी क्चिशाना ११६ दिशा

सुषुम्एा भोगदा विश्वा बोधितो धारिएा। क्षमा । एताः पूर्ववदभ्यच्यं प्राग्णस्थापनपूर्वकम् ॥१५८५॥ सुरया पूरयेत् कुंभं विलोमे मितृकाक्षरैः। तदिदं चामृतं साक्षाच्चंद्ररूपं विचिन्तयन् ॥१५५६॥ मंत्रेगानेन देवेशि चंद्रमंडलमर्चयेत्। भृगुं सिबन्दुमुच्चार्य ङेयुतं सोममंडलम् ॥१५८७॥ विश्वांचलोऽयं देवेशि षोडशान्ते कलात्मने । भ्रनेन मंडलं पूज्य कलाः षोडश पूजयेत् ॥१५८८॥ ग्रमृता मानदा पूषा तुष्टिः पुष्टी रतिर्धृतिः। शशिनो चंद्रिका कांतिज्योंत्स्ना श्रीः प्रीतिरंगदा ॥१५८६॥ पूर्णा पूर्णामृता चेति कथिता स्वरजाः कलाः। पूर्ववत् पूजनीयास्ताः प्राग्रस्थापनपूर्वकम् ॥१५६०॥ एताः समर्च्य मंत्रैस्तु यजेद् देवीं च भैरवम् । मूलेन तत्र कलशे त्रिकोएां च विभावयेत् ॥१५६१॥ बिद्वविबे परां ध्यात्वा पुजयेदिष्टदेवताम् । पूर्व अपूर्व गंधाक्षतप्रसूतेश्च प्रएवं मूलमुच्चरन् ॥१४६२॥ ततस्तारं च मायां च परमस्वामिनोति च। परमाकाशाशून्यांते वाहिनोति समुज्वरेत्। glas con sister かうつから ちゃんち चंद्राकिंग्निमक्षिर्णीति पात्रे विशयुगं वदेत् ॥१५६३॥ ठद्वयान्तामिमां विद्यां जपेत् दशघा घटे। तत्रैव मातृकान्ते च जपेहचिममां प्रिये ॥५१६४॥ menzy श्राकृष्णोन रजसेति नाम्नीं परमपावनीस् । दशयैनामृचं देवि मधुवाताऋताभिधास् ॥१५६५॥ तत्रानंदेशगायत्रीं जपेतु दशधा प्रिये। वाङ्माया मा समुच्चार्य तथानन्वेश्वराय च ।।१५६६॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

> विद्महे श्रीसुरादेव्ये धीमहीति ततो वदेत्। तन्नोऽर्धनारीशब्दांते प्रचोदयात् समुच्चरेत् ।।१५६७।। ग्रग्निमीले पुरोहितं त्रिः संजप्य तु कौलिकः । रकारदीर्घषट्काढ्यं प्रोच्चार्यं तदनन्तरम् ।।१५६८।। विद्वापमोचिताये सुरादेव्ये द्विठान्तकम्। दशघा प्रजपेत् विद्यामिषेत्वेति ऋचं जपेत्। तारं मायाग्निषड्दीर्घं प्रोच्चार्यं च ततः सुधे ॥१५६६॥ शुक्रशापं मोचय द्विर्वतातो मनुरोरितः। श्रग्न ग्रायाहीति ऋचं दशधा प्रजपेत् प्रिये ।।१६००।। शुक्रशापहरां विद्यां प्रजपेदुच्यतेऽधुना । सूर्यमंडलसंभूते वरुगालयसंभवे ।।१६०१।। उमाबोजमये देवि शुक्रशापात् विमुच्यताम् । वेदानां प्रएावो बीजं ब्रह्मानंदमयं यदि । तेन सत्येन ते देवि ब्रह्महत्या व्यपोहतु ॥१६०२॥ एकमेव परं ब्रह्म स्थूलसूक्ष्ममयं ध्रुवम् । 🔑 🥕 🔑 कचो द्भवां ब्रह्महत्यां तेन ते नाशयाम्यहम् ।।१६०३।। ब्रह्मशापनिनिर्मु का त्वं मुक्ता विष्णुशापतः। विमुक्ता रुद्रशापेन पवित्रा सव सांप्रतम् ।।१६०४।। एते मैंत्रेस्त्रितारं संमंत्र्य कोलिकः प्रिये। शस्रो देवीति ऋचं दशया प्रजपेद् घटे । ततो मायां रमां देवि पं गुं षड्दीर्घसंयुतम् ।।१६०५।। खुरिकाकारिण्युच्चार्य शोभिनीति ततो वदेत्। विकारानस्य शब्दान्ते हरयुग्मं च ठद्वयम् ।।१६०६।। छुरिकाख्यां जपेद् विद्यां दशघा कलशोपरि । यो विश्वज्ञक्षुरिति तामृचं च वश्या जिपेत् ॥१६०७॥



Jean of Jacon

गुरुं ध्यात्वा सहस्रारे हृत्पद्मे ऽपीष्टदेवताम् । प्रगम्य कौलिको ध्यात्वा श्रीतिरस्करिग्गीं जपेत् ॥१६०८॥

नीलतीयदसंकाशां नीलकुंतलशोमिताम् । नीलांवरधरां देवीं नोलोत्पलिवलोचनाम् ॥१६०६॥ नीलपुष्पिवसूषाढ्यां नीलालंकारसूषिताम् । नीलांगरागसंछन्नां नीलवैदूर्यमालिनीम् ॥१६१०॥ इंद्रनीलिवद्धांशुमहौघमिएसूषर्णाम् । नीलवाजीसमारूढां नीलखङ्गायुधां पराम् । निद्रापुटेन नीलेन भुवनानि चतुर्दश् ॥१६११॥

मोहयंती महामायां द्रव्यनिदकभक्षिग्गीम् । वीरपानरतात् वीरात् पालयंतीं समंततः ॥१६१२॥

संकेतमंडलं दिव्यं छादयंतीं स्ववाससा । परमानंदवपुषं परमानंदभैरवीम् ।।१६१३।।

परमानंदजननीं प्रग्णमामि पराम्बिकास् । इति ध्यात्वा जपेद् विद्यां यथावद् वर्ण्यते मया ।।१६१४।।

वाक्काममठमायाश्च तिरस्करिशि संवदेत् । सकलजनं प्रोच्चायं वाग्वादिनि ततो वदेत् ।।१६१४।। सकलजनपशुं च वदेत् व्रातमनः पदम् । चक्षुः श्रोत्रजिह्वाघ्राशादोनि चेति तिरस्कुरु ।।१४१६।। तिरस्कुरु ततः पद्मत्रयं ठद्वयमुद्धरेत् ।

श्रोतिरस्करिं विद्यां संजपेद् दश्या घटे ॥१६१७॥

पवमानः परब्रह्म शुद्धं ज्योतिः सनातनम् ।

पितृ स्तस्योपतिष्ठन्ति क्षीरसपिमं श्रुदकैः ॥१६१६॥

ऋचमेनां जपेत् तत्र त्रिवारं त्रिजंपेत् ततः।

प्यमानः परं ब्रह्म प्यमानः परो रसः ॥१६१६॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi: Digitized by eGangotri

And State of the S

3 dracason

well or &

पवमानं परं ज्ञानं तेन त्वां पावयाम्यहम्। इति जप्त्वा गुरुं ध्यात्वा जपेद् वरुगाबीजकम् ॥१६२०॥ हंस इत्यर्कमंत्रं च देवीं कुंडलिनीं स्मरेत्। प्रसुप्तभुजगाकारां सार्धत्रिवलयां शिवास् ॥१६२१॥ सूर्यकोटिकरालाभां चंद्रकोटिसुशीतलाम् । वन्हिकोटिद्राधर्षां विसतंत्तनोयसीम्। षट्चक्राशि विभिद्याशु सुषुम्शा वर्त्मना नयेत् ।।१६२२।। सहस्रारस्थिते देवं नत्वा शिवपदे लयेत्। शिवशक्तयो मेंहज्ज्योति ध्यत्वा चंद्रकलाह्नतम् ।।१६२३।। श्रमृतं वामनासाग्रात् निःसार्यं कलशे क्षिपेत् । श्रमृतीकृत्य तद्द्रव्यं धेनुमुद्रां प्रदर्शयेत् ।।१६२४।। मायां रमां कामकलां ग्रमृतेऽतोऽमृतोद्भवे। अमृतविषण्युच्चार्ये अमृतं श्रावयद्वयम् ।।१६२५।। ग्रं ग्रां विष्णुकलां ते च पठेत् पार्वित कौलिकः। विश्वां तममृतेश्वर्ये मनुमेनं जपेद् घटे ।।१६२६।। ध्यात्वामृतमयं दिव्यं कर्पूरादिसुत्रासितम् । एलाबवंगकस्तूरीचंदनोशीरमिश्रितम् ।।१६२७।। विघाय मूलमंत्रेग तीर्थान्यावाहयेद् घटे। तारं शिवं शिवं भूति मूलमेतत् समुद्धरेत् ।।१६२८।। गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति । नमंदे सिंघु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधि कुरु ।।१६२९।। इत्यावाह्य महादेवि मुद्रयांकुशरूपया । सर्वतीर्थमयं दिव्यं ध्यायेत् परमपावनम् ।।१६३०।। द्रव्यमध्ये त्रिकोएं च श्रक्षणदिविभूषितम् । Digitized by eGangotri हलक्षान्तःकोरायुतमेशुकं सरिज मध्यगम् ॥१६३१॥

विमाव्य योनिमाबध्य ध्यायेदानंदभैरवम् । सूर्यकोटिप्रतीकाशं चंद्रकोटिसुशीतलम् ।।१६३२।। ग्रष्टादशभुजं देवं पंचवक्त्रं त्रिलोचनम । अमृतार्गावनध्यस्थं ब्रह्मपद्मोपरि स्थितम् ॥१६३३। वृषारूढं नीलकंठं सर्वाभरए।भूषितम् । कपालखट्वांगधरं घंटाडमरुवादिनम् ॥१६३४॥... पाशांकुशधरं देवं गदामुसलधारिराम्। खङ्गखेटकपट्टीशमुद्गरोच्छूलकुंतिनम् ।।१६३५।। विचित्रखेटकं मुंडं वरदाभयपारिएनम्। लोहितं देवदेवेशं भावयेत् साधकोत्तमः ॥१६३६॥ दत्वा पुष्पांजिल कुंभे यजेदानंदभैरवम् । हकारं च भूगुं देवं भेकं पृथ्वीं ततो जलम् ॥१६३७॥ श्रींन वार्यं वामकर्णं ङेऽन्तमानंदभैरवम । नेत्रमंते च दशधा जप्त्वा ध्यायेचच भरवीम् ॥१६३८॥ मावयेच्च सुधां देवीं चन्द्रकोट्ययुतप्रमाम् । हिमकुन्देन्दुधवलां पंचवक्त्रां त्रिलोचनाम् । श्रष्टादशभुजैर्युक्तां सर्वानंदकरोद्यताम् ॥१६३९॥ महसन्तीं विशालाक्षीं देवदेवस्य संमुखीम् । एवं घ्यात्वा यजेद् देवीं मंत्रेगानेन तज्जले ॥१६४०॥ शक्ति शिवं निर्जराएँ भेकीं भूबीजमेव च। मेघं वन्हि समीराएँ केशं चैव समुद्धरेत ।।१६४१॥ सुरादेग्ये कुटं चान्ते विद्यां च दशघा जपेत्। भैरवं भैरवीं देवीं जप्त्वा पार्वति कौलिकः ॥१६४२॥ महामुद्रां धेनुमुद्रां योनि मत्स्यं प्रदर्शयेत्। बध्वा च लेलिहानाख्यां मुद्रां कुंडलिनीं पुनः ।।१६४३।।

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

had be a

मूलाधारात् समुत्थाप्य सुषुम्गा वर्त्मना प्रिये। द्वादशान्तं समानीय सोऽहं हंस इति स्मरन्। शिवेन सह संयोज्य परानन्दमयः सुधोः ।।१६४४।। तदुद्भूतामृतवृष्टिमुत्सृजेद् वामनासया । प्रग्विन च देवेशि परद्रव्ये नियोजयेत् ॥१६४५॥ साक्षादमृततत्त्वाढ्यं ध्यायेत् क तशमुत्तमम्। वारुएां बोजमुच्चार्य मूलं च दशघा जपेत् ॥१६४६॥ पुनः संपूजयेत् पुष्पैग्धाक्षतपुरःसरैः। नानाविषेश्च मालाभिः गेंधद्रव्यैः मनोहरैः ।।१६४७।। संपूज्य कलशं दिव्यं घंटानिःस्वनपूर्वकम् । घूपे दींपे मंनोत्साहैः परमैविविधौषवैः ॥१६४८॥ संपूज्य परया मक्तचा प्रशामेत् स्तुतिपूर्वकम् । सर्वदेवमयं कुंभं घ्यायन् साधकसत्तमः ।।१६४६।। ततः कलशवक्त्रं तु पात्रेगाच्छाद्य केनचित्। जलोद्धररापात्रं तु सूक्ष्मं तस्योपरि न्यसेत् ।।१६५०।। तिस्मन् नमोद्यां सूक्ष्मां च नंदां शांतां प्रपूजयेत्। चतुर्थीनमसा युक्तां गंधाक्षतप्रसूनकैः ।।१६५१।। एवं क्रमेण वरदा कलशस्था भवेत् सुरा। तृष्तिदा सर्वदेवानां सर्वदेवमयो हि सा ।।१६५२।। सिद्धिदात्री ज्ञानदात्री भववंधविमोचिनी। या सुरा सा उमा देवी यद् द्रव्यं तन्महेश्वरः ।।१६५३॥ यो गंधः स मवेद् ब्रह्मा यो मोहः स जनादंनः । स्वादे च संस्थितः सोमः फेनायामनलस्थितः ॥१६५४॥ इच्छायां मन्मयो देवरछर्चामुच्छिष्टभैरवः। द्रावे गुंगा स्थिता हेवि बहस्थाः सम्तः सम्तानामा १ ६ प्रश्रा सर्वतेजोमयं द्रव्यं परमानंदिनर्भरम् । सर्वशापविनिर्मुक्तं सर्वमंत्रप्रतर्पकम् ।।१६५६॥

योजयेदिष्टपूजायां स्वकल्पोक्तेन वर्त्मना । ततस्तृप्ता महेशानी लयांगशिवभैरवैः । ददातीष्टान् वरान् देवि भुक्तिमुक्तिफलात्मकान् ।।१६५७॥

माहेश्वरं मंहावीरं मंहाचीनक्रमस्थितः । महाशक्तिमयं मन्यः सेव्यं द्रव्यमिदं प्रिये ॥१६५५॥ संतर्प्यं देवतामिष्टां योगिनीगग्गमैश्वरम् । बदुकं क्षेत्रपालं च त्रित्रिशत्कोटिदेवताः ॥१६५६॥

मातृमातृग्णान् सर्वान् भूतप्रेतादिसंयुतात् ।
संतप्यं विधिवद् देवि गुरुं गुरुवरांस्ततः ॥१६६०॥
गुरुं ध्यात्वा परां ध्यायेद् वीरात् संपूज्य शक्तितः ।
शक्तियुक्तो भजेत् पात्रमित्याज्ञा पारमेश्वरो ॥१६६१॥
मद्यं मांसं तथा मीनं मुद्रां मैथुनमेव च ।
मपंचकं वीरशक्तिदेवीदेवप्रतोषकम् ॥१६६२॥
शक्तिहीनं वृथापानं तथैव पललं विना ।
तस्मात् संशोधयेन् मांसं देवयोग्यं यथा मवेत् ॥१६६३॥

पूजायां यद् यदानीतं मक्ष्यं मोज्यं च लेह्यकम् ।
पेयं चोज्यं फलं पुष्पं मंत्रितं देवप्रीतिदम् ।।१६६४।।
विनामिमंत्रएोनेतत् योऽपंयेद् मक्षयेदथ ।
स मांत्रिकोऽपि देवेशि सहसा निरयी मवेत् ।।१६६५।।
चतुरस्रं विलिख्याथ मांसपात्रं निधापयेत् ।
शोषयेद् दाहयेद् देवि प्लावयेत् स्वस्वबीजतः ।।१६६६।।
मुद्रात्रयं प्रदर्श्याय तत्रश्चेनं पठेत् मनुम् ।
खागलाजेन मांसेन कृतरूपाय विष्णवे ।।१६६७।।

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

वल्यर्थं देवदेव्योस्तं प्रपद्ये विष्णुमव्ययम् । प्रतर्पयामि वल्यर्थं पवित्राभव सांप्रतम् ॥१६६८॥ त्रिः पठित्वा ऋचं देवी प्रजपेत कौलिकोत्तमः । प्रतद्विष्णुरिति स्मृत्वा प्रग्मेद् योनिमुद्रया ॥१६६६॥ चतुरस्रं लिखेद् बिंबं मीनं तत्र निधाय च । शोषएां दाहनं देवि प्लावनं मनुना चरेत् ॥१६७०॥ ततश्च प्रजपेद् विद्यां यथोक्तां कुलनायकः। कृतावतारो हरिएगा कलिना पीडितं जगत ।।१६७१।। विलना निगृहीतं च कौलिकानां हितेच्छ्या । भैरवीपरितोषार्थं स्वयं मीनोऽभवद् हरिः ।।१६७२।। मायां हरांते विश्वं च जपेहचमतः परम्। त्र्यंवकं यजामहेति मंत्रं त्रिः संजपेत् सुधीः ॥१६७३॥ प्रपूज्य गंधपुष्पाद्यैः प्ररामेद् देवतां पराम् । मुद्रापात्रं समानीय स्थापयेच्चतुरस्रके ॥१६७४॥ शोषगां दाहनं चैव प्लावनं पूर्ववच्चरेत्। मुद्रात्रयं च संदर्श्य प्रपठेत् पूर्ववन्मनुम् ॥१६७५॥ देवता पूजनीयानि सौरमेयानि सांप्रतम्। वल्यर्थं देवदेव्योइच पवित्राग्गीह सिद्धये ॥१६७६॥ मूलं च दशधा जप्त्वा जपेहचमनुत्तमाम्। तद्विष्णोः परमं मंत्रं प्रजप्योपरि कौलिकः ॥१६७७॥ प्रशास्य मक्तिमावेन कुण्डगोलं च शोधयेत्। चतुरस्रे च संस्थाप्य शोषयेद् वाहयेत् सुधीः ।।१६७८।। श्राप्लावयेच्च तैर्बीजे मुद्रामिरमिरक्षयेत्। मूलं च दशघा जप्त्वा जपेहचमथोपरि ॥१६७६॥ विष्णुर्योनिमिति स्मृत्वा स्वेष्टं च प्रग्णमेत् ततः। सर्वेषु देवद्रव्येषु समानीतेषु कौलिके रेल्प हिंदीह हु। Ad by eGangotri of the same

ऋचमेतां जपेत् सम्यङ् मंत्रमेनं तथा जपेत् ।

ग्रलुं स्लुं म्लुं प्लुं न्लुं देवेशि स्वान्तं खं कामकौलिकः ।।१६८१।।

श्रमृतेऽथामृतोद्भूतेऽथामृतेश्वरि चामृतम् ।

श्रावयद्वयमुद्धृत्य ठद्वयं च समुच्चरेत् ।।१६८२।।

इयं शापहरो विद्या मकाराणां महेश्वरि ।

एवं संशोध्य द्वव्याणि शक्तिशोधनमाचरेत् ।।१६८३।।

शक्तिशेषार्थमथवा प्राप्त्यर्थं कुंडगोलयोः। संशोधनमकृत्वा तु तद्द्रव्यं वाथ शेषकम्। गृह्णाति पूजां वा कुर्यात् तत् सर्वं निष्फलं भवेत् ॥१६८४॥ कृतेऽि सिद्धिहानिः स्यात् कृद्धा भवति चंडिका । ग्रभिषेकाद् भवेत् शुद्धिः तथा मंत्राभिमंत्रणात् ।।१६८४।। नंटी कार्पालकी वेश्या रजकी नापितांगना । बाह्मांगों शूद्रकन्या च तथा गोपालकन्यका ।।१६८६।। मालाकारस्य कन्या च नव कन्याः प्रकोतिताः। एतासु कांचिदानीय संशोधनमथाचरेत् ।।१६८७।। तत्र देवं गुरुं ध्यात्वा कृत्वा विष्टरशोधनम्। भूतर्शुद्धि विधायाथ कुर्यात् प्राराार्परां सुधीः ॥१६८८॥ विघाय मातृकान्यांसं प्रागायामं ततक्चरेत्। विनियोगं ततः कुर्याद् यथावद् वर्ण्यते मया ।।१६८९।। शक्तिशोधनमंत्रस्य ऋषिः प्रोक्तः सदाशिवः । त्रिष्दुप् छन्द इति ख्यातं देवता श्रीपरांत्रिका ।।१६६०।। वाग्बोजं बोजमीशानि शक्तिः शक्तिरितीरिता। कामं कोलकमीशानि दिग्बंघो हरमीश्वरि ।।१६६१।। भोगापवर्गसिद्धचर्यं विनियोगः प्रकोतितः । ऋष्यादिकं यथास्थाने वासाबीजैः क्रमोत्क्रमैः ॥१६६२॥ ८८७. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

D2149,45

the foreign

ensite a mu: j'amanu dest mome

षडंगकं विधायाथ ध्यात्वा देवीं परांबिकास्। स्वकल्पोक्तविधानेन पूज्य संप्रार्थ्य पार्वतीम् ।।१६६३।। शक्तिचकं स्ववामे तु सिंदूरेण विभावयेत्। त्रिकोरामथ षट्कोरां चतुरस्र विभावयेत् ।।१६६४।। त्रिकोरामध्ये तन्मंत्रं लिख्य तामेव पूज्य च। तस्मिन्नासनमास्तीर्यं कन्यां भैरववल्लभाम् ॥१६९४॥ मुक्तकेशीं वोतलज्जां सर्वाभरएाभूषिताम। सर्वशं गारशोभाढ्यां तारुण्यमदगर्विताम् ॥१६६६॥ भ्रानंदानद्वहृदयां सौंदर्यातिमनोहराम् । शोधयेत् शुद्धमंत्रेण सुरानंदामृतांबुमि:। वालाबीजत्रयं देवि प्रोच्चार्यं तदनंतरम् ॥१६९७॥ त्रिपुरायं ततो विश्वं तदन्ते नामपूर्वकम् । रमां शक्ति पवित्रीति कुरुयुग्मं समुद्धरेत् ।।१६६८।। मम शक्ति कुरुयुगं विन्हिजायां समुद्धरेत्। मंत्रेणानेन देवेशि कामिनीमिभिषचयेत् ।।१६९६।। श्रमिषिच्य ततः शक्ति न्यासजालं प्रविन्यसेत् । मातृकावन्महेशानि कामवार्गांस्ततो न्यसेत् ॥१७००॥ चन्द्रबीजद्वयं देवि कामराजं च मोहनम्। शक्तिबीजं ततो देवि यथावद् विन्यसेत् प्रिये ।। १७०१।। ललाटे वदने न्यस्य हृदये योनिमंडले । सर्वसंक्षोमरां वार्गं सर्वविद्वावरां तथा ।।१७०२।। सर्वाकर्षणसंज्ञं च सर्वसंमोहनं तथा । वशीकरणवाणं च पंचेतात् विन्यसेत् प्रिये ।।१७०३।। विन्यस्य वारामुद्राश्च पंच ता देवि दर्शयेत्। योनिविदे जपेत संत्राच्यक्तव व्यान चर्णयोग्यहस् ।।१७०४।। तारं चंद्रं च वागबोजं कामं शक्ति ततो वदेत्। निटनोति महासिद्धि मन देहियुगं वदेत् ।।१७०५।। ठदयं प्रजपेदंते मंत्रोऽयं निदनीप्रियः। कालीं कूर्चं परां शक्ति कामं कापालिनि प्रिये ।।१७०६।। रेतो मुचयुगं ब्यादन्ते दहनवल्लभा। देवि कापालिकामांत्रः कामदेववशांकरः ।।१७०७।। तारद्वन्द्वं च हरितं मेघं षड्दीर्घपूर्वकम्। वेश्या काम उच्चौरेतो मुंचयुग्माग्निवल्लमा ।।१७०८।। वेश्याशोधनमात्रोऽयं सर्वकौलिकवल्लभः। वेदाद्यं वागुभवं कामं शक्ति लक्ष्मीं परां ततः ।।१७०६।। रजकोति महासिद्धि देहि मे हर ठद्वयम्। रजकी शुद्धिमंत्रोऽयं कुलयोषिद्वशंकरः। तारं तारात्रयं वस्त्रं प्रोच्चार्यं नापितांगने ॥१७१०॥ हरयुग्मं च मे विघ्नान तुरगं ठद्वयं ततः। नापितस्त्रीशुद्धिमंत्रो महामांगल्यदायकः ॥१७११॥ वेदाद्यं भूतिबीजं च तारं मायां घनुस्तथा। बाह्मिं स्मरवीर्यं च मुंच मुंचेति सर्वंदा ।।१७१२।। सिद्धि मे देहि देहीति हरं दहनवछुमा। बाह्मगोशुद्धिमंत्रोऽयं महासिद्धिप्रदायकः ॥१७१३॥ तारं रमा रमा तारं शुद्राणि चरति प्रिये। रेत स्तंभय मे सिद्धि देहियुग्मं ततो वनम्। शूद्रार्गीशुद्धिमंत्रोऽयं कामिनीजनमोहनः ।।१७१४।। तारकं शिवषड्दीर्घसंयुतं मठबीजकम्। गोपालि मे सिद्धि देहि द्रावयद्वयमुद्धरेत् ॥१७१५॥ ठद्वयांतो महामंत्रो गोपीशोधनकारकः । तारद्वयोसंपुटितां मृद्वीकां दीर्घसंयुताम् ॥१७१६॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

उद्धृत्य मालिनि प्रांते कुरुयुग्मं ततो वदेत् ।
तुरगं ठद्वयं प्रान्ते मंत्रोऽयं मालिनीप्रियः १७१७।।
एवं शोधनमंत्रास्ते विश्तिताश्च पृथङ् मया ।
योनौ जपेत् कुमारीशां कौलिकः करमालया ॥१७१८॥
संजप्य वामकर्शे च मूलमंत्रं त्रिरुच्चरेत् ।
ग्रदीक्षितापि देवेशि दोक्षितेव भवेत् तदा ॥१७१६॥
तथामिषिक्ता च भवेत् शेषपूजाधिकारिशी ।
एवं सुसंस्कृतां शक्ति भजेद् वीरोऽर्थसिद्धये ॥१७२०॥
तारं व्योषमास्मरीकं शिवायेति स्वयंभुवम् ।
संपूज्य शिवमंत्रं च जपेत् संस्तम्य स्वं ध्वजम् ॥१७२१॥
जप्त्वा निरुध्य तद्दण्डं करमीतुण्डमुद्रया ।

म्रानंदतिपतां कांतां वीरशानंदनिर्भरः ।।१७२२।।

पठन् प्रएावमूले च तया निधुवनं चरेत् ।
धर्माधर्महिवर्दीप्ते स्वात्माग्नौ मनसा स्रुचा ।
सुषुम्पा वर्त्मना नित्यमक्षवृत्तीर्जुहोम्यहम् ।।१७२३।।
स्वाहान्तं प्रएावादि च पठन् रेतो विसर्जने ।
जपन् मूलं पठेन् मंत्रमिमं देवीं परां स्मरन् ।।१७२४।।
तारद्वयान्तरगतं परमानंदकारण्य् ।
प्रकाशाकाशहस्ताभ्यामवलंक्योन्मनीस्रुचा ।।१७२५ ।
धर्माधर्मकलास्नेहं पूर्णवन्हौ जुहोम्यहम् ।
स्वाहान्तेन च मंत्रेण् रेतो दानं विधाय च ।।१७२६।।
तारसंपुटमूलेन तत् समादाय पार्वति ।
पुष्पेन पात्रे संस्थाप्य शोधयेदुक्तवर्त्मना ।।१७२७।।
निःक्षिप्य कलशे भूयस्तर्पयेष्जगदंविकाम् ।
तुप्तानेन महादेवो सर्वामोष्टं प्रयच्छति ।।१७२५।।

ग्रहं चैव त्वया सार्धं शक्तिवीरसमागमे ।

प्रीत्या गृह्णामि तां पूजां शक्तिद्रव्येगा तिपतः ।।१७२६।।

मद्यकुंमसहस्रैश्र मांसभारशतैरि ।

न तुष्यामि वरारोहे भगींलगामृतं विना ॥१७३०॥

उत्तमे वीर्यरजसी मध्यमं केवलं रजः ।

ग्रथमं केवलं वीर्यं तदन्यच्चाधमाधमम् ।।१७३१॥

सकामो न स्त्रियं गच्छेदिनच्छन्तीमदीक्षिताम् ।

संस्कारशुद्धां संगच्छेत् पंचमांगप्रपूर्तये ।।१७३२॥

पंचमेन विना देवी क्रुद्धा शापं प्रयच्छित ।

एवं संशोध्य द्रव्याग्णि स्वे स्वे कर्माण् योजयेत् ।।१७३३॥इति।

कालीकुले श्रीकुले वा मनाग् भेदोऽस्ति श्रीकुले ।

कलको चैव श्रीपात्रे तद्भेदं विलिखाम्यश्र ।।१६३४॥

यच्च श्रीललिताविलासे, कुलाएाँवे च-

यक्षकर्वममायाद्यपूर्णागत्वेन कल्पयेत् ।
तत् पंकलिप्तवामाग्रभूतले मंडलं लिखेत् ।।१७३५।।
मंडलेन विना पूजा विफला कथिता यतः ।
तस्मान्मंडलमालिख्य विधिवत् तत्र पूजयेत् ॥१७३६।।
ग्रखंडमंडलाकारं विश्वं व्याप्य व्यवस्थितम् ।
ग्रैलोक्यं मंडितं येन मंडलं तत् सदाशिवम् ॥१७३७॥
उड्यानं चतुरस्रं स्यात् कामरूपं च वर्त्तुलम् ।
जालंधरमर्धचन्द्रं त्र्यस्रं पूर्णागिरिभंवेत् ॥१७३८॥
तल्लेखनक्रमं वक्ष्ये यथावत् परमेश्वरि ।
उपविश्यासने मंत्री जानुभ्यामवीन गतः ॥१७३६॥
वहत् करोध्वंहस्ताभ्यां जपस्तारत्रयं वृधः ।
चतुरस्रं वर्तुलं च षट्कोगं च त्रिकोग्यकम् ॥१७४०॥



म्रान्तरान्तविलिख्याथ मध्ये कामकलां लिखेत्। इत्यं मंडलमालिख्य पूजयेत् गंधपुष्पकैः ॥१७४१॥ शंखमुद्रामुद्रितेन संस्पृशन् वामपाशिना । मंडले विद्यया मध्यं त्रिमिः कूटैस्त्रिकोग्गकम् ॥१७४२॥ द्विरावृत्त्या च षट्कोर्गं षडंगैश्रतुरस्रकम्। षडासनानि षट्कोपोध्वभ्यच्याप्रादितः क्रमात् ।।१७४३।। उड्यागां कामरूपं च जालंध्रं पूर्णशैलकम्। ग्रम्यच्यं चतुरस्रादि त्र्यस्रांतं रत्नपंचकम् ॥१७४४॥ चतुर्दिक्षु च मध्ये च प्रादिक्षण्येन पूजयेत्। गगनं च तथा स्वर्गं मत्यं पातालमेव च ॥१७४५॥ नागसंज्ञं स्वस्वबोजमुखं ङे हृदयान्तकम्। श्रनेन मंडलं पूज्य गंधपुष्पाक्षतैर्वुधः ।।१७४६।। श्रयाघारं समादाय क्षालितं मूलविद्यया। त्रितारवाग्भवांते श्रोमहात्रिपुरशब्दतः ॥१७४७॥ सुंदर्याञ्च महाशब्दं कलशाधारिमत्यथ । स्थापयामीति संस्थाप्य तत्राधारं प्रपूजयेत् ॥१७४८॥ वाग्भवांते वाक्कूटांते।

विन्हिर्दीर्घत्रयेन्द्राढ्यो रमांते लवरानिलः । वामकर्गोन्दुसंयुक्तो रः सेन्दुरिनमंडला ॥१७४९॥ वायुधर्मप्रददशकलात्मने समन्वितः । वाग्बीनं कलशाधारा पवनो नमसान्वितः ॥१७५०॥ तारादिरीरितो मंत्रो भाजनाधारपूजने । प्रादक्षिण्याद् दशाग्नेयीस्तदुपर्यंचयेत् कलाः ॥१७५१॥ सर्बिदु यादिवर्गाद्या घूम्राद्याश्च समीरिताः । कला श्रीपाद्वमां पूज्यामीति सदमुच्चरेत् ॥१९७५ र विकार्याः नाम्नामंते ततस्तासां प्राग्तस्थापनमाचरेत् ।
ततः स्वर्गादिजं पात्रं क्षालयेत् वामपाग्निना ॥१७५३॥
हं हुं ब्रह्मांडशब्दांते चषकायाग्निवल्लभा ।
कलशक्षालने मंत्रो महेशि परिकीतितः ॥१७५४॥
वाग्भवांते दोपिनीति प्रोक्ता ज्वालाथ मालिनि ।
व्योभषष्ठस्वराधेन्दु हंसश्चास्त्रान्तिको मनुः ॥१७५५॥
मायाबीजांतिकः प्रोक्तः पात्राग्गां शोधने मतः ।
मंत्रमेनं न्यसेत् कुंमे मुद्रया योनिसंज्ञया ॥१७५६॥
कवचेनावगुंठ्याथ विन्यस्य प्रग्वं ततः ।
मायां हूं क्षुं हं च सं च नमोऽन्तं तत्र विन्यसेत् ॥१७५७॥
ग्रादाय कलशं चंद्रचंदनाद्यैःसुष्ट्रिपतम् ।
त्रितारमध्यकूटांते श्रीमहात्रिपुरेति च ॥१७५६॥

सुंदर्याः पदमुद्वार्य महाकलशिमत्यथ ।
स्थापयामीति संस्थाप्य तिस्मन्नाधारके ततः ।।१७५६।।
वियद्दीर्घत्रयेन्द्वाद्ध्यं ह म मां स वरानिलः ।
स्रिर्घीशिंबदुसंयुक्तः सेंदुः खं सूर्यमंडला ।।१७६०।।
वायुर्वसुप्रदांते स्याद् द्वादशान्ते कलात्मने ।

मन्मथं कलशायेति नमोंतः प्रग्रवादिकः ॥१७६१॥

श्रनेन पूज्य कलशं कला द्वादश पूजयेत्। तिपत्याद्याः कभारणीदि विद्वाद्याः पूर्ववर्त्मना ॥१७६२॥

त्रितारशक्तिकूटांते महात्रिपुरशब्दतः । सुंदर्याः कलशं चेति पूरयामीति चोच्चरत् । महाकलशतः तीर्थं सकृदभ्यच्यं यत्नतः ॥१७६३॥

चंद्रचंदनकस्तूरीसुमनोभिः सुवासितम् । मूलविद्यां समुच्चार्यं तदन्ते मातृकां जपन् ॥१७६४॥ विलोमां सावधानेन स्पंदस्कंनादिवजितम् । तेनासवेन कलशं पूरयेत् पुष्पगंधिना ॥१७६५॥ द्वितीयस्पृष्टधारेगा तत्त्वमुद्रोद्धृतेन च। पात्रस्पंदेऽमृतस्कन्ने प्रग्रावं शतधा जपेत् ।।१७६६।। मंत्रे गानेन देवेशि तज्जलं पूरयेत् ततः । भुगुर्दीर्घत्रयेन्द्वाढ्यः समलं वाग्निवायवः ॥१७६७॥ ग्रर्घीशेन्द्रयुतः सेन्दु हंसांते सोममंडला । यकामप्रदर्षोडान्ते शकलात्मा तु ङेयुतः ॥१७६८॥ भृगुर्मनुविसर्गाढ्यो ङेयुतं कलशामृतम् । तारादि हृदयान्तोऽयं मनुः पानीयपूजने ॥१७६६॥ तत्र माषप्रमारां तु मांसादित्रितयं क्षिपेत् । वाग्मवं कूटमुच्चार्य पुष्पेनालोड्य तज्जलम् ॥१७७०॥ बहिनिरस्य तत्पुष्पमष्टगंघं विनिःक्षिपेत्। मध्यकूटेन कुसुमं कुलसंज्ञं विनिःक्षिपेत् ।।१७७१।। दर्शयेद् गालिनीं मुद्रां तार्तीयेन समंततः। चांद्रीः कलाः स्वराद्यास्तु यजेत् षोडश तज्जले ।।१७७२।। दशदोषात् निरस्याथ सहजात् कलशामृतात्। संस्कुर्यादुक्तविधिना पूजाहं तज्जलं भवेत्।।१७७३।। व्योमेन्द्रकांतरौ च्रानिभिटीशाक्र्रनादकै:। उद्धत्य कूटमेवैतन् नामादौ योजयेत् पृथक् ।।१७७४।। पथिकांते देवताभ्यो ग्रामचंडालिनी ततः। क्रोधचंडालिनी पश्चाद् दृष्टिचंडालिनी ततः ।।१७७५।। स्यर्शचंडालिनी चाय मृष्टिचंडालिनीत्यय। एवं घटांते पवनवेधांते निर्दिवेति च। सर्वजनहिन्द्रसमर्ववोद्यान्ते पशुपरकाश्च ।।१७७१ना by eGangotri

हुं फट् स्वाहांतगा मंत्राः नमोंताः परिकीर्तिताः । पूजयेदमृते क्र्रहष्ट्या चालोकयंस्ततः ॥१७७७॥ कल्पिते चतुरस्रे तु गंधपुष्पाक्षतैः प्रिये । एवं निरस्य तहोषान् शुक्रशापं विमोचयेत् ।।१७७८।। शुक्रशापात् सुरापेया जाता भुवि द्विजैः सुरैः। षड्दीर्घस्वरसंभिन्नं ककारमुच्चरेत् ततः ॥१७७६॥ तोयमक्षियतं सृष्टिः मानवाद्याग्निरस्थि च। सद्ययुक्तं ततः पीता रतिरक्षिसमन्विता ॥१७८०॥ निवृत्तिश्र क्षुधायुक्ता सुरूपा तोयमक्षियुक। क्रोधीशोऽनंतसंयुक्तोऽनंताढ्यो वन्हिरीरितः ॥१७८१॥ दोर्घाथ केवलाव्योम दोर्घा चेति द्वयं पुनः । वन्हिजायेति मंत्रोऽयं त्रिरेतेनाभिमंत्रयेत् ॥१७५२॥ स्वादिष्टयादिभिः पूर्वमृग्भिः पंचिभरायतः । विष्णुर्योनित्रयेगीव त्रिमिष्टादित्रयेगा च ॥१७८३॥ इमं मे च इति द्वाभ्यां तामंदेत्येकया तथा। श्रोगामेकेति चेकेन शुक्रशापाद् विमोचयेत् ॥१७८४॥ एभिः सकृत् सकृत्मंत्रैर्जलं तदिभाषंत्रयेत्। तेन पूर्त भवेत् तोयं शुक्रशापाद् विमुच्यते ॥१७८५॥ षड्दीर्घस्वरसंभिन्नं जलस्थं व्योम चोद्धरेत्। श्रीकंठेशो महाकालो रेचिकाढ्यथ पूतना ॥१७८६॥ युक्ता च ज्योत्स्नया सप्ताष्टमौ वर्गो च पूतना। सद्ययुक्ता च निद्रास्था ह्लादिनी जलिंसिटिकौ ।।१७८७।। सप्तमादित्रयं चास्यि सजलं विह्नरक्षयुक्। सप्तमादिद्वयं चाषाढीशांबु विस्वरोऽनलः ॥१७८८॥ पीता पूषान्विता काकोदरी सनयना ततः। सप्ताष्ट्रमौ तथाग्निश्च सकेशो लोहितोऽक्षियुक । काकोदरी सनयना सप्तमाष्ट्रमको पुनः ॥१७८६॥

स बिदुः पूतनाइवेतानंताग्निस्थांवुमारुतः। पुनरेतत् त्रयं चास्थिकर्गायुक् रेवतीगतः ।।१७६०।। क्रोबोशोऽस्थिप्रतिष्ठाढ्यं लोहितोऽनंतसंयुतः। पूतना विस्वरा प्रोक्ता भृगुरुक्तः सकर्गकः ॥१७६१॥ धकारः स्यादनन्ताढ्यो बिंदुमान् सद्ययुग् विषम्। कूर्मक्च पवनक्चेतत् त्रयं भूयो विषं ततः ।।१७६२।। सद्यान्वितं सद्दक्क्मं: क्रोधोशो दीर्घसंयुतः। पवनो भौतिकेशाढ्यो हृदयं प्रग्रावस्ततः ।।१७६३।। माया स्थिराघींशयुता सिंबदुः सर्गवान् भृगुः। सुंदरीपावकस्येति विद्याशापविमोचिनी ।।१७६४।। सिद्धां रक्तां च शुक्लां च पूजयेदुत्पलामि । चतुरस्रे चतुर्दिक्षु प्रादिक्षण्येन चाग्रतः ।।१७९४।। ततो मंडलमध्ये च त्रिकोरां परिभावयेत्। श्रकथादित्रिरेखाढ्यं विद्याकूटत्रयान्वितम् ।।१७६६।। त्रिषु कोएोषु मध्यस्थिबदौ कामकलान्वितम् । हक्षो तत्पाद्वयो बिन्दुयुक्तौ तत् पृष्ठके पुनः ।।१७६७।। लकारं बिंदुसिहतं हंसवर्गा च पाइवंयोः। विमाव्य तत्र चावाह्य यजेदानंदभैरवम् ॥१७६८॥ सूर्यकोटिप्रतीकाशं चंद्रकोटिसमप्रमम् । श्रष्टादशभुजं देवं पंचवक्त्रं त्रिलोचनम् ।।१७६६।। वृषारूढं नीलकंठं सर्वाभरणभूषितम् । कपालखट्वांगधरं घंटाडमख्वादिनम् ॥१८००॥ पाशांकुशंघरं देवं गदामुसलधारिएएस् । लोहितं देवदेवेशं ध्यात्वा साधकसत्तमः ।।१८०१।। तस्योत्संगे सुरां देवीं चंद्रकोटिसमप्रमाम् । हिमकु देख्यातलां भां जनक्वां किलोजनाम् Du १८ ७ २०१० gotri

श्रष्टादशभुजायुक्तां सर्वायुधकरोद्यताम् । प्रहसंतीं विशालाक्षीं देवदेवस्य संमुखीम् ।।१८०३।। एवं ध्यात्वा देवदेव्यौ गंधाक्षतसूमैर्यजेत । कपिलाभृगुसंवर्तविषमूजलवन्हिमिः ।।१८०४।। सवायुवामकर्गेन्दुनादैः कूटं समुद्धरेत् । म्रानंदभैरवायाथ वौषडित्यनयोस्त्रिशः ।।१८०५।। नामश्रीसप्तवर्रोश्च संपूज्याथ प्रतपंयेत्। तर्पयामीति तत्पात्रविप्रुड्मि र्वामपाणिना ।।१८०६।। ग्रनामिकांगुष्ठधृतद्वितीयखंडसंश्रितैः। प्रोक्तकूटं तु भृग्वाद्यमन्ते वामाक्षिसंयुतम् ॥१८०७॥ कूटं कला तु तन्नाम्ना चतुर्थ्यंतेन साधकः। वौषट्स्थाने वषडिति देवीं संपूज्य तर्पयेत् ॥१८०८॥ प्राग्वत् तं परितः पश्चादष्टदिक्षु समर्चयेत । सुरामृतौ च तरुए। उन्मनज्ञानसंज्ञकौ।।१८०६।। मुक्तिः परमकालौ चेत्यभिधानष्ट भैरवान् । श्रानंदांते भैरवाय वौषट् स्त्रीसप्तवर्णकै: ।।१८१०।। तैरेव नामिर्मिवद्वात् भैरव्ये वषडंतकः। भैरन्यष्टकमित्येवमभ्यच्यं मिथुनाष्टकम् ।।१८११।। मूलविद्यां स्मरत् वीक्ष्य तज्जलं वीक्षगाख्यया। मुद्रा या श्रीवत्साख्या तस्याः छिद्रेग वीक्षग्रम् ॥१८१२॥ म्रस्त्रमंत्रेण संप्रोक्ष्य जलं तेनेव ताडयेत्। कुशैस्त्रिर्वर्मगाम्युक्ष्य वामनाड्या प्रवेश्य तत् ।।१८१३।। नीत्वा ब्रह्मविलं देवि तत्रस्थं चंद्रमंडलम् । पीयूषसारेग्वेक्यं तद् ध्यात्वा देवि च तन्त्रयम्।।१८१४।। (१) राजदन्तविलात् नेत्रमार्गात् निःसार्यं तं घटम् । पूरियत्वा तु संरुद्धच संरोधिन्या तु मुद्रया ।।१८१५।।

⁽१) राजदन्तेति याज्ञवल्क्येनोक्तम् । शिवयोगे-'षष्ठं च घंटिकालिंगमूलं तद् राजदन्तकम् ।'

कवचेनावगुंठ्याथ चावगुंठनमुद्रया । वं बीजेनामृतीकृत्य मुद्रया घेनुसंज्ञया ।।१८१६।। परमामृततां कुर्यात् परमीकरणाह्वया । मुद्रया तत्र संचित्य ललितां गंथपुष्पकैः ।।१८१७।। घूपदीपादिभिः सम्यगभ्यच्याथाभिमंत्रयेत् । ग्रष्टधा विद्यया पश्चाद् विद्यया वीक्ष्य मायया ।।१८१८।। प्रगावो हृदयं निद्रा स्मृतिरंवु च कामिका। सनेत्रा स्मृतिरग्निस्था सप्रतिष्ठा सरायुतः ।।१८१६।। तोयस्थमस्थिनेत्राढ्यो वन्हिर्वारिसमान वा । सकर्गाग्निस्तुष्टियुता रतिश्च जलसूर्त्तये ।।१८२०।। अध्वींबदुग्राहिग्गीति महालक्ष्मीस्ततः परम्। जलमस्थि नेत्रयुतो वन्हिः परमधास्नि च ।।१८२१।। परमाकाशब्दांते मासुरीति पदं ततः। सोमसूर्यांग्निशब्दांते मक्षिग्गीति ततः पठेत् ।।१८२२।। श्रागच्छ्युग्मं च पुनिवशयुग्मं स्वभोग च । द्रव्यमन्ते गृह्ध गृह्ध ठद्वयान्तो महामनुः ।।१८२३।। वामांगुष्ठानामिकाभ्यां घृतेन कलशेन च। कलशाद् बिंदुमादाय द्वितोयेनोर्घ्वमुत्क्षिपेत् ।।१८२४।। ततः कलशवक्त्रं तु पात्रेग्गाच्छाद्य केनचित्। जलोद्धरणपात्रं तु सूक्ष्मं तस्योपरि न्यसेत् ।।१८२४।। तस्मिन् नमोद्यां सूक्ष्मां चानंदां शांति प्रपूजयेत्। चतुर्थ्यन्तां नमोयुक्तां गंधपुष्पाक्षतेः शिवे ।।१८२६।। न देव्युद्वासनादर्वाग् घटमेनं तु चालयेत्। चालितेऽपि जपेद् विद्यां प्रग्गवं वा शतं तथा ।।१८२७।। एवं संस्थाप्य कलशं पात्रात् संस्थापयेत् क्रमात्। शंखमधं भोगपूजावलिपात्राणि पंच च ॥१८२८॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

स्वदक्षिग्गदिवामा तं स्थापयेत् क्रमतः सुधीः। तत् क्रमं संप्रवक्ष्यामि यथावदवधारय। सामान्यार्घजलेनाथ पूर्ववत् मंडलं लिखेत् ।।१८२६॥ त्रिकोरामध्यं षट्कोरां चतुरस्रं विलिख्य च। मध्ये कामकलां लिख्य विष्टभ्य शंखमुद्रया ।।१८३०।। त्रितारादि च सर्वत्र मंत्रोद्धारः प्रकीतितः। श्रीपरांते देवतायाः विशेषार्घ्यपदात् पुनः ।।१८३१।। मंडलाय नमोन्तोऽयं मंत्रो मंडलपूजने । प्रगावादि नमोऽन्तेन मध्यं मूलेन पूज्य च ।।१८३२।। त्रिकोर्गं च त्रिभिः कूटैर्वामदक्षाग्रसंस्थितैः। द्विरावृत्त्या च षट्कोरां प्रादक्षिण्येन स्वाग्रतः ।।१८३३।। चतुरस्रे च स्वाग्रादिमध्यान्तं रत्नपंचकम्। गगनं च तथा स्वर्गं मत्यं पातालमेव च ।।१८३४।। नागं रत्नांतगं स्वस्वबोजाढ्यं ङेनमोऽन्वितम्। एवमभ्यच्यं षट्कोणे स्वाग्रादिदक्षतः पुनः ।।१८३४।। षडासनानि च यजेद् गंधपुष्पादिभिः प्रिये। सुधार्गावासनं पोताम्बुजासनमतः परम् ।।१८३६।। श्रात्मासनं सर्वचक्रासनं सर्वमंत्रासनम्। साध्यसिद्धासनं पूज्य पीठानि च यजेत् क्रमात् ॥१८३७॥ उड्यानं चतुरस्रेऽर्चेत् वृत्ते च कामरूपकम् । जालंघरं च षट्कोणे त्रिकोणे पूर्णशैलकम् ॥१८३८॥ चतुर्थ्यन्तनमोऽन्तेन त्रिताराद्येन पूजयेत्। यदि शांभवदीक्षावान् स्वाग्रादिचतुरस्रके ॥१८३६॥ मध्यान्तं पुटितैः पंचप्रग्रवेश्वेव पूजयेत्।

त्रितारं मूलमुच्चार्यं सर्वशक्तिमयीति च ॥१८४०॥

श्रीपरांते देवता च षष्ट्यंता परिकीर्तिता । पीठचतुष्टयात्मान्ते कायेति मंडलाय हृत् ।।१८४१।।

समस्तमंडलं चैतेनाम्यच्यं मूलयुच्चरत् । प्रक्षाल्य च तथाधारं मंत्रमेनं समुच्चरेत् । चतुस्तारं तदन्ते श्रीषष्ट्यंता परदेवता ॥१८४२॥

विशेषार्घ्यपात्रशब्दादाधारायनमस्तथा । ग्राधारमेतेन स्थाप्य पूजयेत् मनुनामुना ॥१८४३॥

मं वन्हिमंडलायांते धर्मप्रदपदात् पुनः ।

ङेऽन्तो दशकलात्माहृद् वाक्कूटाद्यः स्मृतो मनुः ॥१८४४॥

ततइच स्वाग्रमारभ्य प्रादक्षिण्येन यादिकाः।

श्रर्चयेद्दश पूर्वोक्ताः प्राग्णस्थापनपूर्वकाः ॥१८४५॥

संपूज्य क्षालयेत् पात्रमस्त्रे ए च यथाभवम् । श्राचारे स्थापयेत् पात्रं मंत्रमेनं समुच्चरत् । ११८४६।

चतुस्तारं च श्रीशब्दात् षष्ठ्यंता परदेवता । विशेषार्घ्यपात्रमथ स्थापयामीति मंत्रतः ॥१८४७॥

ततो द्वितीयकूटान्ते ह्यमर्कमंडलाय च । स्रथंप्रदद्वादशान्ते कलात्मा ङेयुतश्च श्री ।।१८४८।।

परान्ते देवतायाश्च विशेषार्घ्यपदात् पुनः । पात्राय हृच्चमंत्रेग् संपूज्य पात्रमाध्यके ।।१८४६।।

पूर्ववत् मंडलं ध्यात्वा पंचरत्नानि पूज्य च । तथैव पंचप्रगावैरभ्यच्यं भास्करीः कलाः ॥१८५०॥

प्राग्स्थापनपूर्वाञ्च बृत्ताकारेग् स्वाग्रतः । प्राविक्षण्यक्रमात् पूज्यास्तिपिन्याद्याः कमादिगाः ।।१८५१।।

ठडान्ताः द्वादशाम्यच्यं कलशस्थं जलं पुनः । नीत्वोद्धरणपात्रेण मूलान्ते चैव सातकाम् छी। क्युन्धि। by eGangotri CC-0. Arutsakth R. Nagarajan Collection, Na विलोमामुच्चरत् पात्रमापूर्यं कमलं क्षिपेत् । वागुच्चरस्तत्पुष्पेरा तत्त्वमुद्राधृतेन च ।।१८४३।। पात्रस्थं जलमालोड्य तत्पुष्पं बहिरुत्क्षिपेत् । कामबीजेनाष्ट्रगंथमभावे चंदनं क्षिपेत् ।।१८४४।।

म्रष्टगंधं तु -

चंदनागरकपूरचोरकंकुमरोचनाः। जटामांसी शिलारसात्मकमिति।।१८५५॥ स्रालोडयेत् त्रिधा तत्त्वं विद्ययामृतसंज्ञया । गालिनीं दर्शयेन मुद्रां शक्तित्रीजं समुच्चरन् ।।१८५६॥ त्रितारशक्तिकूटांते सिबन्दं कर्णमुच्चरेत्। सोमांते मंडलायेति कामप्रद च षोडश ॥१८५७॥ कलात्मने श्रोशब्दान्ते षष्ठ्यंता परदेवता । विशेषार्घ्यामृतायेति नमोऽन्तेन तमर्चयेत् ॥१८५८॥ पूर्वोक्तं मंडलं तत्र विभाव्याभ्यच्यं पूर्ववत् । तथैव पंचप्रगावैः शांमवीयैश्च पूजयेत् ।।१८४६।। ततः षोडश सोमस्य समावाह्य कलास्तथा। पूजयेत् संस्थितप्रागावृत्ताकारेग स्वाग्रतः ॥१८६०॥ प्रादक्षिण्येन संपूज्य त्रिकोर्गे पूर्वमाविते । श्रकथादित्रिरेखं च भाव्याग्रकोरातो यजेत् ।।१८६१।। कूटत्रयं मूलमनोबिदौ कामकलां यजेत्। पार्श्वयोबिन्द्संयुक्तौ हक्षौ तत्पृष्ठसंस्थितम् ।।१८६२।। लकारं पाद्यवयोहंसवर्णी तस्य विभावयेत्। पुष्पाक्षतयूतां योनिमुद्रां बध्वाय साधकः ।।१८६३।। गुरूपदिष्टमार्गेग मूलाधाराच्च कुंडलीम्। षट्चक्रभेदक्रमतः सहस्रारं नयेत् ततः ।।१८६४।। चिच्चन्द्रमंडलंस्थेन सामरस्यं विभाव्य च। शिवेन च तयोर्जातामानंदामृतनिक्षेरीम् ॥१८६५॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri संचित्य राजदंतविवरात् नयनवत्मेना । निःमृत्य योनिसंबद्धकरेगानोय तां पुनः ॥१८६६॥ त्रितारमूलविद्यान्ते मंत्रमेनं समुच्चरेत्। ब्रह्मांडखंडसंभूतमशेषरससंभृतम् ॥१८६७॥ श्रापुरितं महापात्रं पीयूषरसमावह । वागुभवं पावनो भूमिः पुष्टिबिदुसमन्विता ।।१८६८।। स्थितिः स पावकानुग्रहार्थेन्दुसमलंकृता । स्थिराघींशेन्दुसंयुक्ता क्वेता बिन्दुयुगान्विता ॥१८६६॥ ग्रथामृते पदं ब्रूयात् तत् पश्चादमृतोद्भवे । ग्रथामृतेश्वरियुता पश्चादमृतवर्षिणो ॥१८७०॥ श्रमृतं श्रावययुगं द्विठान्तो द्रव्यशुद्धिकृत् । श्रमृतेशोमनुः प्रोक्तः पंचित्रशद्भिरक्षरैः ॥१८७१॥ भ्रनेनार्घ्यामृते पुष्पं निक्षिप्यामृतमुच्चरत्। धेनुमुद्रां प्रदर्श्याथ त्रितारमष्टवर्शकम् ॥१८७२॥ प्रग्वं च तथा माया हंसः सोऽहं शुचिप्रिया। श्रनेनाष्टार्शमंत्रेग तत्त्वं त्रिरिममंत्र्य च ॥१८७३॥ मातृकां बिंदुरहितां पात्रे त्रिःसंजपेत् पुनः । मूलतृतीयकूटेन दशघा चाभिमंत्रयेत् ॥१८७४॥ तथा भेरवभेरव्योः कूटमुच्चार्य पूजयेत्। मियुनं वरुगस्याथ स्वस्वबोजयुतं यजेत् ॥१८७५॥ प्रासादं च परायुक्तं मनुबिदुविभूषितस् । एतद् वरुएाबीजं स्यात् वारुण्याश्च परादिकस्। बालामंत्रेण नित्यानां मंत्रेरप्यमिमंत्रयेत् ॥१८७६॥

सकृत् सकृदयोर्ध्वाम्नायी चेद् बोजेन मंत्रयेत् ।

पराश्रासादसंत्रोत त्रशासादम्यस्य त्रशासादम्य प्रशास १९८० by eGangotri

विद्यया कुलयोगिन्या मंत्रयेच्चरणोक्षितः । परानुत्तरविद्यास्थस्तथा शक्त्याभिमंत्रयेत् ॥१८७८॥

शक्तचा सौरिति शक्तिबीजेन।

षडन्वये शांभवे च दोक्षितो विद्यया तया।

त्रि:त्रिस्समित्रमंत्र्याथ निर्वाणाघोरदीक्षितः ॥१८७६॥

तत् तत् पादुकयामंत्र्य ततस्तारकलां यजेत्।

दशमृष्ट्यादिका हेतुमध्ये च ब्रह्मागः कलाः ॥१८८०॥

समावाह्य स्थितप्रागाः क्रमशः पूजयेच्च ताः।

सृष्टिऋद्धिः स्मृतिर्मेघा कांतिर्लक्ष्मी द्युतिः स्थिरा ।।१८८१।।

स्थितः सिद्धिरिति प्रोक्ता कचवर्गकला दश।

म्रकारप्रभवाइचैताः पूज्येतां च ऋचां जपेत् ।।१८८२।।

हंसः शुचिषदिति च ततो विष्णुकला यजेत्।

उकारात्स्थितये जाताः जराद्यायाः प्रकीर्तिताः ।।१८८३।।

जरा च पालिनी शांतिरीक्वरी रतिकामिके।

वरदा ह्लादिनी प्रीतिः दीर्घाःस्युष्टतवर्गजाः ।।१८८४।।

एताः स्मृत्वा प्रतद्विष्णुरित्यृचं प्रयजेत् पुनः ।

मकारप्रभवादुद्राज्जाताः संहृतये कलाः ।।१८८५।।

स्मर्गायां जले तस्मिन् तीक्ष्णाद्याः क्रमशक्च ताः ।

तीक्ष्णा रौद्री भया निद्रा तंद्रा क्षुत् क्रोधिनी क्रिया ।।१८८६।।

उत्कारी मृत्युरित्युक्ता पयवर्गकलाः दश ।

सकृदन्ते त्र्यंवकं च प्रजप्य च पुनर्यजेत् । ११८८७।।

बिंदोरीश्वरसंभूतास्तिरोधाना पयाः कलाः।

पीताद्यास्ताश्चतस्रस्तु प्राग्गस्थापनपूर्वकाः ।।१८८८।।

पीता क्वेतारुणा चैव श्रसिता च षवर्गजाः ।

ततस्तत्पदनाम्नीं च ऋचां सकृदनुच्चरेत् ।।१८८१।।

ततो नादान् निवृत्त्याद्याः सदाशिवसमुद्भवाः । पात्रस्योपरि संपूज्याः षोडशानुग्रहात्मिकाः ॥१८६०॥ निवृत्तिश्च प्रतिष्ठा च विद्या शांतिः कुलेश्वरि । इंधिका दीपिका चापि रेचिका मोचिका परा ॥१८६१॥ सूक्ष्मा सूक्ष्मामृता ज्ञानामृता चाप्यायिनो पुनः । व्यापिनी व्योमरूपा च षोडश स्वरजाः कताः ॥१८६२॥ प्रजप्य विष्णुर्योनि तु जिपत्वा ऋक्त्रयां जपेत्। श्रखंडैकरसानंदां वाग्भवाद्यां ततो जपेत् ॥१८६३॥ कामाद्यामकुलस्थां तु शक्तिबीजादिकां पुनः। तद्र्पिण्यैकरस्यां च जिपत्वा प्रजपेत् पुनः ॥१८६४॥ श्रमृतेशीं पंचित्रशदर्गां वारत्रयं तथा। वाग्भवं वदयुग्मं च वाग्वादिनि च वाग्भवम् ॥१८६४॥ कामराजं च विलन्ने च क्लेदिनि क्लेदयेति च। महाक्षोभं कुरुयुगं कामराजमतः परम् ॥१८६६॥ तार्तीयं मोक्षमंते च कुरुयुग्मं वदेत् ततः । स्यात् प्रसादपराचान्ते पराप्रासादसंज्ञकम् ॥१८६७॥ दीपिनी मनुरित्युक्तः सप्तित्रशद्भिरक्षरैः। श्रनेन पंचधामंत्र्य मूलेनाष्टाभिमंत्र्य च ॥१८६८॥ योनिघेनुमहायोनित्रिशूलकमलाभिधाः । क्षोमिण्यादि नव प्रोक्ताः पाशाद्याश्चतुरः स्मृताः ॥१८६६॥ श्रष्टादशेति संदश्यं मुद्रास्तं प्रणमेत् तया। प्राममुद्रया पश्चात्पुष्पेगोद्धृत्य तज्जलम् ॥१६००॥ कलशे निःक्षिपेत् तस्मात् जलमादाय संजपन् । मूलमात्मानमथ च यागवस्तूनि प्रोक्ष्य च ॥१६०१॥ श्रीपात्रादीनि पात्राणि स्थापयेदुक्तवर्त्मना। पात्राराां मंडलं पूजा सामान्यार्घवदीरितम् ॥१६०२॥

महाकालसंहितायां विशेष:-

श्रीपात्रस्य च ये मंत्रास्ते मंत्राः सर्वपात्रगाः ।
श्रीपात्रस्य क्रिया या सा क्रिया सा सर्वपात्रगा ॥१६०३॥
ताहक् क्रियाद्यशक्तौ तु सामान्येनापि पूजयेत् ।
शक्तेरावाहनं शक्तौ गुरोरपि गुरौ तथा ॥१६०४॥
परिवारान् भोगपात्रे वीरे त्वावरणादिकाः ।
कौलिकान् कुलपात्रे च समावाह्य यजेच्छनैः ॥१६०५॥
श्रापूर्य कलशस्थेन वारिणा मूलमुच्चरन् ।
अग्निब्रह्मे न्दुसब्रह्म विष्णुख्देशसिच्छवैः ॥१६०६॥
पंचिग्मश्च त्रिभिश्चैवामृतेशीदीपिनीजपैः ।
एकद्वित्रचतुःपंचद्विश्चतुर्मिरथेश्वरि ॥१६०७॥
तत् तत् पात्रं च संस्पृष्टा मंत्रयेदेवमर्चकः ।
धेनुं योनिमथादश्यविगुठ्य बीजमुच्चरन् ॥१६०६॥
तत् तद् योग्यं च पात्रं स्यात् तत् तत् पूजासु योजयेत् ॥१६०६॥
तत् तच्च प्रोक्षणीपात्रात् परतः स्थापयेत् क्रमात् ।
तत्तन्मंत्रोणाभिमंत्र्य प्रणमेद् योनिमुद्रया ॥१६१०॥इति।

इति श्रीमदागमरहस्ये सत्संग्रहे कलशादिपंचसंस्कारो नामाष्टमः पटलः । ग्रादितः षट्त्रिशत् ३६॥

ग्रथ नवमः पटलः।

समर्थोऽन्यानि पात्रािशः क्रमात् संस्थापयेद् यथा। कुलावल्याम्—

मध्य भीवे प्रोति प्रोति प्रोति सम्बद्धाः स

नवांतकं महाकल्पं तथा सप्तांतकं मतम् ।
मध्यमं पंचकं कल्पं कनिष्ठं च त्रिकं मतम् ।।१६११।।
श्रीदेवीगुरुभोगानां पात्रं तु त्रितयं मतम् ।
योगिनीवलिपात्राभ्यां पंचकं समुदोरितम् ।।१६१२।।
QC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

See 3

शक्तिवीरयुतं चैतत् सप्तांतकमिहोच्यते। पाद्याचमनपात्राभ्यां नवमं कल्पमुत्तमम् ।।१६१३।। घटश्रीपात्रयोर्मध्ये गुरुपात्रक्रमेरा च। स्थापयेत् सर्वपात्राणि संप्रदायानुरोधतः ॥१६१४॥ वामावर्त्तक्रमेर्गंव गौडे संस्थापनं सतस्। वक्षावर्त्तेन काश्मीरे केरले वर्त्तुलेन च ॥१६१५॥ पूर्वकेरलके दक्षमुत्तरे वामवर्त्तुलम्। संप्रदायविधानेन कर्ताव्यं च महेश्वरि ॥१६१६॥ घटांते श्रीगुरोः पात्रं भोगपात्रं ततः परम्। शक्तिपात्रं तदन्ते तु योगिनोनां तदन्तके ॥१६१७॥ वीरपात्रं तदन्ते तु विलिपात्रमतः परम् । पाद्याचमनयोइचेव पात्रं नवकमीइवरि । गौडे सर्वासु विद्यासु कालीकुलवदाचरेत् ॥१९१८॥

कालीकुले तु विशेषार्घ्यस्यंव श्रीपात्रसंज्ञा ।

काइमीरे सर्वविद्यासु श्रीकुलोक्तवदीरितम्। सामान्यं च विशेषाच्यं श्रीपात्रं गुरुपात्रकम् ॥१६१६॥इति। केरले पूर्वके ज्ञेयं क्रमं श्रीकुलसंज्ञकम्। उत्तरे केरले कालीकुलक्रममुदीरितम् ।।१६२०।।

केरले च देवताग्रे स्थापितपात्रस्यैव श्रीपात्रसंज्ञेति ।

एवं पात्राणि संस्थाप्य स्वे स्वे कर्मणि योजयेत्। श्रीपात्रस्याधिकारी तु स्वयमेव न चेतरः ।।१६२१।। शक्त स्तु शक्तिपात्रं स्याद् गुरुपात्रं गुरोरिप । भोगपात्रं सुतादीनां शिष्याएां वीरपात्रकस्। कुलपात्रं कौलिकानां निर्णयः प्रोक्त ईहराः ॥१९२२॥

यच्च वृहत् तंत्रराजे कौलसर्वस्वे च-

विशेषार्घ्येग दिव्योघात् गुरुपात्राद् गुरू स्ततः। पुरुषं भैरवेगोव श्रीपाञेगा महेरवरीम ॥११६ हार्डे Led by eGangotri

श्रानन्दभैरवं देवं भैरवेगा प्रतर्पयेत्। वलिना तु गएोशादीन् योगिन्या योगिनीं शिवे ॥१६२४॥ वीरपाञेगा वीरांश्च शक्त्या ब्राह्मचादि मातरम्। शक्तींश्चैव तथा भोगपात्रोगात्मचतुष्टयम् ।।१६२४।। स्वमंत्रींषं तथा त्र्यौघात तथैव निजपादकाम् । शुद्धद्रव्येगा तेनापि गंधपुष्पयूतैरपि ॥१६२६॥ न्यासोक्तमूलमंत्रीश्च स्वात्मानं पुज्य च प्रिये । मूर्घिन श्रीगुरुपङ्क्ति च मूलाधारे स्वपादुकाम् ॥१६२७॥ दिव्यौघे चादिनाथइच तच्छक्तिइच सदाशिवः। तत्पत्नीचेश्वरस्तस्य भार्यारुद्रश्च तद्वधः ॥१६२८॥ विष्णुश्च तत् प्रिया ब्रह्मा तत् कांता द्वादशेरितः। सिद्धौघे सनकश्चैव सनंदनसनातनौ । सनत्कुमारश्च सनत्सुजातश्च ऋभुक्षकः ।। १६२६।। दत्तात्रयो रैवतको वामदेवस्ततः परम्। ततो व्यासः शुकश्चापि एकादश समीरिताः ॥१६३०॥ मानवौघे नृसिंहश्च महेशो मास्करस्तथा। महेन्द्रो माधवो विष्णुः षडेते परिकीर्तिताः ॥१६३१॥ नामान्ते योजयेद् देवि दिन्यौघे परमं शिवम् । महाशिवं च सिद्धौघे मानवौघे सदाशिवम् ॥१६३२॥ हतपद्मे स्वेष्टदेवीं च सांगां सावररणां तथा । मुलाधारे तथेवात्मपादुकां पूज्य तर्पयेत् ।।१६३३।। एषः पूर्गाभिषिक्तस्य क्रमस्त्वन्यस्य चोच्यते । कल्पोक्तीघक्रमं स्वं स्वं देवं भैरवभैरवीम् ॥१६३४॥ पुज्य संतर्पयेद् देवि ततस्तत्त्वचतुष्टयम् । मंत्रयोगेन स्वीकृत्य स्मृत्वा ऋष्यादिकं पुनः ॥१६३५॥

श्रागमरहस्ये ध्यात्वा देवीं स्वमात्मानं विचित्य विगतैनसम् । शिवरूपं निजं देवं प्रार्थ्यं पूजां समारभेत् ।।१६३६।। श्रादौ पीठं समभ्यच्यं देवीमावाहयेत् प्रिये । महापद्मवनान्तस्थे देवेशीत्यादिमंत्रकैः ॥१६३७॥ विधानेनाचयेत् सम्यक् षोडशैरपचारकै:। सांगां सावरणां देवीं पूज्य संतर्प्य साधकः ॥१६३८॥ देवता पुरतो देवि गुरुपङ्क्ति च पूजयेत्। मध्यमांगुष्ठयोगेन तर्पयेत् कुलसंतितम् ॥१६३६॥ संप्रदायक्रमेगांव पंच षड् वा वांल दिशेत्। म्रमिषिक्तो दिशेत् षट्कमितरे वलिपंचकम् ॥१६४०॥ वदुको योगिनी चैव क्षेत्रपालो गए।श्वरः। राजराजेश्वरः षष्ठस्तत् प्रकारस्त्विहोच्यते ।

सर्वमूतश्र पंचैते वलिदेवाः प्रकीतिताः ।।१९४१।।

सर्वसाधारएां त्वत्र वलिमंडलमुत्तमम्। त्रिकोएां वृत्तसं युक्तं चतुरस्रं मनोहरम् ॥१९४२॥ सामान्यार्घजलेनैतदीशानादिक्रमेगा तु। वदुकाय नमो वान्ते गांते गरापतये तथा ।।१६४३।। श्रादौ संविदुयान्तेन योगिनीभ्यो नमःस्मरेत्। क्षामन्ते क्षेत्रापालाय नमो मंत्रचतुष्टयम् ।।१९४४।। एतेमंत्री मंहेशानि मंडलानि प्रपूज्य च। सर्वविष्नविनाशाय सान्नपात्रािंग तत्र तु ॥११४५॥ स्थाप्यं तैस्तैश्र मःत्रेश्र तत् तद् वलिमथो विशेत्।

एहा हि देवीपुत्रान्ते वदुकान्ते च नाथ च ॥१९४६॥ कपिलान्ते जटामारमासुरांते त्रिनेत्र च। ज्वालामुख ततः सर्वविष्नान् नाशय नाशय ॥१६४७॥ सर्वोपचारसिंहतं वांल गृह्धपदद्वयम् ।
विद्वायावधिर्मंत्रो वदुकस्य उदाहृतः ॥१६४८॥
वदुकस्य च तर्जन्या सहांगुष्ठेन वा प्रिये ।
तत्वचैतेन मनुना योगिन्यै विलमादिशेत् ॥१६४६॥
उध्वं ब्रह्माण्डतोवान्ते दिव्यन्ते गगनेति च ।
तले भूपदमालिख्य तले चैव तु निष्कले ॥१६५०॥
वापातालेन लेवान्ते सिललादौ च वा लिखेत् ।
पवनान्ते च योर्यत्र कुत्रान्ते च स्थिता इति ॥१६५१॥
वाक्षेत्रो चैव पोठोपपोठादिषु समालिखेत् ।
चान्ते कृतपदाधूप ततो दोपादिकेन च ॥१६५२॥
प्रीता देव्यः सदानोऽन्ते शुभशब्दमुदीरयेत् ।
वल्यन्ते विधिना चैव पातु वीरेन्द्र संलिखेत् ॥१६५३॥
वंद्याश्च यां समालिख्य योगिनीभ्योऽग्निवल्लमा ।
तर्जनीमध्यमानामांगुष्ठेयोनि विधाय च ॥१६५४॥
विल्वानिधौ मद्रां योगिनीभ्यः प्रदर्शयेत ।

विलदानिवधौ मुद्रां योगिनोभ्यः प्रदर्शयेत् ।
तती विल दिशेक्चेव क्षेत्रेशाय समाहितः ।
षड्दीर्घस्वरभेदेन क्षकारं भेदयेत् प्रिये ॥१९५५॥
कवचं स्थानशब्दान्ते क्षेत्रापालेति कीर्तयेत् ।
सर्वकामान् पूरयाग्निवल्लभा क्षेत्रापो मनुः ॥१९५६॥
चामांगुष्ठानामिकाभ्यां क्षेत्रपालविलमंतः ।
एवं क्षेत्रेशमभ्यक्यं गरानाथाय वे दिशेत् ॥१९५७॥
गां गीं गूं गं समालिख्य ङेन्तो गरापितस्तथा ।
वरशब्दं द्विधादांते ततः सर्वजनं पदम् ॥१९५८॥
मे वशं चानयप्रांते ततः सर्वजनं पदम् ॥१९५८॥
सहितं विल गृह्ण गृह्ण स्वाहान्तथ मनुः प्रिये ॥१९५८॥

वामहस्तस्य मुष्टि तु बध्वा चैव तु मध्यमा ।
गजवक्राकृतिर्देवि विलमुद्रा गएोशितुः ।।१६६०।।
सर्वभूतविल दद्यादर्धान्नसिललान्वितम् ।
तारं मायां सर्वशब्दाद् विघ्नकृद्भ्यः समुच्चरेत् ।।१६६१।।
ततश्च सर्वभूतेभ्यो हुं स्वाहेतीति मंत्रतः ।
दद्याद् विल वामहस्तमुद्रया तत्त्वसंज्ञया ।
एवं पंचविल दत्वा चापोशानं ततश्चरेत् ।।१६६२।। इति ।

षड्वलिपक्षेतु विशेषः श्रीकुलार्णवे—

यावन्नो वदुके दद्यात्तावन्नव कुलेश्वरि । तृप्यंति देवताः सर्वाः स्मर्गाद् यजनादिष ।।१६६३।। वदुकादोत् यजेत् तस्माद् गंधपुष्पासवामिषै:। पश्चिमे वदुकं दद्यादुत्तरे योगिनीवलिम् ॥१६६४॥ पूर्वे भूतवींल दद्यात् क्षेत्रपालं च दक्षिए। राजराजेश्वरं मध्ये पूजयेत् कुलनायिके ॥१६६५॥ श्रंगुष्ठानामिकाभ्यां तु वदुकस्य वलिः स्मृतः। तर्जनीमध्यमानामांगुष्ठैः स्याद् योगिनीवलिः ॥१६६६॥ श्रंगुलीभिश्र सर्वाभिक्तो मूतवलिः प्रिये । श्रंगुष्ठातर्जनीभ्यां तु क्षेत्रापालवलिभवेत्। श्रंगुष्ठामध्यमाभ्यां तु राजराजेक्वरस्य च ॥१६६७॥ तान् मंत्रान् संप्रवक्ष्यामि शुपुष्व कुलनायिके । यैः समिवतमात्रीम् सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः ॥१६६८॥ तारत्रायं ततो देवीपुत्राच्च वदुकेति च । नाथान्ते कपिलजटामारमास्वरिपगल ।।१६६०॥ त्रिनेत्रोऽतिपदं पश्चाज् ज्वालामुखपदं ततः। इमां पूजां वर्ति गृह्धयुगं पावकवल्लमा ॥१६७०॥ उक्तो वदुमनुश्रतुश्रत्वारिशद्भिरक्षरैः। THEFTHE HE S विलदानेन संतुष्टो वटुकः सर्वसिद्धिदः ॥१६७१॥

शांति करोतु मे नित्यं भूतवेतालसेवितः। तारत्रयं ततः सर्वयोगिनोभ्यः पदं वदेत् ॥१६७२॥

तत् पश्चात् सर्वभूतेभ्यः सर्वभूताधिर्वात्त च ।

वंचिनीभ्यो डाकिनीभ्यः शाकिनीभ्यस्ततः परस् ॥१६७३॥

त्रैलोक्येति पदं चंव वासिनोभ्य इमां वदेत् । पूजां वाल गृह्धयुग्मं स्वाहांतो योगिनीमनुः ॥१९७४॥

कथितोऽयं कुलेशानि द्विपंचाशिद्भरक्षरैः । या काचिद् योगिनी रौद्रा सौम्या घोरतरा परा ।।१९७५।।

खेचरी भूचरी व्योमचरी प्रीतास्तु मे सदा । तारत्रयं वदेत् सर्वभूतेभ्यः सर्व एव च ।।१९७६।।

पश्चाद् भूतपितभ्यो हृदुक्तः सप्तदशाक्षरः।

सूता ये विविधाकारा दिव्यभौमांतरिक्षगाः ।।१६७७।।

पातालतलसंस्थाक्च शिवयोगेन भाविताः।

ध्रुवाद्याः सत्यसंधाश्च इंद्राद्याश्च व्यवस्थिताः ।।१६७८।।

तृप्यन्तु प्रीतमनसो भूता गृह्धन्त्वमं वलिम् ।

तारत्रयं वदेद् देवि युग्मं देवीपदं ततः ।।१६७६।।

पुत्र वदुकनाथाय पश्चादुच्छिष्टहारिएो । गृह्णयुग्मं क्षपराकक्षेत्रपालपदं ततः ।

सर्वविष्नान् पदं पश्चा न्नाशयद्वितयं पुनः ॥१६८०॥

सर्वोपचारसहितामिमां पूजां वर्ति वदेत् ।

गृह्ण युग्मं द्विठान्तोऽयं क्षेत्रपालमनुः प्रिये ।।१६८१।।

चतुःषष्ट्यक्षरैः प्रोक्तः सर्वेसिद्धिप्रदायकः । योऽस्मिन् क्षेत्रो निवासी च क्षेत्रपालस्य किंकरः ।।१६८२।।

त्रीतोऽयं विलदानेन सर्वरक्षां करोतु मे । तारत्रयं वदेदाद्यं श्रीप्रसादपरामनुः ॥१६८३॥ ह्रां ह्रीं ह्रूं च युगांताय भैरवाधिष्ठिताय च । स्रक्षोम्यानंदतत्पश्चादुदयाभीष्टतः परम् ।।१६८४।।

सिद्धचर्यं पदमाभाष्य पश्चादवतरद्वयम् । क्षेत्रपालपदं पश्चान् महाशस्त्रपदं ततः ।।१६८५।। वदेव वदकनाथेति देवीपत्रपदं ततः ।

वदेद् वदुकनाथेति देवीपुत्रपदं ततः । मातृपुत्रपदं पश्चात् कुलपुत्रपदं वदेत् ॥१६८६॥ सिद्धिपुत्रपदं चास्मित् स्थानाधिपतये ततः । ग्रस्मित् ग्रामाधिपतयेऽस्मित् देशाधिपतये ततः ॥१६८७॥

मेघनादपदं पश्चात् प्रचंडोग्रपदं वदेत् । कपालीमोम तत्पश्चाद् भीषाोतिपदं वदेत् ॥१९८८॥ स्यात् सर्वविघ्नाधिपते इमां पूजां विल वदेत् । गृह्गायुग्मं कुरुयुगं मुरुचूर्णययुग्मकम् ॥१९८८॥

ज्वलयुक् प्रज्ज्वलयुगं सर्वविघ्नान्निवारय । नाशयद्वितयं क्षां क्षीं तत् पश्चात् क्षूमितीरयेत् ॥१६६०॥

क्षेत्रपालाय वौषट् षट्षष्ट्य त्तरशताक्षरः। तारत्रयं वदेत् पश्चादमुकक्षेत्रपालं च ।।१६६१।।

राजराजेक्वर इमां पूजां विलमतः परम् । गृह्गायुग्मं द्विठान्तार्गौरष्टाविक्षतिभिः स्मृतः ।।१९६२।।

श्रनेन विलदानेन वदुवर्गसमिन्वतः । राजराजेश्वरो देवो मे प्रसीदतु सर्गदा ।।१६६३।।

श्रत्र स्थानक्षेत्रपालः पंचाशत्क्षेत्रपालमध्ये पूर्वाद्धीक्तानुष्ठान-

By.

कर्षाज्यग्राहिगाः कुर्यात् नवसप्ताथ पंच वा ।
रत्नेश्वर्यामिमंत्र्याथ मूलेनाप्यमिमंत्र्य च ।।१६६६।।
विधा देव्युपरि भ्राम्य कुलदीपान् निवेदयेत् ।
समस्तचक्रचक्रेशियुते देवि नवात्मिके ।।१६६७।।
श्वारात्रिकमिदं देवि गृहागा मम सिद्धये ।
कुलदीपान् प्रदर्श्याथ यथोक्तं जपमाचरेत् ।।१६६६॥
ततः समर्प्य श्रोदेव्ये पठेच्च कवचादिकम् ।
स्तत्वा नत्वा प्रगुम्येष्टदेवतां कृत्यम्पयेत् ।।१६६६॥

इतः पूर्वादिमनुना तन्मंत्रमधुनोच्यते ।
तारत्रयमितः पूर्वं प्राराखुद्धि ततः परम् ॥२०००॥
देहधर्माधिकारान्ते जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु ।
मनसा च ततो वाचा कर्मराा तत्पदं वदेत् ।
हस्ताभ्यां च ततः पद्भ्यामुदरेरा ततः परम् ॥२००१॥
शिश्ना च यत् स्मृतं पश्चाद् यदुक्तं यत् कृतं भवेत् ।
तत् सर्वं मूलदेवांते तत् समपितमस्त्वित ॥२००२॥
स्वाहांतो मनुरित्युक्तः त्रिसत्यत्यक्षरः प्रिये ।
ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि यन्मया क्रियते शिवे ॥२००३॥

तव कृत्यमिदं सर्वमिति मत्वा क्षमस्य मे ।
एवं संप्रार्थ्य देवेशों स्तृत्वा नत्वा तु मिक्ततः ।।२००४।।
प्रधानदेवतामूर्त्तः परिवाराच् समुद्वसेत् ।
ततः सावरणां देवीमुद्वसेत् स्वहृदंबुजे ।।२००४।।
शेषिकायं समर्प्यार्थ्यं स्थलं मंत्रेण शोधयेत् ।
स्याद् वाग्मवं हृदुच्छिष्टचाण्डालि तदनंतरम् ॥२००६॥
वदेन् मातंगि सर्वन्ति वशंकरि ठयुग्मकम् ।
एकविंशतिभिर्वर्णेः शेषिकामनुरोरितः ।।२००७॥

2 de Signapas

मंत्रेगानेन निर्माल्यं शेषिकायं समर्पयेत् । ततश्रोच्छिष्टमातंगीं ध्यायेल्लोकैकमोहिनीम् ।। २००८।। वीगावाद्यविनोदगीतनिरतां नीलांशुकोल्लासिनीं विबोर्षी नवयावकार्द्रचरणामाकीर्णनीलालकाम्। हृद्यार्गी नवरत्नकुं डलधरां माग्गिक्यभूषोज्ज्वलां मातंगीं प्रणतोऽस्मि तां स्मितमुखीं देवीं शुकदयामलाम् ॥२००६॥ एवं ध्यात्वा प्रसन्नात्मा गुरुं संपूजयेत् ततः । कराभ्यां पात्रमुद्धत्य सद्वितीयं समर्पयेत् ॥२०१०॥ स्वसंप्रदायसंसिद्धं वीरै: सह समर्चयेत्। भ्रन्योऽन्यं वंदनं कृत्वा पिबेत् तत्तदनुज्ञया ॥२०११॥ सन्येनोद्धृत्य पात्रं तु मुद्रां कृत्वापसन्यतः । यथाविधि द्वितीयेन गृह्णीयान् मंत्रमुच्चरन् ॥२०१२॥ पिशितं माषमात्रं तु मद्यं चुलुकसंमितम् । म्रात्मदेहत्रयं तत्त्वत्रयेगाथ विज्ञोधयेत् ।।२०१३।। तरुगोल्लाससिहतः प्रसन्नवदनेक्षगः। प्रकृत्याद्यैः पृथिव्यन्तैवचतुर्वितिभिः शिवे ॥२०१४॥ स्वरैश्व शुद्धतत्त्वैश्व वाग्भवेन कुलेश्वरि । संयुक्तेनात्मतत्त्वेन स्थूलदेहं विशोधयेत् ॥२०१५॥ मायादिपुरुषांतैश्च शुद्धाशुद्धैश्च सप्तिः। तत्त्वः स्पर्शाह्वयं वंगोंः कामराजेन मंत्रवित् ।।२०१६॥ युक्तेन विद्यातत्त्वेन सूक्ष्मदेहं विशोधयेत्। शुद्धैः शिवादिविद्यान्तपंचतत्त्वैश्च व्यापकैः ॥२०१७॥ परया शिवतत्त्वेन परदेहं विशोधयेत्। षट्त्रिशत्तत्त्वसहितं मालिन्या वालया प्रिये ॥२०१८॥ तनुं त्रयाश्रयं जीवं सर्वतत्त्वेन शोधयेत्। एवं तत्त्वत्रयज्ञानं गुरोर्ज्ञात्वा य आचरेत् ॥२०१६ UGangotri

स जीवन्नेव मुक्तः स्यादिति शंकरमाषितम् ।
तदन्ते च महेशानि कुर्याद् विलिविसर्जनम् ॥२०२०॥
पूजागृहाद् बहिः कुर्यात् त्रिकोगां तु गृहान्तरे ।
गंधपुष्पाक्षतैः पूज्य ध्यायेदुच्छिष्टभैरवम् ॥२०२१॥
गदात्रिश्लडमरुपात्रहस्तं त्रिलोचनम् ।
कृष्णाभं भैरवं ध्यायेत् सर्वविध्नितवारणम् ॥२०२२॥
तारत्रयं समुच्चार्यं पश्चादुच्छिष्टभैरव ।
एहियुग्मं विल गृह्लयुगं हुं फट् द्विठान्तकः ॥२०२३॥
वल्युद्वासनमंत्रः स्याद् द्वाविशतिमिरक्षरैः ।
शांतिस्तवं पठेत् पश्चात् तर्पयन्निलिबिदुमिः ॥२०२४॥

शांतिस्तवं स्तोत्रपटले लिखामः।

एवं कृत्वा महेशानि विहरेद् भैरवो यथा । देवीपर्वदिने चैवं वीरशक्तिसमावृतः ॥२०२४॥ प्रीग्गयेद् भुवनेशानीं चक्रपूजाविधानतः । ऐहिकामुष्मिकीं सिद्धिं साधको लभते ध्रुवम् ॥२०२६॥इति।

देवीपर्वाि् यथा कुलाएंवे —

कृष्णाष्टमी चतुर्वश्यावमावास्या च पूर्णिमा । सिक्रान्तिः पंचपर्वाणि तेषु पुण्यविनेषु च ॥२०२७॥

गुरुजन्मिदिने प्राप्ते तद्गुरोस्तद्गुरोरिष । भानवौद्यादिपूजां च स्वजन्मिदिवसेऽिष वा । संपत्तौ च जये लामे तपोदीक्षाव्रतोत्सवे ।।२०२६।। पीठोपगमने वीरपीठस्थजनदर्शने । देशिकागमने पुण्यतीर्थे देवतदर्शने ।।२०२६।। एवमादिषु देवेशि विशेषदिवसेषु च । यथावलं यथाश्रद्धा यथाद्रव्यं यथोचितम् ।।२०३०।।

Starting /

यथाकालो यथादेशस्तथा पूजां समाचरेत् ।
स्वाचार्येग् तथान्येन कारयेत् तत् क्रमार्चनम् ।।२०३१।।
स्वयं वा पूजयेद् देवि वृंदपूजापुरःसरम् ।
सत्यलोकमवाप्नोति पुनरावृत्तिर्वाजतः ।
न कुर्यात् कौलिको मोहाद् देवताशापमाप्नुयात् ।।२०३२।। इति ।

विशेषदिवसास्तु यामले —

माद्रे शुक्काष्टमी चैवाश्विन कृष्णा चतुर्वशी।
कार्तिके नवमी शुक्ला मार्जे शुक्काऽथ पंचमी।।२०३३।।
पौषी च पूर्णिमा तद्वन्माघे शुक्का चतुर्वशी।
फाल्गुनैकादशी कृष्णा चैत्रकृष्णात्रयोदशी।।२०३४।।
तृतीया माध्वे शुक्का ज्येष्ठशुक्कादशम्यि।
द्वादश्याषादकृष्णा च ह्यमावास्या च श्रावणी।
एतानि देवीपर्वाणि ह्येतास्वर्ज्ञा महानिशि।।२०३४।।

भ्रन्यच कौलसर्वस्वे—

चैत्रे शुक्ला तु प्रतिपत् ज्येष्ठे शुक्लतृतीयका ।

भाद्रे च द्वादशीशुद्धा तृतीया द्वादशे तथा ।।२०३६।।

चैत्रो तु नवमीशुक्ला कृष्णाष्टमी नमस्यिप ।

ग्राषाढे शुक्लदशमी द्वितोया मार्गशीर्षके ।।२०३७।।

यथाक्रमेण ज्ञातव्या जयन्त्यः क्रमशो वृष्टैः ।

संक्रमो ग्रहणं देवि भौमं च करसंयुतम् ।।२०३८।।

दारुणातिथिराख्याता त्रैलोक्यरक्षिणी परा ।

तृतीया चैत्रमासीया चित्रामसंयुता यदि ।

ग्रर्थरात्रे यदा योगस्तदा सा शक्तितोषिणी ।।२०३६।।इति।

ग्रथ रात्रिनिर्णयः शक्तिसंगमे—

वीररात्रि मंहारात्रिः कालरात्रिस्तर्थव च । मोहरात्रिक्ष्यीररात्रिक्षकार्थीवरात्रिक्तिथीं पुनः ।।२०४०।। तथैव चाचलारात्रिस्तारारात्रिस्तथैव च। शिवरात्रि दिव्यरात्रि दिख्णा च यथाक्रमात्। चतुर्दशीसंक्रमश्र कुलक्षे कुलवासरे ॥२०४१॥ श्रर्द्धरात्रौ यदा योगो वीररात्रिः प्रकीतिता । शुक्काष्टमी चाध्विनस्य नवरात्रं तु तस्य वै ॥२०४२॥ महारात्रि मेंहेशानि कालरात्रि शुणु प्रिये। दीपोत्सवचतुर्देश्यां त्वमाया योग एव च ॥२०४३॥ कालरात्रि महिशानि ताराकाली प्रियंकरी । जन्माष्टमी महेशानि मोहरात्रिः प्रकोतिता ॥२०४४॥ भाद्रमासे कृष्णपक्षे चार्घरात्रे च सा स्मृता । मार्गशीर्षे तथा मासे कृष्णाष्ट्रम्यां महेश्वरि ॥२०४५॥ महाकालोस्वरूपेयं घोररात्रिः प्रकीतिता । चैत्रमासे नवम्यां च शुक्लपक्षे च मूसुते ॥२०४६॥ क्रोधरात्रि मंहेशानि तारारूपा च सा स्मृता। प्राप्ते फाल्गुनके मासि कृष्गंकादशिका तु या ॥२०४७॥ भृगुमौमयुता चेत् स्यादचलारात्रिरोरिता । ज्येष्ठे या दशमी शुक्ला दशयोगसमन्विता ॥२०४८॥ भृगुवारसमायुक्ता रात्रावेकादशी यदि। सा तिथि दिव्यरात्रिश्च कीर्तिता परमेश्वरि ॥२०४६॥ ज्येष्ठे या दशमी शुक्का दशयोगान्विता यदि । वदुकस्य तिथिः प्रोक्ता वदुकोत्पत्तिकारिएगे ॥२०५०॥

दश्योगास्तु स्कांदे-

ज्येष्ठे मासि सितेपक्षे दशम्यां बुधहस्तयोः । ज्यतोपाते गरानंदे कन्याचंद्रे बुषे रवौ ॥२०५१॥ ग्रमा मौमसमायुक्ता संक्रमेण समन्विता । कुलऋक्षसमायुक्ता तत्रापि ग्रहणं यदि ॥२०५२॥

remind

तारारात्रिस्तु संप्रोक्ता भाग्यादेव तु लभ्यते । फाल्गुने कृष्णपक्षे तु ह्यर्घरात्रे तथा भृगौ ।।२०५३।। शिवरात्रिस्तु सा प्रोक्ता सर्वसिद्धिप्रदायिनी। ग्रमावास्या जुक्रवारे ग्रहणं यदि चेद् भवेत् ।।२०५४।। यामे तूरीये सा रात्रि मृतसंजीवनी स्मृता। चैत्रशक्लाष्टमीयोगे संक्रान्ति यंदि चेद् भवेत् ।।२०५५।। सिद्धरात्रिस्तदा ज्ञेया मंत्रसिद्धिप्रदायिनी । तृतीया माधवे शुक्ला कुलवारर्क्षसंयुता ॥२०५६॥ दारुएं। कीर्तिता देवि सर्वसिद्धिप्रदा सता । क्रमेगा कथिता रात्रिः पर्वराजमथोच्यते ॥२०५७॥ तृतीया पौषशुक्ले या भृगुवारसमन्विता । सापि चेन्मकराक्रांता कुलर्क्षेण समन्विता ।।२०५८।। चतुर्थीसिहता चेत् स्याद् रेवतीसिहता क्वचित्। पर्वराजाभिधो योगः सर्वपर्वोत्तमोत्तमः ।।२०५६।। 'तृतीया चैत्रशुक्ले या रेवतीसंयुता यदि । ऋद्धियोगो महेशानि होमकर्मिए। शस्यते ।।२०६०।। प्रतिमासे पौर्णमासी मासनक्षत्रसंयुता । कुलवारसमायुक्ता तिथिः सा सुन्दरीप्रिया ।।२०६१।। श्रष्टमी प्रतिमासस्य कृष्णपक्षस्य पार्वति । मौमयुक्ता कुलर्क्षेग् युक्ता वा केवलापि वा ।।२०६२।। देवीरात्रीति विख्याता सर्वसिद्धिप्रदायिनी । चतुर्थी माघमासस्य ह्यर्घरात्रे भवेद् यदि ॥२०६३॥ गएोशरात्रीति तदा विज्ञेया सिद्धिकाङ्क्षिमिः । नवमी कृष्णपक्षस्य कुलवारर्क्षसंयुता ।।२०६४।। मंत्रासिद्धिकरो रात्रिमंत्ररात्रिः प्रकीर्तिता । चतुर्थी कृष्णपक्षे च कुलवारक्षंसंयुत्ता ell छे हिस्स। eGangoty

केवलं भौमयुक्ता वा वाग्गीराज्ञिः ससंक्रमा । ग्रमा भौमसमायुक्ता कुलर्शसंयुता यदि ।।२०६६।। कृष्णाराजिरिति ख्याता ग्रक्षोभ्यप्रोतिकारिखो । श्रमार्कश्रवर्गः पातयुक्ता चेत् पौषमाघयोः । ग्रर्धोदयः स विज्ञेयः किचिन्न्यूनो महोदयः ।। २०६७।। धर्मरात्रिमंहेज्ञानि कीतितेयं सुर्राषिभिः। ग्रमा भौमेन देवेशि सोमेन भृगुगाथवा ।।२०६८।। गुरुगा रविगा देवि कुलऋक्षसमन्विता। दिव्यमांडलिको योगः सूर्यपर्वसमः स्मृतः ॥२०६६॥ माघमासे शुक्लपक्षे सप्तमी या प्रकीतिता। सौरी तिथिस्तु सा ज्ञेया सर्वसिद्धिकरी हि सा ॥२०७०॥ रवियुक्ता कुलर्झेंडच वासरेगापि संयुता। महासौरीति विख्याता त्रैलोक्योत्पत्तिमातृका ॥२०७१॥ सप्तमी प्रतिमासस्य रवियुक्ता यदा भवेत्। हंसीतिथिस्तु सा ज्ञेया जपार्चासु प्रकीतिता ।।२०७२।। बुघाष्ट्रमी महेशानि प्रतिमासस्य या भवेत् । विष्णुरात्रिरिति ख्याता माद्रे मासि विशेषतः ।।२०७३।। माघे मासि सिते पक्षे पंचम्यां भृगुवासरे। वसंतपंचमी प्रोक्ता कामसंजीवनीतिथिः ।।२०७४।। मार्गकृष्णचतुर्दश्यां दत्तोत्पत्तिः प्रकोतिता । महामहिषमदिन्या महादुर्गाष्टमी स्मृता।।२०७५।। कृष्णाष्ट्रम्यां शुक्रवारे द्वितीयप्रहरोत्तरे । श्राषाढे मासि संजाते जैलोक्यविजया परा। वीरभद्रस्य दंष्ट्रेति विख्याता पृथिवीतले ।।२०७६।।इति। भ्रथोर्ध्वाम्नाये श्रीविद्याविषये च पर्वाणि । सौभाग्यतंत्रे पारायणकमे--पुष्पिगा च कुमारी च मोहिनी विमला तथा। जयिनी श्रीकरी चैव पर्वाण्येतानि षट् क्रमात् ।।२०७७।।

पुष्पिग्गी वर्षमासाभ्यां दिनं मासं कुमारिका ।
वर्षं दिनं मोहिनी च विमला मासकोदयात् ।।२०७८।।
वर्षां द्याभ्यां जियनी श्रोकरी च दिनोदये ।
इत्येवां पर्वाषट्कं स्यात् सोमपानमतो बुवे ।।२०७६।।
वर्षं मासं ततक्ष्वंव पक्षक्ष्वोदय एव च ।
सोमपानमिति प्रोक्तं बुधैरागमवेदिमिः ।।२०८०।।
वर्षं दिनञ्चोदयक्ष्व वारो भासस्तथैव च ।
वर्ण्पंचकसंयोगाद् योगः सूर्योपरागकः ।।।।२०८१।।

ग्रथ युगाद्याः—

नवमी कार्तिके शुक्ला गैखाखे च तृतीयका । त्रयोदश्याश्विने कृष्णा फाल्गुनी पूर्णिमा तथा ।।२०८२। कार्तिकेऽभूत् कृतारंभस्त्रोतारंभस्तु माधवे । फाल्गुने द्वापरारंभ ग्रारंभश्चाश्विने कलेः ।।२०८३।।इति।

ग्रथ मन्वाद्याः—

श्राश्विन नवमी शुक्ला माघमासे तु सप्तमी।
माद्रे चेत्रो तृतीया च कार्तिके द्वादशी तथा।।२०८४।।
श्राषाढे दशमी प्रोक्ता ज्येष्ठमासे तु पूर्तिमा।
श्राषाढी फाल्गुनो चेत्री कार्तिकी पौरिएमा तथा।।२०८५।।
माद्रे कृष्णाष्टमी प्रोक्ता पौषे त्वेकादशी सिता।
श्रमा माद्रपदे मासि मन्वाद्यास्तिथयस्त्विमाः।।२०८६।।

ग्रथ कुलतिथिवारक्षीणि-

दितीया च चतुर्थी च षष्ठी चैव तथाष्टमी ।
दशमी द्वादशी चैव तथैव च चतुर्दशी ।
ज्ञेयाश्च तिथयोऽप्येता महेशि कुलसंज्ञकाः ।।२०८७।।
कुजशुक्री वासरी च रोहिग्गी भरग्गी तथा ।
प्राद्वी पुष्ये मघा चित्रा ज्येष्ठा चोत्तरफाल्गुनी ॥२०८८॥
CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

is not a second

पूर्वाषाढा विशाखा च श्रवश्चोत्तरमाद्रपात् । एतानि कुलऋक्षाणि तथैव शततारका । एतेष्वेव विशेषाची कार्या साधकसत्तमैः ॥२०८९॥इति।

य्यन्यच्च श्रीकुलार्ग्वे —

उत्तमा नित्यपूजा स्यात् मध्यमं पर्वपूजनम् । मासपूजाधमा देवि मासादूष्वं पशुर्भवेत्।।२०६०।। विहितैमीदिभिद्रंग्ये मीसादूर्ध्वमनर्चनात्। पशुर्भूयान् महेशानि पुनर्दीक्षां समाश्रयेत् ॥२०११॥ मासेऽथवा त्रिमासे वा षण्मासे वासरेऽपि वा। श्रीगुरुं पूजयेद् मक्तचाप्राप्तौ तत् स्त्रोसुतादिकम् ॥२०६२॥ तदभावे तत्कुलीनं तिच्छिष्यं वान्ययोगिनम्। संतोषयेत् कुलद्रव्येश्चक्रपूजापुरःसरम् ॥२०६३॥ रोगेष्वापत्सु सर्वाषु दुःसंगे दुर्निमित्तके । पूजयेद् योगिनोवृन्दं देवि तद्दोषशांतये ।।२०६४।। यत्रैकाम्नायतत्त्वज्ञः कुलाचार्यः कुलेश्वरि । कौलिकाँस्त्रिचतुःपंचशक्तयश्च तथा प्रिये ।।२०६५।। पृथग् वा पूजयेद् देवि मिथुनाकारतोऽपि वा। गंधपुष्पाक्षताद्यस्तु देवेशि समलंकृताः ।।२०१६।। मक्ष्यभोज्यालिपिशितैः पदार्थैः षड्रसान्वितैः । प्रौढांतोल्लाससिहता मुदिता निवसंति च ।।२०६७।। तच्छीचक्रमिति प्रोक्तं वृन्दं चापि तदुच्यते। कुर्यात् नवकुमारीएाां पूजामादिवनमासके ।।२०६८।। प्रातिनमंत्रयेद् भक्तचा साधकः शुद्धमानसः। मनोहरामेकवर्षां वालां च शुमलक्षरणाम् ।।२०६६।। मंत्री ध्यात्वाथ शुद्धात्मा कृत्वा देवि क्रमार्चनम्। ग्रभ्यंगस्नानशृद्धां तां पूजासदनमानयेत् ।।२१००।।

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

A Maria

Or Theory

देवतासन्निधौ वालामुपवेश्य समर्चयेत् । गंधपुष्पाक्षतैर्धूपदीपैश्च कदलीफलैः ।।२१०१।।

मक्ष्यभोज्यान्नपानाद्यैः क्षीराज्यमधुमांसकैः।

कदलीनारिकेलाद्यैः फलैस्तां परितोषयेत् ।।२१०२।।

सशक्तिकः स्वयं देवि यौवनोल्लाससंयुतः । यथाशक्ति जपेदेकोत्तरवृद्धचाथवा मनुम् । वालामलंकृतां पश्यन् चितयन् स्वेष्टदेवताम् ॥२१०३॥

ततस्तां देवताबुद्धचा नमस्कृत्य विसर्जयेत्। द्वितीयायां द्विवर्षा च त्रिवर्षादिक्रमेगा च ॥२१०४॥

एवं तिथिकुमारीं च यजेत् पूर्विदिनेऽचिताम् । नवम्यामेकवर्षीदि नववर्षान्तकन्यकाः ॥२१०५॥

शुद्धा वाला चं लिलता मालिनी च वसुंधरा । सरस्वती रमा गौरी दुर्गा च नव कीर्तिताः ॥२१०६॥

त्रिताराद्ये नेमोन्तैश्च देवतापदपश्चिमै:।

नामिः सचतुर्थ्यन्तैः पूजयेत् ताः पृथक् पृथक् ॥२१०७॥

वदुकं पंचवर्षं च नववर्षं गर्पोश्वरम् । गंघपुष्पांवराकल्पैर्यथाविमवविस्तरम् ॥२१०८॥

ग्रम्यच्यं वेवताबुद्धचा पदार्थैः परितोषयेत् । स्वकार्यफलसिद्धचर्थं वित्तशाल्यविवर्जितः ॥२१०९॥

नवरात्रं जपेदेकोत्तरवृद्धिक्रमेगा च । नवरात्रकृतां पूजां देवि देव्यं समर्पयेत् ॥२११०॥ तांवूलं दक्षिणां दत्वा प्रणम्य तां विसर्जयेत् । एवं नवकुमारीणामर्चनं प्रतिवत्सरम् ॥२१११॥ यः करोति च पुण्यात्मा देवताप्रीतिमाप्नुयात् । प्रथवा योवना हुन्। प्रमुद्धी नव पार्विति । इत्रिक्ष्य (Gangotri

ale my

6877

मनोज्ञाः पूजयेद् भक्त्या नवरात्रिषु मंत्रवित्। हल्लेखां गगनां रक्तां महोच्छुष्मां करालिकाभ् ॥२११३॥ इच्छां ज्ञानां क्रियां दुर्गां वदुकं च गएोश्वरम्। पूर्ववत् पूज्य मद्याद्यैः परितोषयेत् ॥२११४॥ प्रौढांतोल्लाससंयुक्ताः संतुष्टा यदि वा प्रिये। साधकस्त्वष्टमासाद्य निवसेत् तवसन्निधौ ।।२११५॥ एवं यः पूजयेद् देवि प्रतिवर्षं यतव्रतः। षण्मासे वा त्रिमासे वा मासे मासेऽथवा प्रिये ॥२११६॥ तिस्रो वा पंच वा सप्त पूजयेद् देवताधिया। सर्वसिद्धिसमृद्धात्मा स भवेदावयोः प्रियः ॥२११७॥ भूगुवारे कुलेशानि कांतामारूढयौवनाम्। सर्वलक्षरणसंपन्नामनुकूलां मनोहरास् ॥२११८॥ कूलां कुलांगनां वापि निमंत्र्याह्य पुष्पिग्गीम्। श्रभ्यंगस्नानशुद्धांगीमासने चोपवेशयेत् ॥२११६॥ गंधपुष्पांवराकल्पैरलंकृत्य विधानवित्। म्रात्मानं गंधपुष्पाद्येरलंकुर्यात् कुलेश्वरि ॥२१२०॥ श्रावाह्य देवतां तस्यां यजेन् न्यासक्रमेरा च।

महाषोढान्यासक्रमेण, कलान्यासक्रमेण वा।
कृत्वा क्रमार्चनं घूपं दीपं च कुलदीपक्रम्।
प्रदर्श्य देवताबुद्धचा पदार्थेः षड्रसान्वितः ॥२१२१॥
मांसालिभक्ष्यमोज्याद्येः तोषयेदितमिक्तितः।
प्रौढांतोल्लाससिहतां तां पश्यन् प्रजपेन् मनुम् ॥२१२२॥

योवनोल्लाससिहतः स्वयं तद्धचानतत्परः । निर्विकारेग् चित्तेन ह्यष्टोत्तरसहस्रकम् ।।२१२३।। जपादिकं समर्प्याथ शक्तिस्तोगं ततः पठेत् ।

शक्तिस्तोत्रं स्तोत्रपटले लिखामः।

एवं स्तवैजीपैर्देवि तया सह निशां नयेत् ।।२१२४।।

त्रिपंचसप्तनवसु भृगुवारेषु यः प्रिये। पूजयेद् विधिनाऽनेन तस्य पुण्यं न गण्यते ।।२१२४।। चतुःपोठार्चनफलं स प्राप्नोति कुलेश्वरि । यद् यत्स्वमनसोऽभीष्टं तत्तदाप्नोत्यसंशयम् ॥२१२६॥ नवम्यां वार्चयेद् देवीं विधानेन विधानवित्। सोऽत्रैव पूज्यते सर्वे महदैश्वर्यमाप्नुयात् ॥२१२७॥ कुर्यात् कर्कटके वापि मकरे मिथुनेऽर्चनम् । तुलायां वाथ मेषे वा सर्वसंक्रान्तिषु प्रिये ॥२१२८॥ गौरीशिवौ रमाविष्णु वाणीसरसिजासनौ । शचीन्द्रौ रोहिग्गीचंद्रौ स्वाहाग्नी च प्रभारवी ॥२१२६॥ भद्रकाली वीरभद्रौ भैरवीभैरवाविष । मिथुनानि नवाभ्यर्चेत् पूर्वोक्तेन च वर्त्मना ॥२१३०॥ त्रितारादिनमोऽन्तेन तत् तन्नाम्ना विधानवित्। गंधपुष्पादिभिः पूज्य मद्याद्यैः परितोषयेत् ।।२१३१।। प्रौढांतोल्लासयुक्तानि कुर्वीत मिथुनान्यपि । एवं कृते न संदेहः तुष्टाः स्युः सर्वदेवताः ।। २१३२।। श्रनुगृह्धित तं देवि प्रयच्छन्ति मनोरथम् । प्रतिवर्षे च यः कुर्यात् सद्भक्त्या मिथुनार्चनम् ॥२१३३॥ तत् तल्लोकेषु निवसेत् सर्वेश्वर्यसमन्वितः । श्रथ वेशाखमासस्य शुक्लप्रतिपदीश्वरि ।।२१३४।। ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्त्थाय स्नानं संध्यामुपास्य च । मनोज्ञे रहसि स्थाने पूर्वाशाभिमुखस्थितः ।।२१३५।। भ्रात्मानं गंधपुष्पाद्येरलंकृत्य विधानवित्। कृत्वा कल्पोदितान् न्यासान् देवताभावमास्थितः ।।२१३६।। किचिवभ्युदिते सूर्यमंडले त्विष्टदेवताम् । ध्यात्वा सावरणां सम्यक् पूजयेद विधिना प्रिये ।।२१३७।। CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

षोडशेरुपचारेश्च चक्रपुजापुरःसरम्। कुलदीपं प्रदर्धाथ शिवाय गुरुरूपिएो ।।२१३८।। मत्स्यमांसादिविविधभक्ष्यभोज्यसमन्वितम् । दैव्ये निवेद्य तद्दव्यं शक्त्या सह पिबेत् प्रिये ॥२१३६॥ यौवनोल्लाससिहतो निर्विकल्पेन चेतसा। ध्यायँस्तन्मण्डले देवि ग्रष्टोत्तरसहस्रकम् ॥२१४०॥ जप्त्वा समर्प्य तत् पूजां देवतां च समुद्रसेत्। एवां शुक्लप्रतिपदं समारभ्य दिने दिने ॥२१४१॥ कुर्याज्जपार्चनं कृष्णचतुर्दश्यान्तमम्बिके । ग्रमावास्यादिने देवि पूजयेत् शक्तिकौलिकान् ॥२१४२॥ त्रिपंचसप्तनवकं वित्तशाठ्यविवर्णितः। एवं यो मासमात्रं तु कुर्यात् सूर्योदयार्चनम् ॥२१४३॥ देवता तस्य संतुष्टा ददाति फलमोप्सितस्। मध्याह्ने चार्चयेद् देवि सायाह्ने चार्चयेत् शिवे ॥२१४४॥ तत् तत् फलमवाप्नोति योगिनीनां प्रियो भवेत्। त्रिसंध्यं योऽर्चयेद् देवीं मासमात्रं विधानतः ॥२१४५॥ काङ्क्षितां लभते सिर्द्धि विचरेद् देववद् भुवि । कार्तिके गुक्लप्रतिपत् तिथावुषिस संयतः ॥२१४६॥ स्नात्वा नित्यक्रियां कृत्वा सर्वतोभद्रमंडले । यथोक्तविधिना स्थाप्य कलशं मधुपूरितस् ॥२१४७॥ तस्योपरि न्यसेद् दीपं कांस्यं सुस्थूलवर्तिकम् । मूलमंत्रेण प्रज्वाल्य देवीमावाह्य तत्र तु ॥२१४८॥ लब्धोपचारैः संपूज्य सहस्रं प्रजपेत् मनुस् । शुक्लभूतान्तमेवं हि विधाय विधिपूर्वकम् ॥२१४९॥ पौर्णमास्यां तथा शक्तीर्मीजयेच्चक्रमार्गतः । एवं कृते भगवती तुष्टाभोष्टं प्रयच्छति ।।२१५०।।

माघशुक्लप्रतिपित दिवाहारिवर्विजतः ।
यौवनोल्लाससिहत्वचन्द्रे सूर्यवदाचरेत् ।।२१५१।।
चंद्रास्तमयपर्यन्तं जपेत् मंत्रमनन्यधीः ।
एवं समाचरेद् भक्तचा शुक्कपक्षाचनं प्रिये ।।२१५२।।
सर्वपापिवशुद्धात्मा सर्वेश्वर्यसमिन्वतः ।
स सर्वलोकसंपूज्यः शिववत् निवसेद् भुवि ।।२१५२।।
शुक्लपक्षाचनं यद्वत् तद्वत्पक्षे सितेतरे ।
यः करोति विधानेन सर्वात् कामान् समक्तुते ।।२१५४॥
इह भुक्तवाखिलात् भोगान् देववत् प्रियदर्शनः ।
योगिनीवीरमेलापं तेन स्यात् नैव संशयः ।।२१५५॥
एवं कृते महेशानि देवता प्रीतिमाप्नुयात् ।
सर्वकामसमृद्धात्मा सर्वेश्वर्यसमिन्वतः ।।२१५६॥
सर्वलोककसंमान्यो विचरेत यथासुखस् ।
ग्रब्दाष्टकाचनं कुर्यात् शक्तश्चेदक्वासरे ।।२१५७॥

एतच्च शक्तिसंगमे-

पूर्णाभिषेकसंयुक्तस्तूर्ध्वाम्नायेषु दीक्षितः ।
पट्शांभवक्रमी देवि कुर्याद्ष्टाष्ट्रकं क्रमात् ।।२१४८।।
प्रष्टाष्ट्रकस्य विज्ञानी शिव एव न संशयः ।
प्रष्टाष्ट्रदिवसे कार्यमथ द्वचष्ट्रदिनेऽथवा ।।२१५६।।
द्वात्रिशद्दिवसे कार्यं चतुःषष्ट्रिदिनेऽथवा ।
गुरुणा कारयेद् देवि विधिज्ञेनापरेण वा ।।२१६०।।
क्रमज्ञक्वेत् स्वयं कुर्याद् विक्तशाठ्यविवर्णितः ।
तत्र रात्रौ विशुद्धात्मा कृत्वा न्यासात् पुरोदितान् ।।२१६१।।
प्रसुप्ते जीवलोके तु मुदितात्मा महामनाः ।
अष्टाष्ट्रकं प्रकुर्वीत मक्तिनिर्भरमानसः ।।२१६२।।
CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

मुलाष्ट्रकं तु ब्राह्मचाद्येश्चासितांगादिभैरवैः। मंगलाद्यैश्च मिथुनैरष्टभिः सहितः प्रिये ।।२१६३।। मुलाष्ट्रकोद्भवानीति प्रसिद्धानि कुलागमे । ग्रक्षोभ्यादिचतुःषष्टिमिथुनानि समर्चयेत् ॥२१६४॥ यथोक्तेन विधानेन यथाविभवविस्तरम्। क्रमलोपं न कुर्वीत स्वेष्टकायार्थसिद्धये ।।२१६५ ।। गंधपुष्पांवराकल्पे मंत्स्यमांसासवादिभिः। भक्ष्यभोज्यादिभि नीनापदार्थैः षड्रसान्वितैः। सम्यक् संतोषयेद् देवि मिथुनान्यतिमक्तितः ।।२१६६॥ प्रौढांतोल्लाससहितं कुर्यात् श्रीचक्रमंबिके । एवं यः कुरुते देवि सक्दष्टाष्टकार्चनम् ॥२१६७॥ . ब्रह्मविष्णुमहेशादिदेवताभिश्च पूज्यते । कि पुनर्मानवाद्येश्व साक्षात् ज्ञिव इवापरः ।।२१६८ ।। यदर्चनात् चतुःषिटयोगिनीगग्रसंस्तुतः । पुनरावृत्तिरहितो निवसेत् तवसन्निधौ ।।२१६६।। समस्तदेवताप्रीतिकारिगाी परमेश्वरि । श्रस्मात् परतरा पूजा नास्ति सत्यं न संशयः ।। २१७०।। पश्येदेवंविधं चक्रं यो भक्तचाष्टाष्टकं प्रिये। यज्ञदानतपस्तीर्थव्रतकोटिफलं लमेत् ।।२१७१।। राजा यः कारयेदं देवि भक्तचाष्टाष्टकपूजनम्। चतुःसागरपर्यन्तां पृथ्वीं शास्ति न संशयः ॥२१७२॥ श्रीकंठादीनि पंचाशन्मियुनानि समर्चयेत्। पूर्वोक्तेन विधानेन कुलेश्वरि विधानवित् ॥२१७३॥ स्वकार्यफलिसद्धचर्यं धनलोमविवर्जितः।

प्रौढांतोल्लासयुक्तानि मिथुनान्यंब कारयेत् ॥२१७४॥
CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

संतुष्टानि प्रयच्छन्ति साधकायेप्सितं फलम्। भ्रव्याहताज्ञः सर्वत्र पुज्यते देववत् प्रिये ॥२१७५॥ तवलोके वसेद् देवि ब्रह्मादिसुरसंस्तुतः । केशवादि गएोशादि कामादि मिथुनानि च ॥२१७६॥ श्रीकंठादिवदभ्यच्यं तत्फलं लभते ध्रवम श्रनुग्रहतया कुर्यात् डाकिन्यादिसमर्चनम् ॥२१७७॥ मासे मासेऽथवा वर्षे स्वजन्मदिवसे प्रिये। पूर्वोक्तेन विधानेन यथाविभवविस्तरम् ॥२१७८॥ प्रौढांतोल्लासपर्यन्तं तोषयेत् तां विधानवित् । कुर्वन्त्यनुग्रहं देवि संतुष्टास्ताश्च देवताः ॥२१७६॥ सर्वापद्रोगरहितः सर्वैदवर्यसमन्वितः । लोकेऽस्मिन् संस्तृतः सर्वैः स जीवोत् शरदां शतम् ॥२१८०॥ देहांते प्राप्तविज्ञानस्तवलोके महीयते । दूतीयागं तु यः कुर्याद् यथोक्तविधिना प्रिये ॥२१८१॥ वर्षे वर्षे चतुःषष्टिपीठार्चनफलं लमेत्। त्रिकपूजां तु यः कुर्यादिच्छाज्ञानिक्रयात्मिकाम् ।।२१८२।। श्रागमोक्तेन विधिना पूर्ववत् तद्विधानतः। पदार्थेस्तोषयेत् सम्यक् यथाविभवविस्तरम् ।। २१८३।।

संतुष्टा देवतास्तिस्रः सर्वकामफलप्रदाः । देवेशि साधकाभीष्टं प्रयच्छन्ति न संशयः ॥२१८४॥

इत्यादि देवतापूजां विशेषदिवसेषु यः । करोति शास्त्रविधिना स मगेदावयोः प्रियः ॥२१८४॥

श्रीचक्रं कौलिको मोहाद् विशेषदिवसेषु यः । ^{८नः कंरोति।}समर्थः सन्^{श्}सांभनेष् यौगिनीपशुं ११ एक्ट्रिस्।।

ग्रथ दशमः पटलः।

अय कुलाचनम्। यच्च कुलार्गवे —

कुलपूजासु नियमं यः करोति हि कौलिकः। कुलेशि समवाप्नोति योगिनीवीरमेलनम् ।।२१८७।। नीचोऽपि वा सक्रद् भक्त्या कारयेद् यः कुलार्चनम्। स सद्गतिमवाप्नोति किमुतान्ये द्विजादयः ॥२१८८॥ तस्मात् सर्वप्रयत्नेन सर्वावस्थासु सर्वदा । कुलपूजारतो भूयादभोष्टफलसिद्धये ॥२१८६॥ कुलपूजाधिको यज्ञः कुलपूजाधिकं व्रतम्। कुलपूजाधिकं तीर्थं कुलपूजाधिकं तपः ॥२१६०॥ कुलपूजाधिकं ज्ञानं कुलपूजाधिका क्रिया। कुलपूजाधिको लाभः कुलपूजाधिकं सुखम् ॥२१६१॥ कुलपूजाधिको धर्मः कुलपूजाधिकं फलम्। कुलपूजाधिकं ज्ञानं कुलपूजाधिकं पदम् ।। २१६२।। कुलपूजाधिको योगः कुलपूजाधिकं जपः। कुलपूजाधिकं भाग्यं कुलपूजाधिकं धनम् ।।२१६३।। कुलपूजाधिका विद्या कुलपूजाधिकार्चनम् । नास्ति नास्ति पुनर्नास्ति त्वां शपे कुलनायिके ॥२१६४॥ वहुना किमिहोक्तेन रहस्यं शृणु पार्वति । वेदशास्त्रोक्तमार्गेरा कुलपूजां करोति यः ।।२१६५॥ तत्समीपे स्थितं मां तु विद्धि नान्यत्र भामिनि । इदं सत्यमिदं सत्यमिदं सत्यं न संशयः ।।२१६६।। खमूमिदिग्जलगिरिवनसर्वचराः प्रिये।

सहस्रकोटियोगिन्यस्तावंतो भेरवा ग्रपि ॥२१६७॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri नियुक्ता हि मया देवि कुलसंरक्षरणाय च ।
दिवसेषु विशेषेषु सर्वेषु मुदिताननाः ।।२१६६।।
साधकानेव वोक्षंते स्वसंपूजानुलिप्सया ।
ग्रपूजितास्तु निघ्नन्ति प्रसीदंतीह पूजिताः ।।२१६६।।
गुरुमक्तान् सदाचारान् गुरुभक्तानवन्ति हि ।
मिक्तहोनान् दुराचारान् नाशयन्ति प्रकाशकान् ।।२२००।।
श्रीचक्रे संस्मरेत् तस्माद् योगिनीभैरवानि ।
न स्मरेद् यदि मूढात्मा योगिनीनां भवेत् पशुः ।।२२०१।।
तस्मात् श्रीचक्रमध्ये तु संस्मरेत् सर्वदेवताः।
ग्रमुगुह्णन्ति देवेशि साधकान् नात्र संशयः ।।२२०२।।इति।

अथ चुक्र श्वरयोग्यता यामले—

गुप्तावध्रतकौलस्य छिन्नपाशाष्टकस्य च । स्रघीतसर्वविद्यस्य योग्यता चक्रपूजने ।।२२०३।।

गुप्तावधूतो गृहस्य इति । पाशाष्टकन्तु —

घृणा लज्जा मयं शंका जुगुप्सा चेति पंचमी। कुलं शोलं तथा जातिरष्टौ पाशाः प्रकीतिताः॥२२०४॥

पाशबद्धः पशुः प्रोक्तः पाशमुक्तः स्वयं शिवः ।

तुषेगा बद्धो व्रीहिः स्यात् तुषाभावे तु तंडुलः ॥२२०४॥इति।

तथैव निर्वाग्तंत्रे—

नात्राधिकारः सर्वेषां ब्रह्मज्ञान् साधकान् विना ।
परब्रह्मोपासकाः ये ब्रह्मज्ञा ब्रह्मतत्पराः ॥२२०६॥
शुद्धान्तःकरणाः शांताः सर्वप्राणिहिते रताः ।
निर्विकारा निर्विकल्पा दयाशीला दृढव्रताः ॥२२०७॥
सत्यसंकल्पका ब्राह्मास्त एवात्राधिकारिगः ।
ब्रह्मज्ञानाय तु प्रोक्तं भैरवीचक्रमुत्तमम् ॥२२०५॥
ब्रह्मज्ञानयुतानां तु तत्त्वचक्रेऽधिकारिता ।
ब्रह्मज्ञानयुतानां तु तत्त्वचक्रेऽधिकारिता ।

to your

तेषां तत्त्वविदां पुंसां तत्त्वचक्रेऽधिकारिता । सर्वं ब्रह्ममयंभावश्चक्रेऽस्मिन् तत्त्वसंज्ञके । येषामुत्पद्यते देवि त एव तत्त्वचिक्रगः ॥२२१०॥इति।

यामले—

एवंविधेन गुरुए। कारयेद्वा सलक्षरए: । स्वयं कुर्याद् वीरशक्तिसहितः कुलनायिके ॥२२११॥इति।

तंत्रान्तरे यामले—

पूजा पूर्विदिने वापि प्राप्तपूजादिनेऽथवा । वीरांश्चैव तथा शक्तीर्भक्तचा चैव निमंत्रयेत् ॥२२१२॥ शक्तीनामिप वीराणां रात्रावेव निमंत्रणम् । विदध्यात् साधकश्रेष्ठो दिवा कृत्वा च निष्फलम् ॥२२१३॥

ग्रन्यच्च वीरयामले—

रात्रावेव प्रकुर्वीत वीरशक्तिनिमंत्रण्म् । दिवा निमंत्रणे प्रायश्चित्तमुक्तं शिवेन तु ॥२२१४॥

यच विष्णुयामले-

मोहेन च समाविष्टो दिवा कृत्वा निमंत्रग्रम् । शक्तीनामपि वीराग्रां यां गति लमते नृप ।।२२११।। तां गति तेऽिमधास्यामि सावधानमनाः श्रुणु । जन्मजन्मनि जायेत श्वेतकुष्ठपरिप्लुतः । चाण्डालयोनिमासाद्य सत्यं सत्यं वदामि ते ।।२२१६।।

तन्निमंत्रणे नियममाह कुलयामले —

श्रादौ यज्ञार्थमोशानि वीरानेव निमंत्रयेत्। विपरीतत्त्वमासाद्य तामसं नरकं व्रजेत्।।२२१७॥

रुद्रयामले-

चक्रार्थमादौ प्रयतो वीरानेव निमंत्रयेत् । शक्तिमामंत्र्य संयाति रौरवं तमसावृतम् ।।२२१८।। ग्रथ वीरलक्षरां समयातंत्र—

यः स्वभावं परित्यज्य दैवभावं समाश्रितः । स एव वोरः कौलश्च कुलीनो नापरो जनः । नरसेवापरो यस्तु न वीरो न कुलीनकः ॥२२१९॥इति।

ग्रन्यच कौलसर्वस्वे --

दीक्षायुतः पाशमुक्तः साचारो गुरुमक्तिमान् । समयाचारसंकेतपालकः शुभवेषवान् ।।२२२०।।

वीरार्चातत्परो वीरभूमिचारी जितेन्द्रियः। ग्रशोत्यूनवयस्कश्च जपो वोर इति स्मृतः।।२२२१।।

श्रय त्याज्यवीरलक्षणम्, वीरतंत्रे कुलावल्यां च—
कार्णं खंजं च विधरं कुढ्जं व्याधिप्रपीडितम् ।
कुत्सितं कुनखं कुष्ठं व्यंगांगं विकलं शठम् ।
श्रज्ञातं पतितं मूखं पाखंडं वहुजल्पकम् ।।२२२२॥

पार्खेडाश्च कुलागमे-

मद्यपानरताः कौला लुब्धा च स्त्रीषु सर्वदा । निजकर्मपरिश्रष्टा परार्चाद्वेषतत्पराः ।।२२२३।।

कुलशास्त्रप्रसंगेन प्रचरित सभाकराः ।
पानमोजनलुब्धा ये पाखंडास्ते प्रकीतिताः ।।२२२४।।इति।
वह्वाशिनं कपिटनं लुब्धं दीनं च दुःखितम् ।
होनांगं चाधिकांगं च व्रितनं चिररोगिएएम् ।।२२२५।।
शोकमोहाकुलं स्तब्धं कामुकं क्रोधिनं खलम् ।
निष्ठुरं दुर्मुखं कूरं मिण्यावादिनमेव च ।।२२२६।।
परस्परानुवक्तारं पर्रानदापरं तथा ।
निकृष्टं दांमिकं भ्रांतमसंतं परवंचकम् ।।२२२७।।
शूद्रस्य पाचकं च।िप तथा शूद्राभ्रमोजकम् ।
वर्जयेच्च पराधीनं नरसेवापरं तथा ।।२२२६।।

त्यक्तदारं च क्लीबं च ह्यानिवेदितमोजिनस् । नार्चयेत् श्राद्धमोक्तारं कृततीर्थपरिग्रहम् ॥२२२९॥

श्राद्धभोक्तारमिति प्रतश्राद्धभोक्तारम्।

यच्च योगिनीतःत्रे-

प्रेतश्राद्धे च यो भुङ्क्ते सोऽपि प्रेतो न संशयः ।।२२३०।।

एतदेव कुञ्जिकायाम्-

प्रेतमुद्दिश्य यो भुङ्क्ते स च प्रेतत्वमाप्नुयात् ।

एतेन पश्नां प्रेतश्राद्धमिति । यच्च पशोरन्नस्वीकारे निषेधस्य वहुघोक्तत्वात्।

ग्रन्यच्च कुब्जिकायाम्-

श्रशीत्यूनवयस्कं च दंतहीनं जरातुरम् ।।२२३१।। श्रात्मप्रशंसकं धूर्तं नार्चयेद् देवताधिया । जपपूजाविहीनं च नार्चयेद् भ्रष्टसाधकम् ।।२२३२।। यादृशं साधकं मक्त्या तोषयेद् देवताधिया । देवता तादृशी भूत्वा तादृक् फलप्रदायिनी ।।२२३३।। इत्यादि दोषरहितः साधकः कौलिकार्चने । योग्यो भवति नान्यो हि यतश्रक्रेश्वरः शिवः ।।२२३४।।

कुलार्गावेऽपि-

समायांति सुरा देवि योगिन्यो योगिमिः सह ।
प्रविद्य कुलयोगीशं भुं जते पितृदेवताः ।।२२३५।।इति।
भैरवोचक्रगात् वीरात् तथैव कुलयोगिनोः ।
प्रविद्य मिथुनीभावात् तद्गृह्धन्ते क्रमार्चनम् ।।२२३६।।
प्रयच्छन्ति फलं तुष्टा रुष्टा विध्वंसयन्ति तम् ।

प्रथ त्याज्याः शक्तयः, कुलावत्यां कालीकत्पलतायां च—
व्यंगांगीं विकृतांगीं च स्यूनांगीमधिकाङ्गिकाम् ।
गुविग्गीं च रजोहीनां केशदंतविविजताम् ॥२२३७॥

1) 0 de 8 ge

कुत्सितां रोषितां दुष्टां रोगशोकसमाकुलाम् । निद्रालस्ययुतां क्रूरां निष्ठुरां परिवर्जयेत् ।।२२३८।। श्रंगे हीनाधिकौ दोषौ देवताया कथं भवेत् । रोगशोकादिदुःखानि देवतायाः क्व विद्यते । श्रतस्तृदर्चकस्तस्याः फलभागी न संशयः ।।२२३६।।

श्रीकुलावल्यां श्रीक्रमे च--

शक्तयः सर्वजातीया पूजनीया न संशयः । विशेषवैदग्ध्ययुताः सर्वा एव कुलांगनाः । नवकन्या विशेषेगा पूजनीयाः सलक्षगाः ।।२२४०।।

ग्रन्यच्च तंत्रान्तरे-

निमंत्रिताश्च ते वीराः शक्तयोऽपि तथैव ताः । गत्वा स्वे स्वे स्थले कालं प्रेक्ष्यमार्गाः समुत्सुकाः ।।२२४१।। स्वंस्विमष्टं स्मरंतश्च स्वपेयुः शुचिसंयुताः । ततः प्रातः समुत्त्थाय नित्यकृत्यं समाप्य च ।।२२४२।। चक्रोपकर्गान्येव साध्येयुर्यथातथम् । गुभ्रांवरवृताः सर्वे सुस्नाताः सुष्ट्रलंकृताः ।।२२४३।। यथाशास्त्रविधानेन पाकं कुर्युः पृथक् पृथक् । मोदकं गुह्यसंज्ञं च सूत्रसंज्ञं ततः परम् ।।२२४४।। चतुःश्रङ्गं शिवाख्यं च ग्रानंदमोदकं तथा। शिरामोदकनामानं साधयेन् मोदकानि षट् ।।२२४४।। ततश्रक्रयो विधेयाश्च क्रमशस्ताश्च वच्म्यहम्। श्रपूरांश्च तथा माषगर्भान् कुर्यादतःपरम् ।।२२४६।। तृतीयागर्भकांस्तद्वदगर्भाश्च ततः सुधीः । लवंगेला च कक्कोलगुंठोकर्प्रशक्राः ।।२२४७।। विमिश्र्य कुर्यात् तद्वच्च शुद्धिगर्माश्च षट् स्मृताः । ततश्र वटकाः साध्याः षड्विधाः कमतस्त्रवथ ।।२२४५ ।।...

चाराका माषजाइचैते दिधसंश्चिष्टकास्तथा । तितिरगीरससंश्लिष्टा कण्ठिकासंयुतास्तथा ।।२२४६।। शिखरिण्यार्द्रकाश्चेव मध्वाक्ताः शुष्ककास्तथा । त्रिकोगान्यपि कार्याणि तितिण्याक्तानि वै तथा ।।२२५०।। शमी द्धियता कार्या शाकत्रयमवश्यकम् । पुष्पाण्यपि विघेयानि क्वेतपीतारुगानि च ।।२२५१।। मुद्गमाषमसूरागां सूनाः साध्याः प्रयत्नतः । म्रवश्यमेकः साध्यस्तु सूपः कस्यचिदंबिके ।। २२५२॥ पायसापपसंयावाः साध्यादचकार्थमोश्वरि । ग्रथो गुद्धिः प्रकर्तंव्या क्रमशो घृतपाचिता ॥२२५३॥ घृतशृद्धिः कर्चरी च श्रीखंडामृतयोस्तथा । कालिकासंभवा चैव कालज्ञानभवा तथा ॥२२५४॥ कपोतसंभवा चैव चएकाढ्या च ताः स्मृताः। ततस्तृतीया वै कार्या घृताख्या तैलसंभवा ॥२२५५॥ संयावाख्या परा प्रोक्ता चालोकाख्या ततः स्मृता । श्रयो मूद्राश्च वै कार्या गोधूमाद्यन्तसंभवाः ॥२२५६॥ तृतीया शुद्धिसंयुक्ता धनुर्मुद्रा प्रकीर्तिता । माषशुद्धिसमायुक्ता चक्राख्या परिकोतिता ।।२२५७।। ज़तीया माषगर्मा च घेनुमुद्रा प्रकोर्तिता। शुद्धिमाषतृतीयांढ्या वार्गाख्या परिक्रोतिता ।।२२५८॥ नुतीयेलाच कर्पूरगर्भा पाशाह्वया मता। तृतीया शुद्धिकर्पूरी चैलागर्भा च लिंगका ।। २२५६।। े शुद्धिशुंठीमरीचाढ्या मुद्रा डमरुका मता। सर्वत्रार्द्रकयोगेन सिद्धा भवति नान्यथा ॥२२६०॥ विनार्द्रकेरा यत्किंचित् देवदेयं न तत् स्मृतम्। नैवेद्यमेवं संपाद्य गंधं कुर्याद् विधानतः ॥२२६१॥

कर्दमं यक्षसज्ञं च देवीकर्दममेव च । शिवकर्दममेवं हि शक्तिकर्दममुत्तमम् ॥२२६२॥ वीरकर्दममेवं स्यात् गुरुकर्दमतः परम् । मंत्रकर्दमसंज्ञं च कुलकर्दमसंज्ञकम् ॥२२६३॥इति।

ग्रथैषां विधिमालिकातन्त्रे-

कर्प् रागरकस्तूरोकक्कोलघुस्र्गानि च। एकीकृतमिदं सर्वं यक्षकर्दम इष्यते ॥२२६४॥ रोचना क्ंकुमं चैव रक्तचंदनमिश्रितम्। देवीकर्दमसंज्ञं च देवीप्रीतिकरं स्मृतम् ॥२२६५॥ कर्पूरैलाचंदनानि कस्तूरीसंयुतानि च। शिवकर्दमसंज्ञं च शिवसायुज्यदायकम् ॥२२६६॥ इवेतं चैव तथा रक्तं चंदनं मृगनाभिजम्। शाखासोममुशीरं च शक्तिकर्दम इष्यते ॥२२६७॥ कपिकुंकुमचोरैः स्यान् मदितो वीरकर्दमः। रक्तचंदनकस्तूरोकर्पूरोशीररोचनैः ॥२२६८॥ मांस्यैलामिश्रितैर्देवि प्रोक्तोऽयं गुरुकर्दमः । चंदनौ रोचनोशोरौ युते स्यात् मंत्रकर्दमः ॥२२६९॥ कर्पूरकपिकस्तूरीकुलपुष्पैर्महेश्वरि । कुलकर्दम एवं हि कर्दमाष्ट्रकमीरितम् ॥२२७०॥ श्रन्यानि पूजायोग्यानि मनः प्रीतिकराशि च। संपाद्य विधिवद् भक्त्या देवीं घ्यायन् समाहितः। वीरान् शक्तीश्च विधिवत् स्वे स्वे स्थाने निवेश्य च ।।२२७१।।

of more Br

गुरोः पुत्रान् भातृपुत्रान् तथा तत्कुलजानपि । जानमृद्धान् तपोबुद्धान् विकाषो एके समर्क्येत् का २१० २।।

स्वे स्वे स्थाने तत् तदाम्नायस्थले।

न तु ज्येष्ठात् यजेद् वामे किनिष्ठात् न च दक्षिएो । विपरीते वैपरीत्यं फलं ज्ञेयं ग्रुभाशुमम् ॥२२७३॥ शिष्यः पुत्रः किनिष्ठो वा दक्षे चोपविशेत् यदि । तदा च नारकी स स्यादन्यथा गुरुलंघनात् । निजर्शोक्तं किनिष्ठांश्च वामभागे समर्चयेत् ॥२२७४॥

वीरविषये कालीकल्पे-

गंधपुष्पाधिवासैस्तैश्चक्रे वीरात् समर्चयेत् । श्रष्टाधिकात् तत्र कौलात् नार्चयेत् तत्र कौलिकः ॥२२७५॥

एतदेव समयातन्त्रे-

नार्चनं वहुसंघट्टे न पेयं वहुसिन्नधौ ।

श्रत्राष्टाधिकवहुसंघट्टे ति कालोकल्पलताकारेण व्याख्यातम्, श्रतो वहुसन्निधावित्यष्टाधिकं नेत्यर्थः।

पूज्य लब्घोपचारैस्तान् प्रार्थयेद् विहितांजिलः ॥२२७६॥इति।

ॐ नमो भगवते वीर नमो व कुलपावन।

त्वया ब्रह्मसमाचारः स्थापनीयः शिवाज्ञया ॥२२७७॥

निष्कामक्रोधसंपन्नैः सुशोहौः प्रीतिसंयुतैः ।

भवितव्यं प्रयत्नेन सर्वायासविवर्जितैः ॥२२७८॥

श्रनाचारप्ररहितैः शुभाचारविलासिभिः।

निर्जल्पके: शांतिमये: सुज्ञाने: कोमलाशये: ॥२२७६॥

भवितव्यं प्रयत्नेन मम यज्ञैकहेतवे ।

इत्थमुक्त्वा नमस्कृत्य पुनस्तात् प्रार्थयेत् ततः ॥२२८०॥

श्रहं देवपराघीनः कुलधर्मस्य वाञ्छकः । मदीयं यज्ञमखिलं निःछिद्धं कुरुत प्रमो ॥२२८१॥

प्रार्थ्यत्थं वहुशस्तात् वे माषया संप्रबोध्य च । शक्तीः समर्चयेद् भक्तचा यथालब्घोपचारकैः ।। २२८२।।

of

संपुज्य प्रार्थयेत ताश्च सुप्रसन्नः कृतांजलिः । ह्रीं देवि मातर्जगत्यूज्ये महेशानां च तारिंगि ॥२२८३॥ तव पूजां समासाद्य सफलं सकलं च मे । कार्यं भवतु देवेशि यन्न्यूनं वीरपूजने ।।२२८४।। तन्मेऽपि सफलं सर्वं जायतां कृपया तव । भवत्यो लोकविख्याताः शिवारूपैकधारिकाः ।।२२८४।। भवष्वं च प्रयत्नेन कामक्रोधादिवर्जिताः। पूजने भवतीनां च समयो भाग्यवांछितः ।।२२८६।। मुस्थिरत्वं च शांतित्वं विधेयं मनसि स्वके । भवत्यः परिपूर्गार्थाः स्वार्थेकपरिपूरिताः ॥२२८७॥ कृपां निजां समाधाय साधयंतु कृति मम । चक्रमध्येऽमृतं पोत्वा वक्तव्यं कृपयांबिके ॥२२८८॥ यथा श्रेयो मवेत् साक्षादस्माकं पापहानिता । एवं वहुविधैर्वाक्यै भीषया संप्रबोध्य ताः ॥२२८६॥ निमंत्रयेदथाचार्यं यथालब्धोपचारकैः। संपूज्य प्रार्थयेत् तं च चक्रसांगत्वसिद्धये ।।२२६०।। अ सर्वाम्नायविधानज्ञ सर्वमंत्रेकसाधक । सदाचार महाज्ञान सर्वमंत्रविवेचक ।।२२६१।। षडाम्नायक्रमाभिज्ञ सर्वक्रमनिदर्शक । भवितव्यं यथा देव ज्ञायतेऽन्येश्व माहशैः ।।२२६२।। तथा सर्वं सुसाध्यं हि कार्यं चक्रस्य चोद्यमान् । वराकस्येह मे साक्षाद् यथा स्वेष्टः प्रसोदति ॥२२६३॥ स्थितिर्विज्ञायते सर्वा कुलाचारस्य याहशी। श्रीमद्भिः किमहं वक्ष्ये भवांश्चेव दयानिधिः ॥२२६४॥ एवं संमाष्य माषामिर्गीमिर्बोध्य पुनः पुनः । यामंत्रयेच्च तच्छक्ति यथाल्यासम्बद्धाः हार्रे स्ट्रिश्च

संपूज्य परया भक्तचा प्रार्थयेत तां समाहितः। हीं मातराचार्यधर्मज्ञे कलामालिनि सुस्मिते ॥२२६६॥ तथा भवत्या कर्तव्यं यथेष्टो मे प्रसीदति । सर्वासामिह शक्तीनां भवती पतिरूपिगो ॥२२६७॥ तत एता ग्रपि यथा शासिताः स्यः सदाशये। विधीयतां तथा तत्तु मम कल्याग्रहेतवे ॥२२६८॥ चक्रे कुलामृतं पीत्वा भवितव्यं गुरुप्रिये। कुलधर्मो यथा भूयात् त्वदन्यासु च शक्तिषु ॥२२९९॥ कर्तव्यं च तथा देवि भवत्या समयार्चनम्। तवाधीना च मे पूजा तवाधीनं च मे तपः ॥२३००॥ सुखं मे च तवाधीनं तवाधीनोऽस्म्यहं कुलः । ग्रपराधा मदीयाश्र क्षंतच्याः क्षरणकाः क्षर्णे ॥२३०१॥ भवती परिपूर्णा च शक्तिभिभवती युता। ततः कृपां समाधाय मिय दासे निरंतरम् ॥२३०२॥ एतत् स्तुति समाधाय गुरुपतःया महामनाः। परमानंदसंयुक्तो गृह्णीयात् शिवशासनम् ॥२३०३॥ श्रथाचार्यो गुरुं स्मृत्वा गएोशं स्वेष्टदेवताम् । संशोध्यासनमासीनः सामान्यार्घं विधाय च ॥२३०४॥ भूतापसारएां कृत्वा संविदं शोधयेत् ततः ।

यचोक्तं भावचूडामग्गौ-

विना हेतुकमास्वाद्य क्षोभयुक्तो महेश्वरः ॥२३०४॥ न पूजां न जपं कुर्यात् न घ्यानं न च चितनम् । तस्माद् भुक्त्वा च पीत्वा च पूजयेत् परमेश्वरीम् ॥२३०६॥

विजयाकल्पेऽपि-

संविदासवयोर्मध्ये संविदेव गरोयसी । संवित् प्रयोगस्तेनादौ कर्तव्यः साधकोत्तमैः ॥२३०७॥ दिग्बन्धं छोटिकया तत्त्वत्रयपुरःसरम् ।

दिव्यहृष्ट्या तथा पार्षिण्घातैर्विघ्नात् निवार्यं च ।।२३३१।।

तर्पयेद् ब्रह्मरंध्रे च गुरुपंक्तिपरंपराम् ।

संकेतमुद्रया तद्वद् हृदि मूलेन देवताम् ॥२३३२।।

त्रिधैव तर्पयेद् भक्तचा साधकः गुद्धमानसः ।

संतर्प्यं मूलमंत्रांते देवतायं समर्प्यं च ।।२३३३।।

मूलमध्दोत्तरशतं जप्त्वा देव्यं समर्प्यं तत् ।

विभज्याम्नायपंक्तिस्थसाधकेम्यो यथाक्रमम् ॥२३३४।।

शक्तिभ्यश्च तथानुज्ञामादाय मनुमुच्चरेत् ।

वाग्बीजं वदयुग्मं च वाग्वादिनि ततः पदम् ।।२३३४।।

सर्वसत्ववशं शब्दात् करिस्वाहेति मंत्रतः ।

सर्वसत्ववशं शब्दात् करिस्वाहेति मंत्रतः ।

स्मरत् मूलं तथा देवीं जुहुयात् कुण्डलीमुखे ।।२३३६।।

देवीमिति देवीं ध्यात्वेति ।

यच्च समयातंत्रे—

कालिंदीजलसंदोहकान्तिसंतापहारिग्गोम् ।
वरामयसमायुक्तसव्येतरभुजद्वयाम् ॥२३३७॥
नानारोगहरां रौद्रीं सर्वसौख्यप्रदायिनीम् ।
विजयां त्वामहं वंदे सिद्धां ज्ञानमर्यीं पराम् ॥२३३८॥
ततश्च विजयास्तोत्रं पठेत् संयतमानसः ।
ग्रथानन्तरतो वक्ष्ये विजयास्तोत्रमुत्तमम् ॥२३३६॥
येन स्तुता सिद्धिमूली मिक्षता सिद्धिदा मवेत् ।
ॐ संविदे ब्रह्मसंभूते ब्रह्मपुत्रि सदानघे ॥२३४०॥
भैरवानंदहेत्वर्थं प्रसन्ना मव सांप्रतम् ।
नमामि यामिनीनाथलेखालंकृतमस्तकाम् ॥२३४१॥
भवानीं भवसंतापनिर्वापग्रसुधानिधम् ।
सिद्धमूल्यक्षये देवि होनबोधप्रबोधिनि ॥२३४२॥

राजाप्रजावशंकरि शत्रुकंठत्रिशलिनि। ग्रज्ञानेन्धनदीप्ताग्ने ज्ञानाग्ने ब्रह्मरूपिशा ।।२३४३।। ग्रानंदाद्याहतिप्रीते सम्यक् ज्ञानं प्रयच्छ मे । नमस्यामि नमस्यामि योगमार्गप्रदर्शिनि । जैलोक्यविजये मातः समाधिफलदा भव ।।२३४४।। दण्डाधिरूढपरिपुरितभोगमोक्षां शुण्डक्रमेरा मदनांजनकामिनीनाम्। म्राराधयामि भवशत्रुपराजयन्तीं वर्गेश्वरीं त्रिभुवने विजयेति देवीम् ।।२३४५।। श्रानंदनंदनीनंदे सदा वंदे पदद्वयम् । उल्लासकदलीकंदे स्वच्छन्दे बोधरूपिरिए।।२३४६।। कवयति कवितालहरीं कुरुते तत्त्वार्थंदर्शनं पुंसाम्। ग्रपहरति दुरितनिचयं कि कि न करोति संविदुल्लासः ।।२३४७॥ संविदासवयोर्मध्ये संविदेव गरीयसी। मक्षिता भवनाशाय निर्गंधा बोधरूपिएगो ॥२३४८॥ सुसंवित् शुलिनी देवी विजया संविदङ्कुरा। वैष्णवी तुलसी तुंगा तेजोवल्ली रसेश्वरी ॥२३४९॥ विमर्शाद्वं तरत्नं च वीरलक्ष्मी महोदरी। समया मोहिनी चैव सिद्धमूली महौषधी ॥२३५०॥ मातुलानी ज्ञानरूपा सिद्धविद्या सरस्वती। पठित्वैतानि नामानि सेवयेत् सिद्धमूलिकाम् ।। २३५१।। स प्राप्नोति परां विद्यां भुक्तिमुक्तिषु वांछिताम्। पाण्डित्यं च कवित्वं च मंत्रसिद्धि च विदिति ।।२३५२।।

27365

इति विजयास्तोत्रम् । विजयां गोपयेन् नित्यं शिष्येभ्यक्चापि सुन्दरि । स्वोकृत्य विजयां मंत्री सिंदूरांकितमस्तकः ।।२३५३।।

न्यासजालं स्वकल्पोक्तं कृत्वा ध्यात्वा महेश्वरीम् । श्रंतर्यागांतकं कृत्वा बहिर्यागं ततक्चरेत् ।।२३५४।। मूर्ति वा स्वेष्ट्यंत्रं वा पोठे संस्थाप्य चाग्रतः। सामान्यार्घ्यं च संस्थाप्य कलशं स्थापयेत् ततः ।।२३५५।। प्रराम्य पंचमुद्राभिः कलशं पूर्ववर्मना चतुरस्रा च वृत्ताख्या संपुटांजलिनामिका। योनिमुद्रेति पंचैतास्ततः संशोधयेच्च मान् ।।२३५६।। मान् मचतुष्टयम्। द्वितीयं च तृतीयं च चतुर्थं पंचमं तथा। पंचमीमपि संशोध्य यथोक्तविधिना शिवे ।।२३५७।। श्रीपात्रादीनि पात्राणि स्थापयेच्च ततः क्रमात्। संस्थाप्येवं च पात्राणि नवपात्राणि सप्त वा ॥२३५८॥ पंच वा त्रोिं पात्रािंग तत ग्रात्मप्रपूजनम् । कृत्वा च भोगपात्रेग संतर्प्यं गुरुसंतितम् ।।२३४६।। ततो हृदि परां विद्यां संप्रदायक्रमेगा च। संतर्प्य मूलाधारे स्वां पादुकां तर्पयेत् सुधीः ।।२३६०।। म्रूमध्ये तपंयेद् देवं भैरवं भैरवीं तथा। ततः पुष्पांजींल दद्यात् सहस्रारिनवासिने ॥२३६१॥ तत्त्वशुद्धि ततः कुर्यादृग्मिः सप्तमिरादृतः। लिखेत् त्रिकोगां तीर्थेन वामे करतले बुधः ।। २३६२।। कोरात्रये तथेकं च मध्ये संस्थाप्य वाग्यतः। तारत्रयान्ते च स्वरात् समुच्चार्यं च षोडश ।।२३६३।। प्रकृत्यादि च सूम्यन्तं चतुर्विशतितत्त्वकम्। स्राग्यं मलमुचायं स्थूलदेहं च विश्वकम् ।।२३६४।। शोधयामीति मंत्रेग जुहुयात् कुंडलीमुखे।

स्वाहान्तं बहायो क्रेति। सूलाभाराभिमानिके ।। २३६५।।

952 trayar

y y wan,

7000

ब्रह्माण इदं च न मम प्रोच्चरत् दक्षसंस्थितम्। सञुद्धिखंडचषकं स्वीकृत्य मोगपात्रतः ।।२३६६।। बिन्दुं गृहीत्वा चषके कादिमांतं समुच्चरन् । तारत्रयाद्यं च ततो मायादिपुरुषान्तकम् ।।२३६७।। तत्त्वसप्तकमुच्चार्य कार्मिकं मलमुच्चरेत्। सूक्ष्मदेहं तैजसं च शोधयामीति संवदेत् ॥२३६८॥ स्वाहान्तं विष्णवे चेति हृदयान्जाभिमानिने । विष्णव इदं च न मम प्रोच्चरत् वामसंस्थितम् ।।२३६६।। शुद्धिखंडं च स्वीकृत्य द्वितीयामाहुति दिशेत्। तीर्थादानं च चषके कृत्वा वे भोगपात्रतः। त्रितारं यादिदशकं पंचतत्त्वमतूच्चरेत् ।।२३७०।। शिवादिशुद्धविद्यान्तं मायिकं मलमुच्वरन् । कारएां देहमाभाष्य प्राज्ञं संशोधयामि च ॥२३७१॥ पशुपतये स्वाहेति ह्याज्ञाचक्राभिमानिने। पशुपतये त्विदं च न ममेति समुच्चरत् ॥२३७२॥ ग्रधःस्थशुद्धिखंडेन सहितं जुहुयात् सुधीः । ततः संक्षालिते पात्रो तीर्थादानं च मोगतः ॥२३७३॥ कृत्वा तारत्रयान्ते च पंचाशद्वर्णमातृकाम्। समुच्चार्य प्रकृत्यादिथः त्रिंशत्तत्त्वमुच्चरेत् ॥२३७४॥ पूर्वक्रमेरा च पुनर्जीवात्मानं पदं ततः। तत्त्वत्रयाश्रयमहं शोधयामीति प्रोच्चरेत् ॥२३७५॥ सदाशिवाय स्वाहेति ब्रह्मरंध्राभिमानिने । सदाशिवाय चेदं स्यात् न ममेति समुच्चरत् ॥२३७६॥ स्वीकृत्य मध्यसंस्थं च शुद्धिखंडयुतं तथा।

पूनर्भोगात् समृद्धृत्य बिन्दुं प्रक्षालिते स्वके ॥२३७७॥

चषके मंत्रमुच्चार्य चार्डं ज्वलतिसंज्ञकस्। जुहुयाच्च परातृष्ट्ये ततश्चैवं विभावयेत् ॥२३७८॥ शिवात्मनो गुरोश्चैक्यमानंदिनर्भरांतरः। स्वे स्वे दिशि च देवेम्यो वॉल दद्यात् समाहितः ॥२३७६॥ वदुकाय च योगिन्यै क्षेत्रपालाय वै तथा। गएोशाय च सूतेभ्यो राजराजेश्वरस्य च ॥२३८०॥ तत् तन्मंत्रोग् च यथासंप्रदायं विचक्षागः। ततः पीठं च मंडूकात् परतत्त्वान्तमर्चयेत् ॥२३८१॥ पीठशक्ति पीठमंत्रं पूजियत्वा परांबिकाम् । ध्यात्वा हृत्कमले पूज्य मानसैरुपचारकैः ॥२३८२॥ संप्रार्थयेव बाह्यपूजाग्रह्णाय महेक्वरीम् । वहन्नासाध्वनानीय त्रिखंडकुसुमाञ्जली ।। तत्पुष्पं निक्षिपेत् पीठे मूर्त्ती वा भक्तितत्परः ॥२३८३॥ श्रावाहिन्यादिका मुद्राः सकलोकरगान्तिकाः । दर्शयित्वा परांबाये परमीकरणं चरेत् ॥२३८४॥ ततक्त्रेवं यथालाभैरुपचारश्च पूजयेत्। षोडशैश्च चतुःषष्टिविधैः पंचिवधैश्च वा ॥२३८४॥ संपूज्य परमेशानीं महानैवेद्यमपंयेत्। दक्षहस्ते शुद्धिखंडं वामहस्तेन संस्पृशन् ॥२३८६॥ श्रीपात्रं प्रपठेन् मंत्रं घ्यायन् देवीं समाहितः। 🕉 परमं वाक्णीकल्पं कोटिकल्पान्तकारिंगा ॥२३८७॥ गृहारा शुद्धिसहितं देहि मे मोक्षमध्ययम् । शुद्धचासवरसास्वादपरमानंदनिर्भरे । श्रपारे मवसंसारे त्राहि मां परमेश्वरि ॥२३८८॥ मूलान्ते शुद्धिसहितमासवं श्रीपदात् पुनः। परादेव्यं निवेदयामि नमञ्चेतेन संदिशेत् ॥२३८६॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by edangotri

ततो वारत्रयं तर्प्यं श्रीपात्रामृतवारिएा। प्रराम्य च पुनर्दद्यात् पंचपुष्पांजींल सुधोः ॥२३६०॥ ततः संपूजयेद् भक्त्या ह्यंगावरणदेवताः। स्वकल्पोक्तविधानेन श्रीकुलोक्तक्रमं त्विदम्।।२३६१।। कालीकुले विशेषार्घ्यस्यैव श्रीपात्रता स्मृता । तमेव संमुखे कृत्वा मंत्रमेनमुदीरयेत् ॥२३६२॥ प्ररावं कालियुगलं कूर्चयुग्मं समुच्चरत् । श्रमृतमासवं चेति विधिवत् स्वादुशब्दतः ।।२३६३।। कुरुद्वयं तथा स्वाहा चतुर्विशतिवर्णवान् । सप्तवारिममं जप्त्वा पूर्ववदुच्चरेत् ततः ।।२३६४।। एतत् शुद्धचासवं देव्ये ग्रमुक्ये ह्यपंयामि हृत्। एवं निवेद्य देव्याश्च परिवारात् प्रतप्यं च ॥२३६५॥ श्रंगावृत्तियुतां तद्वत् शेषिकायै वर्ति दिशेत्। मूलं सहस्रं जप्त्वाथ जुहुयात् तद्दशांशतः ॥२३६६॥ ततः कवचसाहस्रनामस्तोत्रादिसंस्तवै:। स्तुत्वा देवीं प्रसन्नात्मा वीरपूजार्थमीश्वरीम् ॥२३९७॥ प्रार्थयेत् परया मक्तचा कृतांजलिपुटः सुधीः। श्रीमातः परमेशानि त्वत्प्रीत्यर्थमहं मुदा ॥२३९८॥ चक्रार्चनं करोम्यद्य गृहारा शिवसंयुता ।

संपूज्य तस्मै तत्पात्रं समर्प्य प्रश्मेत् तथा ।
गुरोरमावे तत्पात्रं जले निक्षिप्य वे तथा ॥२४००॥
वीरान् शिवधिया शक्तो देंवीबुद्धघोपचारकैः ।
समर्च्यं शक्तिपात्रं तु तस्यै दद्यादनेन च ॥२४०१॥
ॐ गृह्य देवि महामागे शिवे कालाग्निरूपिशि ।
स्वर्श्यात्रस्थितं द्रव्यं शुद्धिखंडं समाहर ॥२४०२॥

एवं प्रार्थ्य स्वदक्षे तु संस्थितं श्रीगुरुं ततः ॥२३६६॥

Angelonario

Mary Cont

el le

म्रालिपात्रिमदं तुभ्यं दीयते पिशितान्वितस्।
स्वीकृत्य सुभगे देवि श्रियं देहि रिपूत् दह ॥२४०३॥
वीरपात्रासवं तेभ्यो दत्वा शुद्धियुतं तथा।
ते कराभ्यां गृहोत्वा तु मूलमष्टोत्तरं शतम् ॥२४०४॥
जिपत्वा च समर्प्यास्यं नत्वा ध्यात्वा कुलेश्वरीम्।
न दद्यादेकहस्तेन नैकहस्तेन संयजेत् ॥२४०५॥
कराभ्यां पात्रमादाय जुहुयात् कुंडलीमुखः।
ततः सामियकैः सार्धं पात्रवंदनमाचरेत् ॥२४०६॥

तन्मंत्रश्च-

ॐ श्रीमद्भैरवशेखर प्रविलसच्चंद्रामृतप्लावितम् क्षेत्राधीश्वरयोगिनीगग्गमहासिद्धेः समाराधितम् । श्रानंदागमकं महात्मकमिदं साक्षात् त्रिखंडामृतम् वंदे श्रीप्रथमं करांबुजगतं पात्रां विशुद्धिप्रदम् ॥२४०७॥ प्रणम्यानेन पात्रं तु कृत्वा वामकरे पुनः। शुद्धिलंडं दक्षहस्ते गृहोत्वा तो नियोज्य च ॥२४०८॥ ध्यायेदनन्यमनसा सुरां सिद्धिप्रदायिनीम् । समुद्रे मथ्यमाने तु क्षीराब्धौ सागरोत्तमे ।।२४०६।। तत्रोत्पन्ना सुरादेवी कन्यकारूपधारिग्गी। गोमूत्रसहशाकारा फेनामृतसमुद्भवा ।।२४१०।। ग्रष्टादशभुजे युक्ता नीरजायतलोचना । नवकुंभधरा सा तु नवपात्रधरा तथा ।।२४११।। नग्ना कालाग्निसहशी कृतहस्तोल्लसन्मुखी। श्रानंदोऽस्या करे जात श्रानन्दश्च महेश्वरः ॥२४१२॥ तयो यंगिऽमवत् ब्रह्मा विष्णुश्चाह्लाद एव च। तस्मादिमां सुघां देवीं पूर्णार्हतां जुहोम्यहस् ।।२४१३।। इदं पवित्रममृतं पिबामि भवभेषजम् । पशुपाशसमुच्छेदकारएां भैरवोदितम् ।।२४१४।। CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

चित्ते स्वातन्त्र्यभावत्वात् तस्यानंदमयत्वतः । तन्मयत्वाच्च भावानां भावांश्चांतर्हिता रसे ॥२४१५॥

स्वस्वातन्त्र्यविकाशाय सुरसस्तेन पीयते । तस्मादिमां सुधारूपां पूर्णाहन्तां पिबाम्यहम् ॥२४१६॥

ग्रहंतापात्रसंभूतिमदंतापरमामृतम् । पराहंतामये वह्नो जुहोमि शिवरूपताम् ॥२४१७॥

स्वात्ममूलित्रकोरणस्थे कोटिसूर्यसमप्रमे । कुण्डल्याकृतिचिद्वह्नौ हुनेद् द्रव्यं समंत्रकम् ।।२४१८।।

एतान् मतून् पठित्वा च स्मृत्वा मूलं पुनस्तथा। ग्राज्ञां संप्रार्थयेत् शक्तिसाधकेभ्यो जुहोमि च ॥२४१६॥

ग्रात्मतत्त्वं शोधयामि स्वाहेति कुण्डलोमुखे । शिवोऽहमिति स्वात्मानं ध्यायन् वे जुहुयात् ततः । शुद्धिखंडं गृहोत्वा तु पात्रमाधारके न्यसेत् ।।२४२०।।

शक्तिसंगमे विशेषः—

गृह्णामीति प्रगृह्णस्य गौडे पानक्रमं भवेत् । जुहोमि प्रजुषस्वेति केरले पानकर्म च ॥२४२१॥

होष्यामि प्रजुषस्वेति काश्मीरे पानमीरितस् । पुनद्वितीयपात्रं तु समीनं च ददेद् गुरुः ।।२४२२।। इति ।

गुरुरित्युपलक्षराम् । चक्रेश्वरः स्वकरौ क्षालियत्वा तु पात्राणि परिवेशयेत् । स्रतश्च पृष्ठदेशसंस्थापिते पात्रे करौ प्रक्षाल्य परामृतं पात्रेषु दद्यात् ।

दानपरिमाणमाह समयातन्त्रे -

न दद्यात् कर्षतो न्यूनं न कर्षादिधिकं तथा। द्वितीयं पात्रमुत्तथाप्य पुनर्वदनमाचरेत्।।२४२३।। त्तन्मन्त्रश्च-

0

हैमं शीधु रसावहं दियतया दत्तं च पैयादिभिः किचिच्चंचलरक्तपंकजहशा सानंदमुद्वीक्षितम् । वामे स्वादुिवशुद्धशुद्धिकवलं पागौ निधायात्मके वंदे पात्रमहं द्वितीयमधुनानंदैकसंवर्धनम् ।।२४२४॥ मूलं विद्यातत्त्वमंते शोधयाम्यग्निवल्लमा । जुहोम्युच्चार्य जुहुयात् समीनं साधकाग्रग्गीः ।।२४२४॥ पात्रं चकेश्वरस्तद्वत् तृतीयं परिवेश्य च । देवं ध्यात्वा महामुद्रासहितं तीर्थमपंयेत् । तृतीयं पात्रमुत्त्थाप्य पुनर्वदनमाचरेत् ।।२४२६॥

तन्मन्त्रश्च-

5

सर्वाम्नायकलाकलापकितितं कौतूहलोद्योतितं चंद्रोपेन्द्रमहेन्द्रशंभुवरुग्जब्रह्मादिभिः सेवितम् । ध्यातं देवगगः परं मुनिगगः मीक्षािथिभिः सर्वदा वंदे पात्रमहं तृतीयमधुनानंदैकसंवर्धनम् ।।२४२७।। मूलान्ते शिवतत्त्वं च शोधयाम्यनलांगना । जुहोम्युच्चायं जुहुयात् समुद्रं स्थिरमानसः ।।२४२८।। ततश्रतुर्थपात्रं तु परिवेश्य यथाविधि । शुद्धि मीनं च मुद्रां च तथैव विनिवेद्य च । चतुर्थं पात्रमुद्धृत्य तद्वंदनमथाचरेत् ।।२४२६।।

तन्मंत्रश्च-



मद्यं मीनरसावहं हरिहरब्रह्मादिमिः पूरितं
मुद्रामेथुनधमंकमंनिरतं क्षाराम्लितक्ताश्रयम् ।
ग्राचार्याष्टकसिद्धभैरवकलान्यासेन संशोधितं
पायात् पंचमकारतत्त्वनिलयं पात्रं चतुर्थं नमः ॥२४३०॥
मूलं प्रकृतितत्त्वं च शोधयाम्यनलांगना ।
जुहोम्युक्तवा च जुहुयात् त्रिभिः सह चतुर्थंकम् ॥२४३१॥

तिभः सहेति मांसमीनमुद्राभिः।
ततश्च पंचमं पात्रं परिवेश्य च पूर्ववत्।
शक्तपुच्छिष्टं प्रार्थयेच्च मंत्रमेनं समुच्चरत्।।२४३२॥
परेशि भक्तिसुलभे परामृतरसिप्रये।
कटाक्षमरितं पात्रशेषं देहि दयां कुरु ॥२४३३॥

पुनश्च-

ग्रानंदेन विना देवि न च तृप्यन्ति मातरः। तस्मादानंदपात्रं मे देहि दिब्यं वरानने।।२४३४॥ स्वीकृत्य प्रार्थनां शक्तिः सावशेषं स्वपात्रकम्। प्रीत्याचार्याय दद्याच्च मंत्रोच्चाररणपूर्वकम्।।२४३५॥

तन्मंत्रश्च-

पीतशेषं प्रदास्यामि वत्स तुभ्यं कुलामृतम् । तव शत्रुत् हिनष्यामि दास्यामि परमां श्रियम् ॥२४३६॥ ग्रादाय साधकस्तच्च वीरेभ्यः संविभज्य ह । स्वयं चापि पठत् मंत्रं स्वीकुर्याद् भक्तितत्परः ॥२४३७॥

तन्मंत्रश्च-

म्रादाय च स्वयं साक्षादादिशक्ते मुंखांबुजात्। गिलतं परमानंदरससारं पिबाम्यहम्।।२४३८।। एवमुक्त्वा पंचमं च पात्रमुत्त्थाप्य वन्दनम्। पठित्वा जुहुयादन्त यंथेच्छाचर्वणोन च ॥२४३९॥

त्तनमंत्रश्च-

ब्राधारे भुजगाधिराजवलये पात्रं महीमण्डलं मद्यं सप्तसमुद्रवारि पिशितं चाण्दौ च दिग्दंतिनः। सोऽहं भैरवमर्चयन् प्रतिदिनं तारागर्णरक्षते – रादित्यप्रमुखेः सुरासुरगर्णराज्ञाकरैः किंकरैः।।२४४०।।

为



मूलं पुरुषतत्त्वां च शोधयामि शुचिप्रिया।
जुहोम्युक्तवा च जुहुयात् सशेषां कुंडलीमुखे ॥२४४१॥
नानाव्यांजनसंयुक्तमन्नां स्वीकृत्य साधकः।
परिवेश्य तथा षष्ठं पात्रां संध्यामुपाचरेत् ॥२४४२॥
संध्यां कुलसंध्याम्।

यच्च रेवतीतंत्रे—

प्रवद्यात् प्रथमे पात्रो पिशितां परमेश्वरि । द्वितीये तु वरारोहे मत्स्यां वद्यात् सुसाधितम् ।।२४४३।। तृतीये तु महेशानि मुद्रां वद्यान् मनोरमाम् । चतुर्थे च महेशानि मांसै मंत्स्येश्च मुद्रया ।।२४४४।। पंचमे तु महेशानि ह्यद्यात् मंत्री यथेच्छ्या । शक्तवत्युच्छिष्टसमायुक्तां पंचमां पात्रमाहरेत् ।।२४४५।। ततश्च परमेशानि कुलसंध्यां समाचरेत् ।

कुलसंध्यां पंचमिमिति । पंचपात्राधिकारे बोध्यम् । एकादशपात्राधिकारे तु विशेषो यथा तत्रैव ।

कौलसर्वस्वे चं-

शुद्धचा तु प्रथमं पात्रं मीनेनैव द्वितीयकम् ।
मुद्रया तु तृतीयं स्यात् त्रिभिः सह चतुर्थकम् ।।२४४६।।
तदन्यत् पंचमे दद्यान् नानाव्यंजनसंयुतम् ।
परमान्नं तथा षष्ठे सप्तमे पिष्टलड्डुकान् ।।२२४४७।।
श्रष्टमे दिधदुग्धादि नवमे च फलादिकम् ।
लेह्यादि दशमे दद्याद् षद्रपात्रे यहच्छया ।।२४४८।।
श्रन्यदिष तत्रैव—

प्रथमे तु गुरोध्यानं द्वितीये स्वेष्टांचतनम् । प्राणायामं तृतीये च चतुर्थे जपमाचरेत् ।

पंचने शक्तिशेषं च पंचमं तदनन्तरम् ॥२२४६॥ इति । CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Dellin. Digitized by eGangoth एवं यथासामर्थ्यं यावन्त चलते द्दिष्टिरिति पुरस्कृत्य पंचमान्तं सप्तमान्तं नवमान्तमेकादशान्तं वा बोध्यम् । इति वीरपरम् । दिव्यस्तु—

स्मरत् गुरुं पिवेत् द्रव्यं पात्रे पात्रे जपं चरेत्। स शब्दं न पिबेत् द्रव्यं न बिंदुं पातयेदधः ।।२४५०।।

तेन यथा शब्दो न जायेत भूमौ च बिन्दुरिप न पतित तथा सावधानेन पानं विधेयमिति ।

ग्रथ कुलसंध्या यथा यामले—

शिवशक्तिसमायोगो यस्मिन् काले प्रजायते । सा संध्या कुलनिष्ठानां समाधिस्थैः प्रगीयते ॥२४५१॥

तद्यथा-

स्वर्शाक्तं सम्मुखे कृत्वा मालं स्पृष्टा शतं जपेत् ।
केशे शतं च सिंदूरमंडले च शतं जपेत् ॥२४४२॥
कुचयुग्मे शतद्वन्द्वं नामौ यौनौ शतं शतम् ।
शतत्रयं च तां पश्यन् निर्निमेषतया जपेत् ॥२४४३॥
ततश्चाष्टोत्तरशतं प्रग्पवं स्वध्वजोपिर ।
जप्त्वा शिवोऽह्नात्मानं देवोरूपां विमाव्य ताम् ॥२४४४॥
सुविकाश्य ध्वजं योनि स्मरन् मूलं रमेच्च ताम् ।
रेतःपाते पठेदेनं मूलान्ते मनुमुत्तमम् ॥२४४४॥
धर्माधर्महिविदीप्तस्वात्माग्नौ मनसा स्रुचा ।
सुषुम्गा वर्त्मना नित्यमक्षवृत्तो र्जुहोम्यहम् ॥२४५६॥
स्वाहान्तं मंत्रमुच्चार्य पुनरन्यं पठेत् मनुम् ।
प्रकाशाकाशहस्ताम्यामवलंव्योन्मनीस्रुचा ।
धर्माधर्मकलास्नेहं पूर्णवह्नौ जुहोम्यहम् ॥२४५७॥
स्वाहांतेनाहुति पूर्णां रेतोरूपां विमृज्य च ।
तदुत्पन्तामृतं तत्र पुष्पेगोद्धृत्य साधकः ॥२४५६॥

निघाय करिमश्चित् पात्रे गंधाष्टकयुतं तथा । कृत्वा मंत्रोग संशोध्य देवीं तेन प्रतर्पयेत् ॥२४५६॥

गंधाष्टकं तु यमालिकातंत्रे-

रक्तं श्वेतं चंदनं स्यात् कर्प्रं रोचना तथा।
कस्तूरो शिह्लकं चंव कुंकुमोशीरकौ तथा।।२४६०।।
गंधाष्टकिमदं भद्रे शक्तिद्रव्येषु मेलयेत्।।।२४६१।।
मंत्रेण कुण्डगोलशोधनमंत्रोणेति।

ततः सामयिकेभ्यस्तु विभज्य च ततः स्वयम् । उत्तथाय षष्ठं पात्रं च तद्वंदनमथाचरेत् ॥२४६२॥

तन्मंत्रश्च-

ख्रां चामरमद्रपीठपरमानंदोदयं दायकं वाजीदन्तिस्रनोहरं सुखकरं सायुज्यसाम्राज्यदम् । नानाव्याधिमवांधकारहरगां जन्मान्तरध्वंसनं श्रोमद्भरवभैरवीप्रियतरं पात्रां च षष्ठ नुमः ॥२४६३॥ मुलान्ते च मनस्तन्त्वं शोधग्रास्य

मूलान्ते च मनस्तत्त्वं शोधयाम्यग्निवल्लभा । जुहोम्यन्ते च जुहुयात् शक्तिद्रव्येगा संयुतम् ।।२४६४।।

स्वीकृत्य परमान्नं तु सप्तमं परिवेश्य च । पिष्टलड्डुकसंयुक्तं पात्रवंदनमाचरेत् ॥२४६५॥

तन्मंत्रश्च-

जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिबोधपवनं चैतन्यसाक्षिप्रदं विद्युद्भास्करविद्धचंद्रधनुषां ज्योतिःकलाव्यापितम् । वामा पिंगलमध्यगा त्रिवलया सत्कुंडली चोध्वंगं पात्रं सप्तमपूरपोन तरुगानंदप्रदं पातु माम् ॥२४६६॥ मूलान्ते बुद्धितत्त्वं च शोधयामि शुचिप्रिया । जुहोम्युक्तवा च जुहुयात पिष्ट्रसुद्धुकुसंयुत्तम् । । २४६७ मध्या ततक्वैवाष्टमं पात्रं परिवेश्य यथाक्रमम् । दिधदुग्धादिसहितं ततो वंदनमाचरेत् ॥२४६८॥

तन्मंत्रश्च-

खड्गं पादुकमज्जनं सुतिलकं कंठे हि सारस्वतं शत्रो वीग्बलशौर्यकार्यहरणं देहस्थितेः कारणम् । वांच्छासिद्धिकरं मनःस्थितिकरं वश्यं जगद्योषितां पात्रं चाष्टममष्टसिद्धिकरणं प्रौढप्रसन्नं मजे ।।२४६६।। मूलान्तेऽहंकारतत्त्वं शोधयाम्यनलांगना । जुहोम्यामाष्य जुहुयाद् दिधदुग्धादिसंयुतम् ।।२४७०।। ततश्च नवमं पात्रं परिवेश्य यथाविधि । तेभ्यश्च नवमं दद्यात् फलमूलादिसंयुतम् ।। वंदनं पूर्ववत् कुर्यादेनं मंत्रमुदीरयन् ।।२४७१।।

तन्मंत्रश्च—

सर्वानन्दकरं सदाशिवपदं सर्वार्थसंपत्प्रदं साम्राज्यार्थकरं समस्तसुखदं चाज्ञानविष्वंसनम् । ग्रायुष्कांतियशोविवर्धनकरं संसारमोहिच्छदं पात्रं लक्षगुर्णात्मकं च नवमं प्रौढप्रतापं मजे ।।२४७२॥ मूलान्ते शक्तितत्त्वं च शोधयाम्यनलांगना । जुहोम्यन्ते च जुहुयात् फलमूलादिसंग्रुतम् ॥२४७३॥ हातश्च दशमं पात्रं परिवेश्य यथाविधि । पूर्ववद् वंदनं कुर्यात् मंत्रमेनं समुच्चरन् ॥२४७४॥

मंत्रश्च—

ब्रह्मविष्णुमहेशानां देवानां च विशेषतः । दुर्लभं पावनं पात्रं दशमं प्रगमाम्यहम् ॥२४७५॥ मूलान्ते भैरवं तत्त्वं शोधयामि शुचिप्रिया । जुहोम्युच्चार्यं जुहुयात् सलेह्यं मक्तितत्परः ॥२४७६॥

ततक्रचैकादशं पात्रं परिवेश्य च पूर्ववत्। श्राचरेद् वंदनं तद्वत् पात्रं कृत्वा करांबुजे ॥२४७७।

तन्मंत्रश्च-

पापघ्नं शांतिसुखदं दिव्यं स्वादु सुखालयम् । पात्रमेकादशं वंदे गुरुसेवासुखागतम् ।।२४७८।।

मूलान्ते सर्वतत्त्वं च शोधयामि शुचिप्रिया। जुहोम्युक्तवा च जुहुयादेवं हि कुंडलीमुखे । ततो यथेष्टं भुंजीत नानास्वादुसमन्वितस् ॥२४७६॥

यावन्न चलते दृष्टि यीवन्न चलते मनः।

तावत् पानं प्रकर्तव्यं पशुपानमतः परम् ॥२४८०॥ मंत्रार्थस्फुरएगर्थाय ब्रह्मज्ञानस्थिराय च। म्रालिपानं प्रकुर्वीत लोलुपो नरकं व्रजेत् ॥२४८१॥ इति ।

एकादशपात्रस्वीकाराशक्तौ नवमं सप्तम पंचमं वा गृह्णोधात्। एतद् थाक्यं गृहस्थसाधकानामवश्यमेवावगंतव्यम् । यत्तु - "पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा यावत् पतित भूतले । उत्थाय च पुनः पीत्वा भूयो जन्म न विद्यते ।।" इति तत्त्त्तमाधिकारिपरम् ।

एवं कृत्यं समाप्यान्ते शांतिस्तोत्रं समाहितः । पठित्वा च ततः पात्रप्रशंसाख्यं स्तवं पठेत् ।।२४८२॥ तदन्ते संस्तवेद् वीरात् वीरवंदनतः सुधीः। कुलस्तोत्रं पठित्वा तु प्रराम्य चक्रगाँस्तथा ॥२४८३॥ ब्रह्मार्पिऐन मनुना कृत्यं दैव्ये समर्प्य तत्। क्षमाप्य च जगद्धात्रीं घूपैर्नीराजनादिमिः ।। २४८४॥ तांवूलवोटिकामिश्च संपूज्य परदेवताम् । श्रीपात्रमात्मिन तथा संयोज्य कलशं तथा ॥२४८१॥ मंत्रेग भगमालिन्या समुत्त्थाप्य यथाविधि । ख्रिवावभारएां कुर्यादर्घदानेन वै तथा ॥२४८६॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

यज्ञच्छिद्रं तपिक्छिद्रं यच्छिद्रं यजने मम । तत् सर्वमच्छिद्रमस्तु भास्करस्य प्रसादतः ॥२४८७॥

ततः श्रीपरमेशानीं विसृजेद् हृदि मुद्रया ।

मुद्रया संहारमुद्रया ।

प्राणायामषडंगादि कृत्वा ध्यायन् स्वदेवताम् ।
पात्रं प्रक्षात्य स्वे वामे भूमौ पूज्यं सपुष्पकम् ॥२४८८॥
दत्वा श्रीगुरवे तत्र भूमौ बोजं कनिष्ठया ।
मायां च विलिखेद्वीरस्तन्मृदा तिलकं तथा ॥२४८६॥
कुर्यादनेन मन्त्रेण निजमाले समाहितः ।
यं यं स्पृशामि पादेन यं यं पश्यामि चक्षुषा ॥२४६०॥
स एव दासतां यातु यदि शक्रसमो भवेत् ।
ततः श्रीचक्रराजं तु संस्नाप्य गुद्धवारिणा ॥२४६१॥
पुष्पादिमिः समम्यच्यं गोपयेत् पशुदृष्टितः ।

यच्च-

स्वमंत्रसंस्कृतं यंत्रं सर्वदा गोपयेत् शिवे ॥२४६२॥ इति । ततः पुष्पादिनिर्माल्यं धारियत्वा च तज्जलम् । पोत्वा पठेदिदं श्लोकं संस्मरन् देवतां हृदि ॥२४६३॥ तज्जलं यंत्रप्रक्षालनजलम् ।

मंत्रश्च-

गंगापुष्करनर्मदासु यमुनागोदावरोगोमती— गंगाद्वारप्रयागतीर्थवदरीवाराग्गसीसिघुषु । रेवा सेतुसरस्वतीप्रभृतिषु ब्रह्माण्डभांडोदरे तीर्थस्नानसहस्रकोटिफलदं श्रोचक्रपादोदकम् ॥२४६४॥

सम्यक् शतक्रतून् कृत्वा यत् फलं लमते नरः। तत् फलं समवाप्नोति कृत्वा श्रोचक्रपूजनम् ॥२४६५॥

एवं चक्रं समाप्याथ दत्वा तेभ्यश्च दक्षिग्गाम् ।
विसर्जयेद् वीरशक्तीः प्रग्गम्य च मुहुर्मुहुः ॥२४६६॥
प्रतिपानवशात् किश्चत् साधको सूच्छितो यदि ।
तदा चिचा प्रयोक्तव्या नान्यकाले कदाचन ॥२४६७॥
प्रानंदनाशिनीं चिचां यस्तु चक्रे प्रयोजयेत् ।
योगिनीसहितास्तस्य हिंसां कुर्वन्ति भैरवाः ॥२४६८॥
इत्येतत् कथितं सर्वं कुलचक्रार्चनक्रमम् ।
गोपितव्यं गोपितव्यमनहेषु च सर्वदा ॥२४६६॥

इति श्रीमदागमरहस्ये सत्सग्रहे चकाचंनकमो नाम दशमः पटलः ॥१०॥ ग्रादितश्चाष्टः त्रिशत्।

ग्रथ एकादशः पटलः।

श्रघुना कथ्यते सम्यगुल्लासभेदनिर्गयम् । तथैव चक्रभेदं च वासनां च तयोरिष ।।२५००॥

यच्च श्रीकुलाग्वि—

पानभेदपरोल्लासप्रमाग्गस्थितिलक्षग्गम् । श्रविज्ञायाचरेद् यस्तु स भवेदापदां पदम् ॥२५०१॥

श्रधुना कथ्यते सम्यगुल्लासभेदनिर्ग्यम् । यस्य विज्ञानमात्रेग्ण जायते दिन्यभावना ।।२५०२।।

श्रारं मस्तरुएइचेव योवनः प्रौढ एव च।

तदन्तश्चोन्मनामावावस्थोल्लासस्तु सप्तमः ॥२५०३॥

तंत्रान्तरे तदन्तोन्मनयो लंक्षणम्-

तदन्तं जाग्रदित्युक्तं चोन्मना स्वप्नसंज्ञकः । सप्तोल्लासं च यो वेत्ति स मुक्तः स च कौलिकः ।।२५०४।।

ग्रनवस्था सुषुप्तिश्च ग्रवस्थात्रयसैयुतम् । स्थूलान्तमात्मतत्त्वां स्याद् विद्या सूक्ष्मान्तगोचरम् ॥२५०**५॥**

शिवतत्त्वं कारणान्तिमिति तत्त्वत्रयं स्मृतम् । एवं तत्वत्रयज्ञानं गुरो ज्ञीत्वा य ग्राचरेत् । स जीवन्नेव मुक्तः स्यादिति शंकरभाषितम् ।।२५०६।।

ग्रथोल्लासानां लक्षणं कुलार्णवे-

तत्त्वत्रयं स्यादा<u>रंभः कथितः</u> कुलनायिके । कथितस्त्रक्णोल्लासस्त्रक्णं सुखमम्बिके ।।२५०७।। यौवनं मनसः सम्यगुल्लासः कथितः प्रिये ।

स्खलनं हङ्मनोवाचां प्रौढ इत्यिमघोयते ॥२५०८॥

सद्योत्लासपरे चक्रे य इच्छेत् पात्रमेलनम् । ग्रर्वाक् प्रौढसमुङ्लासाझैव कुर्यात्-कदाचन । यथाधिकारं तत्रापि कर्तव्यं पात्रमेलनम् ।।२५०६।।

श्रदीक्षितैरनाचारैरमंत्रज्ञैरदैवतैः ।
दूषकैः समयभ्रष्टै नं कुर्यात् पात्रमेलनम् ।।२५१०।।
स्त्रीद्विष्टै गुरुशप्तैश्च मक्तिहीनै दुरात्मभिः ।

कुलोपदेशहोनैश्च न कुर्यात् पात्रमेलनम् ।।२५११।। श्रमिज्ञं मन्यमानैश्च मपंचव्रतथारिभिः ।

पशुभिः क्षुद्रकर्मस्यै नं कुर्यात् पात्रमेलनम् ।।२५१२।।

पदवाक्यप्रमाग्रज्ञाः श्रुतिस्मृत्यर्थवेदिनः । कुलधर्मानभिज्ञाङ्चेत् तत्संगं वर्जयेत् प्रिये ।।२५१३।। स्रोपुत्रमित्रबंधूनां स्निग्धानामपि पार्वति । कुलाचारानभिज्ञानां संगति वर्जयेत् प्रिये ।।२५१४।।

सत्कुलेऽपि प्रसूतानां वृद्धस्वाचारर्वातनास् । त्वत्पूजाविमुखानां च संगति वर्जयेत् प्रिये ।।२५१५।। CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

usingenon.

anis 21/49.

श्रदृष्टपुरुषाणां च देशांतरिनवासिनाम् ।
विना संकेतयोगेन न कुर्यान् मेलनं प्रिये ।।२४१६।।
एकपात्रं न कुर्वीत यदि साक्षान् महेश्वरः ।
मंत्राः पराङ्मुखा यांति विघ्नाश्चैव पदे पदे ।।२५१७।।
स्वपात्रस्थितहेतुं च न दद्याद् भैरवाय च ।
यदि दद्यात् कुलेशानि देवताशापमाप्नुयात् ।।२५१८।।
श्रासनं भोजनं पात्रमंवरं शयनादिकम् ।
श्रामकौरनहेँश्च संकरं नेव कारयेत् ।।२५१६।।
स्रोतोऽभेदेन वा कुर्यात् कौलिकैः पात्रमेलनम् ।
स्रोतोऽभेदेनाम्नायाभेदेन कुलभेदेन वेति कालीकल्पलताकारः।

यच्च कुलाग्वि—

पूर्वदक्षिरायोरेक्यमुदक्पश्चिमयोस्तथा।
तिस्मन् क्रमार्चनपरं वीरं: स्वसहशेरिप ।।२५२०।।
कामिनीभिश्च तत् कुर्यात् स्रोतसां च चतुष्ट्ये।
योगिमि योगिनीभिश्च प्रदत्तं पूर्णपात्रकम् ।
स्वमातृपादुकामूलमंत्रं जप्त्वा पिबेत् प्रिये।।२५२१।।
कवित् यहच्छ्या प्राप्तमलिपात्रं तु भक्तितः।
स्रादाय पूर्ववज्जप्त्वा पिबेद् देवि गुरुं स्मरन्।।२५२२।।

निजपात्रे समादायेत्यर्थः ।

गुरुशक्तिसुतानां च गुरुज्येष्ठकनिष्ठयोः। स्वज्येष्ठस्यापि चोच्छिष्टं खादेन्नान्यस्य पार्वति ।।२४२३।। शक्तयु च्छिष्टं पिबेद् द्रद्यं वीरोच्छिष्टं तु चर्वणम्। स्रात्मोच्छिष्टं न दातव्यं परकीयं न मक्षयेत् ।।२४२४।। उच्छिष्टं मक्षयेत् स्रोणां ताम्यो नोच्छिष्टमपंयेत्। चक्रमध्ये तु देवेशि नान्यथा पतनं भवेत् ११२४२४।। Gangotri CC-0. Artisakthi R. Nagarajan Collection, New Dahi: Digitiza ४, १९ Gangotri 2 is ye any

कनिष्ठानां स्वशिष्याराां दद्यात् स्वोच्छिष्टमम्बिके । दद्यात् स्नेहेन योऽन्येभ्यः स मवेदापदां पदम् ।।२५२६।। श्रासवोच्छिष्टपात्रं तु यो वा गृह्णाति मूढघी: । स्नेहाल्लोमाद् भयाद् वापि देवताशापमाप्नुयात् ।।२५२७।। प्रौढोल्लासे महेशानि कुर्याद् वलिविसर्जनम् । प्रौढोल्लासं तु कथितं षष्ठादौ पंचमान्तरे ।।२५२८।। पूजागृहात् बहिः कुर्यात् त्रिकोएां तु गृहान्तरे । गंघपुष्पाक्षतेः पूज्य घ्यायेदुच्छिष्टभैरवम् ।।२५२६।। ो गदात्रिशूलडमरुपात्रहस्तं शिलोचनम् । कृष्णाभं भैरवं घ्यायेत् सर्वविघ्नविनाशनम् ॥२५३०॥ पूर्वोक्तवद् वींल दद्यादवश्यं तत्रा साधकः। ततो दद्यात् सुशीलाय प्रसादं कुलनायिके ।।२५३१।। स्वाभीष्ट्रचेष्टाचरएां प्रौढांतः परिकोर्तितः । प्रौढ़ांतोल्लासके देवि मुदिते योगिमंडले ।।२५३२।। योगिनीमंडले चैव चक्रमानंदमुच्यते। तदारूढेषु वीरेषु कार्याकार्यं न विद्यते ।।२५३३।। इत्येव शास्त्रसंपत्तिरित्याज्ञा पारमेश्वरी। म्रत्र यद् यद् कृतं कर्म शुभं वा यदि वा शुभस् ॥२५३४॥ तत्सर्वं देवता प्रोत्यं जायते सुरसुन्दरि । जल्पो जपफलं तंद्रा समाधिरिश्घीयते ॥२५३५॥ विक्रिया पूजनं देवि छर्दितं भैरवो विलः। मुक्तिः स्यात् शक्तिसंयोगः स्तोत्रं तत्कुलभाषग्गम् ॥२५३६॥ न्यासोऽवयवसंस्पर्शः कंडूतिर्हवनक्रिया । वीक्षरां घ्यानमीशानि शयनं वंदनं भवेत् ।।२५३७।। तदुल्लासञ्च वीराएां या चेण्टा सा च सत्क्रिया। कार्याकार्यविचारं तु यः करोति स पातको ।।२५३८।। CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

एतच्चक्रगता वीरा विज्ञेया परयोगिनः। येनाप्नुवन्ति मनुजाः साक्षाद् भैरवरूपताम् ॥२५३६॥ संमोदकोपशमनं पतनोद्गारनर्तनम् वेणुवीगादिवाद्यं च कवितारचनादिकम् ।।२५४०।। रोदनं भाषरां पातः समुत्त्थानं विज्ञंभराम् । गमनं विक्रिया देवि योग इत्यभिधीयते ।।२५४१।। चक्रेऽस्मिन् योगिनो वीरा योगिन्यो मदमंथराः । समाचरन्ति देवेशि यथोल्लासं मनोगतम् ।।२५४२।। शनैः पृच्छति पाइवंस्थान् विस्मृत्यात्मविवक्षितम् । निधाय वदने पात्रं निर्विण्णा निवसन्ति च ।।२५४३।। मत्वा स्वपुरुषं मत्ता कांतान्यमवलंबति । तथा स्वपुरुषाञ्चापि प्रौढान्तोल्लाससंयुताः ।।२५४४।। पुरुषः पुरुषं मोहादालिगत्यंगनांगनाम् । पुच्छति स्वर्णति मुग्धा कस्त्वं काऽहमिमे च के ।।२५४५।। कि कार्यं वयमायाताः किमर्थमिह संस्थिताः। उद्यानं किमिदं हंत गृहं कि वांगर्गं किमु ॥२५४६॥ मुखे संपूर्य मदिरां पाययन्ती स्त्रियः प्रियान् ।

उपदंशं मुखे क्षिप्त्वा निक्षिपन्ति प्रियानने । गृह्धन्त्यन्योन्यपात्रास्ति व्यंजनानि च शांमवि ॥२५४७॥ भुत्वा शिरसि नृत्यंति मद्यमांडानि योगिनः। ग्रज्ञातकरतालांतमस्याष्टाक्षरगीतकम् ।।२५४८।।

प्रस्खलत्पादविन्यासं नृत्यन्ति कुलशक्तयः। योगिनो मदमत्ताश्च पतंति प्रमदोपरि ॥२५४६॥

मदाकुलाश्च योगिन्यः पतंति पुरुषोपरि । मनोरथं सुसंपूर्णं कुर्वन्ति च परस्परम् ॥२५५०॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

इत्यादि विविधारचेष्टाः कुर्वन्ति कुलनायिके । विकृति मनसो हित्वा यदोल्लासः प्रवर्तते । तदा तु देवताभावं भजन्ते योगिपुंगवाः ॥२५५१। कौलिकान् भैरवावेशान् यो वा निन्दति मूढधीः। तं नाज्ञयन्त्यसंदेहो योगिन्यः कुलनायिके ॥२५५२॥ न निदेत् न हसेत् कुप्येत् चक्रे मधुमदाकुलान् । एतच्चक्रगतां वार्तां बहिनैंव प्रकाशयेत् ॥२५५३॥ तेभ्यो द्रोहं न कुर्वीत नाहितं च समाचरेत्। भक्त्या संरक्षयेत् तात् वै गोपयेच्च प्रयत्नतः ॥२५५४। चक्रे मदाकुलान् दृष्टा चितयेद् देवताधिया । मोदते वन्दते मक्त्या स गच्छेद् योगिनीपदम् ।। र्थ्यप्रशा पश्येदेवंविधं चंक्रं यो भक्त्या कौलिकः प्रिये। व्रततीर्थतपोदानयज्ञकोटिफलं लमेत् ।।२५५६॥ उन्मनापतनोत्त्थाने मूर्च्छा स्याच मुहुर्मुहुः । उन्मनाख्ये तथोल्लासे षष्ठे वीरसमन्विते ॥२५५७॥ विरसन्निद्धातें तौ यौ चिद्यापराक्षरो। परब्रह्मानुसंघानकाङ्क्षिएगै कुलनायिके ।।२५५८।। देहेन्द्रियार्गां मनसश्चानवस्था निगद्यते। श्चनवस्थाभिघानेऽस्मिन्तुल्लासे सप्तमे प्रिये <u>।</u>[२५५६।। परामंत्रस्वरूपोऽसौ जायते मूर्च्छनामरः। मूर्च्छना सन्निकर्षोमिमूलं मुक्तेः परं विदुः ॥२५६०॥ ग्रन्तर्लक्ष्यो बहिट हि निमेषोन्मेषवजितः। एषा तु शांभवी मुद्रा सर्वतंत्रीषु गौंपिता । एषैव खेचरीमुद्रा शिवस्य समवायिनी ॥२५६१॥ सर्वोत्तीर्गा सदाहंतासामरस्यचमत्कृतिः। भ्रनयोल्लासिनो वीरा शिवा एव न संशयः ॥२३६२॥

न किंचिदपि जानन्ति स्वात्मध्यानपरायगाः। तदा यत् परमं सौख्यं मनोवाचामगोचरम् ॥२५६३॥ स्वयमेवानुभवति शर्कराक्षीरपानवत्। ईहरां ताहरां सौख्यमिति वक्तुं न शक्यते ॥२५६४॥ हश्यते पुलकाद्यैर्यत् तद् ब्रह्मध्यानमुच्यते । यत् सुखं विद्यते ध्याने देहावेशकरं परम् ॥२५६५॥ कथितुं नैव शक्नोति प्रबुद्धस्तु समाहितः। ब्रह्मध्यानरतानंदपराः सुकृतिनो नराः ॥२४६६॥ क्षाएोऽप्यन्तर्हिते तस्मिन् शोचन्त्यसहना इव। सप्तमोल्लासयुक्तानां त्व-द्भक्तानां महात्मनास् ॥२५७१॥ म्रष्टी त्रिकालज्ञानोत्त्थाः प्रत्ययाश्च कुलेश्वरि । श्रष्टाववस्थाः कंपाद्या जायन्ते नात्र संशयः २५७२॥ वहुनात्र किमुक्तेन ग्रिंगिमाद्यष्टसिद्धयः। प्रतिहारपदं प्राप्ताः सेवन्ते मंदिरं वरम् ॥२५७३॥ ये गुरााः परमेशस्य पंचतत्त्वतनोः शुमाः । ते गुर्गाः कुलतत्त्वज्ञे तत्त्वज्ञानसमाहृताः ।।२५७४।। श्चारम्भस्तरुग्श्वापि यौवनः प्रौढ एव च । तदन्तो जाग्रदित्युक्तश्चोन्मना स्वाप्न उच्यते ।।२४७४।। ग्रनवस्था सुषुप्तिः स्यादवस्थात्रयसंयुताः। सप्तोल्लासांश्र यो वेत्ति स मुक्तः स च कौलिकः ।।२५७६॥ श्रयोच्यते चक्रमेदं शिवसायुज्यदायकम्। चक्रं पंचविषं प्रोक्तं श्रीतंत्री रुद्रयामले ।।२५७७।।

महाचक्रं राजचक्रं देवचक्रं तथापरम् । वीरचक्रं चतुर्थं स्यात् पशुचक्रं च पंचमम् ॥२५७८॥ महाचक्रं प्रवक्ष्यामि भक्तचा तच्छुणु पार्वति । माता च भगिनी चेव दुहिता च स्नुषा तथा ॥२५७५॥

गुरुपत्नी च पंचैताः शक्तयो यामले मताः । शक्तयः पंचमानार्हाः तास्तु वामे न पूजयेत् ॥२५७६॥ मानार्हा दक्षिणो पूज्यास्त्वन्यथा नारको भवेत् । स्वशक्तिर्यदि दक्षे स्यात् तदा माता न संशयः ॥२५७७॥ तया रमगतो मंत्री रौरवं नरकं व्रजेत् । मातरं गुरुशक्ति वा ज्येष्ठां वापि तपिश्वनोम् । स्ववामे नार्चयेत्तासु स्थितेऽपि गुरुतल्पगः ॥२५७८॥इति। ग्रत एताः पूज्या एव न भोग्याः।

यच्च यामले-

विक्षितस्य गुरोः पत्नो या माता गर्भधारिएते।

यस्या विवाहिता कन्या तर्पयेत् तात् न भोगयेत् ॥२५७६॥

भिगनी दुहिता चैव वीरभार्या स्नुषा तथा।
वर्जनीयाश्च ता भोगे तदन्या चोपयुज्यते ॥२५५०॥

मद्यं च गौडिकं प्रौक्तं शुद्धिः कुक्कुटसंभवा।

मत्स्यस्तु रोहितः प्रोक्तो मुद्रा माषसमुद्भवा ॥२५५१॥

करवीरोद्भवं पुष्पं चन्दनं रक्तचंदनम्।

गुरुवारेऽथवा शुक्रे चतुर्थ्यां सप्तमीतिथौ।

महाचक्रं महादेवि सर्वकामसमृद्धिदम् ॥२५५२॥

दक्षिएतां विधिवद् देवि ग्राचार्याय समर्पयेत्।

तथैव धनवस्त्राद्यस्तोषयेत् शक्तिसाधकान् ॥२५५३॥

महासौक्ष्यप्रदं चक्रं महामोक्षप्रदायकम्।

षिद्धवर्षसहस्रारिए ब्रह्मर्ए। सह मोदते ॥२५५४॥

चक्रकृदिति शेषः ।

पूजाद्रव्यं राजचक्रे वदामि श्रुणु पार्वति । यवनी योगिनी चैव रजकी स्वपची तथा ॥२४८४॥

2 days

कैवर्तवंशजा चैव पंचशक्तीरुदाहृताः ।
कृतमंत्राभिषेकास्तु सर्वकामफलप्रदाः ।।२४८६।।
मद्यं माध्वीति संप्रोक्तं शुद्धिश्छागसमुद्भवा ।
मत्स्यं चोद्दालकं प्रोक्तं मुद्रा गोधूमजा स्मृता ।।२४८७।।
एकादश्यां भानुवारे संक्रान्तौ च विशेषतः ।
धर्मार्थकाममोक्षार्थं राजचकं विधीयते ।२४८८।।
देवचकं प्रवक्ष्यामि यत् सुरैः क्रियते सदा ।
शक्तीस्तत्र प्रवक्ष्यामि दिव्यरूपा मनोहराः ।।२४८६।।
राजवेश्या नागरी च गुप्तवेश्या तथा प्रिये ।
देववेश्या ब्रह्मवेश्या शक्तयः परिकीतिताः ।।२५६०।।

ग्रथासां लक्षराम्—

राजसेवांपरा राजवेश्या गुप्ता च कोकिला। देववेक्या नर्तकी च ब्रह्मवेक्या तु तीर्थगा ।।२५६१।। नागरी कस्यचित् कन्यां रंडा कामरसाकुला। पंचैताः शक्तयो देवि देवचक्रे नियोजयेत् ।।२५६२।। मद्यं कादम्बरीजातं शुद्धिर्वाराहसम्भवा । मत्स्यश्च तुरगः प्रोक्तो मुद्रा चराकसम्भवा ॥२५६३॥ पुष्पं जाती च चांपेयं चन्दनं रक्तचन्दनम्। श्रष्टम्यां च चतुर्दस्यां नवम्यां कुजसोमयोः ।। २५६४।। म्राचार्याय पुरस्कृत्य दक्षिगां विनिवेदयेत्। तथैव धनवस्त्राद्यस्तोषयेत् शक्तिसाधकान् ॥२५६५॥ देवचक्रमिदं प्रोक्तं सद्यो देवत्वदायकम् । देववत् पूजितो सूत्वा विहरेत् क्षितिमण्डले ।।२५६६।। षष्टिवर्षसहस्राणि देवलोके महोयते। वीरचक्रं प्रवक्ष्यामि येन सिद्धयन्ति साधकाः ।।२५६७।। श्रनया पूजया देवि देहगुद्धिः प्रजायते । शक्तयो सद्यमांसादि यदुक्त तच्च कथ्यते । २५६५ (Liangotri

Brock

गौडी पैष्टी च माघ्वी च द्राक्षी ताडसमुद्भवा।
अर्चने चक्रराजस्य वारुगी पंचधा स्मृता।
रजकी चर्मकारी च वेश्या चैव रजस्वला।।२५६६।।
मातंगी मदमत्ता च पूजने शक्तयो मताः।
छागकुक्कुटवाराहमार्जारमृगसंभवाः।
अर्घने देवतायास्तु गुद्धिः पंचविधा स्मृता।।२६००।।

अन्यच्च-

भूचरारणां खेचरारणां तत्तन्मांसं सुसाधितम् । देयानि सर्वमत्स्यानि सुप्रशस्तानि योजयेत् ॥२६०१॥

उत्तमास्त्रिविधाः प्रोक्ताः शालपाठीनरोहिताः ।

मध्यमाः कण्टके हीनास्तदन्यादचाधमाः स्मृताः ॥२६०२॥

गोधूममुद्गमाषादितण्डुलाश्रग्णकादयः ।

पूजने तव देवेशि मुद्राः पंचविधाः स्मृताः ॥२६०३॥

पुष्पारिण क्वेतपोतानि रक्तानि च विशेषतः । कुलवारे कुलतिथावष्टम्यां च विशेषतः ॥२६०४॥

कुहू ह्यकंदिने वापि कर्तव्यं शक्तिसाधकैः । ग्रष्टवीराश्च षड्वीरा नववीरा ग्रथापि वा ॥२६०५॥

म्राहूय वीरान् शक्तीश्च चक्रपूजां समारमेत् । वीरेम्यो दक्षिगां दद्यादाचार्याय विशेषतः ॥२६०६॥

शक्तीः प्रतोषयेद् भक्त्या दक्षिगाभूषगावरैः। दक्षिगाविधिहोनं तुचतुश्चक्रं च निष्फलम् ।।२६०७।।

ग्रसंख्यं पातकं यञ्च तथा चैवोपपातकम् । तत् क्षराान्नाशमायाति वीरचक्रप्रसादतः ॥२६०८॥ विहरेद् देववत् भूमावन्ते देवीपुरं व्रजेत् । पशुचक्रं प्रवक्ष्यामि मर्त्यानां समुदाहृतम्॥२६०६॥ Pars.

एकाकी मद्यपायी च स्वेच्छ्या शक्तिभुक् प्रिये। माहेश्वराएां संसर्गं कुरुते न कदाचन ॥२६१०॥ मद्यं मांसं तथा मीनमात्मसौख्याय कारयेत्। श्रसंस्कृतं पिवेद् द्रव्यं बलात्कारेगा मैथुनम् ॥२६११॥ स्वप्रियेगा हतं मांसं भुङ्क्ते यः स्वेच्छ्या तथा । विनार्चनं विना ज्ञानं मंत्रहोनमदक्षिराम् ।।२६१२।। करोति चक्रवत् सर्वमात्मसौख्याय केवलम् । पंचतत्त्वं समादाय पशुचक्रं तदुच्यते ।।२६१३।। प्रायुः क्षयं च दारिद्रचमन्ते पैशाचतां व्रजेत्। पिशाचयौनौ तिष्ठेत षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥२६१४॥ राज्यचक्रं राज्यदं स्यात् महाचक्रं तु मोक्षदम्। देवत्वदं देवचक्रं वोरचक्रं तु सिद्धिदम् ।।२६१४।। पशुचकं च दारिद्रचदुःखशोकभयप्रदम्। कापट्याद् दक्षिग्गाहीनात् सर्वचक्रं च निष्फलम् ।।२६१६।। श्रादिमद्यं विना मद्यं निष्फलं नात्र संशय:। श्रादिशुद्धि विना शुद्धि नं च तृप्तिकरी मता ।।२६१७।। श्रादिमीनं विना मीनं न च तृप्तिप्रदायकम्। श्रादिमुद्रा विहोनेन सर्वं मवति निष्फलम् ।।२६१८।। श्रादिशक्ति विना शक्तिरिभचाराय कल्प्यते । विजया ह्यादिमद्यं स्यादादिशुद्धिस्तथाईकम् ।।२६१६।। श्रादिमीनं च जंवीरमादिमुद्रा तु धान्यजा। मुद्रा सर्वांि भान्यानि ब्रोहिरित्युच्यते बुधैः । २६२०।। धान्यानि पिष्टकादीनि सर्वाणि परमेक्वरि । म्रादिशक्तिः स्वदारा स्यात् तामेवाश्रित्य साधयेत् ।।२६२१।। शक्ति योंग्या न सा चेत् स्यात् तदान्यामणि चाश्रयेत् । वासनां संप्रवक्ष्यामि यया तन्मयतां वजेत । १२६२२ । Gangotri CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Dollni. Digitiz रहे ।

क्रमसंकेतकं चैव चक्रसंकेतकं तथा।
नामसंकेतकं चैव पूजासंकेतकं तथा।।२६२३।।
विना संकेतकं देवि पूजनं यदि जायते।
नैव तत्फलमाप्नोति सिद्धिरोधकरं भवेत्।।२६२४।।
स्थानं देशं च कालं च ज्ञात्वा पूजां समारमेत्।
वज्रपुष्पान्वितं यन्त्रां वज्रपुष्पेग् पूजयेत्।।२६२४।।

वज्रपुष्पं यथा मातृकाभेदतंत्रे देवीवाक्यम्—
स्वयंभू कीहर्शं नाथ कुण्डगोलं च कीहराम् ।
खपुष्पं कीहरां नाथ वज्रपुष्पं च कीहराम् ।
सर्वकालोद्भवं नाथ कीहरां वद मे प्रभो ।।२६२६।।

श्रीशिवः-

विवाहरिहता कन्या प्रथममार्तवं च यत् ।
स्वयंभूकुसुमं नाम कीर्तितं भैरवागमे ।।२६२७।।
भर्तिर स्वे वर्तमाने या कन्या परगा मवेत् ।
तदुःद्भवं कुण्डपुष्पं सर्वकार्यार्थसाधकम् ।।२६२८।।
मृते भर्तिर देवेशि या कन्या परगामिनी ।
तदुःद्भवं गोलपुष्पं देववश्यकरं परम् ।।२६२६।।
विवाहिता च या कन्या तस्या यत् प्रथमार्तवम् ।
तच्छोिग्तितं महेशानि खपुष्पं सर्वमोहनम् ।।२६३०।।
विवाहितायाः कन्यायाः पुरुषस्य च ताडनात् ।
यज्जातं शोग्तितं तच्च वज्यपुष्पं प्रकीतितम् ।।२६३१।।
विवाहितायाः कन्यायाः प्रतिमासं च यद् भवेत् ।
सर्वकालोद्भवं पुष्पं कथितं वीरवंदिते ।।२६३२।। इति ।

अन्यच्च कुलार्णवे-

कुलाचारक्रमं देवि वक्ष्ये सिद्धिप्रदायकम् । यदि चेद् दोक्षितो ज्येष्ठः कुलपूजादिवर्जितः ॥२६३३॥

तत्कनिष्ठः क्रमज्ञश्चेत् कूलपूजां समाचरेत् । तत् समीपं ततो गत्वा नमस्कृत्य गुरोर्यथा ।।२६३४।। तस्मै निवेद्य तत् सर्वं शेषं भुं जीत पार्वति । पूजामध्ये गुरौ ज्येष्ठे पूज्ये वापि समागते ।।२६३४।। नत्वा ब्रूयात् स्थिति शेषमाचरेत् तदनुज्ञया । स्वदक्षिएो गुरोः शक्ति समभ्यच्यं स्वशक्तितः ।।२६३६।। दक्षे स्वस्य यथाशक्तचा गुरुमभ्यर्चयेत् ततः। गुरोः पुत्रांश्च भ्रातृं अ तथा तत् कुलजानि ।।२६३७।। ज्ञानवृद्धांस्तपोवृद्धान् दक्षिएो स्वे समर्चयेत् । न तु ज्येष्ठान् यजेद् वामे कनिष्ठान् न च दक्षिएो ॥२६३८॥ विपरीते वैपरीत्यं फलं ज्ञेयं शुभाशुभम्। ज्येष्ठस्य च कनिष्ठस्य शिष्यावेकत्र संस्थितौ ॥२६३९॥ तत्र पूर्ववदाचारः कथितः कुलनायिके । अज्ञातकौलिकप्राप्तौ योगवादेन चितयेत् ॥२६४०॥ नत्वा स्वं स्वं गुरुं देवि स्वस्वमार्गेग तर्पयेत् १ नित्यार्चनं दिवा कुर्याद् रात्रौ नैमित्तिकार्चनम् ॥२६४१॥ उमयोः कास्यकर्म स्यादिति शास्त्रस्य निश्चयः। श्रस्नात्वानासनस्थो वा भुक्त्वा वा प्रलपन्निप ॥२६४२॥ गंधपुष्पाक्षताकल्पवस्त्राद्धेरनलंकृतः । अविन्यस्तशरीरो वा कुलपूजां न कारयेत्।।२६४३।। विना मंत्रेण या पूजा विना मांसेन तर्पराम्। विना शक्त्या तु यत् पानं निष्फलं कथितं प्रिये ॥२६४४॥ श्रीचक्रमेको नो कुर्यादेकपात्रो तु नार्चयेत्। नाचंयेदेकहस्तेन न पिबेदेकपाि्िना ।।२६४५।। मत्स्यमांसासवै दें वि नाचेंग्रेत् पशुसन्निधौ । प्रराम्य प्रविशेच्चक्रं विनिगंच्छेत् प्रराम्य च ।।२६४६।।

श्रीचक्रे नासने तिष्ठेत् न च वीरासने प्रिये। श्रीचक्रदर्शनं देवि नेत्रयोः पापनाशनम् ॥ २६४७॥ तन्नास्ति चेत् व्रराद्वन्द्वं कौलिकस्याक्षियुग्मकस् । श्रनाचारान् सदाचारान् चक्रस्थान् शक्तिकौलिकान् ॥२६४८॥ शिवगौरीधिया देवि भावयेन् नावमानयेत्। कुलाचार्यगृहं गत्वा मक्तचा पापविशुद्धये ॥२६४६॥ याचयेदमृतं चान्नं तदभावे जलं पिबेत्। कुलाचार्येग तच्छक्त्या दत्तं पात्रं तु भक्तितः ॥२६५०॥ नमस्कृत्य तु गृह्णोयादन्यथा नरकं व्रजेत् । गुरुदैवतमंत्रागामक्यं संभावयन् धिया ।।२६५१।। यावद्रलासपर्यन्तमुपदंशैः पिबेन् मधु । मोजनान्ते विषं पानं पानान्ते मोजनं विषम् ॥२६५२॥ ग्रमृतं तद्विजानोयाद् यदन्नं सुरया सह । चर्वाोन विना पानं केवलं विषमक्षराम् ॥२६५३॥ यच्चर्यान सहितममृतं तत् प्रकोतितम्। ग्रस्नात्वा वापि भुक्त्वा वाप्यभक्तचा वा कुलेश्वरि ॥२६५४॥ यः सेवेत कूलद्रव्यं स दारिद्रचमवाप्नुयात्। उद्गीषो कंचुकी नग्नो मुक्तकेशो गलावृतः ॥२६४४॥ पराङ्मुखो विवादी च न सेवेत कुलामृतम् । योगामृतस्य निष्ठीवान् मद्यमाण्डपरिभ्रमात् ॥२६५६॥ ऊर्ध्वनालप्रपानाच्च देवताशापमाप्नुयात् । एकासने निविष्टा ये भुञ्जानाइचैकमाजने ॥२६५७॥ एकपात्रे पिबंतो ये ते यान्ति नरकं प्रिये। यः सेवेत कुलद्रव्यमेकग्रामे स्थिते गुरौ ॥२६५८॥ तत्कुलज्ञे च तत्पुत्रो स्वज्येष्ठे कुलदेशिके । वित्तानुजां कुलेशानि सोऽक्षयं नरकं वजेत ॥२६५६॥
R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

उच्छिष्टो न स्पृशेच्चक्रे कुलद्रव्याणि पार्वंति । बहिः प्रक्षाल्य च करौ कुलद्रव्याणि दापयेत् ॥२६६०॥ मद्यभाण्डं समुद्धृत्य न पात्रं पूरयेत् प्रिये । भोगपात्रं सुराकंभे निक्षिपेत् न कदाचन ॥२६६१॥ शक्तिपात्रं वीरपात्रं निःशेषं नैव कारयेत् । यावच्चक्रं तु तत् पश्चात् तेभ्यो दद्याच्च तौ पुनः ॥२६६२॥

चक्रमध्येऽशुचिधिया करस्य क्षालनादिकम्। यः करोति विमूढात्मा स भवेदापदां पदम् ।।२६६३।। निष्ठीवनं मलं मूत्रमधोवायुविसर्जनम् । श्रीचक्रमध्ये यः कुर्यात् स भवेद् योगिनीपशुः ।। २६६४।। चक्रमध्ये घटे भिन्ने पात्रो च स्खलिते प्रिये। दोपनाशे च तत् शान्त्यं श्रीचक्रं कारयेत् प्रिये ॥२६६५॥ मत्ता जपन्ति घ्यायन्ति स्तुवन्ति प्रग्मिति च। बोघयन्ति च पृच्छन्ति नंदन्ति ज्ञानिनः प्रिये ।।२६६६।। मत्ता भ्रमन्ति गर्जन्ति हसन्ति विवदन्ति च। रुदन्ति स्त्रियमिच्छन्ति निदन्त्यज्ञानिनः प्रिये ।।२६६७।। परिहासं प्रलापं च विनयं वहुभाषराम् । श्रोदासोन्यं मयं क्रोधं चक्रमध्ये विवर्जयेत् ॥२६६८॥ पात्रहस्तो महादेवि न भ्रमेच्चक्रमध्यगः। पूर्णपात्रां करे घृत्वा न तिष्ठेच्च चिरं प्रिये ।।२६६९।। नालपेत् पात्रहस्तः सन् न भिद्यात् पात्रमम्बिके । पादाभ्यां न स्पृशेत् पात्रं न बिन्दुं पातयेदधः ।।२६७०।। नैकहस्तेन दातव्यं न मुद्रावर्जितं पिबेत्। पात्रं न चालयेत् स्थानात् न कुर्यात् पात्रसंकरम् ।।२६७१।। श्रीगुरुज्येष्ठपूज्यानां पुरतः कुलनायिके । नोपविषय पिबेन महासिति शासूस्य ति सम्मा Dgi रहा २०११ ngotri

Lone Proscoples

सज्ञब्दं न पिबेन् मद्यं निःशब्दं नैव पूरयेत् । नान्योऽन्यं ताडयेत् पात्रं न पात्रं चानयेदघः ॥२६७३॥

साधारं नोद्धरेत् पात्रमनाधारे न निक्षिपेत् । रिक्तपात्रां न कुर्वीत न पात्रां भ्रामयेत् प्रिये ।।२६७४।।

प्रक्षाल्य गोपयेत् पात्रमित्याज्ञा पारमेश्वरी । यदा संदीपितोल्लासः कौलिकः पशुमीक्षते ॥२६७५॥

पठेद् वा पशुशास्त्राणि संगच्छेद् वा पशुस्त्रियम् । कुर्यात् पशुप्रसंगं च पशुकार्याणि वाचरेत् । धर्मार्थायुर्यशोलाभज्ञानसौख्यादि नश्यति ॥२६७६॥

श्रीचक्रस्थं कुलद्रव्यं यः पशुम्यः प्रयच्छति । स्नेहाल्लोभाद् भयाद् वापि स भ्वेद् योगिनीपशुः ॥२६७७॥

विपद्यपि न कर्तव्यो वाग्वादश्चक्रमध्यगे । पितृमातृसमं पश्येत् तेनोक्तं पश्वं सहेत् ॥२६७८॥

यथा स्त्रीपुत्रमित्रादि दृष्ट्वा चेतः प्रहृष्यति । तथा चेत् कौलिकान् दृष्ट्वा स मवेद् योगिनोप्रियः ।। २६७९।।

ब्रह्मादिस्तंबपर्यन्तं यस्य मे गुरुसंतितः। तस्य मे सर्वेशिष्यस्य को न पूज्यो महोतले ।।२६८०।।

इति निश्चितबुद्धिर्यः स भवेदावयोः प्रियः। प्रवृत्ते भैर्वीचक्रे सर्वे वर्णाः द्विजातयः ।।२६८१।।

निवृत्ते भैरवीचक्रे सर्वे वर्गाः पृथक् पृथक् । नारी वा पुरुषः षंढश्वांडालो वा द्विजोत्तमः ।।२६८२।।

चक्रमध्ये न भेदोऽस्ति सर्वे देवसमाः स्मृताः । क्षीरेग् सहितं तोयं क्षीरमेव यथा भवेत् ।।२६८३।।

तथा श्रीचक्रमध्येऽपि जातिमेदो न विद्यंते ।

नगरीनिर्भराद्यं गंगां प्राप्य यथैकताम् ॥२६८४॥
- 0. Arutsakth R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

याति श्रीचक्रमध्येऽपि चैकतां मानवास्तथा ।
स्वर्गादि पुण्यलोकेषु देवादन्यद् यथा निह ।।२६८५।।
तथैव चक्रमध्येऽपि मानवाः शिववत् स्मृताः।
बहुनात्र किमुक्तेन चक्रमध्ये कुलेश्वरि ।।२६८६।।
मद्र्षाः पुरुषाः सर्वे त्वद्र्षाः प्रमदाः प्रिये ।
चक्रमध्ये च मूढात्मा जातिभेदं करोति यः ।।२६८७।।
तं भक्षयन्ति योगिन्यस्त्वां शपे कुलनायिके ।
देशिकेः स्थापिते कुंभे तत्र देवोपुरं भवेत् ।
पंचानां मेलनं यत्र तत्रैवाहं त्वया सह ।।२६८८।।

श्रत्र मंडलप्रवृत्तेः पूर्वं निवृत्तं रुत्तरं जातिव्यवस्था, मध्ये नेति तत्त्वविदां संमितः । तस्मात् ब्राह्मणतराणामिप चक्रे ब्राह्मणवदुपवेशाहेंत्त्वमुक्तम् । तत्र निर्वाणातंत्रे 'नात्राधिकारः सर्वषामित्यारभ्य 'ब्राह्मणाः कर्मानिष्ठा ये त एवात्राधिकारिणः' इत्यन्तवाक्यानां विरोधादत्रेयं व्यवस्था । पंचपात्रग्रहणानंतरं जातिभेदो नास्ति ।

यच्च यामले-

पंच पात्रान्तरे जाते जातिमेदो न विद्यते । न च कुंभस्थापनादौ ब्राह्मणेतरदर्शनम् ॥२६८॥ तत्त्वशुद्धिं चरेद् यावत् तावन्मौनं समाचरेत् । प्रथवा संस्कृता वाणी वक्तव्या प्राकृता न च ॥२६६०॥

तेन देववाण्या वक्त मसमर्थंस्याभिषिक्तकुलज्ञकौलिकस्यापि चक्रेश्वर-त्वाधिकारो नास्ति । यतः 'गुरुवद् भावयेच्चक्रे यतश्वक्रेश्वरः शिव' इत्याद्युक्तत्वात् । ब्राह्मणेतराणामसंस्कृतज्ञानां चक्रेश्वरत्वे कार्यकारित्वे नाधिकारः। पंचपात्राद्र्य्वं सर्वमनवद्यमिति दिक्।

स्त्रीग्गामन्यतमं स्थानं पुंसामन्यतमं पृथक् । ग्रथवा मिथुनं कृत्वा क्रमात् समुपवेशयेत् ॥२६६१॥ पङ्क्तचाकारेग् वा सम्यक् चक्राकारेग् वा प्रिये । शिवशक्तिधिया सर्वाश्चक्रमध्ये समर्चयेत् ॥२६६२॥ ग्रविभक्तौ यथा चाबांलक्ष्मीनारायग्गौ प्रिये । यथा वाग्गीशतानंदौ तथा वीरः सशक्तिकः । । १६६३ विश्व मद्यकुं मसहस्रेश्च मांसभारशतैरिष ।
न तुष्यामि वरारोहे भगींलगामृतं विना ।।२६९४।।
न चक्रांकं न पद्मांकं न शंखांकमिदं जगत् ।
लिंगांकं च भगांकं च तस्मात् शक्तिशिवात्मकम् ।।२६९४॥
शिवशक्तचोस्तु संयोगो यस्मिन् काले प्रजायते ।
सा संध्या कुलनिष्ठानां समाधिः साभिधीयते ।।२६९६॥
सकामो न स्त्रियं गच्छेदनिच्छन्तोमदोक्षिताम् ।
सद्यः संस्कारसंशुद्धां विहितत्वाद् व्रजेत् स्त्रियम् ॥२६९७॥

इति श्रीमदागमरहस्ये सत्संग्रहे चक्रोल्लासभेदवासनानिर्णयो नामेकादशः पटलः। ग्रादितस्त्वेकोनच्त्वारिशत्।।

ग्रथ द्वादशः पटलः।

अथ शक्तिपूजनम् । शक्तिसंगमतंत्रे—

नारी त्रं त्रे त्रे वनावारा नारी त्रे त्रे ते व्यक्षिया । विष्ठ वनावारा नारी देहस्वक्षिया । १६६६।। पृं क्ष्णं वा स्त्रियो क्षणं यत् कि चिद्र्यमुत्तमभ् । नारो चक्रे सर्व रूपं यत् कि चिद्र्यमुत्तमभ् । नारो चक्रे सर्व रूपं यत् कि चिद्र्यमुत्तमभ् । १६६६।। न च नारो समं सौ ख्यं न च नारो समा गतिः । न नारो सह शं भाग्यं न नारो सह शं तपः ।। २७००।। न नारो सह शं राज्यं न नारो सह शो जपः । न नारो सह शं ती थँ न नारो सह शो लयः ।। २७०१।। न नारो सह शो यागो न नारो सह शं यशः । न नारो सह शो स्त्रां न भूतं न भविष्यति ।। २७०२।।

अथ शक्तिलक्षणानि तत्रैव-

सुन्दरी तह्या रम्या चार्वंगी चाह्हासिनी।
गुरुमक्ता जपासक्ता महाकामकुतूहला।।२७०३।।

दर्शनान् मोहिनी साध्वी कटाक्षादिप्रमोचिनी। केशरंजनसंसक्ता वस्त्ररंजनसंयुता । गर्भद्रावकलायुक्ता पुष्पोत्पादनतत्परा ॥२७०४॥ नानापाककलायुक्ता लेह्यपेयकरी तथा। शय्यासंरंजनी दिव्या मुखगंधविधायिनी ॥२७०५॥ गीततालमृदंगादिवी गावादनतत्परा । कान्यालापसमस्यादिपल्लवादिसमन्विता ॥२७०६॥ नानाचित्रकलायुक्ता सौरभ्यसुरतान्विता । लोमशातनसंयुक्ता संकुचीकरएगाकुला ॥२७०७॥ कुचस्थौल्यदाढर्चं करा नानाऽऽभररणभूषिता। लिगं हृष्ट्वापि देवेशि ग्रविकारपरायर्गा ॥२७०८॥ योनौ लिगप्रवेशेऽपि विकारपरिवर्जिता। सर्वदोषिवहोना या रूपसौभाग्यशालिनी। एवं लक्षरासंपन्ना सा शक्तिः परिकीर्तिता ॥२७०६॥ पुंस्वरूपं महेशानि कथ्यते शृएा सांप्रतम् । नानाविलासकुशलः सर्वशक्तिसमन्वितः ।।२७१०।। तरुगः सुन्दरः शूरश्चिरमैथुनकारकः । दीर्घालगो हढाघाती द्रावणोषु च तत्परः ॥२७११॥ कामशास्त्रकलायुक्तो मंत्राद्योषधसंयुतः । स्तम्मज्ञानी लिगवृद्धिस्थूलदाढंचिक्रयान्वितः ॥२७१२॥ मकारपंचकासक्तो मक्तमक्तो जितेन्द्रियः। सर्वकालजपासक्तः सर्वतंत्रार्थतत्त्ववित् ॥२७१३॥ ग्राकर्षग्वशोकारतथोच्चाटनकृत्परः। ज्ञानी विज्ञानसंयुक्तः कामादिदोषवर्जितः ॥२७१४॥ संगीतवाद्यवीगादिकाव्यनाट्यकलाग्रगीः। षट्पल्लवानां विज्ञाता कुलभक्तो महोक्तमः ॥२७१४॥

म्रष्टांगयोगिवज्ञानी योगैश्वर्यविमूषितः । योनि संचुंब्य वालोच्य विकारादिविवर्जितः । स्रोस्वरूपस्य विज्ञानी देहज्ञानी तथापरः ॥२७१६॥

शापानुग्रहिए। दक्षः सर्वभूतदयापरः । सर्वचक्रस्य विज्ञानी दिव्यांवरिवमूषितः ॥२७१७॥

विन्याभरणसंयुक्तः सर्वसौगंध्यसंयुतः ।

सर्वदा घ्रुपगेहस्थः त्रिकालज्ञो महामितः ॥२७१८॥

स्त्रीरूपध्यानसंपन्नः सर्वदा तत्स्वरूपवान् । समस्याकोशविज्ञानी देहरंजनसंयुतः ॥२७१६॥

ई हग्विधो महेशानि साधनाहीं न चान्यथा। तत्रापि कालिकामक्तः कलौ दुर्लम एव च ॥२७२०॥

एवं गुर्गां समालोक्य सिस्मतास्यां महेश्वरि । साधनं कारयेद् देवि नान्यथा शांकरं वचः ।।२७२१।।

योनिपूजां विना तद्वत् तथा च रमगां विना । सप्तजन्मदरिद्वत्वं नरके वास एव च ॥२७२२॥

ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः । एतत्पातकजो दोषो जायते नात्र संशयः ॥२७२३॥

वीरो वाप्यथवा दिव्यो ह्यज्ञात्वा नरकं व्रजेत् । गुरुपूजाकराकृष्टि र्न्यासस्तस्याः समीहितम् ।।२७२४।।

परस्परावलोकश्च ध्यानकर्म प्रकीर्तितस् । नखदन्तक्षतादीनि घूपदीपप्रदापनस् ।।२७२४।।

तत् तत्त्वज्ञविशेषश्च प्रेम्गा मुद्रा प्रकीर्तिता । पूजनं गायनं स्तोत्रं रेतःपातो विसर्जनम् ।।२७२६।।

इति प्रोक्तं महेशानि कौलसंकल्पसिद्धिदम् । एवं श्रुत्वा ततो देवी शिवं वाक्यमथात्रवीत् ॥२७२७॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

सत्यमेतद् विना योषित्संगात् मंत्रो न सिध्यति । संग एव हि कर्तव्यः कर्तव्यं न च मैथुनम् ।।२७२८।। पूजनीया सदा योषा मद्भावकृतनिश्रया। तस्मान्न मैथुनं देव कर्तव्यं मम साधकैः ।।२७२६।। मम भावस्वरूपा सा मत्स्वरूपा च साऽप्यहम्। श्रनेन रमते देव सा कथं भवता विना ॥२७३०॥ भवता हढमावेन सहशो जायते च यः। मद्मावप्रतिपन्नायामधिकारी स मैथुने ॥२७३१॥ याहशस्तवं हदो ज्ञाने मद्भावकपरायगः। ताहशो मविता देवं निःशंकश्च रमेत् तदा ॥२७३२॥ कदाचित् पतितां याति कदाचिद् याति सूनुताम्। कदाचिद् गुरुतां याति कदाचिद् वापि शिष्यताम् ॥२७३३॥ ऐक्यनिश्चयविज्ञाने स वै दौषैर्न लिप्यते । स विष्णुः स शिवः साक्षात् स योग्यः सर्वकर्मसु ॥२७३४॥ श्रहं हि जगतां धात्री जननी जत्मकाररणम्। मद्भावप्रतिपन्नायामहमेव सुनिश्चितम् ॥२७३४॥ कर्तव्यं मेथुनं नेव तस्यामनिषकारिया। मोहाद् वा गुरुमौढ्यात् वा यदा तत् कुरुते कुघी: ॥२७३६॥ वीरो वाप्यथवा दिव्योऽबुद्ध्वा च नरकं व्रजेत्। गुरुपत्नीं द्विजपत्नीं पितृपत्नीं प्रपूज्य च ॥२७३७॥ मैथुने नरकं यावत् तावत् कोटिगुर्गं भवेत्। या या यद्मावमापन्ना नारी तत् तन्मयी हि सा ॥२७३८॥ श्रहं रष्टतया सम्यङ् नारायासि तसीरत्रर। मया हतोऽपि पापात्मा प्राप्नोति नरकं महत् ॥२७३६॥ श्रथवा सुचिरं जीवेत महादुर्गतिसंयुतः। निरन्तरं रोगपीडा जायते तस्य पापिनः ॥२७४०॥ by eGangotri

कदाचन शिरःपोडा कदाचित् स्याज्ज्वरी नरः। कदाचिद् गात्रभंगः स्यात् कदाचिद् गात्रपीडनम् ॥२७४१॥ कदाचिदपि कंडूतिः कदाचित्तु विचर्चिका। म्रानालोक्यं च वाधिर्यं खंजता कुब्जता तथा ॥२७४२॥ स्रन्येऽपि विविधा रोगाः कुष्ठाद्याः प्रसवन्ति च । चक्षुर्नाशः श्रुतिच्छेदो नासाच्छेदस्तर्थेव च ॥२७४३॥ पादच्छेदः करच्छेदः शिरश्छेदोऽपि जायते । शत्रुपोडा राजपोडा विह्निपीडा च जायते ॥२७४४॥ कुलं तस्यान्नदोषेग्। म्रियते नात्र संशयः। प्रार्थनामपि कुर्वागो न लभेदन्नमुब्टिकम् ।।२७४५।। मूलाहारः फलाहारः पत्राहारो जलाशनः । प्रायशो जायते पीडा तपःफलविर्वाजतः ॥२७४६॥ तस्य स्यादसकृद्वन्धुर्द्रोही भृत्याश्च तस्कराः। स्वगोत्रकलहो नित्यं स्वगोत्रहिंसनं तथा ॥२७४७॥ सुहृद्भिर्हेष्यभावः स्याद् रिपुर्गा बध्यते स तु । स्वयोषापि विषं दद्यान् मित्रं वा सेवकोऽयवा ॥२७४८॥ ग्रौषयं तु भवेत् तस्य महाहालाहलं प्रभो । हितं पथ्यं सुहृद्वाक्यं न कदाचन रोचते। हितापि गदिता वाग्गी तस्य काचिद् हिता नहि ॥२७४६॥ चारूक्ता मंत्रजावासी विपरीतेव जायते। तदाज्ञाकारिगो न स्युः सुहृद्भुत्यादयस्तथा ॥२७५०॥ एकादशगृहस्थोऽपि ग्रहः पोडयते ध्रुवस् । श्रन्यथा सिद्धिमापन्ना मंत्राः स्युर्हतसिद्धयः ।।२७५१।।

एते ये कथिता दोषा योषिन्मेयुनर्समवाः।

ग्रिधिकारविहीनानामधिकारयुते नहि ॥२७५२॥

शिव उवाच—

श्रिधिकारी मवेत् कीदृग् देवेशि मवदर्चने । ममानुग्रहतो देवि तदेव वक्तुमर्हसि ।।२७४३।।

देव्युवाच-

श्रुणु देव प्रवक्ष्यामि गुह्याद् गुह्यतरं महत्। गोपितं सर्वतन्त्रेषु न देयं यस्य कस्यचित् ।।२७५४।। श्रहमेव परं ज्ञानमहमेव परा गतिः। श्रहमेव परं ध्यानमहमेव परा श्रुतिः ।।२७४४।। मत्तः परतरं विश्वे न किचिदवलोकयेत्। श्रहमेव जगत् सर्वं जगदेवाहमीश्वर ।।२७५६।। मद्भावमाविता नारी भवेदेताहशः शिवः। एवं ज्ञानविज्ञिष्टः स्यादिधकारी भवेत् ज्ञिव ॥२७५७॥ ब्रह्मविष्णुमहेशादि सर्वदेवमयो हि सः। जायमानस्य वालस्य मातृयोनिस्वलिंगयोः ।।२७५८।। संपर्कें विकारो हिन यथा जायते क्वचित्। साधकस्य तथा यस्य मितः स्यादिवकारिगो ।।२७५६।। सोऽधिकारी भवेन नित्यं यागादौ सह योषिता। मद्मावप्रतिपन्नाया मत्स्वरूपाहमेव सा ।।२७६०।। विकारं न हि योषायां तस्यामींपत एव हि। ध्रुवं यस्य स्थिता बुद्धिः सोऽधिकारी न संशयः। मातृयोनि परित्यज्य सर्वयोनि विचारयेत् ॥२७६१॥ संगमे साधकश्रेष्ठः शिशुवत् क्रीडते भुवि। प्रथमं न्यासकाले तु यावद् धैर्यं न जायते ॥२७६२॥ तावत् कामविलोपार्थं यतितव्यं प्रयत्नतः । काममावविलोपार्थं संगं कृत्वेव योषिता ॥२७६३॥

साधयेत् सर्वकार्याणि यावद् ज्ञानं च जायते । ततो ज्ञाने समुत्पन्ने स्वच्छन्दं विहरेत् पुमान् ॥२७६४॥ एवं कर्तुमशक्तस्तु नाधिकारी कथंचन। कुर्याज्जपं तथा होमं तर्पएां मार्जनं तथा ॥२७६५॥ द्विजानां भोजनं चैव योषित्संगविवांजतम्। साधकस्य भवेद् यस्य यत्स्वरूपेष्टदेवता ॥२७६६॥ तद्वर्णंसमतेजोभिः पूर्णं भुवनमण्डलम् । भावनाभिः स्थिरोकृत्य देवताध्यानतत्परः ॥२७६७॥ यथास्वरूपं वर्णादि चितयेद् यतमानसः। एवं यस्य मनो नास्ति तस्य प्रतिनिधिः स्मृतः ॥२७६८॥ कुमार्यामेव कर्तव्यं न क्षरत्यां कदाचन। यतः स्यान् मैथुनायोग्या न विकाराय कल्प्यते ॥२७६९॥ न प्रयोगादिकं क्वापि गृहस्थो निजयोषिता । कुमारीभोजनादेव कुमारीपूजनादिप ॥२७७०॥ कुमारीचितनादेव जैलोक्यविजयोमवेत्। यद्युक्तलक्षर्गा शक्ति वीरश्चापि सलक्षराः ॥२७७१॥ तदा शक्तिसमावेशचेष्टां ज्ञात्वाथ साधयेत्। पुण्यक्षेत्रो पुण्यपीठे पुण्यद्भमसमाकुले । साधयेत् शक्तिमंत्रं यः तस्य सिद्धिरदूरतः ॥२७७२॥ इति ।

ग्रन्यच्च-

कौलावधूतमार्गेषु तीर्थयात्रां न च व्रजेत् । तीर्थाटनं च सन्यासं व्रतधारणमेव च ॥२७७३॥ उपवासं मुण्डनं च सर्वथा परिवर्जयेत् । पूर्णामिषेकः शिरसि तेन तत्र न मुण्डनम् ॥२७७४॥ परद्रोहं परीवादं परिवर्त्तं प्रतिप्रहः । परकांतां विशेषेण शाक्ते पंच विवर्जयेत् ॥२७७४॥ 236

कौलतीर्थानि मिन्नानि तत्र कौलो वसेत् सदा। एकस्यामेव देवेशि संति पीठानि कुत्स्नशः ।।२७७६।। तत्पीठमधिपीठं स्याद् वेश्यायामधिराजता ।

देव्यूवाच-

Shand day

देवेश श्रोतुमिच्छामि कौलतीर्थानि सर्वशः ॥२७७७॥ ईश्वर उवाच-

ब्राह्मा्गी तु गया प्रोक्ताऽयोध्या च वाहुजा स्मृता। वैश्या चार्वतिका प्रोक्ता शूद्रो तु मथुरा स्मृता ।।२७८८।। दासी मायापुरं देवि नटी गोदावरी मता। मालाकारिंगिका देवि चित्रकूटं प्रकीतितम् ।।२७७६।। कुम्मकारिग्णिका देवि श्रीपुरं परिकोतितम्। उड्यानं सौचिको प्रोक्तं योगिनी पौंडूवर्धनम् ॥२७८०॥ जालंघर कुविन्दी च तन्तुवायी च कांचिका। श्रसिमार्जनिका देवि कामरूपमिति स्मृतम् ॥२७८१॥ रजकी युष्करं प्रोक्तं चर्मकारी तु काशिका। श्रयस्कारी महादेवि कोलापुरमितीरितम् ॥२७५२॥ शौंडक्यास्तु गृहं देवि नेपालिमिति कोतितम् । केदारपीठं देवेशि नापिती परिकोतिता ॥२७५३॥ गोकर्णपोठं देवेशि त्वाष्ट्री व परिकीतिता। उज्जियिनी सवेत् पीठं कलावत्याः प्रकीर्तितम् ।।२७८४।। कालेक्वरं त्वंबुकी स्यात् केवर्त्ती हस्तिनापुरम्। शौक्किको राजगेहं तु जयंती तैलकारिया ।।२७५४।। कान्यकुब्जं मागघी स्यात् सर्वत्र गृहयोजनम्। वेश्यागृहं प्रयागं स्यात् श्रीशैलं तु कुमारिका ॥२७८६॥ कैलासपीठमाभीरी क्षीरिका पुरुचली स्मृता ।

ग्रहहासं च सैरंघ्री दूतिका मारुतेश्वरम्। श्रोंकारपोठं देवेशि रंडाग्रहमितीरितम् ॥२७८८॥ प्रतिवेशिनिका गेहं पीठं मलयसंज्ञकम्। स्वजायाया गृहं देवि विरजापोठमोरितम् ॥२७८६॥ कुट्टिन्यास्तु गृहं देवि पूर्णचन्द्रमिति स्मृतम् । श्रीगारुडीगृहं देवि पीठं वे देवमातृक्रम् ॥२७६०॥ श्राम्रातकेश्वरं पोठं चाण्डालीगृहमीरितम् । पौत्रोगृहं कामकोटं प्रपौत्र्याः कावरं मतम् ॥२७६१॥ मातुलान्याः स्थिरं क्षेत्रां तत् संबंधिन्याश्चरस्थिरस् । राजकन्यागृहं देवि माहेन्द्रमिति कीर्तितम् ।।२७६२।। कन्यागृहं महादेवि जलेश्वरमितोरितम्। स्नुषागृहं महेशानि विचित्रमिति कीर्तितम् ।।२७६३।। भगिन्या भृगुपीठं स्यात् शालिकाया महापथम् । यवनी गदिता देवि मेरुकागिरिरेव च ।।२७१४॥ यस्या विवाह्यते कन्या तद्गृहं वामनं स्मृतम् । श्रीकेलिकुञ्चिकागेहं प्रोक्तं वे हिंगुलाभिधम् ।।२७६५।। परस्त्रीविद्तीर्थं स्यात् सर्वतीर्थं रजस्वला । तानि सर्वारिंग तीर्थानि मातंगीगमने सकृत् ।।२७१६।। एतत् प्रोक्तं महादेवि किमन्यत् श्रोतुमिच्छिति ।

देव्युवाच-

देवेश श्रोतुमिच्छामि चतुष्पीठस्य लक्षराम् ।।२७६७।।

शिव उवाच-

रहस्यं च प्रवक्ष्यामि यद् ज्ञानादमरो भवेत् । शालकस्य तु या पत्नी कुरुक्षेत्रं तु तद्गृहम् ।।२७६८।। तत् कन्याया गृहं देवि श्रीगौरीमुखसंज्ञकम् । तरुगो सुन्दरो रामा स्वभार्याभगिनो तु या । तज्ज्येष्ठादि महेशानि कनिष्ठांतक्रमेग् च ।।२७६६।। CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

जेष्ठा तु केलिकुञ्जो स्यात् किनष्ठा केलिगेहिनो। चतुःपीठमिदं मद्रे क्रमाच्च कथितं त्विह ॥२८००॥ शक्तिचेष्टां प्रवक्ष्यामि सावधानावधारय। विपरीतरता चेत् सा तदा काली प्रकीतिता ।।२८०१।। गंधवूपप्रिया सा चेत् सिद्धविद्यास्वरूपिर्गो। शयने सुन्दरी प्रोक्ता रितगोष्ठ्यां तु तारिएगी ।।२८०२।। छिन्ना रतान्ते देवेशि माने हि वगला मता। श्रुङ्गारकराो देवि महालक्ष्मी प्रकीर्तिता ।।२८०३।। तस्याः समा कार्गं च मातंगी परिकीतिता । संयोगवार्ता भुवना निद्रार्त्ता भैरवी मता ।।२८०४।। सर्वान्तरायो देवेशि दूरात् संदृश्यते यदि । हस्ते नायाति चेत् सा व तदा धूमावती भवेत् ।।२८०५।। स्देच्छारते स्पर्शकाली स्वेच्छ्या तु विपर्यये। श्रीमहादक्षिग्गाकाली महासाम्राज्यनायिका ।।२८०६।। स्वेच्छ्या पुष्पयुक्ता चेत् श्रीमहाकामकालिका। बलाद् रते सिद्धकाली संक्षेपादिदमीरितम् ॥२८०७॥ सिद्धेश्वरीलक्षरां च कथ्यते श्रुणु सांप्रतम्। यस्या विवाह्यते कन्या सा चेद् वीरांगना यदि ।।२८०८।। सापि वेश्या यदि भवेत् तदा सिद्धेश्वरी मता। केलिकुञ्ची महेशानि व्यमिचारपरायणा ॥२८०१॥ कुलीनस्य तु या भार्या सापि वेश्या भवेद् यदि । वागीइवरोति विख्याता महापीठेइवरी परा ॥२८१०॥ शालिका यदि चेद् वेश्या लिगास्वादनतत्परा। विशालाक्षीति सा प्रोक्ता सर्वसिद्धिप्रदिशका ॥२८११॥ इयालकस्य च या कन्या सा यदा व्यक्तिचारिग्गी। कामाक्षोति च सा ज्ञेया सर्वसिद्धिकरामभुवितांद्रभाव दिश्रा

तत्पत्न्यास्तु गृहे देवि शतलिंगावधि यंदि । महाराजेश्वरी ख्याता त्रैलोक्यसिद्धिदायिका ॥२८१३॥ वीरपत्नी स्वयंवीरा प्रोक्ता श्रीमन्महेक्वरी। मत्सुता कुलविद्यानामाद्या श्रोत्रिपुरांबिका ।।२८१४।। तत्मुता भुवनेशानी शाक्तस्य शांकरी कला। दिव्यस्य विमला प्रोक्ता पूर्णस्य कालिका स्मृता ।।२८१५।। गुरुपत्नी तु कामेशी तत्सुता बालिका स्मृता। लोपामुद्रा तत्स्नुषा स्याच्चातुर्वर्ण्यक्रमं शृणु ॥२८१६॥ द्विजस्त्री यदि चेद् वेश्या सा प्रोक्ता कुलसुन्दरी। त्वरिता चैव संप्रोक्ता व्यभिचारपरायणा ॥२६१७॥ क्षत्रियस्य च या कन्या स्नुषा वेश्यादियोगतः। कौलिनी माधवी देवी वाराही कामसुन्दरी ॥२८१८॥ मोहिनीति क्रमेगीव व्यभिचारक्रमेगा च । वैश्यास्त्री यदि वा वेश्या व्यभिचारपराऽथवा ॥२८१६॥ स्वप्नावती भोगवती नित्यक्किन्ना च कुक्कुटी। श्रघोरा सिद्धचामुण्डा सुता स्नुषा क्रमेरा च ॥२८२०॥ शूद्रपत्नी सुता कुञ्ची वेश्या वा व्यभिचारिग्गी। श्रक्वारूढा च घनदा कुन्जिका शवरेक्वरी ॥२८२१॥ ग्रनंगमाला नीलाख्या क्रमेण परिकोर्तिता । कन्याष्टकं प्रवक्ष्यामि येन देवीमयो भवेत् ॥२८२२॥ नटी कापालिकी वेश्या रजकी नापितांगना। मालाकारस्य गोपस्य कुम्भकारस्य कन्यका ॥२८२३॥ क्त्याब्टकमिदं प्रोक्तं कुलाब्टकमथो भ्रुपु। राजवेश्या गुप्तवेश्या देववेश्या तथेव च ॥२८२४॥ नृत्यपात्रतीर्थवेश्या कुट्टिनी व्यभिचारिएरे । कुलाष्टकमिदं प्रोक्तं महाकुलाष्टकं श्रुपा ।। २८२४।।

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

पंचलिंगहता वेश्या दशलिंगा भगेश्वरी। पंचिवशतिलिंगा च लिंगतुष्टा प्रकीतिता ॥२७२६॥ पंचाशिल्लगसंयुक्ता लिगसिद्धा प्रकीतिता। शतिंगा भगानंदा सहस्रा भगसुंदरी ॥२८२७॥ ग्रसंख्यालगसंयुक्ता भगब्रह्मपरा मता। विश्वलिंगा सर्वयोनिः सर्वस्मादिष चोत्तमा ॥२८२८॥ सहस्रमगसंदर्शान् मुक्ती भवति मानवः। सहस्रमगसंदर्शो देवतादर्शनं ध्रुवम् ॥२८२६॥ पूर्वोक्तं यच्चतुःपीठं तद्भेदं किचिदुच्यते । क्यालकस्य तु भार्यायाः कुरुक्षेत्रां यदीरितम् । तत्कन्यायास्त्रिकोर्णं च गौरोमुखमुदीरितस् ॥२८३०॥ श्यालिकायास्त्रिकोगां च पंचमद्राभिधं च यत्। भार्या ज्येष्ठा तु या प्रोक्ता सा चात्र केलिकुंचिका ॥२८३१॥ तस्या योनिविद्वमद्रं सर्वपीठोत्तमोत्तमम् । एतासां व्यमिचारेगा नामान्यन्यानि संशूणु ॥२८३२॥ स्वर्गद्वारं कामविलं महापथाभिष्टां परम्। वांछामिएश्रितुर्थः स्याच्चतुःपोठानि पार्वति ॥२८३३॥ वर्षषोडशपर्यन्तं पूर्वा पुण्यद्रवा मता। द्वात्रिशत्वर्षपर्यन्तममृतान्दोलिका मता ।।२८३४।। ततोऽष्टवर्षपर्यन्तं सुधासागरनामकम्। ततो दिग्वर्षपर्यन्तमानन्दवननामकम् । पूर्वषोडशपर्यन्तं महासिद्धिमुखाभिधम् ॥२८३५॥ पंचपीठानि पूर्वस्यामधिराजक्रमेए। च। तत् कन्यायां महेशानि शृणु यत्नेन सांप्रतम् ॥२८३६॥ श्रथ षोडशपर्यन्तं योगवीरा। प्रकोतिता । पुरिपता चेद हि ब्रह्माण्डं कीतितं हि चतुत्कक्रम् त। रेटा इका

द्वात्रिशद्वर्षपर्यन्तं साम्राज्यगुटिकाभिषा । ततोऽष्टवर्षपर्यन्तमानन्दतूलिका मता ॥२८३८॥

ततो दिग्वर्षपर्यन्तं सौभाग्यकमला भवेत् । ग्रथ श्रीशक्तिकागेहलक्षरां शृषा पार्वति । ग्रथ षोडशपर्यन्तं महासाम्राज्यमण्डलम् ॥२८३६॥

स्वाराज्यमण्डलं देवि तदनंतरगं भवेत् । वैराज्यमण्डलं देवि ततः सर्वज्ञपीठकम् ॥२८४०॥

पूर्वषोडशपर्यन्तं द्वे प्रोक्ते ऋद्धिकामुके । सर्वसिद्धिप्रदादेव्याः केलिकुंच्याः प्रकीर्त्यते ॥२८४१॥

पूर्वषोडशपर्यन्तं विश्वरूपाभिधं भवेत् । षोडशोत्तरगं देवि षष्टिसिद्धचभिधं भवेत् ॥२८४२॥

द्वात्रिशदुत्तरं देवि सुंदरी मोहनाभिषम् । श्रीकालीमोहनाख्यं तु तदनन्तरमीरितम् ॥२८४३॥

चतुर्गामिप पुष्पं चेत् पृष्पिग्गीयोगमाचरेत्। रूढिजातिक्रिया चेत् स्यादिधराजादि योजयेत्।।२८४४।।

पीठानि कथितान्यत्र रूपशीलक्रमेगा च । स्त्रीमात्रे परमेशानि योगोऽयं विनिवेद्यताम् ॥२८४५॥

साधको देवदेवेशि निविकल्पो जितेन्द्रियः । कामक्रोधादिरहितो घृगालक्जादिवर्जितः ॥२८४६॥

चुंबनं कुचसंमर्दस्तथालिंगनतत्परः । सर्वदा वीक्षयेद् योनि तस्याः लिंगं प्रदर्शयेत् ॥२८४७॥

हब्दबोषेऽपि देवेशि मनःक्षोभं न कारयेत् । कृतमन्येन रमणं स्त्रीयोनौ स्वस्य पार्वति ॥२८४८॥

निरंतरं कृतं द्वित्रेः दश पंचिम्रिये वा । एवं ज्ञात्वापि देवेशि विकाररहितो यदि ॥२८४६॥

ईदृग्विघो निविकल्पः साधनाहीं न चान्यथा। यदि दैववशाद देवि स्वस्त्री चेद् व्यभिचारिएगे ।। २८५०।। तथापि तस्याः संतोषं कारयेद् यत्नतः शिवे। श्रन्यथा नारको भूयान नात्र कार्या विचारगा ॥२८४१॥ सैव सृष्टि जंगद्धात्री सैव कारएामीश्वरि । तस्या निवारगां देवि कर्तुं केनात्र शक्यते ।।२८४२।। तया यत्क्रियते देवि सर्वं तत् तोषरूपकम् । मन्यमानो महेशानि साधको भवति ध्रुवम् ॥२९४३॥ कादिहादिक्रमे चैव सर्वं संसाधयेद् ध्रुवस् । श्रथ वक्ष्ये महेशानि यौवनांकुरमादितः ॥२८५४॥ बह्माण्डमेतद् देवेशि स्रोदेहे तिष्ठति प्रिये। सुन्दरीपीठमेदं च वनानि वाटिकास्तथा ॥२८५५॥ ब्रह्माण्डानामनंतं च स्त्रीदेहे स्फुटमेव च। स्त्रोरूपं च जगत्सवं यत् किचिदिह दृश्यते ॥ २८५६॥ तद्र्पपूजनाद् देवि पूजिताः सर्वदेवताः । महाविद्याश्च योगिन्यो मातृकाद्याश्च याः पराः ॥२८५७॥ यथायोग्यस्थानपीठे निवसन्त्येव पार्वति शास्त्रात् सर्वं तु विज्ञाय यथायोगेन योजयेत् ॥२८५८॥ पूर्वोक्तं यत् पश्नां तु दिव्यानामेतदेव तु । वीराग्णामिप देवेशि दिव्ये वीरे न मेदता ॥२८५६॥ समस्तज्ञानसंयोगात् ब्रह्मांडाख्यप्रदक्षिए।। पृण्वीप्रदक्षिणा देवि पशूनां परिकीर्तिता ॥२८६०॥ सा पृथ्वी शक्तियोनिः स्यात् त्रौलोक्यं योनिमध्यगम् । योनिप्रवक्षिए। देवि वीराए। परिकीर्तिता ॥२८६१॥ गुप्ता व्यक्ता द्विषा देवि पृथिवी परिकीर्तिता। व्यक्ताव गुप्ता महापुण्या तत् प्रविक्षिणमान्तरे हुः। विद्वारमान्तरे हुः। विद्वारमान्त

सर्वश्रेष्ठा महेशानि ब्रह्माण्डाख्यप्रविक्षिणा । पादमात्रे कृते देवि परशंभुः सदाशिवः ॥२८६३॥

शिव एव विजानाति फलबाहुल्यमत्र तु । स्मरागाद् भाषागाद् देवि त्रेलोक्यं पूजितं भवेत् ॥२८६४॥

शाक्ते शृङ्गारः संप्रोक्तः शैवे तु विरहो भवेत्।

शक्तिस्तारुण्यवाटी स्यात् नाभी कूपः प्रकीर्तितः ॥२८६५॥

कुचौ घटौ महेशानि हास्यं पुष्पं प्रकीतितम् । कामद्वारं महेशानि भवेन् नवरसाश्च ये । नेत्रस्थानपंचकेन तिष्ठन्ति परमेश्वरि ॥२८६६॥

सामरस्यरसो ब्रह्म स एवातमा प्रकीर्तितः।

तद्वादनं ध्वनिः प्रोक्तस्तद्रसस्त्वमृतार्गवः ॥२८६७॥

उद्दीपनालंबनं तु सुगंधः परिकीर्तितः ।

मानसं भ्रमरः प्रोक्तो गतयः पक्षिगः स्मृताः ॥२८६८॥

मृगपश्वादयो मेदाः गतयस्तेऽपि संस्मृताः ।

रागास्तालाइच रागिण्यस्तद्वार्तालापनं भवेत् ॥२८६६॥

सर्वे हावाश्च देवेशि उत्खातारोपएां मतम्।

स्थायीभावः सेचनं स्याद् विभावादचालवालकम् ॥२८७०॥

स्थानात् स्थानांतरे यानमंनुमावाः प्रकीर्तिताः ।

मालाकारो वसन्तः स्यात् कटाक्षाः कामनिर्मितिः ॥२८७१॥

मघ्या प्रौढा प्रगल्माद्येकद्वित्र्यावितका मता । मालात्रुटिर्भवेत मानस्तन्नतिर्हारनायकः ॥२८७२॥

मालत्यादीनि पुष्पारिए रतिहासा भवन्ति च । रतान्तहासो देवेशि सौगंधकेसरादिकम् ॥२८७३॥

एवं सर्वं तु विज्ञाय पंचगंधाष्टकं शिवे । तद्धमंस्तु महेशानि मयात्र परिकीर्तितः ॥२८७४॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

तद्वार्तानुग्रहः क्रोधः शापश्च परिकीर्तितः। तुष्टिः प्रसन्नता प्रोक्ता निंदा क्षोभः प्रकीर्तितः ॥२८७५॥ ताटस्थ्यं चैव वैमुख्यं शक्तिरूपं प्रकीतितम्। श्राग्नेयी स्वर्ग इत्युक्तः सौरी मानवलोकता ॥२८७६॥ चांद्री पाताललोकत्वं त्रैलोवयं कोरामध्यके। बिन्दुवर्षस्तु पर्जन्यः सर्वं संक्षेपतो मतम् ॥२८७७॥ शयनं क्रीडनं नाट्यं काव्यं तद्र्पांचतनम्। काव्यालायाञ्च ये केचिद् गीतकान्यखिलानि च ॥२८७८॥ शब्दमूर्तिवरस्यैते विष्णोरंशा महात्मनः। पुनः पुनः कि वक्तव्यं त्रैलोक्यं तन्मयं यतः। चतुर्विश्वतिवाद्यानि संयोगध्वनिरेव च ॥२८७६॥ कराकृष्टिर्मूर्छना स्यान् नीविकामोचनं शिवे। प्रोक्तः स्वर्गो महेशानि प्रवेशो मोक्ष एव च ॥२८५०॥ श्रन्यत्र निर्गमो मोक्षो मूढानां दुःखभागिनाम्। एतदज्ञानतो देवि फलं संसारजं शिवे ॥२८८१॥ श्रज्ञानादिष देवेशि फलं नैव प्रयच्छति। ज्ञानादेव महेशानि कि तद्यन्न करे स्थितम् ॥२८८२॥ ज्ञानात् कीटोऽपि निर्मुक्तस्तद् योगं शृएा प्रार्वति । जीवः कीटः पुरा सूत्वा भ्रमरं पश्यति प्रिये ॥२५,५३॥ तदालोकनसद्भावाद् भ्रमरत्वं प्रजायते । वास कार्कि भाग पुनः कीटो नहि भवेत् सारूप्याद् रूपतां गतः ॥२८८४॥ शून्यस्य मावनाद् देवि शून्यं तस्यास्तु कोरागम्। श्रनन्तकोटिसंख्याता भ्रमरा यन्मुखोद्गताः ॥२८८१॥ तस्याः परस्वरूपिण्याः सद्भावं तु समस्यसेत्। सुगमोऽग्रं परो भावश्चेतनः पुरुषोऽपि वा ॥ हिन्द्रिधि angotri

शिवरूपः स च प्रोक्तः सर्वेसिद्धं महेश्वरि । जीवः कीटः पुरा भूत्वा भुङ्गत्वमधिगच्छति ॥२८८७॥ ततः षट्चक्रसंभेदं ज्ञात्वा तद्रसभुग् भवेत्। तत्परागं महेशानि स्थापिते यंत्रपीठके ॥२८८८॥ तेन मंत्रां लिलेबेद् देवि तस्योच्चार एमाचरेत्। मंत्ररूपो भवेत् तेन शिव एव न संशयः ॥२८८॥ स्वयंशक्तिस्तद्द्वयं च शक्तिस्वक्रमयोगतः। शैवशाक्ते शाक्तशैवे तत्द्वयक्रमयोगतः ॥२८६०॥ चक्रािं चैव विज्ञाय उक्तमार्गेरा पार्वति । चक्रारिए चैव निर्मिद्य स्वरूपं तत् स्वरूपकम् ।।२८६१।। न कीटत्वं न भृंगत्वं स्वरूपेगौव देवता । देवतारूपभावेन क्षर्णात् तद्रुपतां व्रजेत् ॥२८६२॥ श्रर्धनारीस्वराख्यो हि त्वर्द्धयोगः प्रकीर्तितः । श्रद्धं शिवो विजानाति काली जानाति पूर्णतः ॥२८६३॥ दिव्ययोगो महेशानि तवाग्रेऽयं प्रकाशितः । दिव्यचक्रे जीवचक्रे शालग्रामे तथैव च ॥२८९४॥ वार्गालंगे महेशानि नावाहनविसर्जने। प्रत्यक्षरूपाण्येतानि देवास्तिष्ठन्ति सर्वदा ॥२८९५॥ भ्रग्नो दीपशिखामध्ये जले च दर्पेणोऽपि च। सूर्यबिबे चन्द्रबिबे स्फाटिके पूजयेत् सदा ॥२८६६॥ यंत्रं तु गृहमित्युक्तं बिन्दुः सिहासनं भवेत् । शालग्रामो भवेद् देहं चक्राणि पीठसंचयः ॥२८६७॥ वार्गालंगे स्फाटिकेऽपि हीरे मारकतेऽथवा । शालग्रामे जीवचंक्रे सर्वीच् देवाच् प्रपूजयेत् ॥२८६८॥ यो भावो यस्य वै प्रोक्तस्तेन भावेन तिष्ठति । पुष्पमेकतमं स्थाप्यं पूजयेत् परमेश्वरि ॥२८६६॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

Laxonorgan

जीवयुक्तं तु यद् यंत्रं तद् यंत्रं सिद्धरूपकम्। दिव्यचक्रं यदा प्राप्तं जीवचक्रं तदा न च ॥२६००॥ जीवचक्रं यदा प्राप्तं वार्गालगं न चार्चयेत्। वाग्गलिगं यदा प्राप्तं शालग्रामस्तदा न च ॥२६०१॥ शालग्रामो यदा प्राप्तस्तदान्यत्र न पूजयेत् । शालग्रामं तथा यंत्रद्वयमेकत्र नार्चयेत् ॥२६०२॥ शालग्रामो भवेद् यंत्रां शालग्रामो गृहं भवेत् । यंत्रं तु गृहमित्युक्तं गृहस्था देवता मता ॥२६०३॥ शालग्रामे तथा यंत्रो सहसैव प्रसीदति । जीवचक्रे महेशानि प्रसन्नाऽस्ति निरंतरम् ॥२६०४॥ जीवचक्रस्य विज्ञानी कलौ दुर्लम एव च । हिल्ल किस्ति ह वालुकायां मवेत् तेलं वंध्यापुत्रं प्रसूयते ॥ २६०५॥ खपुष्पमिप जायेत भ्रयोनिर्मनुजोऽपि वा । जीवचक्रस्य विज्ञानी कलौ क्वापि न वै भवेत् ।। २६०६।। श्रग्रस्थान्नं परित्यज्य भिक्षामटति दुर्मतिः। हिन् किर्माहरू तथा जीवं परित्यज्य परिधावति धावति ॥ २६०७॥ अहो जीवस्य विज्ञानी शिव एव न चापरः। जीवं जीवे नियुंजीत जीवं जीवेन योजयेत् ॥२६०८॥ जीवं जीवेन संयोज्य जीवन्मुक्तो नरो भवेत् । जीवकि कि श्रहो धन्यात्परो धन्यो जीवचक्री नरोत्तमः ॥२६०६॥ श्रथोच्यते जीवचक्रसाधनं सिद्धिदायकम् । हार हिल्ह शक्तिमानीय देवेशि पूर्वोक्तलक्षरणान्विताम् ॥२६१०॥ गंधर्वोद्वाह्योगेन मौल्येनापि महेश्वरि । विकास क्रिकेट द्रव्यदानेन देवेशि कर्तव्यं साधनं परम् ॥२११॥ चतुष्कपीठामावे तु तत् तन्नामानि कल्पयेत् । सर्वामावे स्विद्धयां च कर्त्वयं साधनं वस्त ।।३६% देशी orri

प्रसूनतूलिकां कृत्वा उच्चस्थाने निधापयेत् । पात्रासादनकं कृत्वा पूजाद्रव्याशि चानयेत् ॥२६१३॥ पंचषोढापरो भूतवा तस्यां न्यासादिकं चरेत्। सापि वेश्या मतंगोत्त्था साऽपि प्रथमपुष्पिगो ।। २६१४।। श्रथवा केलिकुंच्यादि प्रतिमासादि पुष्पिग्गी। यदि भाग्यवशाद् देवि लम्यते तत् तथाचरेत् ॥२६१५। तरुणों सुंदरीं रम्यां यौवनोद्धतमानसाम्। मदोन्मत्तां कंजनेत्रां सदां कामाभिलाषिशीस् ।।२६१६।। संगमोद्युक्तहृदयां प्रार्थयेद् विधिपूर्वकम्। ईदृग्विधां समानीय यथोक्तं कर्ममाचरेत् ।।२६१७।। प्रसूनतूलिकायां तु संस्थाप्य परमेश्वरि । सर्वोपचारैः संपूज्यं चुंबनालिंगनादिमिः ॥२९१८॥ सांगां सावर्एां देवीं ध्यात्वा पूज्य प्रयत्नतः। स्वयमक्षोमितो मूत्वा तस्याः क्षोभं समाचरेत् ॥२९१६॥ क्षोमे जाते च देवेशि योनि कुर्याद् मुखांतरे। यथासंख्यं जपेत् तत्र योनिद्वारं विकासयत् । वीक्ष्य सहस्रं संजप्य मध्ये जिह्वां ततः क्षिपेत् ॥२६२०॥ जिह्नया मार्जयेद् योनि सहस्रं तत्र संजपेत्। तद्रसं विलिहन् देवि नाडीत्रयगतं परम् ॥२६२१॥ तया यदुक्तं देवेशि तदेव कारयेद् ध्रुवम् । पूजा न जाता देवेशि तयोक्तं योगमाचरेत् ।।२६२२।। योगं कृत्वा रेतसा तु तत्र यंत्रं विलिख्य च। तत्सर्वं विलिहन् देवि जपं कुर्यादनन्यघीः ॥२६२३॥ पूजा जपो होमकर्म तर्पएां मार्जनं तथा। द्विजानां भोजनं चैव सर्वदा यत्र तिष्ठति ।।२६२४।।

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

शय्याभंगी भवेत् पूजा जपो जल्पः प्रकीतितः। प्रवेशनं होमकर्म तर्पगां वर्षगां च यत् ।।२६२५।। तत्क्षालनं मार्जनं स्याद् दंशनं द्विजभोजनम् । ईहग्विधं महापीठं स्वयंभूसंज्ञकं परस् ।।२६२६।। यस्य दर्शनमात्रेग् यावत्यः संति सिद्धयः। स्वयमागत्य दासत्वं कुर्वन्त्येव न संशयः ॥२६२७॥ श्रनन्तयुगपर्यन्तं वीरसाधनकोटयः। कृता येन महेशानि तत्फलं निमिषाद् भवेत् ॥२६२८॥ श्रामूलान्तं च संवीक्ष्य सप्तचुंबनयोगतः । श्रोष्ठं पीत्वा नेत्रयुग्मं कपोले मालदेशके ।। २६२६।। योनौ सप्तममादिष्टं तेन सिद्धीश्वरो भवेत्। हस्ताहस्तिकया घृत्वा दिक्सहस्रं जपेन मनुस् ।।२६३०।। कालिका वरदा तस्य नात्र कार्या विचाररा। लिंगं दत्वा तत्करे तु दशसाहस्रकं जपेत् ।।२६३१।। साधकः साधनाशकः कल्पद्रमसमो भवेत्। तस्या लिंगं प्रदश्यिं स्वयं योनि प्रवीक्ष्य च ॥२६३२॥ दशसाहस्रकं जप्त्वा दशविद्याधिपो भवेत्। मुखे मुखं तु संदत्वा दशसाहस्रकं जपेत् ॥२६३३॥ महाकविवरो भूत्वा वादिराजो भवेद् ध्रुवम्। चामरं रविविबं च त्रिसूत्रां च सरोव्हम् ॥२६३४॥ तिलपुष्पं चन्द्रिबं खंजरीटं च पर्वतम् । पृथ्वीं विकसितां योनि दशस्थानानि पार्वति ॥२६३५॥ जीवचक्रं मुखे घृत्वा लक्षं जपति वादिराट्। तद्रसं विलिहन् देवि लक्षं जपति कालिका ॥२१३६॥ जिह्नां दत्वा जपेल्लक्षं शक्तिपातकरो भवेत्। लिंगं दत्वा जपेल्लक्षं सर्वज्ञः साधको भवेत ॥२६३ आ gotri

ग्रालोक्य प्रजपेल्लक्षं कविराट् साधको भवेत्। लिंगं दत्वा जीवचक्रे सप्तचुंवनयोगतः ॥२६३८॥ मुखं मुखे प्रदत्वा तु लक्षं जपति शंकरः। संयोगो ग्रहणं देवि महाकल्पांततोऽपि यत् ।।२६३६।। सूर्यग्रहो यथायोगो विपरीते निशाकरः। प्रमादान् मनसा वापि मोहतोऽपि न गालयेत् ॥२६४०॥ तया यदुच्यते वाक्यं तदेव कारयेत् प्रिये । तया योगे समारब्वे पूर्णयोगो यदाचन ॥२९४१॥ पुरुषस्य न जातो हि हेन सः क्रियते मुहुः। ग्रस्तास्तः स तु विज्ञेयः सर्वपर्वोत्तमोत्तमः ॥२९४२॥ स्वयं योगे समारब्धे स्वस्वपूर्वं तु सच्यतिः। तया कार्यं समारब्धं तस्या पातो न जायते। ग्रस्तोदयः स विज्ञेयः सर्वसिद्धिप्रदायकः ॥२६४३॥ इति रात्रिपरं योगं दिवायोगं शुणु प्रिये। तस्याः स्वस्वक्रमेर्गेव तस्यास्त्वर्धोदयो मतः ॥२६४४॥ महोदयः स्वयोगे स्याद् वार्ता दशहरा मता । तद् वार्ताक्षय्यरूपाख्या तृतीया परिकीर्तिता ॥२६४५॥ एवं निगदितं देवि लतारूपं शुणु प्रिये। महाचीनद्रुमलतावेष्टितः साधकोत्तमः ॥२६४६॥ रात्रौ यदि जपेन मंत्रः सैव कल्पलता भवेत्। मुखे चन्द्रस्तु सीमन्ते रविः संकीर्तितो दुधैः ॥२६४७॥ नेत्रे कामः कर्ण्युगे सनत्कुमार एव च। भ्रधरेऽमृतवारीशो जिह्वायां च सरस्वती। कल्पद्रुमः करयुगे कामधेनु र्ललाटयोः ।।२६४८।। वाञ्छामिण्स्पर्शमिण स्तनयोः परिकोर्तितौ । दक्षिगावर्त्तकम्बुस्तु कंठदेशे प्रकीतितः ॥२६४६॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

चिन्तामिएह दंमोजे शेषो वेण्यां प्रतिष्ठितः। सप्तस्वर्गा मस्तकान्ते सप्तपातालकं निस ।।२९४०।। मादयो ह्यवताराश्चः जंघायां देवताग्राः। नाभौ ब्रह्मा त्रिसूत्रो तु त्रिगुगातमा सदाज्ञितः ।। २६५१।। रोमावल्यां महाविष्णुर्योनौ ब्रह्माण्डगोलकम् । पृष्ठवंशे राक्षसाश्च माग्यलक्ष्मीर्मुखांबुजे ।।२६५२।। दानलक्ष्मोः करयुगे हृदये करुगाभिधा। सामरस्ये वीरलक्ष्मीर्देवे सौख्याभिधा स्मृता ।।२६५३।। कुलशास्त्रो कीतिलक्ष्मी मिने खड्गाभिधा भवेत्। श्रनेककोटिब्रह्माण्डं योनिमध्ये प्रतिष्ठितम् ॥ २६५४॥ तत्त्वाग्निवेदभुवनद्वीपास्त्रैलोक्यशक्तयः। वार्तालापे चतुर्वेदाः सर्वशास्त्रारिंग वै कटौ ।।२९५५।। ब्रह्माण्डगोलके यच्च यत् किचिज्जगतीतले । तत्सर्वं शक्तिदेहेषु सर्वदा व्याप्य तिष्ठति ॥२६५६॥ शक्तिशृङ्गारमारम्य मोक्षान्तं पूर्वगं शिवे। सर्वं तिष्ठति देवेशि क्रोधे संहारशक्तयः । १२६५७।। महामंत्रास्त्रथा हासे महाविद्याः कटाक्षयोः । चीनद्रुमलतायास्तुःमाहात्म्यं परमेश्वरि ।।२६५८।। विचित्रमेतंद् देवेशि शृंणु यत्नेन सांप्रतम्। श्रन्यवृक्षलतामूलं गतं भूमितलं सवेत् ।।२६५६।। एतद् वृक्षस्य मूलं तु मध्यमागे विराजते । मध्ये भूमि मंहेशानि शाखाश्च परितः स्मृताः ।। २१६०।। श्रथःशाखास्तूर्ध्वशाखामूलं मध्ये च मूमिका । जलं तत्रेव देवेशि प्रयागं तत्र कीर्तितम् ।। २६६१।। ब्रह्माण्डगोलं पुष्पं च फलं बीजं च पार्वति। तत्रेव तिष्ठित प्राज्ञे वृक्षश्रलित सर्वदा DUNG कि Liby eGangotri

वार्गी वदति सानन्दां स्वेच्छाचारी निरंकुशः। परमानन्दरूपात्तु लता तस्याः प्रकीर्तिता ।।२६६३।। महानंदस्वरूपाख्या चिदानंदस्वरूपिग्गी। पूर्गानन्दस्वरूपा सा महासमरसात्मिका ।। २६६४।। ब्रह्मानंदस्वरूपा सा चिद्घनानंदरूपिरगी। लता प्रोक्ता महेशानि संयोगानंदरूपिग्गी ।।२६६४।। जगत्त्रयं सैव सूते पंचभूतानि सैव च। संहारकर्त्री सैव स्यान्मोक्षरूपा तु सा मता ।। २६६६।। ब्रह्मरूपा तु सेव स्यान् मुक्तयस्तु चतुर्विधाः। यन् मूलज्ञानमात्रेगा सदा तिष्ठन्ति पार्वति ।।२६६७।। सालोक्यं चैव सारूप्यं सायुज्यं च तृतीयकम्। सान्निध्यं च चतुर्थं स्यात् सर्वं शक्तचां प्रतिष्ठितम् ॥२६६८॥ नवरुद्रसमायुक्ता नवरात्राभिधा भवेत्। कलावर्षं तु चैत्राख्यमाश्विनास्यं तदुत्तरम् ॥२६६६॥ द्वाविशद्वर्षयन्तं कीर्तितं परमेश्वरि । द्वात्रिशद्वर्षपर्यन्तं प्रोक्ता दीपावली कला ।।२६७०।। तदुत्तरं दारुएा स्यात् पर्वं श्रृएा महेश्वरि । वर्षद्वादशपर्यन्तं मोहरात्रिः प्रकीतिता ॥२९७१॥ संयोगे योगनिद्रा स्यान् महानिद्रा विसर्जने । श्रानंददीप्ता देवेशि विपरीता प्रकीर्तिता ।।२६७२।। चीनद्रुमलतायास्तु मूलं चैवालवालकम्। पुष्पं फलं तथा बीजमेकत्रेव प्रतिष्ठितम् ॥२९७३॥ श्रघो भागेऽन्यवृक्षस्य मूलमस्ति वरानने । अध्वै शाखा तत्र पुष्पं फलं तत्र तदुत्तरम् ॥२६७४॥ एतन् मूले जलं देयं यस्मात् शुष्यति नो तरुः। तस्माज्जलं प्रदेयं स्याद् रक्षकः पुरुषाधमः ॥२६७५॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

स्वमूलं च न जानाति पररक्षार्थमुद्यतः । स्वरक्षिका स्वयं देवी जलबिन्दुं घटस्थितम् ।।२६७६।। ध्वजस्तस्य प्रगाली स्यादिदं संक्षेपतो मतम्। देवालये नदीतीरे रम्ये वा यत्र कुत्रचित् ।।२६७७।। त्रिधा त्रिशक्तिसंजापी गवाक्षयोगमभ्यसेत्। सुखासने समासीनो भूतशुद्धचादिसंयुतः ॥ २६७८॥ ऋषिच्छंदादिषोढान्तं कुल्लु क्रांतं महेश्वरि । कृत्वा घ्यात्वा महेशानि गवाक्षे दृष्टियोजनम् ॥२६७६॥ श्रंगुष्ठादिशिखान्तं हि समालोच्य जपं चरेत्। भ्रमरं सूर्यविबं च त्रिवेग्गीं पुष्करं तथा ।। २६८०।। तिलपुष्पं खंजरीटं पर्वतं कामरूपकम् । श्रमृतं पुष्पितं देवि संगीतं नाट्यमेव च ।।२६८१।। समालोच्य जपेद् देवि कामगेहं विशेषतः। एकद्विज्यादिलक्षा तं समालोच्य जपं चरेत् ॥२६८२॥ तत्रंव पुष्पितां हृष्ट्वा कृत्वा संयोगमादरात्। गवाक्षयोगसामर्थ्याज्जपं कुर्यादनन्यधीः ।।२६८३।। श्रष्टावधानी देवेशि भवत्येव न संशयः। श्रथवान्यप्रकारेए। साधनांतरमुच्यते ।।२६८४।। कुलजां युवर्ती वीक्ष्य यौनौ लिगं प्रदापयेत् । मंथानं कारयेद् देवि गवाक्षमभ्यसेत् तथा ।। २६ ८ १।। तद्रसं विलिहन् देवि स्वरसं च ततः परम्। एवं मासाष्टकं कुर्यात् सिद्धिदाता न संशयः ॥२६८६॥ दशावधानो देवेशि भवत्येव न चान्यथा। वीरपत्नीं समानीय शवशय्यां समाचरेत् ॥२६८७॥ वीरसाधनवत् कृत्वा शवमाच्छाद्य यत्नतः। र्शित लिगोपरि स्थाप्य समञ्ज्ञान्यभात्रीं. प्रदेशका क्षेत्रकार्

गवाक्षयोगमासाद्य तत्रैव परमेश्वरि । वर्षमात्रं जपेद् देवि कालीरूपो नरो मवेत् ।।२६८६।। शतावधानो देवेशि भवत्येव न संशयः। स्रथवान्यप्रकारेगा साधनांतरमुच्यते ॥२६६०॥ महाशवं मध्यभागभू मावाच्छाद्य यत्नतः । मृदुचूडकम्ंडानां कोमलं च चतुर्थकम् ॥२९९१॥ क्रमेरा दिक्षु संयोज्य तत्र शक्ति समानयेत्। ग्रासनं तत्र संदत्वा महाव्याघ्रासनं तथा ॥२६६२॥ तत्र वेश्यां समानीय योनौ लिगं निधाय च। स्पर्शषट्कासनं कृत्वा जपं कुर्यादनन्यघी: ॥२९९३॥ वर्षमार्गं जपेद् देवि समयादिषु तत्परः। सहस्राद्यवधानं च कर्तुं शक्तो नरो भवेत् ॥२६६४॥ कुंकुमं केसरं चापि समानीय प्रयत्नतः । वामहस्ते तु संस्थाप्य दक्षे यंत्रं समालिखेत् ॥ २६६५॥ वामेन तर्पेग् कुर्यात् सहस्रमयुतं च वा । शक्तेर्मुखं समालोक्य तर्पग्गं सर्वदाचरेत् ॥२६६६॥ सर्वसिद्धीश्वरो भूयात् नात्र कार्या विचारएा। म्रस्मिन् यागे महेशानि यागोपकरएां शृषा ॥२६६७॥ कुचौ तु कलशौ प्रोक्तौ सामान्यार्घस्तु नामिका। भगध्वजो विशेषार्ध्यस्त्रिकोर्णं यंत्रमीरितम् ॥२९६८॥ गमागमावृत्तिरुक्ता पुष्पं प्रदशनं स्मृतम् । श्रालापस्तु जपः प्रोक्तस्त्ववलोको वरः स्मृतः ॥२६६६॥ क्रोधस्तु निग्रहः प्रोक्तः करग्राहो भयं भवेत् । तस्याः पादप्रसारस्तु पृथिन्यास्तु प्रदक्षिएा ॥३०००॥ चुंबनं स्तोत्रपाठोऽत्र कुचमदंस्तपःक्रिया। गले पादस्य निक्षेपः सिहासनमितीरितम् ।।३००१॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

विपरीतं दोलिकाख्या पूजा प्रोक्ता महेश्वरि । विसर्जनं वीर्यपातो मुद्रा त्वालिंगनं भदेत् ॥३००२॥ श्रोष्ठसंचुंबनं देवि खेचरीयोग ईरितः। कपोलचुंबनं देवि गुटिका परिकीर्तिता ॥३००३॥ ललाटचुम्वनं देवि लम्बिका परिकीर्तिता। नेत्रसंचुंवनं देवि ह्यांजनं परिकोतितम् ॥३००४॥ करसंचुंबनं देवि खड्गसिद्धिः प्रकीतिता। योनिसंचुंवनं देवि मनोरथमयी गतिः ॥३००५॥ जिह्वाप्रदानं देवेशि कालवंचनमीरितम्। रससंलेहनं देवि ब्रह्मरूपं न संशयः ॥३००६॥ श्रालीचनं पृथिव्यास्तु देवतादर्शनं भवेत् । तत्संगिना सदा भाव्यं तामालोक्य जपेत् सदा ॥३००७॥ कोटिब्रह्माण्डदानादि ह्योकतः परिकीर्तितम्। तच्छायालोकनं देवि सर्वात् श्रेष्ठतरं भवेत् ॥३००८॥ तपश्चर्या कोटितीर्थे यागानामिप कोटयः। देवालयानामानंत्यं कृतं येन निरंतरम् ॥३००६॥ तेनेदं प्राप्यते देवि दर्शनं बिन्दुरूपिएाः। ब्रह्मगो दर्शनं देवि शब्दब्रह्ममहत्तरम् ॥३०१०॥ चंद्रामृतं राहुमिया तथा स्वर्गामृतं प्रिये। राक्षसानां च संभीत्या भ्रोष्ठे योनौ विराजते ॥३०११॥ चन्द्रामृतं चाधरोष्ठे योनौ स्वर्गामृतं प्रिये। सदा तिष्ठति देवेशि ज्ञानात् सिद्धि नं चान्यथा ॥३०१२॥ ग्रज्ञानाद् विषरूपं स्यात् नात्र कार्या विचार्गा। विना मार्गं महेशानि गतिश्चैव कथं भवेत् ॥३०१३॥ मार्गप्रदर्शनाद् देवि गतिः सर्वत्र हश्यते। तन्मार्गदर्शनार्थं हि मकाराः पञ्च कीतिताः । CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delm. Digiti Les Personal

मद्यं मांसं तथा मत्स्यं मुद्रा मैथुनमेव च। ज्ञात्वा फलं समाप्नोति नात्र कार्या विचारगा ।।३०१५।। ब्रह्मा विष्णुइच रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः। एते पञ्चमकाराश्च पञ्चनामप्रचारकाः ॥३०१६॥ श्रात्मविद्याशिवाः सर्वं पूर्णेति पश्चमं विदुः। पञ्चतत्त्वानि देवेशि शाक्ते च परिकोतिताः ॥३०१७॥ पञ्चमुद्रा नामधरास्ता ग्रहो विचम सांप्रतम्। ब्राह्मी च वैष्णवी रौद्री ईश्वरी श्रीसदाशिवा ।।३०१८।। पश्चमुद्राः समाख्यातास्तत्तन्नामधराः शिवे । संतर्प्य कुण्डलीशक्ति पश्चमुद्राविधानतः ॥३०१६॥ श्रील च पिशितं मीनं मुद्रा मैथुनमुत्तमम्। मकारपञ्चकं यत्र तत्र देवी न संशयः ।।३०२०।। न मद्यं माधवीमद्यं मद्यं शक्तिरसं स्मृतम्। सुषुम्गा राङ्घिनी मत्स्यं मुद्रा उन्मन्यनुत्तमम् ॥३०२१॥ सामरस्यामृतोल्लासं मैथुनं तत् सदाशिवम् । महाकुण्डलिनीशक्तिस्तद्योगार्थं महेश्वरि ।।३०२२।। शक्तिः प्रोक्ता महेशानि न मोगार्थं मयेरिता। कुण्डलीसामरस्यार्थं स्वयंभूलिंगमीरितम् ॥३०२३॥ एतदभ्यासयोगेन कुण्डली रसवान् भवेत्। श्रवाच्यं यद् भवेद् ब्रह्म तद्रसस्तु तथा भवेत् ।।३०२४।। तथा समरसानन्दरसः संकीर्तितो मया। श्रज्ञानादिप देवेशि मोगवासनयापि वा ।।३०२५।। फलं संसारजं देवि गर्भरूपेगा जायते। ज्ञानात् फलमवाप्नोति त्रेलोक्यविजयामिधम् ॥३० २६॥ तस्मात् तु पश्चमी मुद्रा कीर्तिता तु मया तव। संयोगामृतयोगेन कुण्डल्युत्त्थानकारणात् ।।३०२७। चन्द्रपात्रे यदा याति तत्मद्यं परिकीर्तितम्। मिरिणपूरे दशदले सुषुम्साया यदा गितः ।।३०२८।।

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

613.50

The state of the s

15 PXE Joh

तत् करामृतसंयोगाद् द्वितीया परिकीर्तिता । हृत्पचे द्वादशारे तु शिङ्घनी कूर्मसंस्थिता ।।३०२६।। सुधासागरक्रीडायां मत्स्यस्तत्र प्रकीतितः। मुद्रा तृतीया गदिता चतुर्थी षोडशच्छदे ।।३०३०।। चन्द्ररूपाग्निसंभिन्ना वर्त्तुला बिन्दुर्गाभता । भगध्वजाख्यवराकं घंटिता तु चतुर्थिका। पश्चमुद्रा मया प्रोक्ता मुख्यभावफलाप्तये ॥३०३१॥ स्थूलसूक्ष्मक्रमेरगंव प्रोक्तमेतन् महेश्वरि । स्थूलं मनिस संधाय सूक्ष्मं पत्रचात् समभ्यसेत् ॥३०३२॥ मकारपंचकेनैव ज्ञानमेतस्य जायते। कर्मदूती ज्ञानदूती द्विधा चैव प्रकीतिता ॥३०३३॥ बाह्याभ्यन्तरभेदेन यथाज्ञानं च साधयेत्। कर्मदूर्ती च संसाध्य ज्ञानदूर्तीमथाभ्यसेत् ॥३०३४॥ मकाररूपो मार्गो हि कीर्तितस्ते मया यतः। एवं कर्तुमशक्तक्चेत् तत् तत् प्रतिनिधि चरेत् ॥३०३४॥ गुडाईकरसो देवि मुद्रा तु प्रथमा मता तथैव विजया प्रोक्ता ताम्प्रपात्रे पयस्तथा ॥३०३६॥ मधुमिश्रा तु प्रथमा कीर्तिता चानुकल्पके । पिण्याकं लवणं देवि द्वितीया परिकोतिता ॥३०३७॥ लसुनं तितिएगोकं च तृतीया परिकीतिता। सूर्यमण्डलसंकाशा चन्द्रमण्डलसन्निमा । गोधूममावसंभूता स्यात् सुंदरि चतुर्थिका ॥३०३८॥ शक्तचालापः पंचमी स्यात् तथेव चापराजिता । करवीरपुष्पसहिता संयोगानन्ददायिनी ।। इति संक्षेपतः प्रोक्तं किमन्यच्छ्रोतुमिच्छिस ॥३०३६॥

इति श्रीमदागमरहस्ये सतसंग्रहे शक्तिरहस्यनिर्णयो नाम द्वादशः पटलः ॥१२॥ ग्रादितश्चत्वारिशतः । CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Diginzed by eGangotri

श्रथ त्रयोदशः पटलः।

दूतीयागमथो वक्ष्ये खेचरत्वप्रदायकम् । यस्यानुष्ठानमात्रोग् स्वयं ब्रह्मत्वमाप्नुयात् ॥३०४०॥ तथा च देवीयामले—

संति नानाविधा धर्मा ऐहिकामुष्मिकप्रदाः। तत्सारं तु समालोक्य तथान्यमंत्रसंग्रहम् ॥३०४१॥ तन्मध्ये सारभूतं च सद्यः प्रत्ययकारकम् । न कस्यापि वरारोहे प्रोक्तवान् त्रिदशेष्वपि ॥३०४२॥ दूतीयागे कृते मंत्री सर्वज्ञो जायते ध्रुवम् । न तस्य पुनरावृत्तिः कल्पकोटिशतैरपि ॥३०४३॥ देवा यक्षाश्च गंधर्वा ऋषयश्च मुनीश्वराः । ब्रह्मविष्णुमहेशाद्यास्तथा च पितृदेवताः ॥३०४४॥ दूतीयागविधि कृत्वा तत् तत् पदमवाप्नुयुः । विधिवत् सुकृती कृत्वा दूतीयागं तु पार्वति ॥३०४५॥ कृतकृत्यो न संदेहः सुंदरी सुप्रसोदति । येषां वंशे प्रजायेत दूतीयागो महेश्वरि ॥३०४६॥ ते धन्याश्च समृद्धार्थास्ते वंद्याः सुहृदः सदा । कायेन मनसा वाचा सर्वथा न प्रकाशयेत् ॥३०४७॥ सुतं पत्नीं शिरो दद्यात् न देयमिदमुत्तमस्। कुर्यात् प्रयत्नतश्चेव दूतिकायजनं प्रिये ॥३०४८॥ यैः कृतं यजनं दूत्यास्तेरिष्टाः क्रतवोऽखिलाः। पुरश्चर्यादिसकलं कृतं तेन न संशयः ॥३०४६॥ ग्रश्वमेधसहस्राणि वाजपेयशतानि च। श्रासमुद्रा च घरगी दत्ता तेन सदक्षिणा ॥३०५०॥ मेरुमंदरतुल्यानि सुवर्णान्यपितानि च। गोकोटिदानाद् यत् पुण्यं तत् पुण्यं जायते प्रिये ॥३०५१॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

सर्वतीर्थमयः प्रोक्तः सर्वदेवमयो यतः । तस्मात् सर्वप्रयत्नेन दूतीयागं समाचरेत् ।।३०५२।। पूजा संपूर्णदा भद्रे सर्वारिष्टप्रशामकम्। यदनुष्ठानमात्रेण सर्वमाचरितं भवेत् । शक्तिपूजा प्रकर्तव्या विधिवद् भक्तिसंयुतैः ।।३०५३।। इति ।

तद्दूतीयागं द्विविधम् । म्रान्तरं बाह्यं च । ज्ञाननिष्ठानामान्तरम् । कर्म-निष्ठानां वाह्यम् । तद् बाह्यं द्विविधम् । कालीकुलश्रीकुलभेदात् । तत्तत्क्रमं च तत्तत् कल्पे द्रष्टव्यम् ।

यथात्र सर्वसाधारएां कुमारीतन्त्रे—

Security firms places a यथोक्तलक्षां दूतीं नवानां कामिप प्रिये। पूजयेत् परया भक्त्या वित्तशाठ्यविवर्जितः ।।३०५४।। उक्ताभावे च या काचिदात्मीया वा पराऽथवा । पूजनीया विधिज्ञेन कर्मगां फलसिद्धये ।।३०४४।। मंत्राधिदेवता बुद्धचा पूज्या सर्वोपचारकैः। विविधैः फलतांबूलै वंस्नालंकारहेमिमः ।।३०५६।। संमोगवासनां धृत्वा यः कुर्यात् शक्तिपूजनम् । स दारिद्रचमवाप्नोति नारको च भवेद् ध्रुवस् ।।३०५७।।

वीरचूडामगा च-

श्रानीय युवतीं रम्यां क्यामां लक्षरणलक्षिताम्।

व्यामालक्षणं कामशास्त्रे—

हिनग्धनखनयनदशना निरनुशया मानिनी स्थिरस्नेहा। सुस्पर्शिशिरमांसलवरांगविवरांगना क्यामा ।।३०५८।।

वीरचूडामग्गौ—

140 20 20 20 10 11 12 b श्रत अर्ध्वं न पूज्या स्यादित्याज्ञा पारमेश्वरी। पूजिता चेद वरारोहे तर्पणं निष्कलं भवेत्।।३०५६।। ग्रथ पूजाविधि तस्याः शृत्यु देवि समाहिता। याममात्रो गते रात्रो कुलपूजां समार मेत् है। है शहर है। by eGangotri CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, Net

तांबूलपूरितमुखो घूपामोदसुगंघितः। रक्तचंदनदिग्धांगो रक्तमाल्यानुलेपनः ।।३०६१।। रक्तवस्त्रपरीधानो लाक्षारुगगृहे स्थितः। तदानीय कुलं सम्यगुद्वर्तनमनन्तरम् ।।३०६२।। स्नानं रक्तदुकूलादिगंधमालाविभूषिताम् । सुगंधिसंस्कृतां कृत्वा सर्वाभरराभूषिताम् ।।३०६३।। प्रराम्य पादौ प्रक्षाल्य स्वागतादि समाचरन्। वामभागे समालिख्य पद्मं वै वर्त्तुलं शुमम् ।।३०६४।। स्वेतरक्तसमायुक्तं नीलसिंदूरचितम्। पीठशक्तिविधानेन संपूज्या नव शक्तयः ॥३०६५॥ रतिः प्रीतिः प्रिया कांतिः कामिनी कामपालिनी । कंदर्पदलिनी दुर्गा भवानी पीठशक्तयः ।।३०६६।। वियद् हंसं समुच्चार्य मनुबिन्दुकलाचितम् । महाप्रेतपदं पश्चाद् हृदयान्तमिदं मनुम् ।।३०६७।। श्रनेनासनमभ्यच्यं गृहीत्वा वामहस्तकम् । निवेश्य तुलिकामध्ये नानापुष्पसुगंधिनि ।।३०६८।। चंदनागरुकर्पूरकस्तूरोकुंकुमादिमिः। समाकीर्गो निवेश्याथ पूजयेत् कुलनायिकाम् ।।३०६९।। ग्राचम्य श्रीगुरून् स्मृत्वा गर्ऐाशं दक्षवामयोः । मध्ये शक्तिमिष्टरूपां प्रगम्याशां निबध्य च ॥३०७०॥ निवेश्य तूलिकामध्ये नानापुष्पसुगंधिना । भूतगुद्धचादिकं सर्वं स्वकल्पोक्तक्रमेगा च ।।३०७१।। विधाय न्यासजालानि तथा मूलवडंगकम्। कृत्वा कुलशरोरेऽपि न्यासजालं महेश्वरि ॥३०७२॥ सामान्यार्घं च संस्थाप्य कलशादिक्रमेगा च। पंचद्रव्याणि संशोध्य पात्राणि स्थापयेत् ततः । तत्त्वशुद्धि विघायाथ शक्तिसंस्कारमाचरेत् ॥३०७३॥ ८७. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

म्रदीक्षितकुलासंगात् सिद्धिहानिस्तु जायते । श्रमिषेकाद् मवेत् शुद्धि मैंत्रस्योच्चारबिंदुभिः ।।३०७४।। बलाद् वा यत्नतो वापि ग्रिभिषेकं समाचरेत्। श्रादौ बालां समुच्चार्य त्रिपुरायै समुच्चरेत् ।।३०७४।। नमःशब्दं समुच्चार्य इमां शक्ति ततो वदेत्। पवित्रोकुरुशब्दान्ते मम शक्ति कुरु प्रिये।।३०७६॥ विह्नजायां समुच्चार्य शुद्धिमंत्रः सुरेश्वरि । सामान्यार्घजलेनैव त्रिःसिचेन् मंत्रमुच्चरन् ।।३०७७।। तस्याः कर्णेऽभेदबुद्धचा मायाबीजं समुच्चरेत्। एवं शक्ति तु संस्कृत्य तस्यै दद्याच्च पात्रकम् ।।३०७८।। भोगपात्रयुतं चैव नानाव्यंजनसंयुतम्। दत्वा संतर्ष्यं तां सम्यक् तरुगोल्लाससंयुतः ।।३०७६।। तरुगोल्लाससंयुक्तां पर्यंके तु निवेशयेत्। भयलज्जादि सर्वाणि परित्यज्याथ दूतिका ।।३०८०।। कंचुकं च परित्यज्य तथा वस्त्रं च पार्वति । श्राचार्यानुचरो रक्ता मनसा सुखदायिनी ॥३०८१॥ एवंविधा यदा दूतो तदा पूजां समारभेत्। संकल्पं च प्रकल्प्याथ कृत्वा मंडलमुत्तमम् ॥३०८२॥ मंचकं गजदंतस्य हेमरूप्यादिनिमितम् । विशुद्धक्षौमरचितां तूलिकां तत्र योजयेत् ॥३०८३॥ पुष्पाण्याकीर्यं तन्मध्ये कर्पूरस्य रजस्तथा । मंडूकादिस्तत्र देवि उपर्युपरि पूजयेत् ॥३०८४॥ मंडूकं पूजयेदादौ रुद्रं कालाग्निसंयुतम्। श्राधारर्शोक्त कूमें च तथा शेषवराहको ॥३०८४॥ पृथिवीं च तथा कंदं नालं पद्मदलांस्तथा। केसरागि च संपूज्य करिएकां पुज्येत् oतत्र billiदेशक द्वापुटरां

एवं मंचकमभ्यच्यं तस्य पादचतुष्ट्ये। धर्मं ज्ञानं च वैराग्यमैश्वर्यं च क्रमाद्यजेत् ॥३०८७॥ अपूर्वान् पूजयेदेतान् तत्पादानां समीपतः । श्रात्मान्तरात्मापरमज्ञानात्मानः क्रमात् ततः ।।३०८८।। स्ववर्गादिममंत्रेश्च पूज्य संपूजयेद् गुर्गात्। तस्योपरि कुलं स्थाप्य पूजयेत् तां समाहितः ॥३०८६॥ पूजयेत् परमेशानि पंचकामशरांस्ततः। हीं चैव कामराजं क्षीं कन्दर्पमें च मन्मथम् ॥३०६०॥ ब्लूं मकरध्वजं चैव स्त्रीं चैव हि मनोभवम्। ॐकारादि नमोन्तं च कुसुमैर्गंधसंयुतैः ।।३०६१।। पूजियत्वा चतुर्दिक्षु पूजयेत् कुलनायकान्। वदुकार्दीश्रतुदिक्षु पूजासंसिद्धिहेतवे ॥३०६२॥ मातृकां विन्यसेत् तस्या देहे कामशरान्विताम् । श्रनेन मनुना तस्या ललाटे सुमनोहरम् ॥३०६३॥ त्रिकोएां तत्र संलिख्य सिंदूराद्यैवंरानने । वाग्भवं कामबीजं च स्त्रीबीजं कामराजकम् ॥३०१४॥ हस्ब्लेमात्मकं दत्वा ग्राधारशक्तिमुद्धरेत्। श्रीपादुकां ततो दत्वा पूजयामि वदेत् ततः ॥३०९५॥ महाप्रेतासनं मध्ये बालां च पूजयेत् ततः । त्रिकोरामध्ये बालाख्यां कामेशीं परिपूजयेत् ।।३०६६।। गएोशं च कुलाध्यक्षं दुर्गां लक्ष्मीं सरस्वतीम्। त्रिकोऐोषु च संपूज्य वसंतं मदनं प्रिये ॥३०६७॥ स्तनयोः पूजयेत् पश्चात् मुखे तस्याः कलाघरस् । दक्षपादादि मूर्घान्तं वामे मूर्घादि सुंदरि ॥३०६८॥ पादान्तं पूजयेत् सर्वाः कला वे कामसोमयोः । श्रद्धाप्रीतो रतिश्चेव घृतिः कांतिर्मनोरमा ॥३०६६॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri मनोहरा मनोरामा मदनोन्मादिनी प्रिये ।

मोहिनो दीपिनी चैव शोषिगी च वंशकरी ॥३१००॥

रंजनी सुभगादेवी षोडशी प्रियदर्शना ।

षोडशस्वरसंयुक्ता एताः कामकलाः यजेत् ॥३१०१॥

ततश्चन्द्रकला पूज्या शिरसश्चरणाविध ।

पूषा वशा च सुमना रितः प्रीतिस्तथा घृतिः ॥३१०२॥

श्रद्धा सौम्या मरीचिश्च शैलजा चांशुमालिनो ।

श्रंगिरा शिशनो चैव च्छाया संपूर्णमंडला ॥३१०३॥

तथा तुष्ट्यमृते चैव कला सोमस्य षोडश ।

उत्तरतन्त्रे ग्रंगिरास्थाने मिदरेति पाठः। तच्च कालीकुलपरम् ।

स्वरंरेव प्रपूज्या हि सर्वकामार्थसिद्धये ॥३१०४॥

पूजास्थानानि च दक्षपादादि मूर्घान्तं कामकलाः । मूर्घादि वामपादान्तं सोमकलाः ।

दक्षांगुष्ठं पादगुल्फो जानुजंघे तथैव च । नाभिवक्षःकक्षकण्ठगंडोष्ठनयनेषु च ॥३१०४॥

मुखे ललाटे च मुखे शिरसि क्रमतोऽर्चयेत्। एतेषु विपरोतेन पूज्यादच शशिनः कलाः ॥३१०६॥इति। अत्रैव श्रीविद्यायां विशेषः रहस्ये—

स्मृत्वा ऋष्यादिकं मंत्री षडंगन्याससंयुतः ।
कुलांगे गंधपुष्पाद्येः पूजयेच्च त्रिक्टया ॥३१०७॥
त्रिपुरा मस्तके पूज्या कुंतले त्रिपुरेश्वरी ।
ललाटे त्रिपुराध्यक्षा भ्रुवोस्तिपुरवासिनी ॥३१०८॥
नेत्रयोस्तिपुरेशानी कर्णयोस्तिपुराचिता ।
नित त्रिपुरा त्र्यक्षरीति गंडयोस्तिपुरांबिका ॥३१०६॥
मुखे त्रिपुरविद्या च कण्ठे त्रिपुरमालिनी ।
स्कंधयोस्तिपुरादेवी हस्तयोस्तिपुरोत्तमा ।
स्कंधयोस्तिपुरादेवी हस्तयोस्तिपुरोत्तमा ।
८८-०. Arutsakhi R. Nagarajan Collection New Delhi. ।

वक्षसि त्रिपुराश्ची च कुचयोस्त्रिपुराकला ॥३१११॥
कुक्षौ त्रिपुरमूत्तिश्च पार्श्वयोस्त्रिपुराकला ॥३१११॥
पृष्ठे त्रिपुरचक्रेशी नामौ त्रिपुरसूदिनो ।
योनौ त्रिपुरयोनिश्च गुह्यो त्रिपुरगोपिता ॥३११२॥
ऊर्वोस्त्रिपुरमंत्रेशी जान्वोस्त्रिपुरजंगमा ।
जंघयोस्तिपुरा ज्येष्ठा पादयोस्त्रिपुरांचिता ॥३११३॥
पादादि मूध्निपर्यन्तगात्रे त्रिपुरसुंदरो ।
पूजनोया महादेवि गंधाक्षतप्रसूनकैः ।

बालाक्रमं मस्तकेऽस्याः संयूज्य तदनन्तरम् ॥३११४॥ इति । उत्तरतन्त्रे ज्ञानार्णवे च—

मगे तदीये विज्ञेया नाड्यस्तिस्रः प्रवाहिकाः ।
एका तु वाहिका चान्द्री सौरी चान्या प्रवाहिका ॥३११४॥
ग्राग्नेयी चापरा ज्ञेया पूजयेत् ताक्च साधकः ।
ग्रम्बुः स्रवित चान्द्री सा पुष्पं स्रवित मानवी ॥३११६॥
वीर्यं स्रवित चाग्नेयी तास्तु नामिसर्चयेत् ।
वाग्भवाद्यं नंमोयुक्तैः पूजयेत् सुप्रसन्नधीः ॥३११७॥
पूजयेत् मदनागारे रक्तचन्दनर्चिते ।
विद्यया भगमालिन्या पूजयेत् तां समाहितः ॥३११८॥

वाग्भवं भगशब्दान्ते भुगे मिनि चालिखेत्।
भगोदि तदन्ते स्याद् भगमाले भगावहे ॥३११६॥
भगगुद्धो भगान्ते च योने भगनिपातिनि ।
सर्वान्ते च ततो देवि ब्रूयाद् भगवशंकिर ॥३१२०॥
भगरूपे ततो लेख्यं नीरजायतलोचने ।
नित्यिक्चिन्ने भगान्ते च स्वरूपे सर्वमालिखेत् ।।३१२१॥
भगानि मे ह्यानयान्ते वरदेऽय समालिखेत् ।
रेते सुरेते च भगक्चिन्ने क्चिन्नद्रवे ततः ॥३१२२॥

appearing

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

क्लेदय द्रावयांतेऽथ सर्वसत्त्वान् भगेश्वरि । ग्रमोघे मगविच्चे च क्षुभ क्षोमय सर्व च ॥३१२३॥ सत्त्वान् भगेश्वरि ब्रूयाद् वाग्भवं ब्लूं जमादिकम्। भें ब्लूंमों ब्लूं च हें ब्लूं हैं क्लिन्ने ब्रूयात् ततः परम् ॥३१२४॥ सर्वािंग च भगान्यन्ते मे वशं चानयेति च। स्रोबोजं च हरप्रान्ते वलेमात्मकमक्षरम् ॥३१२५॥

भुवनेशीं समालिख्य विद्येयं भगमालिनी। त्रितारान्तेऽनया पूज्य त्रिकोरां क्षोभवर्जितः ॥३१२६॥

ग्रत्राप्यावाहनं नास्ति जीवन्यासं महेश्वरि । मूलदेवीं यजेत् तत्र षोडशैरुपचारकैः ॥३१२७॥

भ्रत्रेव श्रीविद्यायां विशेषः ज्ञानार्ग्वे —

त्रिकोएां तद्भगं ज्ञात्वा सर्वसिद्धिप्रदाभिधम्। सर्वानन्दमयं मध्ये चक्रयुग्मं प्रपूजयेत् ॥३१२८॥ पूर्ववत् क्रमयोगेन श्रीविद्यां तत्र पूजयेत्। षोडशैरुपचारैश्च तदन्ते पूजयेत् शिवस् ॥३१२६॥ शिवं लिगमिति।

तारं च भुवनेशानीं तथा त्रिपुरसुन्दरीस । नमः शिवाय विद्येयं दशार्गा परिकीतिता ॥३१३०॥

त्रिपुरसुन्दरीमिति त्रिकूटाम्।

म्रनया विद्यया देवि स्वलिगं पूजयेत् शिवे। यजेत् तत्पुरुषाघोरसद्योवामेशसंज्ञकैः ॥३१३१॥ निवृत्तिश्च प्रतिष्ठा च विद्या शांतिस्तथैव च। शांत्यतीताश्च संपूज्य षडंगावरएां यजेत् ।।३१३२।। समप्रविद्यामुच्चार्यं नंदिकेशं प्रपूजयेत्। मध्ये वृषरायोर्देवि गंधपुष्पाक्षतादिभिः ॥३१३३॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

निवेद्य सर्वं धूपारेद विजितेन्द्रियमानसः। सर्वसंक्षोभिग्गी मुद्रां बध्वा योनि प्रचालयेत् ॥३१३४॥ क्षोभिण्या वामया देवि गजतुण्डाख्ययाऽथवा। उच्चरन् भगमालां च द्राविग्गीबीजमुच्चरन्। प्रक्षुम्य च वरारोहे यावदेतत् प्रवर्तते ।।३१३५।। इति ।

उत्तरतन्त्रे—

श्चर्ययेद् गंधपुष्पाद्यैः स्विशवं तदनन्तरम् । यजेत् तत्पुरुषाघोरसद्योवामेशसंज्ञकैः ॥३१३६॥ निवृत्ति च प्रतिष्ठां च विद्यां च तदनन्तरम्। शांति च शांत्यतीतां च तदंगे तदनन्तरम् ॥३१३७॥ समग्रविद्यामुच्चायं त्रिकोरां च पुनर्यजेत्। श्रवञ्चतेश्वरीं कुब्जां कामाख्यां समयामपि ॥३१३८॥ वज्रे इवरीं कालिकां च तथा दिक्करवासिनीस । तथा चण्डेश्वरीं तारां पूजयेत् तत्र साधकः। तदनुज्ञां ततो लब्ध्वा दत्वा तांबुलमेव च ।।३१३६।। वाग्मवं भूवनेशानीं चण्ये नि श्रंते चपलचित्तोऽथ रेतो मुंचयुगं तथा ॥३१४१॥ ब्लूं क्लीं स्त्रीं तथा हें च द्राविग्गीयं नवाक्षरी। त्रिविमृश्य तदन्ते च क्लोकरूपं मनुं स्मरेत् ॥३१४२॥ धर्माधर्महविदीप्ते स्वात्माग्नौ मनसा स्रुचा । मुषुम्णा वर्त्मना नित्यमक्षवृत्तीर्जुहोम्यहम् ॥३१४३॥

स्वाहान्तोऽयं महामंत्र ग्रारंभे परिकोतितः।

ततो जपेत हित्रयं गच्छन् विद्यां त्रिभुवनेश्वरोस् ।।३१४४।। CC-0. Arutsakhi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

ग्रष्टोत्तरसहस्रं वा शतं वा क्षुब्धमानसः । विहरेद् विविधै भविः शक्तिसंतोषकारकैः ॥३१४५॥ मौलौ कुन्तलकर्षणं नयनयोराचुंबनं गंडयो दंन्तेनाधरयोः क्षितह् दि हित मृष्ट्या च नामौ भगे । कक्षोरूषु कपोलमंडलयुगे श्रोण्यां च देया नखाः सीमन्ते लिखनं नखैरुरसिजं गृह्णीत गाढं ततः ॥३१४६॥ कुर्वीताविरतं मनोभवगृहे मातंगलीलायितं ग्रीवांगुष्ठपदादिगुल्फहननं चान्योन्यतः कामिनोः ॥३१४७॥ इति कामशास्त्रे।

ततो रेतः पातसमये—

प्रकाशाकाशहस्ताभ्यामवलंब्योन्मनीस्रु चम्। धर्माधर्मकलास्नेहं पूर्णवह्नौ जुहोम्यहम् ॥३१४८॥ स्वाहान्तोऽयं महामंत्रः शुक्रत्यागे प्रकीतितः । कुलामृतं प्रयत्नेन गृह्णीयाद् दुर्लभं ततः ॥३१४६॥ कुलामृतं च संशोध्य ब्रह्मरूपं विचिन्त्य च। म्रर्घ्यपात्रामृते क्षिप्त्वा तेन देवीं प्रतर्पयेत् ॥३१५०॥ गुरूगां साधकानां च सर्वेषां तर्यगां चरेत्। तेनामृतेन दिव्येन सर्वे तुष्टा भवन्ति च। यत् कामं वांछते मंत्री तत्क्षरणादेव सिद्धचित ।।३१५१।। शोवनमंत्रस्तु द्रव्यशोधनपटले पुरैवोक्तः। श्रयं बिंदुरजः साक्षात् संविदेव न संशयः । प्रकृतिः परमेशानि बीजं पुरुष उच्यते ॥३१५२॥ सर्वसाक्षीसामरस्यं शिवशक्तिमयं यतः तयोयोंंगे महेशानि योग एव न संशयः ॥३१५३॥ सीत्कारो मंत्ररूपस्तु माषणं स्तवनं भवेत्। प्रालिगनं तु कस्तूरीकर्परघुस्यादिकस् अक्ष्र्रश्रृष्ट्रां by eGangotri नखदन्तक्षतादीनि पुष्पाणि विविधानि च ।

मेथुनं तर्पणं विद्धि वीर्यपातो विसर्जनम् ॥३१५५॥
वीर्यामृतं परब्रह्मरूपं साक्षान्न संज्ञयः ।
विचिकित्सापरो मंत्रो जायते गुरुतल्पगः ॥३१५६॥
श्रतएव वरारोहे निर्विकल्पः सदा भवेत् ।
चुंबने परमेश्वर्यं नखदन्तक्षतेः सुखम् ॥३१५७॥
संभोगे च सुखं यत्तु तद् विष्णोः परमं पदम् ।
श्रालिगनं हरेद् रोगान् धनधान्यादि चुम्बने ॥३१५८॥
नखदंतताडनाद्येः भोगं मोक्षं न दुर्लभम् ।
सायुज्यं संगमेन स्यात् सत्यमेतन्न संज्ञयः ॥३१५६॥
न दद्याच्चुंबनं देवि दरिद्रो जायते ध्रुवम् ।
श्रालिगनं विना मंत्री कृष्ठी मवित निश्चितम् ॥३१६०॥
नखदंतक्षतेनैव विना स्याल्लोकर्गाहतः ।
तस्मात् सर्वं विधातव्यं साधकेनेष्टतुष्टये ॥३१६१॥
इति कमंदूतीयजनम् ।

श्रथ ज्ञानदूती यथा ज्ञानाएँवे—

द्रत्यन्तरं प्रवक्ष्यामि येन ब्रह्मा सनातनम् ।
प्रग्णवाख्ये योगगेहे प्रविदय परमंदिरे ॥३१६२॥
इच्छाज्ञानिक्रयाद्रव्यरचितं सुमगान्वितम् ।
प्रमुया परमेशानि तत्त्वज्ञानमये शिवे ॥३१६३॥
पर्यंके पुरुषार्थेश्व पादेश्व परिमंडिते ।
ग्रात्मान्तरात्मापरमात्माज्ञानात्मांगभूषिते ॥३१६४॥
तत् पदार्थं त्वं पदार्थं पदार्थमित सुंदरि ।
पदार्थत्रयमेतत् तु गुग्गसूत्रप्रकाशकः ।
एतत् सूत्रमयैः पट्टे गुँ फिते सुरमंडिते ॥३१६४॥
सुमनोवाससुभगे परामत्र प्रपूजयेत् ।
जातिभेदिस्तुः दूतीनां व्यवद्यामस्वंदिते ।।३४६६॥
जातिभेदस्तुः दूतीनां व्यवद्यामस्वंदिते ।।३४६६॥
जातिभेदस्तुः दूतीनां व्यवद्यामस्वंदिते ।।३४६६॥

हस्तिनो शिङ्घनो चंव चित्रिग्गो पिद्मनो प्रिये। चतुर्विया हि दूत्यस्तु सुन्दर्यश्चारुलोचने ॥३१६७॥ वैखरी हस्तिनी ज्ञेया स्थूला यस्माद् वरानने । ययेदं घार्यते सर्व ब्रह्माण्डं परिमंडलम् ॥३१६८॥ वर्गाष्ट्रकेन देवेशि सूते दिक्पालसञ्चयम्। तेनेयं करिंगाी प्रोक्ता मध्यमा शङ्खिनी भवेत् ॥३१६१॥ शिङ्किनी तु यथा भद्रे विशुद्धा पापवीजता। सर्वदेविप्रया सा हि शांतिसौरभ्यशोभिता ॥३१७०॥ तथा वनस्पतिगता मध्यमा या वरानने। चित्रिग्गो वल्लरी देवि महादोषविनाज्ञिनी ॥३१७१॥ यस्याः फलं वरारोहे सर्वशक्तिमयं सदा। शिवशक्तिमयं देवि प्राग्गिमात्रं जगत्त्रयम् ।।३१७२।। तेषु सर्वेषु पश्यन्ति जीवेषु परमाश्रया । परब्रह्मिंग संलोना परांबा परमेश्वरि ।।३१७३।। तां दूतीं तत्र संपूज्य समाधिकुसुमैः शुभैः। तदंगेषु कलाः पूज्याः क्रमेगा सुरवंदिते ।।३१७४।। पिद्मनी त्वपरा ज्ञेया हंसावस्था विकाशिनी। हंसोदयेन पद्मं हि त्यक्त्वा स्वं पत्रमद्रिजे ।।३१७४।। विकाशं याति सौभाग्यं तथा वस्तुविलासकम्। परा प्रकाशमायाति पद्मिनी संमता भवेत् ।।३१७६।। तस्या देहे वरारोहे कलाः पूज्यास्तु षोडश । चित्कला सत्कला ज्ञानकला संवित्कला तथा ॥३१७७॥ श्रात्मनश्र कला ज्ञेयाश्रतस्रः परमेश्वरि । विरागता मोक्षकला परमाणुकला तथा ।।३१७८।। विद्याकलाचतुष्कं च विज्ञेयं चान्तरात्मिन । विद्याः संतोषनावृद्धिः प्रस्काप्रकासनामा एक्ष्र्राहिकाgotri

परमात्मकला ज्ञेया संलीना वरविंगिनि । भूयः शांतिकला बोधकला व्याप्तिकला परा ॥३१८०॥ ज्ञानात्मनः कला ज्ञेया चतस्रः परमेश्वरि । कलाः षोडरा देवेशि श्रीविद्या तत्र संस्थिता ।।३१८१।। षोडशार्गा महाविद्या कलाषोडशरूपिरगी। श्रात्मनाग्निस्वरूपेर्ग त्रैलोक्यं रचयत्यसौ ।।३१८२।। श्रंतरात्मस्वरूपं तु तस्य रूपञ्च विश्रुतिः। श्रतएव रजोरूपस्तमोरूपः परः शिवः ।।३१८३।। परमात्मावधिर्जेया तेनात्मा च तया युतः । एताः कलाः वरारोहे परादेहे विभांति च ।।३६५४।। तत्पदार्थं तु जानीहि मुखमस्या वरानने । त्वं पदार्थोऽसि वाच्यार्थः कुचयुग्मं क्रमेरा हि ।।३१८४।। योगेन परमेशानि नादब्रह्ममयो भवेत्। नादोद्भूतं वरारोहे विश्वयोनिर्न संशयः ॥३१८६॥ तत्र शक्ति च संपूज्य स्वात्मलिंगे शिवं यजेत्। परस्परप्रभावेगा ब्रह्मानन्दः शिवो भवेत् ।।३१८७।। तद्रसं मनसा देवि वहन् नासागतं स्मरेत्। श्रथामृतेन संयोज्य तेन श्रीचक्रमर्चयेत् ॥३१८८॥ ब्रह्मानंदमयं ज्ञानं कथयामि वरानने । न ब्राह्मरगोऽब्राह्मराश्च क्षत्रियोऽक्षत्रियस्तथा ॥३१८९॥ वैश्योऽवैश्यस्तथा नैव शूद्रोऽशूद्रो महेश्वरि । चांडालो नैव चांडालः पुक्कसो नैव पुक्कसः ॥३१६०॥ सर्वं समं विजानीहि एवमात्मिन निश्चयात्। आकाशात् पतितं तोयं निम्नमार्गेग गच्छति ।।३१६१।। ग्राममध्यगतं सर्वं विष्ठामूत्रादिपूरितम् । गंगामृते तदेव स्यात् कालुष्यं तत्र न क्वचित् ।।३१६२।।

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

तथा संविन्मये ज्ञाने समत्वेनैव वर्तते । श्रतएव महेशानि मंत्री सर्वमयो भवेत् ॥३१६३॥ इति ज्ञानदूती ।

ग्रथ वीरपुरश्रर्यां कथयामि महेश्वरि । पुरश्वरराकाले तु परयोषां प्रपूजयेत् ॥३१६४॥ दीक्षितां वस्त्रभूषाद्यं भीज्यैः पायससंभवैः। म्रारं मकाले नियतं भोजयेत् तां प्रपूज्य च ॥३१९५॥ नानाविधं पिष्टकं च नानारससमन्वितम्। दुग्धं दिघ घृतं भक्तं नवनीतं सद्यर्करम् ॥३१९६॥ उपलाखण्डचूर्गं च नानाविधरसान्वितम्। नारिकेलं कपित्थं च नागरंगं सुदर्शनम् ॥३१६७॥ लिपाकं बीजपूरं च दाडिमीफलमुत्तमम्। नानारण्यफलं चैव नानागंधविलेपनम् ॥३१६८॥ चंदनं मृगनामि च श्रीखंडं नवपल्लवम् । टंकर्एं लोध्रकं चेव जलजं वनजं तथा ।।३१६६।। नानाशैलसमुद्भूतं नानालंकारभूषराम्। शून्यगेहे समानीय चार्घोदकविशोधितम् ॥३२००॥ श्रमृतीकृत्य तत् सर्वं शक्ति स्वामिमुखं नयेत्। बाह्यणी क्षत्रिया वैश्या शूद्री च कुलभूषणा ।।३२०१।। वेदया नापितकन्या च रजकी नटिनी तथा। विशेषवैदग्ध्ययुताः सर्वा एव कुलांगनाः ॥३२०२॥ श्रष्टकन्यारूपमेदं विलोक्य हर्षसंयुतः। ब्राह्मचाद्यष्टकशक्तीनां नामिमः कृतसंज्ञकाः ॥३२०३॥ म्रासनं प्रथमं दत्वा स्वागतं च पुनः पुनः । श्राच्ये पाद्यमाचमनीयं मञ्जूपकं जलं ततः ।।३२०४॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGrangotri

स्नापयेद् गंधपुष्पादि केशसंस्कारमेव च।

on to Keny

धूपियत्वा ततः केशान् कौशेयं च निवेदयेत् ।।३२०४।। ततः स्थाना-तरे पीठमास्तीर्य पादुकाद्वयस् । दत्वा तत्र समासीनां नानालंकारमूषगौः ।।३२०६।। भूषियत्वानुलेपं च गंधमाल्यं निवेदयेत्। तां तां शक्ति समावाह्य मूध्नि तासां समर्चयेत्।।३२०७॥ भोज्यं मंडलमध्ये च स्वर्णपात्रे सुशोभने। चर्व्यं चोष्यं च लेह्यं च पेयं मक्ष्यं निवेदयेत् ॥३२०८॥ श्रदीक्षिता मवेद् या तु मायाबीजं तदादिशेत्। तासां सन्येषु कर्गोषु ततः स्तोत्रं समाचरेत् ॥३२०६॥ मातर्देवि नमस्तेऽस्तु ब्रह्मरूपघरेऽनघे। कृपया हर मे विघ्नं मंत्रसिद्धि प्रयच्छ मे ॥३२१०॥ माहेशि वरदे देवि परमानन्दरूपिशि । कृपया हर मे विघ्नं मन्त्रसिद्धि प्रयच्छ मे॥३२११॥ कौमारि सर्वविद्येशि कुमारक्रीडने वरे। कृपया हर मे विघ्नं मन्त्रसिद्धि प्रयच्छ मे ॥३२१२॥ विष्णुरूपधरे देवि विनतासुतवाहिनि। कृपया हर मे विघ्नं मन्त्रसिद्धि प्रयच्छ मे ॥३२१३॥ वाराहि वरदे देवि दंष्ट्रोद्धतवसुन्धरे। कृपया हर मे विघ्नं मन्त्रसिद्धि प्रयच्छ मे ॥३२१४॥ शक्ररुपघरे देवि शक्रादिसुरपूजिते। कृपया हर मे विघ्नं मन्त्रसिद्धि प्रयच्छ मे ॥३२१५॥ चामुंडे मुंडमालामृक्चचिते विघ्ननाशिनि । कृपया हर मे विघ्नं मन्त्रसिद्धि प्रयच्छ मे ॥३२१६॥ महालक्ष्म महोत्साहे क्षोमसंतापहारिणि। कृपया हर मे विष्नं मन्त्रसिद्धि प्रयच्छ मे ॥३२१७॥
R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

मितिमात्रमये देवि मितिमात्रवहिष्कृते। एके वहुतरे देवि विश्वरूपे नमोऽस्तु ते ॥३२१८॥ एतत् स्तोत्रं पठेद् यस्तु मंत्रारंभेषु संयतः। विदग्धां वा समालोक्य तस्य विघ्नं न जायते ॥३२१६॥ कुलीनस्य द्वारदेवाः कथितास्तव सुव्रत । दीक्षाकाले नित्यपूजासमये नार्चयेद् यदि ॥३२२०॥ तस्य पूजाफलं भद्र नीयते यक्षराक्षसैः। यदि त्रीडापरास्तास्तु भोजने तद् गृहाद् बहिः ।।३२२१।। स्थितस्तावत् पठेत् स्तोत्रं यावत् तृप्तिः प्रजायते । श्राचम्य मुखवासादि तांबूलं च निवेदयेत् ।।३२२२।। ततो दद्यात् पुनर्माल्यं गंधचंदनपंकिलम्। नमस्कृत्य वरं प्रार्थ्य विसृज्य च सुखी भवेत् ।।३२२३।। श्रन्या यदि न चागच्छेन्निजकन्या निजानुजा। श्रग्रजा मातुलानी वा माता वा तत् सपत्निका ।।३२२४।। पूर्वाभावे परा योज्या मदंशा योषितो यतः। सर्वामावे चैकतरा पूजनीया प्रयत्नतः ।।३२२४।। एका च युवती तत्र पूजिता चावलोकिता। सर्वा एव परादेव्यः पूजिताः कुलभैरव ।।३२२६।। श्रादावन्ते च मध्ये च लक्षपूर्ती विशेषतः। न पूजयित चेत् कान्तां तदा विघ्नै विलुप्यते ।।३२२७।। पूर्वीजितं फलं नास्ति का कथा परजन्मनि। तस्मात् सर्वप्रयत्नेन पूजयेत् कुलसुंदरीम् ।।३२२८।। इति श्रीमदागमरहस्ये सत्संग्रहे दूतीयजनं नाम त्रयोदशः

पटलः ॥१३॥ म्रादितश्चैकचत्वारिंशत् ॥४१॥

अथ चतुर्दशः पटलः।

श्रथ वीरसाधनम्—

वीरचर्यापरो वीरो वीरसाधनमाचरेत्। वीरचर्यापरं वीरं हृष्ट्वा देवी प्रसीदति ।।३२२६।। कादिहादिक्रमे चैव सर्वदा साधनं चरेत्। श्रीविद्यायां महेशानि वीरसाधनमाचरेत्।।३२३०।। काली तारा सुंदरी च ह्यहोरात्रेण सिद्धिदा। सुंदर्यां नीलगंधर्वो कर्तव्यो सिद्धिमिच्छता ।।३२३१।। महादिव्यक्रमेर्गैव महावीरक्रमेरा च। महानीलक्रमेर्गेव काविहादिकहात्मिका ॥३२३२॥ सिद्धचत्येव महेशानि श्री ही घू च पशुक्रमात्। श्रन्या दिव्यक्रमेर्गेव एता श्रपि महेश्वरि ।।३२३३।। स्वयं भूपुष्पक्रमतः कालिका सिद्धिदा भवेत्। स्वजातपुष्पक्रमतः साधना भैरवीमनौ ।।३२३४॥ स्वयं भूक्रमयोगेन किं न सिध्यति भूतले। या कालो सैव तारा स्यात् या तारा सैव कालिका ॥३२३४॥ या काली सैव छिन्ना स्यात् या छिन्ना सैव तारिएगी। या सुन्दरी सैव काली सर्वसिद्धिप्रदा मता ॥३२३६॥ चतस्राां न मेदोऽस्ति मेदमाक नरकं व्रजेत्। माला पात्रासनं चैव चतमृर्णां गुभं मतम् ॥३२३७॥ मंत्रे ध्याने विशेषोऽस्ति तथा नाम्नि विशेषता । प्रयोगादौ विशेषोऽस्ति सुन्दर्यामेव पार्वति ॥३२३८॥ तिस्र्णां न च मेदोऽस्ति त्रिशक्तिः कीर्तिता यतः । ग्रथासनानि वक्ष्यामि सर्वकार्यार्थसिद्धये ।।३२३९।। मृद्वासनसमारूढः कोमले चूडके तथा। योनित्वग्विष्टरमपि ग्रस्थिभूम्यासनं तथा ।।३२४०।।

कुचासनं तथा देवि तथैव सुरतासनम्। मुण्डासनं तथा देवि पश्चमुंडासनं तथा ।।३२४१।। त्रिमुण्डमेकमुण्डं वा ग्रासनार्थं प्रकीतितम् । चिताऽपि म्रासने शस्ता इमशानं सर्वथोत्तमम् ॥३२४२॥ श्रचूडकं तथा प्रोक्तं तथैव च शवासनम्। मृतासनं तथा प्रोक्तं महाशवमथासनम् ॥३२४३॥ वीरासनं महेशानि महावीरासनं तथा। योनिपुष्पासनं देवि कीर्तितान्यासनानि च ॥३२४४॥ तत्रादौ संप्रवक्ष्यामि मुण्डानां लक्षरां शुभम्। यस्य साधनमात्रोग साक्षात् शिवमयो भवेत् ।।३२४४।। ब्रह्मक्षत्रियविट्शूद्राश्चतुर्धा चास्थिजातयः । इवेता रक्ता तथा पोता कृष्णा वै तुर्यका मता ॥३२४६॥ एतन्मुण्डरहस्यं ते मया प्रोक्तं महेश्वरि । सद्यः कृत्तं त्रिरात्रस्थं सप्तरात्रस्थगं तथा ॥३२४७॥ त्रिसप्तरात्रमध्यस्थं तूत्तमादिक्रमात् श्रृणु । उत्तमं मध्यमं चेव ह्यधमं ह्यधमाधमम् ॥३२४८॥ सद्यः कृत्तं तु यन्मुण्डमुत्तमं परिकोतितम् । त्रिरात्रमध्यगं मुण्डं मध्यमं परिकीर्तितम् ।।३२४६।। षड्रात्रान्तरगं मुण्डमधमं परिकीतितम् । त्रिसप्तरात्रमध्यस्थं कीर्तितं ह्यधमाधसम् ॥३२५०॥ सद्यः कृत्तं तु यन्मुण्डं सर्वकार्ये प्रकीतितम् । त्रिरात्रमध्यगं मुण्डं मालायंत्रे प्रकीतितम् ॥३२५१॥ षड्रात्रमध्यगं मुण्डं पात्रकार्ये विनिर्दिशेत्। त्रिसप्तरात्रमध्यस्थं मालायंत्रादिके मतस् ।।

षड्मासमध्यगं मुंडं सामान्यं तदुवीरितम् ॥३२४२॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri अन्यच कालिकापरिशिष्टे-

त्रिरात्रमध्यगं मुण्डं मालार्थं परिकीर्तितस् । षड्रात्रान्तरगं मुण्डं सामान्यं तदुदीरितस् ॥३२५३॥ सद्यः कृत्तं तु यन्मुंडं मालायंत्रे प्रशस्यते । पात्रार्थसाधने शस्तं ह्यभावात् सप्तरात्रजम् ॥३२५४॥ सद्यः कृत्तं तु यन्मुण्डं साधनार्थं प्रकीर्तितम् । उत्तमं मुण्डमादाय हस्तमात्रं खनेद् वुधः ॥३२५५॥ कुलवृक्षस्य मूले वा इमशाने वा चतुष्पथे। निर्जने शून्यगेहे वा तस्योपरि जपं चरेत् ॥३२५६॥ र्वालं दत्वा प्रयत्नेन दिक्पालेभ्यो यथाविधि। दिग्बंधभूतशुद्धचादीन् कृत्वा वै जपमाचरेत् ॥३२५७॥ यावत् संख्यं जपेन् मंत्रं तद् दशांशेन होमयेत्। सिद्धं मुण्डं पुरा कृत्वा मालादीन् कारयेत् प्रिये ।।३२५८।। स्वेच्छामृतं द्विवर्षं च स्त्रियं वृद्धं द्विजं तथा। श्रन्नामावे मृतं कुष्ठं सप्तरात्रोर्ध्वगं तथा ॥३२५६॥ एवमष्ट्रशवं त्यक्त्वा वीरसाधनमाचरेतु । वीरासनमिदं प्रोक्तं देवीतुष्टिकरं परम् ॥३२६०॥ सप्तरात्रोत्तरं प्राप्तं चांतरिक्षे स्थितं शवम् । शूले निपातितं वापि पात्रार्थे शस्यते प्रिये ॥३२६१॥ भ्रंतरिक्षे स्थितं देवि षण्मासोत्तरगं तथा। मालाकार्ये प्रशस्तं च त्वधस्थं सप्तरात्रजम् ॥३२६२॥ श्वानिभौमदिने वापि शरीरे मृतसंभवे। चतुर्दश्यां पौर्णमास्याममायां दीपकोत्सवे ॥३२६३॥ संक्रांत्यामष्टमीयुक्ते तथा दुर्गोत्सवे प्रिये। एवं वीरदिने देवि तथा वीररएाागमे ।।३२६४।।

जातं मुंडं शुभं शस्तमथ शूलादिके स्थितम् । खड्गेन हननं कृत्वा गृहीत्वा जपमाचरेत् ॥३२६४॥

विशेषस्तु सिद्धेश्वरीमते—

श्रथातः संप्रवक्ष्यामि वीरसिद्धिकरं परम् । यस्य विज्ञानमात्रेण महाकालसमो भवेत् ॥३२६६॥

पादुका खड्गवेतालधातुवादश्च यक्षिग्गीः । गुटिकाञ्जनसिद्धिश्च गुप्तिश्च तिलकःशिवे ॥३२६७॥

सर्वं संभवति क्षिप्रं नान्यथा शांकरं वचः। कालिका तारिगो छिन्ना त्रिशक्तिरिति कीर्तिता ॥३२६८॥

त्रिशक्तिविषये देवि साधंनेयं प्रकीर्तिता । मुंडकोपासनं नाम सर्वसिद्धिप्रदायकम् ।।३२६९।।

रग्वीरं महावीरं तथा पाशगलानिष । शूलप्रोतान् यष्टिविद्धान् षट्त्रिशदस्रविद्धकान् ।।३२७०।।

सर्पादिजीवदष्टात् वै गजन्याघ्रविदारितान् । श्रपमृत्युमृतान् देवि शवान्याहृत्य पार्वति ॥३२७१॥

महावीर मंहामुंडे र्दुगं कृत्वा प्रयत्नतः । र रागवीरं समारभ्य महावीरांतगं शिवे ।।३२७२।।

ग्रासनार्थं प्रकर्तव्यं परितो मुंडदुर्गकम् । दिक्नंदाष्टाद्रिरसकेः सहस्रं ः पंचिमश्च वा । ग्रमावे त्रिसहस्रं एा मुण्डदुर्गं समाचरेत् ॥३२७३॥

तारा सारूप्यचक्रं तु स्वाग्रे संलिख्य पार्वित । पात्रार्थं च तथा स्वार्थं देवार्थमपि पार्वित ॥३२७४॥

स्थानं त्यवत्वा प्रयत्नेन साधयेद् दुर्गसाधनम् । दुर्गेऽरण्ये नदीतीरे तडागे शून्यवेश्मनि । रणे श्मशाने देवेशि त्रिपथे वा चतुरुपथे । baayal Gangotri, CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, स्टूर्ण Dehil baayal (Gangotri,

कुलवृक्षतले चैव देवी शिवगृहेऽथवा। एकलिंगे प्रयत्नेन मुण्डदुर्गं प्रसाधयेत् ॥३२७६॥ एकस्मिन् साधिते देवि त्रंलोक्यं साधितं भवेत्। वीरसाधनसामग्रीं पुरतः स्थाप्य पार्वति ।।३२७७।। वोरवेषो दयायुक्तः खादिरान् दशकोलकान् । म्रन्तर्बंधं बहिबंधं कृत्वा यत्नेन पार्वति ।।३२७८।। वीरसाधनवत् कर्म सर्वं कृत्वा महेरवरि । यावदग्रे समायांति मुण्डानि परमेश्वरि ।।३२७६।। तावदिष्टाभवंत्येव दशविद्याक्रमेरा च। काली तारा तथा छिन्ना सुन्दरी वगलामुखी ।।३२८०।। तुष्टा पंच विशेषेण भविष्यंति क्षणोन च। यो यो विलर्याचते तैः स स देयः प्रयत्नतः ।।३२८१।। वरो ग्राह्यः प्रयत्नेन वीरचर्यापरायगाः। वीरजापी वीरपात्री वीरमालासनी प्रिये ।।३२८२।। मुण्डदुर्गे नरः स्थित्वा क्षराात् त्रैलोक्यसिद्धिभाक् । भीति च तृगावत् कृत्वा महावोरो दिगंबरः ।।३२८३।। शिवरूपो नरो भूयात् नात्र कार्या विचार्गा। घटीपंचकयोगेन वीरः शिवसमो भवेत् ।।३२८४।। सर्वेष्टास्तस्य सिध्यन्ति महाकालस्वरूपिएाः। गोपनीया कलौ देवि साधकेन हितेच्छ्या ।।३२८४।।

कौलसर्वस्वेऽपि-

त्रिमुण्डं पश्चमुण्डं वा वसुरंध्रदिशां क्रमात् । रुद्रमुण्डासनं देवि विशन्मुण्डासनं तथा ।।३२८६।। शतमुण्डासनं वापि यथालाभं च कारयेत् । वरासनानि देवेशि कथ्यन्ते सुमुखी भव ।।३२८७।। वरासनप्रयोगो हि सर्वत्र दुर्लभः स्पृतः।

स्तोत्रपाठश्च कवचं नामसाहस्रकं तथा ।।३२८८।। पूजाजपस्तथा देवि चिरयोगे प्रकीर्तितः। यदैवं कार्यमुत्पन्नं यत्र कुत्रापि पार्वति ॥३२८६॥ क पूजास्तोत्रपाठादि होमान्तमथवा क च। यत्र यल्लम्यते देवि तत्र तञ्च समाचरेत् ॥३२६०॥ यथालामेन कर्तव्यं प्राप्ते काले च साधकै:। वरप्रयोगे देवेशि द्विधा चासनसंस्थितिः ॥३२९१॥ देहासनानि देवेशि परिभाषासनानि च। भद्रादोनि महेशानि देहजानि भवंति वै ॥३२६२॥ व्याघ्रमुण्डकंबलाश्वमेषजान्यपि पार्वति । गजोष्ट्रासनरूपारिंग कुशजानि यथाक्रमात् ॥३२६३॥ परिभाषासनान्येवं कथितानि मया तव। प्रत्येकं द्विविधो भेदस्त्वासनानां महेश्वरि ॥३२९४॥ निर्जीवानि सजीवानि सर्वसिद्धिकरािंग च। सजीवानामभावे नु निर्जीवानि प्रकल्पयेत् ॥३२६५॥ श्रश्वासनं गजइचेव पल्लकी मानुषस्तथा । महिषोष्ट्रवृषश्चेव भल्लूको वानरस्तथा ॥३२९६॥ व्याष्ट्रश्च जंबुको देवि मेषाजौ परमेश्वरि । उष्ट्रक्च मृगमेदक्च कुशमृत्प्रकृतिक्च वा ॥३२६७॥ कुक्कुरः कुक्कुटो देवि मयूरः शरभस्तथा। गवयः शूकरञ्चेव शरभः शवरस्तथा ॥३२६८॥ तरिंग्इच रथइचैव शकटइच सुखांसनम्। दण्डिका दोलिकाचक्रं चक्रदोलागृहामिधा ॥३२६६॥ पादासनमथारोहो नारिकेलासनं तथा। पूर्गो मञ्जूका स्वास्त्र स्व वद्योश्यास्त्र स्वास्त्र स खर्जूरः पिंगलः प्लक्षः शमी जम्बू तथैव च ॥ गजाश्वासनकं देवि तथा नररयः शिवे ॥३३०१॥

वृषभाख्यो हयाख्यश्च महिषाख्योऽपि पार्वति । नरयानं राजयानं छन्नयानं च पार्वति ।।३३०२।।

वरासनानि देवेशि कथितानि मया तव।

ग्रक्वाः पञ्चविधाः प्रोक्ताः गतयोऽष्टादश स्मृताः ॥३३०३॥

वाल्हीकाश्चेव कांबोजाः कोंकरगैराकसंभवाः।

पश्चमाः पर्वतोत्त्थाश्च वर्णानेषां शृणु प्रिये ॥३३०४॥

सर्वेऽपि सूर्यरूपाः स्युः वर्णभेदात् ग्रहत्वता ।

सूर्यः सोमस्तथा भौमो बुघश्च गुरुरेव च ॥३३०४॥

शुक्रः शनिस्तथा राहुः केतुश्च नवमः स्मृतः। नववर्णक्रमेर्णैव पश्चवर्णक्रमेरा वा ॥३३०६॥

फलमेषां महेशानि कथ्यते शृणु साम्प्रतम् । सूर्यवर्णं समारुह्य विशत्साहस्रकं जपेत् ।।३३०७।।

शत्रुमध्ये च विजयो जायते नात्र संशयः । सोमवर्गं समारुह्य दिक्सहस्रं जपेत् शिवे ॥३३०८॥

कीर्तिलक्ष्मीपित भूयात् नात्र कार्या विचारणा । मौमवर्णाश्वमारुह्य त्रिसहस्रं मनुं जपेत् । दरिद्रोऽपि धनाढ्यः स्यात् नात्र कार्या विचारणा ॥३३०९॥

बुधवर्णं समारुह्य त्रिशत्साहस्रकं जपेत्। रोगी रोगात् प्रमुच्येत दरिद्रो धनवात् भवेत् ॥३३१०॥ गुरुवर्णाश्वमारुह्य नवसाहस्रकं जपेत्। नवऋद्वीश्वरो सूयात् नात्र कार्या विचारणा ॥३३११॥

भृगुवर्णाश्वमारुह्य लक्षसंख्यं जपं चरेत्। लभते वांछितां सिद्धिं देवता वरदा मवेत् ॥३३१२॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

शनिवर्णाश्वमास्थाय त्रिसहस्रः जपेत्ःसदाः। सर्वबाधाविनिर्मुक्तो धनवान् जायते ज्ञिवे ॥३३१३॥ राहुवर्णं समास्थाय सहस्रार्णाः तु सप्ततिम् । कार्वा विकास प्रजपेन मानवो यस्तु स च लक्ष्मोप्रति भवेत्।।।३३१४।। केतुवर्णं समारुह्य पंचूविशत्सहस्रकम् । प्रजपेन मानवो यस्तु परराज्यज्यो भवेत ॥३३१५॥ वांछासनानि देवेशि भवंत्येतानि निश्चितम्। वाल्होके मंडलात् सिद्धः कांबोजे पक्षमात्रतः ॥३३१६॥ कोंकर्रो च दशाहेन चराके द्विगुर्णात् तथा। फलं तु पार्वतीयानी मासाद भवति निश्चितम् ॥३३१७॥ गजासनं प्रवक्ष्यामि तत् तद् भेदेन पार्वति । मद्रो मन्द्रो मृगो मिश्रश्चतुर्धी जायते गर्जः ।।३३१६॥ भद्रासनं समासाद्य लक्षार्थं प्रजयेन् नरः । स्रपि देवीं वशीकृत्यः त्रैलोक्यविजयो भवेत् ते ३३३१ ह iv अन्वर्थवेदी शूरश्च कृपावान् न च कर्कशः । हुन्य क्रिक्ष मधुपिंगलनेत्रश्च शुभ्रदस्तः पुरोज्ञित्रस्य ।।३३२०।। हार विशक्तियन लेर्युक्तो च्यादशिमरेक वार्ष क्रियान के हर्गान विद्युद्दवाग्निसिहेभ्यो न बिभेत्यंकुशाद्विप्।।३३२१॥ कल्यारामेघा तेजस्वो स भद्रः परिकोर्तितः १० व्योगका मंद्रासने नरः स्थित्वा त्रिसहस्रं जफ्रांचरेत् ।। ३२२१। विकास मासमात्रप्रयोगेरा वांछासिद्धिम्बान्तुयात्। भूगान् किल्ल् कूर्मसंस्थानगमनो इसंदो मंदगतिकमः ॥३३२३॥ मंद किर् संमील्य लोचने नित्यं निद्रांभ इव गच्छति । धीरोऽनुरक्तो हस्तिन्यां जितवेगो जितथसः ।। ३३२४॥ एउट निर्ममो मंदबुद्धिश्च ष्टुतिसान् संद उच्यते । मृगासने तरः स्थित्वा सहस्रो। स्राह्मं क्षेत् भार्यं र प्रावाविका

भैरवादीन वशीकुर्यान नात्र कार्या विचाररा। तनुपात् कर्णयुक् स्तब्धस्तथा रोमश्च मेहनः ।। ३३ २६॥ व दीर्घजिह्नश्च वृष्णो दीर्घगात्रोऽवशस्तथा। विकास के अवस्थि रूपादिभयशंकी च वनचारी तनूदरः ॥ ३३२७॥ 📁 🚁 🗷 ह्रश्वश्रवरालांगूलो दीर्घक्रमराविक्रमः। पुनः पुनश्च निनदं कृत्वा घावति वै मृगः ॥३३२८॥ 🛒 र मिश्रासने नरः स्थित्वा नंदसाहस्रकं जपेत्। र विकास एवं षण्मासयोगेन कि तद् यन्न करे स्थितस् ॥३३२६॥ द वह्वाशी वह्वलीकश्च दंडपातेषु चाक्षमः। जिल्हां हो वाह गच्छेत् प्रकृष्टवेगश्च भारं प्राप्यावसोदति ॥३३३०॥ = हात्र कुच्छु।च्चाप्यायते नागः क्षिप्रं च परिहोयते कि पान कि कट्वम्ललवर्गेश्चैव रुक्षैश्चातुरतां व्रजेत् ॥३३३१॥ 🎋 🐯 नित्यं च सांत्वयेदेनं न चैतुमपि तापयेत्। हरावा ह नाव सर्वेषां लक्षरौः कैश्रिद् युक्तो मिश्रो भवेद् गजः ॥३३,३२॥ पल्लकीं तु समारुह्य सर्वकालं जपेन मनुम् । विकास वांछासिद्धिमवाप्येह मूपालो विजयी भवेत्। ४३३३।। ः पल्लकीं तु समासाद्य त्रिसंध्यं प्रजपेत् शिवे । ग्रपि दासकुले जातः सोऽपि राज्यमवाप्नुयात्।।३३३४।। मानुषासनमासाद्य कालीमंत्रं जपेत्तु यह। अवस्त्र नरनाथो भवेद् देवि नात्र कार्या विचारणा ।। ३३३५॥ इ महिषासनमासाद्य सहस्रारगां तु सप्तिम् । 🐬 😘 📆 प्रजपेत् परमेशानि शत्रुसंहारको सवेत् ॥३३३६॥ वृषभासनमासाद्य दिक्सहस्र जपेत् शिवे । सर्वसिद्धियुतो भूत्वा शिव एव नं संशयः ॥३३३७॥ भल्लूकासनमासाद्य भैरवं प्रत्यहं जपेत्। वेतालसिद्धिमासाद्य शककर्ता नरो भवेत् ॥३३३८॥ । 🖘

व्याघ्रासनं समाश्रित्य सर्वकालं जपेत् शिवे। देवीतुल्यो नरो भूयान् नात्र कार्या विचारगा ॥३३३६॥ शिवासनं समाश्रित्य कालीं तारां जपेत् सदा। सम्राड् मोक्ता नरो भूयान् नात्र कार्या विचार्गा ३३४०॥ शिवापरिचयं कृत्वा शिवां पूज्य प्रयत्नतः। जपेत् तत्र महेशानि प्रोक्तमेतत् शिवासनम् ॥३३४१॥ एषामारोहणाभावात् योग्यतारोहणोन हि। तेषां संगे समूहे च तैः समं भोजनं चरेत् ॥३३४२॥ तदभावे महेशानि त्वङ्निःसारग्योग्यता। वर्तते तन्महेशानि कुलाचारक्रमेगा च ॥३३४३॥ सर्वं विज्ञाय यत्नेन हये वा शकटे रथे। पल्लक्यां सुखयाने वा गजे वान्यासनेऽपि वा ॥३६४४॥ शोधनं व्याझवत् कायं प्रकृतं श्रृणु कथ्यते । मेषासनं समारुह्य दिवारात्रं जपेन् मनुम् ॥३३४४॥ षण्मासाभ्यासयोगेन शाकिनी वरदा भवेत्। ग्रजासने नरः स्थित्वा निशि जप्याद् दिने दिने ॥३३४६॥ मासपञ्चकयोगेन पञ्चकामसमो भवेत्। उष्ट्रासनं समारुह्य ताम्बूलपूरिताननः ॥३३४७॥ मन्त्रमात्रं जपेद् देवि मासमात्रं निरंतरस्। दुष्टरात्रुविनाशस्य भवत्येव न संशयः ॥३३४८॥ मृगासने नरः स्थित्वा सर्वकालं जपेत् शिवे । राजराजसमो मूयाद् वायुतुल्यपराक्रमः ॥३३४६॥ एतेषां तु कुशेनेव प्रकृति कारयेत् प्रिये। तत्र स्थित्वा जपं कुर्यादेतदेव फलं लमेत् ॥३३५०॥ मृत्तिकात्रकृति कृत्वा प्राणसंस्थापनं चरेत्। तत्र स्थित्वा जपेद देवि फलमेतद् भवेद् ध्रुवम् ॥३३५०॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by estangori

कुक्कुरासनमासाद्य सर्वकालं जपेन मनुस् । वेतालः किंकरो सूयाद् भैरवः सुप्रसीदति ।।३३५२।। कुक्कुरासनयोगेन कि तद् यन्न करे स्थितम्। कुक्कुटासनमारुह्युं जपेदिष्टमनुं शिवे ।।३३५३।। सर्वात् कामानवाप्नोति नात्र कार्या विचाररा। मयूरासनमासाद्य मासमार्गं जपेत् मनुस् ॥३३५४॥ कार्तिकेयप्रसादेन सर्वाः सिध्यन्ति सिद्धयः। शरमासनमारुह्य ह्यहोरात्रं जपेन् मनुम् ।।३३५५।। सर्वसिद्धीश्वरो भूयाद् यदि चेन् न पलायते। गवयासनमासाद्य सर्वदुःखान् विनाशयेत् ॥३३५६॥ शूकरासनमारुह्य त्रिकालं प्रजपेत् मनुस् । सर्वपापविनिर्मुक्तो मानवो भवति घ्रुवम् ॥३३४७॥ शंवरासनमासाद्य मंत्रमष्टसहस्रकम्। जप्त्वा गंधर्वसाहाय्यं प्राप्नोत्येव न संशय: ॥३३५८॥ तरींग तु समारुह्य सर्वकालं जपेत् शिवे। महाविद्येश्वरो भूयान् नात्र कार्या विचारणा ॥३३५६॥ महानौकां समारुह्य कामिनीसुरतं चरेत्। रतासने मनुं जप्त्वा त्रिकालज्ञानवान् भवेत् ॥३३६०॥ रथमारुह्य प्रजपेल्लक्षसंख्यं मनुं शिवे। जप्त्वा राज्यमवाप्नोति सत्यमेव न संशयः ॥३३६१॥ शकटासनमारुह्य सर्वकालं जपेत् शिवे । मासमात्रप्रयोगेए। यमिच्छेत् तं वशं नयेत् ॥३३६२॥ सुखासने नरः स्थित्वा चतुर्मासं निरंतरम् । जपं कुर्यात् महेशानि मानसेप्सितकामुकः ।।३३६३।। सुखासने रतं कृत्वा भैरवीं प्रजपेद् यदि। सर्वशत्रुत् विनिजित्य सर्वत्र जयमाप्नुयात् ॥३३६४॥

दोलासनं समारुह्य त्रिसंध्यं च सहस्रकम् । विकास विकास देवीं ध्यायत् जपेद् यस्तु स्वेष्टसिद्धिः लभेच्य सः ॥३३६५॥ चक्रासने नरः स्थित्वा त्रिसहस्रं जधेन मनुम् । विकास कर् त्रेलोक्यभामरीशक्तिस्तस्य हस्ते व्यवस्थिता ॥३३६६॥ कुररासनमासाँ चित्रिं जप्याद् दिने दिने । डाकिनीमेलनं भूयान् नात्र कार्या विचारणा ॥३३६७॥ कच्छपासनमासाद्य सर्वदा प्रजपेन मनुम्। सर्वबाधाविनिर्मुक्तः सर्वेसिद्धीश्वरो भवेत् ।।३३६८।। खङ्गासनं समारुह्य यिह्नसंध्यं जपेन् मनुम् । सर्वसिद्धिसमायुक्ती गुटिकां लमते ध्रुवम् । गजासनं समारुह्य जिपेत् सप्तश्रातीस्तवम् ॥३३६६॥ सर्वबाधाविनिर्मुक्तः पक्षावर्तनयोगतः। एतेषामस्थिसम्भूतां मालां कृत्वा जपं चरेत् ।।३३७ एतेषामासने स्थित्वा सिद्धिमाग् भवति ध्रुवस् । संख्या सामान्यतः प्रोक्ता सर्वकर्मप्रसाधने ।।३३७१।। जपसंकल्पपूर्तिस्तु भवेन मा भवति प्रिये। तथाप्यासनयोगेन सर्वाः सिध्यन्ति सिद्धयः ॥३३७२॥ जीवचक्रे यथा सिद्धिस्तथा जीवासने प्रिये। प्रवक्ष्येऽद्य महेशानि संगुद्धिर्व्याघ्रचर्मगः ॥३३७३॥ सलोमं सुन्दरं सांगं समादायाजिनं प्रियेः। क्रोधबीजेन संस्पृष्टा जपेन सूलं च सप्तथा ॥३३७४॥ षडंगं न्यासमाचर्य तस्यांगे मायया प्रिये । े का मार्थ ह पुच्छे पादी तथा पागा शिरक्चेति षडंगकम् ॥३३७५॥ गंधपुष्पाक्षतं दद्यात् क्रोधबोजेन पार्वति । प्राणप्रतिष्ठामंत्रेण प्राणस्थापनमाचरेत । ३३७६ । Gangotri ;

ध्यात्वा सिंहं महाभीमं संस्मितं साधकं प्रति । सिंहमन्त्रोगाः देवेशि पूजयेच्चन्दनादिभिः ।। ३३७७।। सिंहमंत्रां प्रवक्ष्यामि शृणुःभैरवि सांप्रतम् । प्राणवं च समुद्धृत्य वज्रे ति पदमुद्धरेत् ॥३३७८॥ नखदंष्ट्राय शब्दान्ते महासिहाय तत्परम् । 💆 👫 👭 महाभीमाय च पुनर्वमस्त्रिं विह्नवल्लमा ।।३३७६।। 🚟 🥏 सिंहमन्त्रोऽयमाख्यातो देवि द्विनखवर्णवान् । भ्रनेन पूजयेच्चर्म ध्यायन् सिंहं महेरवरि ।।३३८०।। स्वदक्षे संमुक्षे वापि मुखं तस्य च कारयेत्। 🧺 🧺 🧖 जोर तत्र तावज्जपेद् देवि यावल्लोमक्षयं न हि ।।३३५१।। 🔭 🤼 निषिद्धस्पर्शनाद् देवि पुनः संस्कारमाचरेत् । व्याघ्राजिने च देवेशि सप्ताहात् सिद्धिमाप्नुयात् ॥३३५२॥ व्याघ्रासनमधिकृत्य यामले देवी प्रति शिववास्यम्— व्याघ्राजिनस्य माहात्म्यं वक्ष्येऽह प्रमेश्वरि । यत्र ब्रह्मादयो देवाः समंतात् सततं स्थिताः ॥३३८३॥ " दक्षपादे स्थितो ब्रह्मा वामहस्ते तथेश्वरः । पृष्ठे सदाशिवों जेयो मुखे च भैरवः स्वयम् ॥ ११८४॥ पुच्छे गएोश्वरो ज्ञेयो भैरवाश्व तथा स्थिताः। जया देवी स्थिता चांग्रे पश्चिमे विजया स्थिता ॥३३८५॥ भ्रजिता चोत्तरे देशे दक्षिणे चापराजिता । उमादेवी स्थिता पूर्वे दुर्गी चेशानकीराके ॥३३८६॥ उत्तरे भद्रकाली च स्वस्तिका वार्युकीरगके स्वाहा पश्चिमदेशे तु नैऋ ते च शुभंकरी ॥३३८७॥ श्रीश्चैव दक्षिए। देशे गौरी चार्नियकोए। के लोकधात्री स्थिताघः स्ताद् वागीशी च तथोर्ध्वके ॥३३८८॥

व्याघ्रचर्मीए। देवेशि देव्यश्च परितः स्थिताः। व्याघ्रचर्मस्थितस्यापि साधकस्य महेश्वरि ।।३३८६।। स्रघोवातादिकं चेत् स्यात् कंपते भुवनत्रयम् । विघ्नाश्च बहवस्तस्य रोगाश्चैव भवन्ति हि ।।३३६०॥ तस्माद् यत्नात् साधको वं सावधानो भवेत् शिवे। श्रधोवायुस्ततो वर्ज्यो व्याघ्रचर्मस्थयोगिना ॥३३६१॥ व्याघ्रचर्मस्थितो वीरो योगवान् जप तत्परः। स एव भैरवः साक्षात् सर्वदेवमयः प्रभुः ॥३३६२॥ यस्मिन् गेहे स्थितं चर्म व्याघ्रस्य विधिशोधितम्। सर्वे देवाः स्थितास्तत्र तद् गेहं तीर्थसन्निमम् ॥३३६३॥ येन साधनमात्रेण मंत्रसिद्धिः प्रजायते । गोपनीयो विधिरयं यत्नतः पशुसंनिधौ ।।३३१४।। स्नेहाल्लोभाच्च यो ब्रूयाद् देवताशापमाप्नुयात् । श्रवरोहासनान्येव कथ्यन्ते शृणु सांप्रतम् ॥३३६५॥ नारिकेलं समारम्य जंबूपर्यन्तमेव च। कदलीमण्डलं कृत्वा कदलीवनमेव च। प्रजपेद् यत्नतो यस्तु तारासिद्धिमवाप्नुयात् ॥३३९६॥ कुलवृक्षास्ततो देवि सर्वेषां फलमुच्यते। नारिकेले भवेद राज्यं पूगे चैव मनोरथान् ।।३३६७।। मध्रुके कामिनीप्राप्तिश्चाम्ने सर्वज्ञता मता। वटे त्रेकालिकज्ञानमञ्बत्थे सर्वकामनाः ।।३३९८।।

तालबृक्षे जयावाप्तिः खर्जूरे राजमान्यता । पिष्पले सर्ववश्यत्वं प्लक्षे चाकर्षगां परम् ।।३३६६।।

राज्यलक्ष्मीः शमीवृक्षे जम्बूबृक्षे धनागमः। विक्सहस्रं जपेद् देवि सर्ववृक्षे निरन्तरम्।। शुर्भाकका Gangotri CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delh. (1984)

समारुह्य लमेत् सिद्धि नात्र कार्या विचाररा। इलेष्मातककरं जाख्यबिल्वाइवत्थकदम्बकाः ।।३४०१।। 💢 निंबो वटोदुम्वरश्च चम्पकः केसरो दश । दशवृक्षान् समासाद्य प्रत्येकं दिक्सहस्रकम् ।।३४०२।। प्रजपेद् यत्नतो देवि ग्रिशामाद्यष्टकं तथा। मोक्षकामी क्रमेएाँव लमते नात्र संशयः ।।३४०३।। कालीवृक्षाः समृद्दिष्टारिखन्नावृक्षान् शृएा प्रिये । क्लेष्मातकं विभोतं च शाखोटं खर्जुरं तथा ।।३४०४।। पिप्पलं च वटं चैव सपुष्पां वस्तुवाशिनीम्। निबाश्वत्थी करंजं वा इलेष्मातककदम्बकौ ।। ३४०५।। बिल्वं वर्टं शालताली शाखोटं खर्ज्रं तथा। ताराविद्याविधौ प्रोक्ता श्रीविद्यायां शृणु प्रिये ॥३४०६॥ पूर्वं द्वादश ये ख्यातात एव श्रीविघौ स्मृताः। एतेषामपि देवेशि फलं तु पूर्ववद् भवेत् ॥३४०७॥ इति संक्षेपतः प्रोक्तः देवतासननिर्णयम् । कथ्यते देवदेवेशि यथावदवधारय ॥३४०८॥ श्रीविद्या देवदेवेशि पंचप्रेतासनस्थिता । ब्रह्मा विष्णुश्र रुद्रश्र ईश्वरश्र सदाशिवः ॥३४०६॥ एते पश्च महाप्रेताश्चतुष्कं पादगोचरम्। सदाशिवस्तु कशिपुः कामेशश्छादनं भवेत् ॥३४१०॥ तत्रस्था सुन्दरी देवी कालिकायां शृणु प्रिये। म्रतिकालः करालश्च विकरालः कपालधृक् ॥३४११॥ चतुष्टयं पादरूपं श्रीकालः कशिपुः स्मृतः । महाकालक्छादनं स्यात् तद् हृदिस्या तु कालिका ॥३४१२॥ विपरीतरता प्रोक्ता श्रीमहाकालिकांबिका । महादमशाननिलया प्रत्यालीढपदापरा ॥ ३४१३॥ - .. 🛒

शर्वासहासनगता महोग्रतारिगा मता। तारायां कालिकायां च छिन्नायामि पार्वति ॥३४१४॥ मंडूकादि मवेत् पीठमाधारादिकमेव वा। ऋतुमत्यां तथाशक्तौ यत् किचित् पीठमचंग्रेत् ॥३४१५॥

ग्रथासनानां कालनियमास्तत्रैव-

ऋतुवस्नासनं देवि सूत्रान्तं परिकीर्तितम् । मुण्डासनं तु भंगान्तं तथा शवाशनं शिवे । कुचासनं जपांतं च सुरतासनमेव च ॥३४१६॥

मुदुकोमलचूड़ादिच्चर्गांतं परिकीतितम् । तथा वीरासनं देवि समानीय प्रयत्नतः ॥३४१७॥

हुन्मलं दूरतस्त्यक्त्वा हृदयं शोधयेत् पुनः । वस्त्राच्छन्नं सूमयं वा कृत्वा स्थित्वा जपं चरेत् ॥३४१८॥

नरचर्मासनं देवि गजचर्मासनं तथा । वस्त्रासनं सभंगांतं सलोमांतं च केशरी ॥३४१६॥

सिंखद्रान्तं मृगाल्यं च तूर्गाल्यं त्रोटनांतकम् । योनित्वगासनं देवि सलेशान्तं महेश्वरि ॥३४२०॥

योन्यासनं सजीवांतं पातान्तं सुरतासनम् । विपरीतासनं देवि तत्पातान्तं प्रकीर्तितम् ॥३४२१॥

जिह्वास्पर्शासमं देवि तत्तत्त्वान्तं प्रकीतितम् । तदन्ते संत्यजेद् देवि जघन्यं चोत्तरोत्तरम् ॥३४२२॥

विष्टरासनकं देवि छेदनान्तं प्रकीतितम् । व्याघ्रासनमलोमांतं केचिद् भंगान्तमूचिरे ॥३४२३॥

इति संक्षेपतः प्रोक्तं फलसंख्यां शूणु प्रिये। ऋतुमत्यासने देवि त्रिदिनात् त्रिगुणाकृतिः।

ऋतुवस्नासनं देवि त्रिमासात् फलवायन्त्र ।।।।।। हिन्द्र अभू Gangotri CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection; New Dall ।।।।।

In onthe

withou

10 G -- 107

9-2 mg

MANU minis

Comolo

みっし

मुण्डासनं तु षण्मासैदिनान्तं तु शवासनम् । नरचर्मासने देवि त्रिमासात् फलमुच्यते ।।३४२५।। कुचासने द्विमासेन फलं भवति सुंदरि। s represe fraisfa रतासने महेशानि पक्षांते तु फलं लमेत् ।।३४२६।। मृद्वासने तु मासेन कोमले तत्त्वसंख्यया। श्रचूडके विष्णुतत्त्वे वीरे यामत्रयेगा च ॥३४२७॥ वस्त्रासने पंचवर्षेः सिंहे स्यात् पंचयामकैः। 🧼 🛴 मृगाख्ये वेदवर्षेश्व ऊर्णाख्ये दशवर्षतः ॥३४२८॥ योनित्वगासने देवि सप्ताहेन फलं लभेत् । 😗 🎊 👯 योन्यासने च पक्षान्ते सुरताख्ये दिनाष्टकैः ॥३४२६॥ विपरीते षड्दिनैश्र जिह्वास्पर्शे द्विवेदकैः। सप्तचंबनके देवि सप्ताहेन फलं लभेत्। विष्टरे मासषट्कैथ फलं भवति निश्चितम् ॥३४३०॥

यद्वा-

3 39 सिहदन्तीवाजिहंसइयेनशार्द्लशारभैः। 2173 क्षेमंकरी सर्पशुकमंडुककूर्मंरूपकैः ॥३४३१॥ mine एकद्वित्रिक्रमेर्गेव पादस्थाने निवेश्य च। कृत्वासनानि देवेशि मंत्रसाधनमाचरेत् ।।३४३२॥ annand यद्वासनानि संप्राहरष्ट्रधातुमयानि च। नानाकाष्ट्रमयान्याहुः सौगंध्यकाष्ट्रजान्यपि ।।३४३३।। लोहे मारणसंसिद्धिस्ताम्रे शांतिरनुत्तमा। सीसे स्तंमनकर्म स्याद् रीत्यां द्वेषरामाचरेत् ॥३४३४॥ रौप्ये राज्यादिसंसिद्धिः स्वर्णे सर्वाप्तिरुत्तमा । वंगे स्नीमोहनं कुर्यात् पित्तले कामंठे जपः ॥३४३५॥ खादिरे शत्रुनाशार्थं चंदने सर्वसाधना । 🦠 🧦 रक्तकाष्ठे वश्यसिद्धिः पोते स्तंमनमुत्तमस् ।।३४३६।।

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

कृष्णकाष्ठे मारगां स्यात् पालाशे कार्यसाधनम् । पैप्पले सर्वकार्याप्ति वंटे पुत्रं लभेन् नरः ॥३४३७॥ ग्रीवंबरे मूतरक्षा रक्ते देव्याः प्रदर्शनम् । वर्णवस्त्रमवं देवि तत् तद् वर्णफलं भवेत् ॥३४३८॥ हस्तमात्रं द्विहस्तं वा तावदायतमेव च। हस्तार्द्धार्वं महेशानि वितस्तिवी यथाक्रमम् ॥३४३६॥ सन्निवेशो यथा भूयात् तथात्रैव विधीयताम् । सिंहासनं राजसिद्धचै सर्वसिद्धचै गजासनम् ॥३४४०॥ हयासनं वांछिताप्तये हंसे सर्वार्थसाधना। उच्चाटनं अवेत् इयेने शार्द्ले तु मनोरथाः ॥ ३४४१॥ शरमे देवताप्राप्तिः क्षेमं कुर्यान् महोदयः। सर्वशत्रुविनाशक्वेत् शुके तु पृथिवीगतिः ॥३४४२॥ मंडूके सर्ववाछा दितः कूमें धनपति भवेत । मार्जारे कूटनाशक्च नाकुले विषनाशनम् ॥३४४३॥ समस्तविषनाशार्थे मयूरासनमीरितम्। चाषे चोद्भ्रान्ति घूल्यादिनाशनं दुष्टनाशनम् ॥३४४४॥ पारावते धनप्राप्तिश्चकोरे बुष्टनाशनम् । सारसे घातुवादः स्याद् वृषमे घनसम्पदः ॥३४४४॥ वके स्तंभनमुद्दिष्टं शशके शत्रुनाशनम्। पूजने च जपे होसे मार्जने तर्पणेऽपि च। यत् फलं कथितं देवि तत् फलं सममेव तु ॥३४४६॥ श्रथोच्यते महेशानि मुंडाद्यासनसाधनम्। रहस्यातिरहस्यं च न कुत्रापि मयेरितम् ॥३४४७॥ मृद्वासनं भवेदादौ द्वितीयं स्यादचूडकम्। कोमलं च तृतीयं स्यात् मुण्डं प्रोक्तं चतुर्थकम् ॥३४४८॥ मृतासनं पंचमं च षष्ठं वीरासनं मतस्। महावोरासनं देवि सप्तमं परिकोत्तिस् ॥ ३४ हि eGangotri

सप्तानां च क्रमाद् देवि मालापात्रार्थमीश्वरि । साधनं संप्रवक्ष्यामि येन सिद्धीश्वरो भवेत् ।।३४५०।। ग्रर्वाक् षण्मासतो गर्भं च्युतमाहुमृ दुं बुधाः । चूडोपनयने र्हीनं मृतं वा चूडकं विदुः ।।३४५१।। निवृत्तच्डको वालो होनोपनयनः शिवे। यो मृतः पंचमे वर्षे तमेव कोमलं विदुः ।।३४५२।। सामान्यमरणं प्राप्तं प्रोक्तं देवि मृतासनम् । वीररूपेएा संजातं तच्च वीरासनं विदुः ।।३४५३।। ग्रावेशशूलपाशादि महावीरासनं मतम्। ग्रखण्डांगं शवं देवि सखण्डं मुण्डमुच्यते ।।३४५४।। तन्मुण्डं यंत्रमालादिपात्रकर्मिण् कीर्तितम् । शवमानीय देवेशि गर्भजं यदि वा शवम् ।।३४५५।। सप्तमाष्ट्रममासोनं चुडकं वापि कोमलम्। स्थानं संशोध्य यत्नेन वीरवेषो मुदान्वितः ।।३४५६।। ततः संस्कारमाचर्य संस्थाप्य विमले स्थले। गंधाष्ट्रकं समादाय प्रोक्षयेत् प्रेतमंत्रतः ॥३४५७॥ पंचामृतैः पंचगव्यैः करणपंचसमंत्रितैः। मुलेन स्थापयेत् तत्र पोठचक्रे घरण्यधः ।।३४५८।। त्रिकोरां बिंदुमायां च चतुरस्रत्रिकोराकम्। ततिस्त्रको ग्वाह्ये तु पद्ममष्टदलं लिखेत् ।।३४५६।। षोडशारं च तद् बाह्ये त्रिवृत्तं त्रिगुर्णान्वितम्। मूलदेवीं तत्र मध्ये मूलेन परिपूजयेत् ।।३४६०।। वृत्तं त्रिगुणितं चैव मादिमाद्येन योजयेत्। वाङ्मायाकमलां तत्र वर्णादौ सर्वकमंसु ।।३४६१।। वह्ने र्दशकलास्तत्र कोएो चाष्ट्रदले तथा। षोडशारे त्रिवृत्ते च कलां सोमस्य पूजयेत् ।।३४६२।।

Come.

तत्रेव स्थापयेद् वोरं मृद्राख्यं वा प्रयत्नतः। स्वयंत्रं विलिखेत् तत्र साधारं शक्तिपूर्वकम् ।।३४६३।। मुघासिधं मिएद्वीपं चितामि एग्यहं तथा । इमशानं पारिजातं च तन्मध्ये शत्रवेदिकाम् ।।३४६४।। धर्मं ज्ञानं च वैराग्यमैश्चर्यं तदनन्तरस्ं। श्रवमादि ततो मंत्रान् पाशिपादे च युग्मकम् ॥३४६५॥ श्रकारादिक्षकारान्तं मातृकान्यासमुत्तमम्। तत् स्थाने पूजयेत् मंत्री हृदि न्यासादि पूजयेत् ॥३४६६॥ करन्यासं ततो मंत्री कराभ्यां पूजयेत् ततः। श्रघोमुखं तु तं कृत्वा तन्मुखे मधुरं वदेत् ।।३४६७॥ हे वीरप्रमानंद देवीपर्यंकशंकर। श्रष्टिसिद्धं च मे देहि मम शांति सदा कुरु ॥३४६८॥ एतद् ब्रूहि च वीरेन्द्र वसुवर्गं मुखे क्षिपेत्। एला लवंग जाती च फलतांबूलसंयुतम्। बिदरार्द्रकं गुडं च कर्पूरं रक्ततंतुना ।।३४६६॥ मूलेन भावयेत् तत्र गुटिकां हढ़मुष्टिकाम्। श्रकोंन्दुसितवाद्यालिर्निमतां दीपवर्तिकाम् ।।३४७०।। निमंत्रयेत् ततः शाक्तः सप्तवाराननुक्रमात्। चंदनागरुपुष्पाद्यं मूर्वित देवीं प्रपूजयेत् ॥३४७१॥ जीवन्यासं ततो मंत्री प्रारामंत्रेरा विन्यसेत्। गुदे लिंगे तथा नाभावुदरे गुह्यदेशके ॥३४७२॥ अवजात् तथा जंघा गुल्फपादतलेषु च। शिरः कण्ठे नासिकायां चक्षुषोः कर्णयोरिप ॥३४७३॥ शिलाकवचगंडेषु चोर्घ्वाघोष्ठकयोस्तथा। दन्तयोश्चेव जिह्नायां शिरः पृष्ठे च पाश्चेयोः । Rew Delhi. Digitizad Kullotri

हृदादिके च वाहुभ्यां पादाभ्यां च तथेश्वरि । सर्वांगे विन्यसेदेवं पीठन्यासम्गुत्तमम् ॥३४७५॥ सूर्यस्य मंडलं तत्र तिपन्यादि कलात्मकम् । मृतकाय शवायात्र नमश्चान्ते पदं ततः ।।३४७६॥ स्नापयेन मूलमंत्रेरा पूरितेनाष्ट्रवारिसा। सूर्यसोमात्मकं पोठमग्निरूपं प्रकल्पयेत् ॥३४७७॥ मेरुपृष्ठऋषिदछन्दः सुतलं तदनन्तरस् । कूर्मो देवस्ततः पश्चाद् धर्मार्थसाधने ततः ।।३४७८।। मोक्षेऽपि मानसञ्चेव सिध्यर्थे परिकोतितः। मुद्रां कौर्मी दर्शयित्वा ग्रस्नावगुंठने ततः ॥३४७६॥ शक्ति योनि मत्स्यमुद्रां धेनुमुद्रां ततः शिवे । प्रदर्शयेत् छोटिकां च चतुरक्षां प्रदर्शयेत् ॥३४५०॥ धृत्वा विमर्शयेन् मूलं पृथ्वी त्वयेति वै क्रमात्। ततो वज्रोदकेत्यादि मनुभिः कामसंख्यकैः ॥३४८१॥ प्रगावं पूर्वमुद्धत्य सहस्रारपदं ततः । हुं फट् स्वाहा तवन्ते जों रक्ष रक्ष ततो वदेत् ॥३४८२॥ महाप्रतिसरे सर्वविघ्नान् छेदय युग्मकस्। हुं फडन्तं समुद्धृत्य विह्नजायां समुच्चरेत् ।।३४८३।। दिक्पालयजनं कार्यमिन्द्रादिक्रमयोगतः । वीरार्गलाघोरमंत्रेस्तथा पाशुपतेरपि ॥३४८४॥ महामंण्डलमंत्रेवी दिग्बंधं तत्र कारयेत्। शिवार्वील तत्र दद्याद् ग्रह्णादाविप प्रिये ॥३४८५॥ ग्रादौ मध्ये तथा चान्ते त्रिवारं तु शिवावलिः। मुंडग्रहराकाले तु सर्वथा तु शिवाविलः ।।३४८६।। शिवां शक्ति च वा पूज्य दिक्षालान् विलसंयुतान् । पूजयेत् परमेशानि सायुघादि यथाक्रमस्। एवं क्रमेरा चौरेन्द्रः सर्वेषां वलिमाहरेत् ॥३४८७॥

वाङ्मायां कमलां प्रोच्य देव्या ह्यमुकि एष वै । यज्ञः प्रवर्तते चेमं मागर्वील गृह्मयुक् ।।३४८८॥

श्रत्र तिष्ठ नमः प्रोच्य श्रस्तु ते हुं फट् स्वाहा । श्रकारादिक्षकारान्तान् विदुयुग् मातृकाक्षरान् ॥३४८१॥

शिरसः पादपर्यन्तं वेष्टयेद् दक्षिरगक्रमात् । सार्धत्रिवलयं र्युक्तं वेष्टयेत् साधकोत्तमः ॥३४६०॥

नानासुगंधद्रव्येगा रक्तचंदनचंदनैः । काश्मीरगुग्गुलौ चैव पीतसूत्रेगा वेष्टयेत् । बंधयेद् द्विविधै द्रव्यैः क्षारयुक्तहरिद्रया ॥३४६१॥

निर्द्धं निरहंकारः शुद्धनाडीगरागवृतः । पाखंडबुद्धिरहितः सर्वभूतिहते रतः ॥३४६२॥

सर्वावयवसंशुद्धः सर्वशास्त्रविशारदः ।

कृतासिषेको विद्याज्ञो जपपूजादितत्परः ॥३४६३॥

मृद्वासने वसेत् सो हि त्वन्यो नरकभाग् भवेत् । श्रज्ञानमोहदंभैश्र दृष्ट्वा दृष्टि करोति यः । स याति नरकं घोरं पिशाचत्वमवाप्नुयात् ॥३४६४॥ प्रपतंति महामूढा व्याधित्वं स्वल्पजीवितम् ।

विशेद् वीरस्तु शास्त्रज्ञः समयाचारतत्परः ॥३४६५॥ मंत्रज्ञस्तंत्रदर्शी च यंत्रमंत्रविचक्षरणः ।

निग्रहानुग्रहे शक्तश्रतुर्वर्गविनोदकः ॥३४६६॥

स सिद्धः सिद्धिदो लोके शापानुग्रहिए। क्षमः । ग्रशक्तः कुरुते यस्तु मृत्युस्तस्य न संशयः ॥३४६७॥

मृद्वासनिमदं प्रोक्तमचूडकविशोधनम् । शृपाु प्राज्ञे यथान्यायं सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥३४६८॥ प्रोक्तमासनमादाय मकारपंचकान्वितः ।

मोमाष्ट्रस्यां ब्लाव्हरम् मासां बोपकोत्सवे गाउँ एहि शिवाgotri

कुलक्षे चापि देवेशि ग्रचुडकासनं भवेत्। दिग्बंधभूतजुद्धचादि कृत्वा यत्नेन पार्वति ॥३५००॥ वज्रोदके समारम्य रक्ष रक्षांतकं शिवे। मंत्रान् विज्ञाय यत्नेन साधयेदिष्टसाधनम् ॥३५०१॥ श्रन्यत् सर्वं पूर्ववत् स्यात् कोमलेऽप्येवमेव च । मुंडासनं प्रवक्ष्येऽहं शृणु सावहिता भव ।।३५०२।। भौमामायां चतुर्दश्यां मंगले शनिवासरे। दीपोत्सवे च फाल्गुन्यां नवरात्रदिने तथा ॥३५०३॥ पूर्वकृत्यं समाप्याथ याममात्रगते निशि । वीरवेषो दयायुक्तो भक्तभक्तो जितेन्द्रियः ।।३५०४।। महाबलो महाबुद्धि विजेता सर्वशास्त्रवित्। खड्डहस्तो मुक्तकेशः सिंदूरतिलकान्वितः ।।३५०५।। वीरसाधनसामग्रीसंयुतः साधकोत्तमः। शिवार्वील प्रदत्वादौ तदन्ते मुण्डसाघनस् ।।३५०६।। शिवारूपा स्वयं देवी तत्र विघ्नहरा ध्रुवस् । ग्रन्यथा विघ्नकर्तारो देवा दैत्याश्च मानवाः ।।३५०७।। सर्वविघनविनाशार्थं सिद्धचर्यं फेरवीं यजेत्। इमशाने गह्वरे नद्यां शून्यगेहेऽपि साधयेत् ।।३५०८।। इमशाने चेत् महेशानि विधिस्तत्र इमशानवत्। भ्रन्यत्र वीरवत् कार्यं साधनं सर्वसाधनम् ॥३५०६॥ खादिरात् कोलकानष्टौ निखनेत् मंत्रमुज्यरत्। महामंडलमंत्रेश्च सर्वविघ्नान् विघातयेत् ।।३५१०।। मुण्डमानीय यत्नेन पंचगव्ये विनिःक्षिपेत्। बुग्धेन स्नानमाचर्य ततः संविज्जलेन च ॥३५११॥ तदन्ते सुरया स्नानं कृत्वा यत्नेन पार्वति । तैलं लाप्य च तन्मुंडे सिंदूरं कज्जलं तथा ॥३५१२॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

गंधपुष्पेश्च संपूज्य खनेत् हस्तार्धमानतः। सर्वमुण्डे विधिरयं शूलप्रोतादिके शृएा ॥३४१३॥ शूलं संपूजयेद् देवि समारोपं ततश्चरेत्। शूलराज महाक्रूर सर्वभूताप्रियंकर ।।३५१४।। सिद्धि संकल्पितां देहि वज्रशूल नमोऽस्तु ते। दीपं प्रज्वालय तत्रेत्र खङ्गीन कर्त्तयेत् स्वयम् ॥३५१५॥ वीरं संपूज्य यत्नेन तत्कालं मुण्डमाहरेत् । कालीखङ्गसमुद्भूत सर्वसिद्धिप्रदायक ॥३५१६॥ कितांचतामिंग्स्तवं च खङ्गमुंड नमो नमः। पाशयुक्ते मनुरयं प्रएावं पूर्वमुद्धरेत्। नागपाश महासिद्ध वेताल खेचरेश्वर ॥३५१७॥ अर्ध्ववक्त्र महाकाय पाशवीर नमोऽस्तु ते। एवं संप्रार्थ्य संग्राह्यं भीति तत्र न कारयेत् ॥३५१८॥ साधको भयभीतक्ष्वेत् खङ्गरावरामुच्चरेत् । लक्षद्वयं तत्र जपेद् वीरमार्गक्रमेरा च ॥३५१६॥ एवं साधितमुंडं स्यात् सिद्धचष्टकफलप्रदम् । संसाधितेन मुंडेन मालापात्रादिकं चरेत् ॥३५२०॥ पात्राणां शोधनं देवि शृषाु यत्नेन सांप्रतम् । इन्द्रस्तदादितः सेन्दु मैंत्रेगानेन मार्जयेत् ॥३५२१॥ ध्रुवं मंडलमंत्रेगा भूगृहं विद्ववृत्तयुक् । कुर्यात् तत्राधारशक्तिकूर्मानंतात् प्रपूजयेत् ।।३५२२।। व्योमाग्निशक्तिसहितमस्त्रमेतद् ध्रुवादिकम्। श्रनेन मनुनाधारे स्थापयेत् तत्र मंत्रवित् ।।३५२३।। विह्नमंडलमेतिस्मन् पूजयेत् तदनंतरम्। क्रोधवज्यास्त्रबीजाभ्यां ग्राधारे क्षालितं शुभम् ॥३५२४॥ महाशंखं ततो मंत्री स्थापयेत् श्रीक्रमात् ततः । रिवा दीर्घत्रयोपेता काली ब्रह्मा रसायुक्त पार्क्ष्य प्रभू क्ष्युक्त

दोर्घः शचीपतिर्वायुह् दयं मन्मथातिमम् । दीर्घत्रयसमोपेतं तारिग्गो पूर्ववत् पुनः ।।३५२६।। शिवं दीर्घत्रयोपेतं नीलाशब्दात् पूर्ववत् । मायां स्मरांतिमं शंभुं वामकर्गोन्दुसंयुतम् ।।३५२७।। सर्वकामः कालरात्रि दीर्घालापपदात् पुनः । सर्वाधाराय सर्वाय सर्वोद्भवाय शब्दतः ।।३५२८।। सर्वज्ञद्धिमयायाथ सर्वासुरपदात् ततः । रुधिरारुगाय शुभ्राय प्रोच्चार्य सुरभाजनः ।।३५२६।। श्रापदेवीकपालाय हृदयांतो मनुर्मतः । एभिश्रत्मि मंनुमि महाशंखं प्रपूजयेत्। तत्र संपूजयेन् मंत्री मंडलं तिग्मरोचिषः ॥३५३०॥ मूलेन पूरयेत् तोयं सुधाबुद्धचा विधानवित्। गंघपुष्पाक्षतान् क्षिप्त्वा त्रिखंडां दर्शयेत् ततः ॥३५३१॥ पीयूषरोचिषो दैवि मंडलं तत्र पूजयेत्। वाचं शक्ति रमे शक्ति मनुस्वरसमन्वितम् ॥३५३२॥ मूलं तृतीयं भैरव्याः क्रोधबीजं समुज्ज्वलम् । ग्रनेन मनुना मंत्री मावयेदष्टशो जलम् ॥३५३३॥ शक्तचा सुधां विनिःक्षिप्य शंखयोनी प्रदर्शयेत्। विशेषार्घोक्तविधिना कपालं पात्रमुत्तमम् ॥३५३४॥ श्रनेन पात्रवर्येग साधयेदिष्टसाधनम्। वांछासिद्धि खेचरीं च परकायप्रवेशनम् ॥३४३४॥ मनोरथो दिव्यदृष्टिः वेतालगुटिके तथा। रसं रसायनं दिव्यं पादुकां यक्षिग्गीगग्गस् ।।३५३६।। बङ्गिसिद्धि कुंतसिद्धि पाशं व्यजनमेव च । मूर्तिसिद्धि भैरवाष्टमहाकापालिनी शिवे ॥३५७॥ कापालार्घ्येग देवेशि सर्वं सिद्धचित निश्चितम्। वीरचर्याक्रमे देवि दंतमालां च कंकराम् ॥३५३८॥

शतस्त्रीकेशसंभूतं पानपात्रं कपालजम् ।
यंत्रं कापालिकं तद्वदासनं प्रोक्तमेव च ।।३५३६।।
इत्येता वीरसंपत्ति मंत्रसाधनकर्माग् ।
शोधनं पानपात्रस्य कथ्यते शृणु सांप्रतम् ।।३५४०।।
कपालं प्रोक्तमानीय स्फिटिकाभं च साधकः ।
गत्वा श्मशाने देवेशि मकारपंचकान्वितः ।।३५४१।।
तत्रासनं समास्तीर्यं स्वकल्पोक्तक्रमेग् च ।
भूतशुद्धि मातृकां च प्राग्णायामं च मातृकाम् ।।३५४२।।
मूलमंत्रस्य ऋष्यादिषडंगांतं महेश्वरि ।
कृत्वा च पंचगव्येन संक्षाल्य पात्रमीश्वरि ।
सप्तकौषधियोगेन क्षालयेत् तदनंतरम् ।।३५४३।।
स्तन्यं शुक्रं चारगालं तक्रं रक्तं च योनिजम् ।
पंचगव्यमिति प्रोक्तं पात्रयंत्रप्रक्षालने ।।३५४४।।
काश्मीरगोरोचनपूगकादि

कुरंगनाभीजमथापि मूर्वा । पूतासिमेवं मलयोद्भवं च

सद्यंत्रगुद्धच महदौषधानि ॥३५४५॥
एसिः सम्यक्तया पात्रं मालां च कंकरणं तथा।
यंत्रं संशोध्य च पुनः शोधयेत् तज्जभस्मना ॥३५४६॥
यथोक्तेन विधानेन मूलमब्दोत्तरं शतम्।
पात्रं स्पृष्ट्वा जपेद् देवि तन्मूलमधुनोच्यते ॥३५४७॥
प्रग्णवं भुवनेशानीं लक्ष्मीं कामं च देव्यिति ।
पात्रंश्वरि ततः कामं लक्ष्मीं मायां ध्रुवं पुनः ॥३५४६॥
पात्रं शोधय युग्मान्ते व्योमाग्नीः षोडशा च युक् ।
वक्षमींन विसर्गान्तं कामिनद्वं तथैव च ॥३५४६॥
सर्गी त्रिर्लागलोशक्च स्वाहांतः परमेश्वरि ।
इमां मन्त्राद्रिमकां विद्यामष्टोत्तरशतं जपेत् ॥३५५०॥
दल्यान्ते विद्यामष्टोत्तरशतं जपेत् ॥३५५०॥
दल्यान्ते विद्यामष्टोत्तरशतं जपेत् ॥३५५०॥
दल्यान्ते विद्यामष्टोत्तरशतं जपेत् ॥३५५०॥

ततः शुद्धं भवेत् पात्रं चषकं कारयेत् प्रिये ।
एवं क्रमेरा देवेशि कंकरां शोधयेद् बुधः ।।३४४१।।
एतत् शुद्धकरीं विद्यां वक्ष्ये श्रृपा समाहिता ।
प्ररावं च तथा मायां स्त्रियं कूर्चं तथा श्रियम् ।।३४४२।।
कालीं केशिनि शब्दांते निराशब्दाच्च केशिनि ।
कंकरां शोधययुगं वर्म क्रां फट् ततस्त्रिधा ।।३४४३।।
सर्गी ठश्च प्रियावह्ने मैत्रः कंकराशुद्धकृत् ।
इममष्टोत्तरशतं जप्त्वा च परमेश्वरि ।।३४४४।।
पंचगव्यौषधिजलैंः संक्षाल्य धारयेत् ततः ।
हस्तयो वीरवेषः स्यात् साधनाहीं नरस्तदा ।।३४४४।।

इति श्रीमदागमरहस्ये सत्संग्रहे साधनोपयोगि ग्रासनपात्रकंकगादिशुद्धि-कथनं नाम चतुर्देशः पटलः ॥ १४ ॥ ग्रादितश्च द्विचत्वारिशत् ॥४२॥

ग्रथ पञ्चदशः पटलः।

त्रथ मालाविधानं च कथ्यते शृणु पार्वति ।

माला वहुविधा प्रोक्ता महाज्ञंखादिमेदतः ॥३५५६॥

महाज्ञंखमयोमाला दंतमाला स्वयंभुवा ।

वर्णमाला तथा देवि सर्वकार्यार्थसाधिनी ॥३५५७॥

वर्णमाला त्रिधा प्रोक्ता तत्क्रमं शृणु पार्वति ।

पंचाज्ञद्वर्णमि मीला पंचाज्ञद्वर्णयोगतः ॥३५५६॥

तद्द्वयं तु समुद्धृत्य ह्यनुलोमिवलोमतः ।

माला ज्ञतमयो प्रोक्ता सर्वकार्यार्थसिद्धिदा ॥३५५६॥

प्रष्टवर्गं प्रकल्प्याथ ह्यष्टोत्तरज्ञतो मवेत् ।

गुरोः पंच गणोज्ञस्य त्रयं च परिकीर्तितस् ॥३५६०॥

शेषिमण्टाय संदद्यात् तेन सिद्धीश्वरो भवेत्। त्रयं गुरौ त्रयं देवि गरापे परिकीर्तितम् ॥३५६१॥ न्यूनातिरिक्ते द्वितयं शेषिमण्टाय योजयेत्। ब्रब्टोत्तरक्षतीभेदो ह्यपरः परिक्रीतितः ॥३५६२॥ श्रनुलोमविलोमेन मातृकानां शतं मवेत्। श्रादौ मध्ये तथा चान्ते बालां दद्यात् प्रयत्नतः ॥३५६३॥ श्रादौ श्रीबीजमुच्चार्य तेन चाष्टोत्तरं शतम्। अमृतित्रतयं प्रोच्य प्रगावाद्यं तथेश्वरि ॥३५६४॥ श्रनुलोमविलोमेन त्वष्टोत्तरशती भवेत्। मायावाक्कामश्रीयोगात् मातृकावर्णयोगतः ॥३५६५॥ अनुलोमविलोमेन त्वष्टोत्तरशती भवेत्। दंताक्षमाला श्रोकाल्यां तारिण्यां नरशंखजा। छिन्नमस्ताविधौ शस्ता नरास्थिमालिका शुभा ॥३५६६॥ रक्तचंदनजा माला बीजाख्या त्रिपुराविधी। स्वयंभूमालिका देवि भैरव्यां वालिकाविधौ ॥३५६७॥ गुंजामाला तु मातंग्यां धूनायां खरदंतजा। हरिद्राख्या तु ब्रह्मास्त्रे कमलाख्या तु माविधौ ॥३५६८॥ वाण्यां श्रीभुवनेश्वयां स्फाटिको परिकोतिता। व्वेतगुंजा सिद्धविद्याविधौ प्रोक्ता महेक्वरि ॥३५६६॥ शंखमाला वैष्ण्वे च इन्द्राक्षः शक्तिमात्रके। मद्राक्षः शरभे प्रोक्तो गर्गोशे गजदंतकः ॥३५७०॥ त्रिपुटायां पुत्रजीवो गोविंदे तुलसी मता। सर्वमंत्रो च रुद्राक्षः शक्तिमन्त्रो दिवा न हि ॥३५७१॥ रत्नस्वर्णरौष्यमयी तथा ताम्रमयी शिवे। ग्रोदुम्बरं बीजमयी वटबीजमयी तथा ॥३५७२॥ पूगीफलमयी माला जातीफलमयी तथा।

प्रवालं सूर्यमन्त्रे च मौक्तिकं शक्तिमन्त्रके । कुशग्रन्थ्या जपेद् विष्ठः सुवर्णमिणिमि र्नुपः ॥३५७४॥ पुत्रजीवर्जपेद् वैश्यः पद्माक्षैः सर्व एव च । श्वेतपद्माक्षकं देंवि विष्णुमन्त्रां जपेच्छिवे ॥३५७५॥

रुद्राक्षैः सर्वकार्याणि पद्माक्षैः पुष्टिरुत्तमा । कीर्तिः श्रीशंखमिण्णिम मौक्तिकै मुक्तिमान् भवेत् ।।३५७६।।

प्रवाले वंश्यसिद्धिः स्याद् गुंजया मोहनं मवेत् । भद्राक्षं भाग्यसंपत्तिरिन्द्राक्षं राज्यमृत्तमम् ॥३५७७॥

धनधान्यसुतावाप्ति भेवेद्धि पुत्रजीवकैः । ग्रिरिष्टमाला विद्वेषे वदरी मारएो मता ॥३५७८॥ मरिचै ह्रिसिने माला पिचुमंदै विनाशने ।

ग्रकस्मादीप्सितासिद्धि मंहाज्ञंखाख्यमालया । दंताख्यमालया देवि षष्टिसिद्धीज्वरो भवेत् ॥४५७६॥

रिचता चास्थिमिएभिः सर्वशत्रुविनाशिनी । खरदंतैः शत्रुनाशो गजदंतै गुंहर्भवेत् ॥३४८०॥ कुचंदनैः समाकर्षो हारिद्रैः स्तंभनं भवेत् । स्वयंभूकुसुमै देंवि सर्वविद्येश्वरो भवेत् ॥३४८१॥

चंदनैः कीर्तिलक्ष्म्यौ च तेजः स्यात् कुशमालया । तुलस्या मोक्षमाप्नोति लौहै मरिरामादिशेत् ॥३५८२॥

ताम्नः शांति लौंहरौप्यैः सर्वसौस्यकलां लभेत् । सौवर्गौ राजलक्ष्मीश्र सर्पास्थिमालया रिपून् ॥३४८३॥

त्रासयेन्नाशयेद् देवि नात्र कार्या विचारगा । वाक्सिद्धिः स्फाटिकं भूयात् शंखाभावेऽपि मालिका ॥३५८४॥

अंगुलीपर्वभिः सर्विसिद्धि राज्यं च विदिति । अविदेवरं भूतनाशः प्लक्षे दीरिद्रचनाशनम् ॥३४८४॥ रुद्राक्षस्वर्णसंयु रुद्राक्षरौप्यसंयु रूप्रात्मवाये रुद्राक्षरौप्यसंयु रूप्रात्मवाये रुद्राक्षरौप्यसंयु रुद्राक्षरौप्यसंयु

वटबीजे यंक्षिएगे स्यात् कपर्वीभि महोदयः। शिवशक्तिमयीमाला रुद्राक्षस्फाटिकै युता ।।३५८६॥ रुद्राक्षस्वर्णसंयुक्ता माला हरिहरात्मिका। रुद्राक्षरौप्यसंयुक्ता माला विधिशिवातिमका ॥३५८७॥ रुद्राक्षेः शक्तिमंत्रं तु दिवा यो जपति प्रिये। स दुर्गतिमवाप्नोति जपस्तस्य निरर्थकः ॥३५८८॥ शक्तिस्त्रीमंत्रजप्येषु रुद्राक्षे नं दिवा जपेत्। पूर्वाम्नाये स्फाटिकजै दक्षिएो रुद्रनेत्रजै: ॥३५८१। प्रवालमौक्तिकै दें वि पश्चिमाम्नायदेवताम् । उत्तराम्नायदेवानां दंतशंखाक्षमालिका ॥३५६०॥ मिंगिभिः पुत्रजीवोत्थै नं जपेदुत्तरेश्वरोम् । कुंडलीमालिका देवि भैरव्यां परिकोतिता ॥३५६१॥ ऊर्ध्वाम्नाये स्वयंभूत्था पाताले रत्नसंभवा। तत्रापि कालिकाताराविद्यायां शंखसंभवा । शंखमालां विहायाऽथ यस्तारां कालिकां जपेत् ॥३५६२॥ मंत्रक्षोमोऽथवा भूयात् विद्यासिद्धिर्न वै भवेत्। पूर्वोक्तसर्वमालानां फलं शृणु महेक्वरि ॥३५६३॥ रुद्राक्षमालाजापेन दशवर्षेग् व फलम्। स्फाटिक रुद्रवर्षेण मुक्तायां नंदवर्षतः ॥३५६४॥ प्रवाले रविवर्षेगा पद्माक्षे परमेश्वरि । कामवर्षेण देवेशि पुत्रजीव्यां शृणु प्रिये ॥३५९५॥ भूतवर्षेगा फलदं गुंजांख्ये वसुवर्षतः। रक्तचंदनजापात्तु सप्तवर्षात् फलं लमेत् ॥३५६६॥ रोप्ये दिग्युग्मवर्षेगा स्वर्गो वर्षेस्विदकः। प्चितिवर्षातिवर्षेण ताम्राक्षे फलमोरितस् ॥३५९७॥

ग्रकस्मादीप्सितासिद्धि मेहाशंखाक्षमालया। महाशंखेऽप्यशक्तश्चेत् स्फाटिक्या मालया जपेत् ॥३५६८॥ दंताक्षमालया देवि दशाहेन फलं लमेत्। श्रंगुलीपर्वमालाद्याः सप्ताहेन फलं लमेत् ॥३५६६॥ महाशंखाक्षमालायां सूर्याहेन फलं ध्रुवम् । मद्राक्षे षोडशाब्देन माहेन्द्राक्षेऽपि पूर्ववत् ॥३६००॥ माशाक्ये पंचवर्षेगा रत्ने वर्षाष्टकेन च। ग्रस्थिमः पक्षमात्रेग् फलं भवति पार्वति ॥३६०१॥ पोताक्षे रसवर्षेण फलं भवति पार्वति । स्वयंभूमालिका देवि स्वजातक्रमयोगतः । ३६०२।। या प्राप्ता विधिना देवि पंचाहेन फलप्रदा। खरदन्ते र्वेदवर्षे गजदंते द्विवेदतः ॥३६०३॥ राजदंतेऽप्यशक्तश्चेत् गजदंतेन व जपेत्। कुलवृक्षस्य बीजैश्च मासाद् भवति वै फलम् ॥३६०४॥ कुशग्रंथ्या सूर्ययुग्मैः फलमंत्र प्रकीर्तितम् । नारिकेलमयी माला प्रोक्ता कापालिनीविधौ ।।३६०५।। प्रत्यक्षमुंडमालेयं षण्मासेन फलप्रदा । दंताक्षमालया चैव राजदंतेन मेरुगा ॥३६०६॥ उत्तमा मालिका प्रोक्ता कालिकार्कावरणी परा। कर्गनेत्रांतरस्थो यो महाशंखेति कीर्तितः ॥३६०७॥ महाशंखमयी माला पंचाशन्मश्णिनिर्मिता। मध्यमा मालिका प्रोक्ता ताराजापेषु कीर्तिता ॥३६०८॥ ग्रस्थिम वी नृमुंडै वी किंच वा नृललाटजम्। देहदेहान्तरस्थ्ना वा माला प्रोक्ता कनिष्ठिका ॥३६०६॥ छिन्नादेग्या विधौ शस्ता एवं हि त्रिविधा मता। संमुखो यो उमो दंतो राजदंतौ प्रकोतितौ ॥३६१०॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

मुखं देव्या महेशानि येन दंतेन राजते । तस्मात् प्रोतेन मनसा मेरुगर्भे नियोजितौ ॥३६११॥ नारिकेलमयी माला सर्वविद्याविधी स्मृता। सर्वस्मान्मुंडमालेयं कलौ जार्गात केवला ॥३६१२॥ चंडघंटाविधौ देवि नरास्थिमालिका स्मृता। एकाक्षरी छिन्नमस्ता चंडघंटा प्रकीर्तिता ॥३६१३॥ न रुद्राक्षे नं पद्माक्षेरचंडघंटां जपेत् शिवे। इतोऽत्युग्रा त्वन्यविद्या न काचिद् वै भविष्यति ॥३६१४॥ सिद्धिर्वा मृत्युरिप वा द्वयोरेकतरं भवेत्। ताराबीजं तथा काल्याक्कक्तिकिन्नामनुं जपेत् ॥३६१४॥ बीजदैवतयोगेन ग्रिधिप्रत्यिधयोगतः। म्रिघिष्ठात्री महेशानि तथा प्रत्यिधयोगतः ॥३६१६॥ नरास्थिमालिका जप्ता सर्वकार्यकरी स्मृता । त्रिशक्तिमंत्रं रुद्राक्षे नं दिवा प्रजपेत् शिवे ॥३६१७॥ सूर्याग्निसोमसूत्रैश्च माला कार्या प्रयत्नतः । वाससा मज्जया वापि नाडीमि र्वा शुभा मता ॥३६१८॥ स्वयंभुवाक्ता या नाडी सा नाडी सर्वथोत्तमा । स्वयंभुवाक्तं यत् सूत्रं तत् सूत्रं सर्वथोत्तमम् ॥३६१६॥ पण्यस्त्रीनिर्मितं सूत्रं कुमारीनिर्मितं तथा। ततो द्विजेन्द्रपण्यस्त्रीनिर्मितं ग्रंथिवर्जितस् ॥३६२०॥ कुण्डाक्तं चेव पुष्पाक्तं खपुष्पाक्तं तथेव च। ततो मातंगिनीहस्तात् प्राप्तं तु सर्वथोत्तमम् ॥३६२१॥ नाड्या संग्रंथनं कार्यं रक्तेन वाससाऽथवा।

इयं सिद्धिप्रद्राhi सालाकाका लिकाकृष्टिकारिसी ।। ३६२२।।

तारेगा ग्रथनं कार्यं प्रत्येकं मिग्तकां क्रमात्। तन्मंत्रदेवतारूपं ध्यात्वा तु मालिकांतरे ॥३६२३॥ सर्वे मंत्राः प्रजप्तव्या सर्वकार्यार्थसिद्धये । दंताक्षं चैव मुंडाक्षं मत्स्यस्यास्थिमांगि प्रिये ॥३६२४॥ नाड्या संग्रथनं कार्यं त्रिशक्तिमालिका मता। येनैव प्रथ्यते देवि तमेव प्रजपेन्मनुम् ॥३६२५॥ नान्यमंत्रं जपेट् देवि तमेव प्रजपेत् सदा । मालाशुद्धिमहं वक्ष्ये शृणु त्वं सावधानतः ॥३६२६॥ सुदिने शुभनक्षत्रे मालां संशोधयेत् सुधी:। महामालां समादाय वीरपात्रं समानयेत् ॥३६२७॥ वीरयंत्रं समासाद्य वीरमालां प्रशोधयेत्। देवीं सावरगां पूज्य सबल्यन्तं महेश्वरि ॥३६२८॥ श्रोमस्य श्रीमहामालामंत्रस्य परमेश्वरि । ऋषिः श्रीमन्महातारा उष्णिक् छंदः प्रकीतितम् ॥३६२६॥ क्रीं बीजं स्त्रीं तथा शक्ति हूं मत्र कीलकं मतस्। महामालादंतमालाशोधने विनियोजनम् ॥३६३०॥ त्रिशक्तचा तु षडंगानि ध्यानं मंत्रवदाचरेत्। ध्यात्वा संकल्प्य यत्नेन मंत्रे गानेन पार्वति ॥३६३१॥ प्रग्वं च तथा लज्जा श्रीलज्जाकामकूर्चकैः। फट् स्वाहेति च मंत्रेगा चषके मालिकां क्षिपेत् ॥३६३२॥ तत्रावाहनमंत्राद्यैः कालिकां कालशारदास्। सायुघां सपरीवारां पूजयेत् परमेश्वरि । मूलमावृत्य तार्तीयं संस्मरत् घेनुमुद्रया ॥३६३३॥ श्रमृतीकृत्य कवचेनावगुंठ्य महेश्वरि । महामुद्रया समाच्छाद्य देवीरूपां विभावयेत् ॥३६३४॥ ध्यायत् तत्र क्षिपेद् बिन्दुं तन्मंत्रांश्च शृणु प्रिये । प्रगावं कूर्चयुग्मं च स्वाहा प्रगावकूर्चकौ ॥३६३५॥

明道事

विह्नजाया च तारास्त्रे विह्नजायाविषं तथा। तारा च विह्नजाया च तारलज्जा च कूर्चकैः ॥३६३६॥ विह्नजाया ततस्तारं लज्जा फट् विह्नजायया । द्वित्रिशृङ्खिलका व्यस्तसमस्तमंत्रमालया ।।३६३७।। श्चतधाऽनेन मंत्रेण बिन्दुप्रक्षेपमाचरेत्। कस्तूरीकेसरं चैव चंद्रागरुप्रधूपकैः ।।३६३८।। घूप्य मालां समुत्तार्य विद्यया चाभिमंत्रयेत्। प्रगावं च तथा माया श्रोमहाविज्यगोति च ॥३६३६॥ ततो महाघोररूपे कर्कशेति पदं वदेत्। महास्थिमंडले प्रोच्य प्रविशेति पदं तथा ।।३६४०।। सर्विसिद्धि प्रयच्छेति प्रगावं कूर्चबी जकम्। मायायुग्मं वह्निजाया महाकापालिनीति च ॥३६४१॥ ततो महाघोररूपे स्वाहा प्रगावमायया। मायाकूर्चास्त्रस्वाहांता विद्योक्ता चाभिमंत्रणे ॥३६४२॥ दूर्वाक्षतैः समभ्यच्यं कामेनोद्दीपनं चरेत्। उपचारैः समभ्यच्यं मातृकामूलमंत्रतः ।।३६४३।। उद्दीपनं ततः कृत्वा हूंकारेगा तु वेष्टयेत्। बलि दद्यादनेनेव तारं मायाद्वयं वदेत् ॥३६४४॥ वासुदेवं बिन्दुयुतं कूर्चेन पुटितं वदेत्। कूर्चतारे फट् च कूर्चं प्रणवद्वयमुच्चरेत्।।३६४५।। कूर्चबीजं विह्नजाया प्रग्गवं कूर्चबीजकम्। महायोगिनि शब्दान्ते स्यात् त्रिभुवनतारिश्गि । महाशंखास्थिमाला च मध्ये निवासं कुर्विति ॥३६४६॥ कुरुशब्दं सर्वसिद्धि देहियुक् च सुरापदम्। मांसोपहारान् गृह्णेति युक् स्याद् गृह्णापयद्वयम् ॥३६४७॥। CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by Campon II

कुल्लुका फट् ततः स्वाहा मंत्रेगानेन पार्वंति । यथोचितेन द्रव्येगा बींल दत्वा विधानतः ।।३६४८ ।। पंचद्रव्यैः पंचदिनं मालां स्थाप्य च पंचमे। मालारात्रिविधि कुर्योत् तेन सिद्धचित मालिका ॥३६४६॥ निभृते स्थापयेन्मालां रहस्यमालिकाविधिः। दंतमालाविधौ देवि विशेषं शृणु चापरम् ।।३६५०।। प्रगावं हृत् भगवति मानरंजिनि चोच्चरेत्। विच्चे विच्चे वलोद्ये च हरविच्चे पदं वदेत् ।।३६५१॥ मालाविच्चे तथा मालाधारिश्णि हर ब्लूंपदम्। हसब्लूं शंखास्थिधारिगातिपदमंते तथा वदेत् ।।३६५२॥ कर्कशास्थि तथा मालावासिनीति पदं वदेत्। छिन्ने तारे कालिके च तदंते जपमालिके ।।३६५३।। कुल्लुकां फट् महादंतमालामध्ये पदं वदेत्। निवासं कुरुयुग्मं च राजेन्द्रमाला ततः पदम् ।।३६५४॥ वासिनि त्रीं त्रयं प्रोच्य क्रींत्रयं हूंद्वयं तथा। मायाद्वयं च फट् स्वाहा मालामंत्रग्राकृत्मनुः ।।३६५५॥ ब्लिदानमनुं वक्ष्ये शृणु सावहिता शिवे। प्रग्वं कर्कशपदं मंडलांबिके पदं ततः ।।३६५६॥ मालिनि कौलिनि पदं गौरि गांधारि चोच्चरेत्। गिरिजे मायावतिपदं क्रियावति पदं ततः ।।३६५७।। गायत्र्यंते गानिप्रये भक्तिप्रये च शांकरि । कालिका पालिके कृष्णमुण्डघारिणि प्रोच्चरेत् ।।३६५८।। ग्रसिलताधारिग्गीति तदंते जातवेदसे । श्रीकालकालि च पदं मृडानि रुद्रागीति तथा ।।३६५६॥ इमं बलि गृह्धयुग्मं मालासिद्धि च चोद्धरेत्। देहि दापययुग्मं च क्रीं फट् कमलया युतम् ॥३६६०॥

いかりら

बलि दद्यादनेनैव तदंते जाग्रती कृति:। कपालकज्जलं चोरपादकज्जलयुग्मकम् ।।३६६१।। विश्वमोहननामानं कज्जलं विद्धि पार्वति । तत्पादमस्म देवेशि फाल्गुनोत्सवजं परम् ।।३६६२॥ जगद्भलीति नाम्ना तु विख्यातं शत्रुनिग्रहे । ग्रनेन मनुना गृह्य उद्भ्रांतिघूलिनामिकाम् ।।३६६३।। शत्रुमूर्घिन तथा गेहे देहे शय्यागएो जले। दापयेत् परमेशानि उद्भ्रांतिधूलिरीरिता ॥३६६४॥ उद्भ्रांतिघूल्या देवेशि भ्रमाकान्तं जगत्त्रयम् । यथा ग्रहरायुग्मं च तथा पर्वद्वयं भवेत् ।। ३६६५ ।। नक्षत्रवारराज्यादि शुद्धाशुद्धि न चाचरेत्। कामबीजं तथा ल्कूं च क्लीं क्लीं फट् च त्रयं वदेत्।।३६६६॥ सिद्धे जगद्ध्लिसिद्धि देहि स्वाहा मनुर्मतः। मंत्रेगानेन संगृह्य उद्भ्रांतिधूलिमुत्तमाम् ।।३६६७।। मालासिद्धचा सर्वेसिद्धि भेवत्येव न संशयः। श्रथोच्यते महायंत्रसंस्कारः सर्वसिद्धिदः ।।३६६८।। शुभेऽह्मि स्नानमाचर्य शुभे लग्ने शुभे क्षएो। कृतनित्यक्रियो मंत्रो प्राङ्मुखो वाप्युदङ्मुखः ।।३६६१।। भूतशुद्धचादिकं कृत्वा कल्पोक्तन्यासमाचरेत्। सौवर्गं राजतं ताम्नं श्रेष्ठं मध्यं तथाधमम् ॥३६७०॥ स्फाटिकं वा मरकतं सर्वश्रेष्ठं प्रकीतितम्। एकतोलोत्तरं चाष्टतोलान्तं सुन्दरं हढस् ।।३६७१॥ कुर्यान्मनोहरं चैव सुरेखं मेरुपृष्ठकम् । प्रतिष्ठां च ततः कुर्यात् यथाशास्त्रप्रमाणतः। पुण्यक्षेत्रे पुण्यकाले शैलादिविहितस्थले हिन्दिश्रले हिन्दिन

मंत्री कल्पानुसारेगा पूर्वेद्युरिधवासयेत्। सायं संकल्पविधिवत् घटस्थापनपूर्वकम् ।।३६७३।। गणेशादीन् समभ्यच्यं दिक्पालान् परिपूजयेत् । मद्यं मांसं तथा मत्स्यं मुद्रा मैथुनमेव च ।।३६७४।। यंत्रसंस्कारकर्मादौ द्रव्यमेतन्मयेरितम् । यथाशक्त्युपचाराद्यैः संपूज्य मूलदेवताम् ।।३६७५।। सुगंधतेलगंधाद्ये द्रव्येस्तमधिवासयेत्। चंद्रेत्यादि च मंत्रोग जयघोषपुरःसरम् ।।३६७६।। श्रिधवासं विधायेत्त्र्यं संयतो विजितेन्द्रियः । प्रार्तीनत्यं तु निर्वर्त्यं क्लुप्ते यागस्थले विशेत् ॥३६७७॥ मंडलं सर्वतोभद्रं वेद्या उपरि संलिखेत्। प्राङ्मुखो वाग्यतो भूत्वा संकल्प्यामीष्टसिद्धये ॥३६७८॥ पंचशुद्धि समाचर्य कूर्चमक्षतसंयुतम्। संस्थाप्य मंडले तत्र यजेदाधारशक्तितः ।।३६७६।। पीठमंत्रान् समास्तीर्यं स्थापयेत् कलशं बुधः । दीक्षाक्रमोक्तविधिनाभिषेककलशं तथा ॥३६८०॥ पंचगव्यं ततः कुर्यात् शिवमंत्रविशोधितम्। तेन सुस्वापयेन्मंत्री यंत्रे च प्रग्एवं जपन् ॥३६८१॥ पंचामृतेन हविषा दध्ना च पयसा क्रमात्। तत उद्वर्तनं कृत्वा जलेन स्नापयेदपि ॥३६८२॥ पंचगव्यं समानीय तत्र यंत्रं समाहितः। जप्तं क्षिपेत् सुवर्णादिवेदमूलपुरःसरस् ॥३६८३॥ तत उद्धृत्य स्वर्गादिपात्रे संस्थाप्य मंत्रवित्। पंचामृतेन तीर्थेन शीतलेन जलेन च ।।३६८४॥ सहस्रशीर्षामंत्रेग् मूलमंत्रपुरःसरम्। सुस्नाप्य पवमानेन कर्पूरागरुनोरतः। सर्वोषधिजले गंधजले यंत्नेन मज्जनम् ॥३६८५॥

ततः शुद्धदुकूलेन जलमुत्सार्य साधकः। परिधाय दुकूले द्वे स्वर्गानिमितडोरया ।।३६८६॥ मंडले तं समानीय नृत्यगीतै जंयस्वनै: । कुं कुमाद्ये विलिप्याथ पूज्य सर्वोपचारकैः ।।३६८७।। पीठपूजां ततः कुर्यात् स्वस्वकल्पोक्तमानतः । कुशैः कुलीनै वा देवि शतमब्टोत्तरं जपेत् ॥३६८८॥ प्रएावं यंत्रराजाय विद्यहे पदमुद्धरेत्। महायंत्राय घोरूपं लिखेत् ततो महोति च ॥३६८१। तन्नो यंत्रः प्रचोरूपं दयादेषा प्रकीतिता । इमां यंत्रस्य गायत्रीं जप्त्वा देवत्वमाप्नुयात् ॥३६६०॥ स्रथेष्टदेवतां घ्यात्वा मुद्रयावाहयेत् ततः। जीवन्यासं ततः कृत्वा पूजयेदिष्टदेवताम् ॥३६६१॥ नृत्यगीतेश्च वादिज्ञैः पंचघोषपुरःसरम् । ततो जपेदिष्टमंत्रमष्टोत्तरसहस्रकम् ॥३६६२॥ कुंडे वा स्थंडिले मंत्री हविषा संस्कृतेऽनले। यथाविधि विधानेन सृचा होमं समाचरेत् ॥३६६३॥ ग्रासप्रमाएां चरुकं मूलेनैव च मंत्रवित्। घृतप्लवं ततो दत्वा जुहुयादग्निसंमुखे ॥३६१४॥ पंचिवशतितत्त्वैश्च तत्त्वज्ञानपरायणः। चरुणा दिक्पति चैव दद्यात् पूर्वादितो बलिम् ॥३६८५॥ तत भ्रावृतिदेवेम्यो घृतेनाहुतिमाचरेत्। तदन्ते देवि मंत्रोग् हुनेदष्टोत्तरं शतम् ॥३६६६॥ मातृकायुक्तमं हां तु जपन् जयजयस्वनै: । दद्यात् पूर्णाहुति देव्ये यथाविधि विधानतः ॥६६९७॥ इष्टिसद्धर्यं बॉल दत्वा प्रग्मिच्चक्रमुत्तमम्। तोषयेत् स्वर्णवस्त्राद्यं दक्षिगामि ग्रंकं तथा । CC-0. Arutsakhi P. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by e langotri मकारपंचिमदेवि वीरपूजां समावरेत् ॥३६६८॥

शक्ति कुमारिकां बालां पूजयेत् पंचपंचकम्। कुर्यादष्टाष्टकं वापि कुलद्रव्यैः समस्तकैः ।।३६९१।। मूलोकनाथो भवति यंत्रपूजनयोगतः । रहस्यातिरहस्यं च मुण्डयंत्रविशोधनम् ॥३७००॥ गोपनीयं गोपनीयं गोपनीयं स्वयोनिवत् । यंत्रे नष्टे च स्फुटिते सूपायः कथ्यते शृणु ॥३७०१॥ दग्धं वा स्फुटितं नष्टं यद्वा चौरेगा संहतम् । विदीर्गं लुप्तरेखं वा तत्रोपायं शूणु प्रिये ॥३७०२॥ उपोध्य रजनीमेकां हविष्याशी जितेन्द्रियः। लक्षमात्रं जपेन्मंत्रं संप्रदायानुसारतः ॥३७०३॥ दशाष्ट्रपंचयोगेन सद्भक्तचा गुरुतोषराम्। ब्राह्मगान् मोजयेत् पश्चात् कुमारों च सुवासिनीम् ॥३७०४॥ शक्तिपूजां ततः कुर्यात् तथैवाष्टाष्टकं बुधः । पंचपंचककं वापि कालोतारानुसारतः ।।३७०४।। स्फुटितं लुप्तचिह्नं वा दग्धं यः पूजयेत् शिवे । सर्वोपद्रवयुक्तस्य तस्य मृत्युस्त्रिमासतः ।।३७०६।। गिरिगर्भे तीर्थराजे समुद्रे सरितांतरे। क्षिपेद् यत्नेन देवेशि त्वन्यथा मृत्युभाग् भवेत् ।।३७०७।। विद्यामात्रे त्विदं कार्यं विशेषं शृणु पार्वति । लिंगे वाएो नर्मदोत्त्थे लुप्तचिह्नं न दुष्यति ॥३७०८॥ शालग्रामशिलामात्री भंगमृत्युकरं भवेत्। मूर्तौ पादकराघाते नेत्रादिमस्तके शिवे ।।३७०६।। हृदयाघातमापन्ने सर्वं नश्यति पार्वति । तां मूर्ति विसृजेद् देवि पुन मूर्ति नवां नयेत् ।।३७१०।। महाविद्याविघो देवि विशेषं शृणु सादरस्। यत्र देवो गतो देवि तद्देशं तत् स्थलं त्यजेत्। प्रायिश्वतं ततः कृत्वा सुखमाप्नोति साधकः ।।३७११।।

कुमारों च समानीय चावंगीं चारुलोचनाम्। प्रसूनपीठे संस्थाप्य न्यासजालं प्रविन्यसेत् ।।३७१२।। पात्रासादनमासाद्य तां बालां पूजयेत् ततः । नवोत्तरं समारभ्य कामवर्षांतगं शिवे ।।३७१३।। तावद् बालेति गदिता तारा कालीसमा हि सा। देव्याः स्वरूपं देवेज्ञि तद्वत् तस्याः स्वरूपकम् ।।३७१४।। विभाव्य पूजयेद् देवि सांगां सावररणां तथा। मूलाघारात् मस्तकान्तं समालोक्य विभाव्य च ॥३७१४॥ ध्यानोक्तदेवतां ध्यात्वा सांगां सपरिवारकाम् । न च तां भोगयेद् देवि तस्याः क्षोभं न कारयेत् ।।३७१६।। सर्वार्धं व महाविद्यास्तत्क्षा शक्तिदेहगाः। सा चेत् क्षुब्धा यदा सूयात् देवताक्षोभमाप्नुयात् ।।३७१७।। श्रविकारेग्ग मनसा पूजयेन्निजदेववत् । स्वदेवीवच्च संपूज्य सबल्यन्तं महेश्वरि ।।३७१८।। श्रंगे षडंगं संपूज्य मस्तके गुरुपूजनम्। सर्वावृत्ति च सर्वांगे मूलदेवीं त्रिपत्रके ।।३७१६।। संपूज्य परमेशानि रत्नाभरणविस्तरैः। ग्रामै वंस्त्री मींजनाद्यं लेंह्यपेयादिमिः शिवे ।।३७२०।। संपूजयेन्महेशानि देवताभावतत्परः। तया यदुक्तं देवेशि तदेव वरदानकम् ।।३७२१।। तस्या देहे वसेद् देवी नात्र कार्या विचार्सा। एवं कुमारीं संपूज्य तत् तद् दीपात् समाचरेत् ।।३६२२।। त्रिशक्तिवच्च विद्यादौ दीपराजं समाचरेत्। दीपाग्रे दीपिनीं जप्त्वा दोषहीनो नरो मवेत्।।३७२३।। सिंदूरेए। कृतं यंत्रां मूलेनावेष्टितं तथा। तत्कोएो कुल्लुकां लिख्य तत्र दीपं समाचरेत्। अष्टतांचेत्व बक्तेना पिछ्वयांचेन् व्युसृग्रीन् भविष् मृध्यांदर् by eGangotri

दीपवर्येगा देवेशि तेन सिद्धीश्वरो भवेत्। ग्रयं च नित्यदीपो हि त्रिशक्तिविषये मतः ॥३७२४॥ प्रायश्चित्तप्रसंगेन कीर्तितः परमेश्वरि । दीपे स्वदेवीं संपूज्य सांगां सावरराां ज्ञिवे ।।३७२६।। पश्चिमाभिमुखं दीपं पात्रं त्रिपलमात्रकम्। सौवर्णं राजतं ताम्रं मातिक्यं धान्यसंभवस् ।।३७२७।। दीपं कृत्वा प्रयत्नेन एकविशतितन्तुभिः। त्रिपंचनवरुद्रैश्च वितस्ति वीतिका मवेत् ।।३७२८।। गोघृतेन पलाष्ट्रेन ह्याजपान्तं समाचरेत्। चतुरंगुलमुच्छ्वायं सार्घांगुलसमुन्नतम् ।।३७२९।। एवं क्रमेगा देवेशि लक्षमागं जपेन्मनुम्। जपाद् दशांशं होमादि वीरपूजान्तकं तथा ।।३७३०।। बलिदानं ततः कुर्यात् सात्त्विकादिविभेदतः। म्रापदुद्धारएं जप्त्वा दोषहीनो नरो भवेत् ॥३७३१॥ एवं क्रमेगा देवेशि संपुज्य निजदेवताम्। यंत्रदोषविनिर्मुक्तः पुन यंत्रं च संग्रहेत् ।।३७३२।। उक्तसंस्कारमासाद्य स्वगुरूक्तेन वर्त्मना। एकतोलं द्वितोलं वा त्रितोलं पंचतोलकम् ।।३७३३।। रसतोलं वेदतोलं सप्ताष्टतोलकं तथा। दशतोलं सूर्यतोलं कलाभुवनतोलकम् ।।३७३४।। रदतोलं चतुःषष्टितोलकं शततोलकम्। ऊर्घ्वरेखं मूमिरेखं मेरुकंलाससन्निमम् ।।३७३५।। सबीजं कारयेद् यंत्रं बालाहस्तात्तु संग्रहेत्। तदभावे गुरो ईस्ताद् गृहीत्वा पूजयेत् सुखस् ।।३७३६।। महाविद्याविधी प्रोक्तं शेववेष्णवयोः शृणु । उपोध्य रजनीमेकामघोरं लक्षमात्रकम् ॥३७३७॥

जप्त्वा दशांशं जुहुयाद् दोषहीनस्ततो भवेत् । ब्राह्मणात् भोजयेत् पश्चात् दक्षिणाभिश्च तर्पयेत् ।।३७३८॥ सुदर्शनं वैष्णवे तु सौरे हंसं जपेत् शिवे । गाणपे श्रीहरिद्राख्यं जप्त्वा दोषात् विनाशयेत् ।।३७३९॥ श्रन्यथा कुक्ते यस्तु तस्य पातो भविष्यति । श्रयुतं जपमिच्छन्ति दिव्यौघाद्याश्च पार्वति । गोपनीयो विधिरयं सर्वथा सुखमिच्छता ।।३७४०॥

इति श्रीमदागमरहस्ये सत्संग्रहे मालायंत्रप्रतिष्ठादिकथनं नाम पंचदशः पटलः ॥ १५ ॥ ग्रादितस्त्रिचत्वारिशत् ॥४३॥

भ्रथ षोडशः पटलः।

महामालां दंतमालां महायंत्रं च कंकराम् ।

शतस्त्रीकेशसंभूतं व्याष्ट्रासनमतः परम् ॥३७४१॥

गृहीत्वा वीरवेषश्च रहस्यसाधनं चरेत् ।

त्रिविधं साधनं तच्च कथयामि क्रमादिह ॥३७४२॥

श्मशानं च चिता चेव तथैव शवसाधनम् ।

विद्यामात्रे भवेदेतदेतासां च विशेषतः ॥३७४३॥

श्रीविद्यायां कालिकायां तारिण्यां रोचिनी मनौ ।

वटुके वगलायां च साधनेयं प्रकीर्तिता ॥३७४४॥

तत्र देवि प्रवक्ष्यामि इमशानस्योग्रसाधनम् ।

येन साधनमात्रेण साधको भैरवो भवेत् ॥३७४५॥

त्र्र्यास्त्रिश्तितां देवतानां च शक्तयः ।

नामभि विश्रुता देवि तव भक्तचा परं श्रुताः ॥३७४६॥

तासां वक्ष्येऽधुना देवि इमशानसाधनं यथा ।

साधका येन जायंते सर्वसिद्धियुताः श्चिके अविश्वर्थ ।

विना श्मशानविधिना पूजायोगजपादयः । न सिद्धचंति वरारोहे कलौ भैरवशापतः ॥३७४८॥

त्रित्रिशत्कोटयो देव्यः सर्वाः प्रतालये स्थिताः ।

तत्र गत्वार्चयेद् यस्तुं स भवेद् भैरवोपमः ॥३७४६॥

तत्र घोरारवे दीव महाकालभ्युगालकैः।

सारमेयैश्र पक्षीन्द्रैः सोरगैः सपिज्ञाचकैः ॥३७५०॥

वेतालभूतप्रेतेश्च इमशानाचाँ करोति हि।

तत्र भूता महाघोरास्तच्चारा विघ्नकारकाः ॥३७५१॥

दिग्विदिक्षु भ्रमंत्येते देव्यष्टौ भूतभैरवाः।

तेऽसंमुखगताः क्रूरा भूताः कुर्वन्ति विप्रियम् ॥३७५२॥

भैरवा विघ्नकर्तारः शिवं कुर्वन्त्यसंमुखे ।

तेषां विधि प्रवक्ष्यामि गुद्धां सारोत्तमोत्तमम् ॥३७५३॥

रवौ चंद्रे कुजे सौम्ये गुरौ शुक्रे शनौ तथा।

पुनः सूर्ये भ्रमन्ते च दिग्विदिक्ष्वष्टभैरवाः ॥३७५४॥

पूर्वोत्तरेशानसमीरगाग्नि-

कीनाशरक्षोवरुगादि दिक्षु।

महोग्रचित्रांगदचंडभास्वान्

लोलाक्षमूतेशकरालभीमाः ॥३७५५॥

एवं भ्रमंते सततं इमशाने

दिग्भैरवा भूतयुता महेशि।

एतान् समभ्यच्यं वसेत् इमशाने

स्यादन्यथा घीभ्रमएां विपत्तिः ॥३७५६॥

भ्रथाहं पूजनस्यास्य वक्ष्ये पद्धतिमादरात्।

रात्रिशेषे समुत्थाय साधको विहिताह्निकः ॥३७५७॥

इमशानार्चनसंभारमेकीकुर्याद् विचक्षराः।

संपाद्य सामिषान्नं तु स्वगेहे बलिमादरात् ॥३७५८॥

मधुमाषमांसगुडमहिषच्छागकंजरै: तत् तद् बलिप्रयोगार्थं पिष्टं पुष्पाण्यनेकथा ॥३७५६॥ गोदुग्धसंप्लुतं सर्वं कृत्वा यामोत्तरं शिवे। शस्त्रपारिए निर्भयश्च तथा वीरजनैर्वृतः ॥३७६०॥ गत्वा इमशाने देवेशि सप्तपादं न लंघयेत्। सप्तपादमती वेला नोल्लंघ्या साधकैः क्वचित् ॥३७६१॥ तत्र संस्थाप्य संभारं प्रक्षाल्य चरगा करौ। त्रिराचम्य समासीनः स्वासने प्राग्गसंयमम् ॥३७६२॥ त्रिः कृत्वा मूलमंत्रस्य ऋष्यादीन् विन्यसेत् प्रिये। करांगयोः षडंगानि कृत्वा मूलं जपेत् तदा ॥३७६३॥ ग्रब्टोत्तरशतं देव्यं समर्प्यं च पुनः पठेत् । ध्यायन् देवीं वर्मनामसाहस्रंस्तोत्रमुत्तमम् ॥३७६४॥ देव्ये समर्प्य तत् कृत्यं सप्तपादमतीं तथा। वेलां इमशानीमुलङ्घ्य कृत्वा चिति प्रदक्षिग्गाम् ॥३७६४॥ चितावरुगदिग्मागे चोपविश्य महेश्वरि । प्राङ्मुखोदङ्मुखो वापि नमेन्मंत्रमिदं पठन् ॥३७६६॥ ज्वालाकरालवदने कल्पान्तदहनप्रिये। प्रारिएप्रारालयोद्भते नमस्ते चितिवासिनि ॥३७६७॥ चिते मेऽनुग्रहं कुर्विति वा पाठः कुत्रापि । इति नत्वा यथावारं प्रशस्तान् भूतभैरवान् । संपूज्य संमुखस्थाँश्र पृष्ठे कृत्वा क्रियां चरेत् ॥३७६८॥ देव्युवाच-

भगवन् भैरवान् भूतान् शापानुग्रहणक्षमान् । कथं संघारयेन्मंत्री तत्र संमुखपृष्ठयोः ॥३७६९॥

शिव उवाच—

एतद् देवि परं गुह्यं सूतभैरवसाधनम् । वक्ष्यामि तव मक्तचाहं न चाढ्येयं दुरात्मने ॥ ३१९७०॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Dean Digitized ॥ ३१९७०॥ भूतो रवौ पूर्वगतो महोग्र-श्वित्रांगदोऽप्युत्तरगो हिमांशौ । चंडस्तथेशानगतो महोजे भास्वानुदेद् भैरव एव वायौ ॥३७७१॥

लोलाक्षको विद्धगतः सुरेज्ये भूतेश्वरो दक्षिरागोऽसुरेज्ये।

करालको निऋ तिगो हि मंदे रवो पुनः पश्चिमगोऽपि भोमः ॥३७७२॥

एवं भ्रमंते सततं महेशि दिग्भैरवा भूतगराः इमशाने।

सुघां शुवृद्धौ शशिहोनपक्षे ते वैपरीत्येन शिवे भ्रमंते ॥३७७३॥

पौर्णमास्यां शिवे दृष्ट्वा ग्रहवारं ततोऽष्ट्रधा।
रिववारं च संगुण्य प्रथमं वा द्वितीयक्रम्।।३७७४॥
प्रथमं रिववारे तु महोग्रं पूर्वगं यजेत्।
द्वितीये पश्चिमे भीमं पूजयेत् शुक्लपक्षके ।।३७७५॥

कृष्णपक्षेऽचंयेद् भूतान् विपरीतक्रमेण तु । ग्रधुनैषां प्रवक्ष्यामि पूजासारं महेश्वरि । ग्रवाच्यं परशिष्याय कुचैलाय दुरात्मने ॥३७७६॥

इमशानपूजामंत्रस्य महाकालऋषिः स्मृतः । उष्णिक् छंद इति स्यातं देवी इमशानकालिका ॥३७७७॥

पराबीजं तटं शक्तिः कालीकीलकमीरितम् । धर्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्तितः ॥३७७८॥

षड्दीर्घकालीवीजेन षडंगानि समाचरेत्। ध्यात्वा देवीमुक्तरूपां संपूज्य मानसैस्तथा ॥३७७९॥

श्राज्ञामादाय देवेदयाः बाह्यपूजां समारभेत् । संशोध्यासनमंत्रेग् स्वासनं चेव वाग्यतः ॥३७८०॥ दिग्बंधं भूतशुद्धि च तथैव प्राग्गसंस्थितम्। मातृकादीन् प्रविन्यस्य स्वकल्पोक्तांश्च विन्यसेत् ।।३७८१।। सामान्यार्घ्यादिपात्राणि संस्थाप्य प्रोक्तवर्त्मना । चक्रे देवीं समाबाह्य यथालब्धोपचारकैः ।।३७८२।। संपूज्य वारक्रमतः पूर्वादिक्रमतोऽर्चयेत्। महोग्रादीन् स्वस्वदिक्षु स्वस्वज्ञक्तियुतास्तथा ।।३७८३।। पूर्वे मदालसायुक्तो महोग्रः संस्थितो रवौ। चित्रांगदश्च चित्रिण्या पूज्यः सोमे तथीत्तरे ।।३७८४।। चंडश्चंड्या सूमिपुत्रवारे पूज्यस्तथैकशे। भास्वान् प्रभावतीयुक्तो पूज्यो वायौ वुधे तथा ।।३७८४।। लोलाक्षोऽच्यंश्च लोलाक्ष्या वह्नौ नानोपचारकैः। मूतेशक्चेव मूतेक्या शुक्रे दक्षिए।संस्थितः । करालश्च करालिन्या मंदे पूज्यक्च नैऋ ते ।।३७८६।। भीमञ्च भीमरूपिण्या प्रतीच्यां च रवौ पुनः। एवं वारक्रमेराव गंधाक्षतप्रसूनकैः ।।३७८७।। विलिभिश्चैव संपूज्य संप्रार्थ्य च पुनः पुनः । तीक्ष्णदंष्ट्रेति मंत्रेण ततः पूजां समारमेत् ॥३७८८॥ स्वकल्पोक्तविधानेन पूजियत्वा महेश्वरोम्। सांगां सावरराां चैव विल दद्यात् पुनस्तथा ।।३७८९।। देवेम्यश्च यथाम्नायं संतर्प्यं वलिदेवताः। तरुगोल्लाससंयुक्तो मंत्रं संकल्पपूर्वकम् ॥३७६०॥ प्रजपेत् तत्र विधिवत् ध्यायन् देवीमनन्यधीः। सम्प्रां । जाजन्यं बहेब्द्रे । तमब्ब क्वकारिकस्ं रा ३७ हिण्या

पिठत्वान्ते दशांशेन चिताग्नौ जुहुयात् ततः ।
कल्पोक्तेन च द्रव्येग् तद्दशांशेन तपंग्पम् ।।३७६२।।
मार्जनं तद्दशांशेन तद्दशांशेन मोजनम् ।
वीरागां चैव शक्तीनां चक्रपूजानुसारतः ।।३७६३।।
तेम्यश्च दक्षिगां दत्वा संस्तुत्य विविधेः स्तवैः ।
एवं समाप्य विधिवद् विसृजेत् परदेवताम् ।।३७६४।।
परानंदमयो वीरो लमते वांछितं फलम् ।
प्रथोच्यते महादेवि चितासाधनमुत्तमम् ।।३७६४।।
प्रसंस्कृता चिता ग्राह्या वीरसाधनकर्मिण् ।
चांडालादिषु संप्राप्ता केवलं शोष्रसिद्धिदा ।।३७६६।।

वीरतंत्रे देवीवाक्यम्-

महावीरक्रमं देव सूचितं न प्रकाशितम् । कथयस्य महादेव सर्वसिद्धिप्रदं महत् ।।३७६७।।

शवः-

सर्वसिद्धिप्रदं साक्षात् सर्वदेवनमस्कृतस् ।
सर्वपापहरं देवि सर्वरोगिवनाशनम् ।।३७६८।।
यिस्मत् परिश्रमेणापि नृणां सिद्धिः समीरिता ।
जानिद्भस्तत्र कर्तव्या साधके वीरसाधना ॥३७६६।।
मयमुक्तैश्च शुचिमिः सर्वसिद्धिममीप्सुमिः ।
नानया दुलंभं किचित् साधकस्य समीहितस् ॥३८००॥
ब्रह्मविष्णुशिवादीनां दिक्पालानां च मामिनि ।
भैरवाणां च सर्वेषां गन्धर्वाणां च योगिनास् ॥३८०१॥
शश्वत् सिद्धिप्रदं देवि सर्वेषामालयं महत् ।
नान्यत् सिद्धिप्रदं देवि वोरसाधनर्वाजतस् ॥३८०२॥
महाबलो महावीरो महासाहिसकः शुचिः ।
महास्वच्छो दयावांश्च सर्वभूतिहते रतः ॥३८०३॥
СС-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

तेषां कृते मया देवि कथितं वीरसाधनम् ।
घटीबंधेन वस्त्रं वै मूलेन परिधाय च ॥३८०४॥
तद्बाह्येन पुनर्वंस्त्रं मूलेनांगिवलिपनम् ।
कृतोष्णोषश्च मूलेन सिंदूरेगोध्वंपुंड्रकम् ॥३८०४॥
इष्टदेवं गुरुं नत्वा यात्राप्रहरमध्यतः ।
कार्या च साधकैः साधँ हृदि मंत्रं परामृत्रान् ॥३८०६॥
ग्रक्षुब्धो भुक्तमोज्यस्तु यदि स्याद् वोरसाधकः ।
दिव्यः पीत्वा पशुस्तत्राभुक्त्वा साधनमाचरेत् ॥३८०७॥
ग्रष्टम्यां च चतुर्दश्यां पक्षयोद्दमयोरिष ।
भौमवारे तिमस्त्रायां साधयेत् सिद्धिमुक्तमाम् ॥३८०८॥
उपचारं समादाय पीत्वामृतरसं तथा ।
सामिषान्नं गुडं छागं सुरां पिष्टकमेव च ।
नानाफलं च नैवेद्यं स्वस्वकल्पोक्तसाधितम् ॥३८०६॥

योगिनीहृदये—

ग्रस्त्रांतमूलमंत्रेग प्रोक्षगं यागमूमिषु । गुरुपादरजो ध्यात्वा गएोशं वद्रकं तथा ॥३८१५॥ योगिनीं मातृकां चैव वामपादपुरःसरम्। ये चात्र संस्थिता देवा राक्षसाक्च भयानकाः ॥३८१६॥ पिशाचाः सिद्धयक्षाश्च गंधर्वाप्सरसां गर्गाः । योगिन्यो मातरो भूताः सर्वाइच खेचरस्त्रियः ॥३८१७॥ सिद्धिदास्ते भवंत्वत्र तथा च मम रक्षकाः। प्रग्राम्य मनुनानेन पुष्पांजलित्रयं क्षिपेत् ॥३८१८॥ इमशानाधिपति पश्चाद् भैरवं कालभैरवस् । महाकालं यजेद् यत्नात् पूर्वादिः दिक्चतुष्टये ॥३८१६॥ पाद्यादिभिश्च मंत्रज्ञी बींल पश्चान्निवेदयेत्। शब्दबोजं च तत्पश्चात् इमशानाधिपतत्परम् ॥३८२०॥ इममन्ते सामिषान्नं बील गृह्ण पदं ततः। गृह्ण गृह्णापय युगं विघ्ननिवार एां ततः ॥३८२१॥ कुरु सिद्धि मे समुक्तवा प्रयच्छ स्वाहयान्वितस् । ताराद्यमनुना देवि प्रथमो बलिरोरितः ॥३८२२॥ मायान्ते भैरवात् पश्चाद् भयानकपदं ततः। पूर्ववद् बलिमाहृत्य दक्षिएो बलिमाहरेत् ॥३८२३॥ हूमन्ते च महाकालात् पश्चात् पूर्ववदुद्धरेत्। पश्चिमे कालदेवाय प्रएावाद्येन कल्पयेत्। शब्दान्ते कालशब्दान्ते भैरवान्ते पदं ततः ॥३८२४॥ इमशानाधिप इत्येवं पूर्ववच्चोत्तरे हरेत्। चितामध्ये ततो दद्याद् बलित्रयमनुत्तमस् ॥३८२५॥

कालरात्रि महाकालि कालिके घोरनिस्वने। गृहाणोमं बॉल मातर्देहि मे सिद्धिमुत्तमास्। हैं कालिकायं स्वाहेति मंत्रेगानेन देशिकः।।३८२६॥ CCD. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri कालिकायं बांलं दत्वा भूतनाथाय दापयेत्।

शब्दान्ते भूतनाथांते रमशानाधिप इत्यपि ॥३८२७॥

हूं सर्वगरणनाथाय रमशानाधिप इत्यपि ।

प्रण्वाद्येन मंत्रेण दापयेद् विलमुत्तमम् ।

ततिश्चतापिश्चमतः एकीकृत्यास्थिसंचयम् ॥३८२८॥

ॐ ह्रीं भ्राधारशक्तये नम इत्यमुना पुनः ।

पंचगव्येन संप्रोक्ष्य भूजें वा वटपत्रके ॥३८२६॥

हसौरिति लिखेत् मंत्रं स्थापयेत् तत्र तत्पुनः ।

कंवलाद्यासनं तत्र विन्यस्याधारशक्तये ॥३८३०॥

नम इत्यमुना तत्र ह्रीमाद्यां च प्रपूजयेत् ।

वीरादंनेन देवेशि उपविश्यासने ततः ॥३८३१॥

ग्रस्यायमर्थः -- भूजंपत्रादौ तत्तत्कल्पोक्तपीठमंत्रं लिखित्वा, तत्र व्याघ्रचर्मादि-पीठमास्तीर्यं तत्र वीरासनक्रमेग्गोपविश्य वीरादंनमंत्रेग् चतुर्दिक्षु रक्षां कुर्यात्। वीरादंनमंत्रस्तु --

क्र्चंबीजद्वयं देवि मायायुग्मं ततः परम् ।
कालिके घोरदंद्द्रे च प्रचण्डे चण्डनायिके ॥३८३२॥
दानवान् दारयेत्युक्त्वा हतेति द्वितयं ततः ।
परवोरं महाविष्टनं छेदय द्वितयं ततः ॥३८३३॥
वर्मास्त्रान्ते द्विठान्तोऽयं वीरार्दनमनु मंतः ।
ग्रनेन मंत्रितं लोष्ठं दशदिक्षु विनिक्षिपेत् ॥३८३४॥
तन्मध्ये भैरवो मूत्वा न विष्टनैः परिमूयते ।
यदि प्रमादाद् देवेशि साधको मयविह्वलः ॥३८३५॥
ततस्तैस्तैः सुहृद्वर्गे रक्षितो नामिसूयते ।
ग्रक्नेन्दुसितवाट्यालतूर्लिनिमितवित्तकम् ॥३८३६॥
गर्ते प्रदीपं संस्थाप्य ग्रस्त्रं तत्र प्रपूजयेत् ।
हते तिस्मन् महादीपे विष्टनैक्च परिभूयते ॥
हते तिस्मन् महादीपे विष्टनैकच परिभूयते ॥

स्रतः संरक्षयेद् देवि कुलदीपं प्रयत्नतः । संकल्पं च ततः कुर्याद् यथाविधि विधानतः ॥ ३८३८॥ प्रगावं तत् सदद्येह मासपक्षतिथीरपि । गोत्राद्यमुकशर्माहमस्यां रात्रौ ततोऽमुक ॥३८३६॥ मंत्रस्य सिद्धिकामोऽहं चिताधिकरणं जपम् । करिष्ये त्वेवमथ च संकल्प्य सुसमाहितः ॥३८४०॥ तत्तत्कल्पविधानेन भूतशुद्धचादिकं चरेत् । षोढां वा चेतरान्वापि विन्यस्य पूजयेत् ततः ॥३८४१॥

यामले च-

ततः पंचोपचारेण पुरतो देवतां यजेत् ।

निमील्य चक्षुषी पश्चाद् देवं ध्यात्वा मनुं जपेत् ॥३८४२॥

एकाक्षरो यदि भवेद् दिक्सहस्रं ततो जपेत् ।

द्वयक्षरे चाष्टसाहस्रं त्र्यक्षरे चायुतार्थक्ष् ॥३८४३॥

ततः परं तु मन्त्रज्ञो गजान्तकसहस्रकम् ।

गजांतकसहस्रकमण्टोत्तरसहस्रकम् ।

निशार्द्वात्तु समारभ्य उदयान्तं समाचरेत् ॥३८४४॥

यद्यसह्यभयं नेत्रे कर्णे वस्त्रेण बंधयेत् ।

ततोऽर्घरात्रपर्यन्तं यदि किचिन्त लक्ष्यते ।

जयदुर्गाख्यमनुना तेनैवार्यं च सर्षपात् ॥३८४४॥

जयदुर्गाख्यमनुना तेनैवार्यं च सर्षपात् ॥३८४४॥

क्षिपेदिति शेषः।

जयदुर्गामन्त्रस्तु-

प्रग्गवं च ततो दुर्गे युगलं रक्षिग्गिति च ।
स्वाहान्तो दशवर्गोऽयं जयदुर्गामहामनुः ।।३८४६।।
ॐ तिलोऽसि सोमदैवत्यो गोसवस्तृष्तिकारकः ।
पितृग्गां स्वर्गदाता त्वं मर्त्यानां मम रक्षकः ॥३८४७॥

CC-0. Lautsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

भूतप्रेतिपशाचानां विघ्नेषु शांतिकारकः ।

इति क्षिप्त्वा तिलांस्तत्र चतुर्भागैः शिवादितः ॥३८४८॥

शिवादित ईशानादित एकैकं भागं चतुर्दिक्ष्वत्यर्थः ।

ततः सप्तपदं गत्वा पुनस्तत्रैव संविशेत् ।
देवीं संपूज्य गतभीः प्रजपेच्च मनुं ततः ॥३८४६॥

तावच्चैव जपेद् देवि यावत् सिद्धिः प्रजायते ।
भयं तु स्वप्नवद् हेयं परेऽिह्न शेषमाचरेत् ॥३८५०॥
वरं वरय इत्युक्ते साधकस्थिरमानसः ।
सत्यं च कारियत्वा तु वरयेद् वरमुक्तमम् ॥३८५१॥

जपादौ तु बिलं दत्वा पश्चादिप बिलं हरेत् ।
जपान्ते जपमध्ये वा देहि देहोति भाषिते ॥३८५२॥

तदापि च बींल दद्यान्महिषं वापि छागलम् । यदा बींल प्रार्थयते नरं कुंजरमेव वा ॥२८४३॥ दिनान्तरे प्रदास्यामि स्वीकृत्य स्वगृहं व्रजेत् । ग्रपरेऽह्मि ततो दद्यात् पिष्टेन नरकुंजरान् ॥३८४४॥

पिष्टेन यवोद्भवेन धान्योद्भवेन वेत्यर्थः।

यच्च तंत्रान्तरे—

यवस्रोदमयं वापि धान्यो. द्भवमयं च वा।
चन्द्रहासेन विधिवत् तन्मंत्रेगा च घातयेत् ॥३६५५॥
येषां च यजमानोऽहं ते गृह्णन्तु बलि त्विमम्।
गृहं गच्छेत् स्वसुहृदा सार्वं संहृष्टमानसः ॥३६५६॥
परेऽह्मि नित्यमाचार्यः पंचगव्यं पिबेत् ततः।
बाह्मगान् मोजयेत् तत्र पंचिवशतिसंख्यकान् ॥३६५७॥
सप्तपंचिवहोनान् वा क्रमेगांव दशाविध ।
अवत्वा च बांधवः सार्वं निवसेदुत्तमस्थले ॥३६५६०॥
СС-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized हु, ५६०॥

समाप्य साधनं देवि दक्षिगां विभवाविध । गुरवे गुरुपुत्राय तत्पत्न्यै वा निवेदयेत् । सम्यक् सिद्धै कमंत्रस्य नासाध्यं विद्यते क्वचित् ।।३८४९।।

इति चितासाधनम् ।

ग्रथ शवसाधनम्—

तत्र स्थाननियममाह भावचूडामणौ—

शून्यागारे नदीतीरे पर्वते निर्जने वने ।
बिल्वमूले इमशाने वा तत्समीपे रणस्थले ॥ द३६०॥
ग्रष्टम्यां च चतुर्दश्यां पक्षयोष्ठभयोरिष ।
भौमवारे तिमस्रायां साधयेत् सिद्धिमृत्तमाम् ॥ ३ द६१॥
मांसमक्तं च बल्यर्थं धूपदीपादिकं तथा ।

तिलाः कुशाः सर्वपाश्च स्थापनीयाः प्रयत्नतः ॥३८६२॥

तथा च वीरतंत्रे-

पूर्वाक्तमुपहारादि समादाय तु साधकः ।
साधयेत् स्विहतां सिद्धि साधनस्थानमाश्रितः ।।३८६३॥
घटोबंधादिसंयुक्तो सिदूरांकितमालकः ।
ग्रावेक्षकः परिवृतः साधंप्रहरतः पुनः ।।३८६४॥
सामान्यार्घं विधायाथ पूर्वाशाभिमुखः सुधीः ।
फडंतं मूलमुच्चार्यं पंचगव्येन प्रोक्षयेत् ।।३८६५॥
भूमि गुरुं गणोशं च योगिनीं वदुकं तथा ।
पूर्वाद्याशासु संपूज्य नमस्कृत्य पुनस्तथा ।।३८६६॥
लिखेद् वीरार्दनं भूमौ पूर्ववत् सुसमाहितः ।
वीरार्दनांकिते चात्र मायामोहौ न विद्यते ।।३८६॥।
य चात्रेत्यादिमंत्रेग् भूमौ पुष्पञ्चलित्रयम् ।
इमशानाधिपतीनां तु पूर्ववद् बिलमाहरेत् ।।३८६८।।
इसशानाधिपतीनां तु पूर्ववद् बिलमाहरेत् ।।३८६८।।

श्रघोराख्येन मंत्रेग् बलिसाधनमाचरेत्। सुदर्शनेन वा रक्षा उभाभ्यां वा प्रकल्पयेत् ॥३८६६॥ माया स्फुरद्वयं भूयः प्रस्फुरद् द्वितयं पुनः । घोरघोरतरेऽत्यन्ते तनुरूपपदं पुनः । चटयुग्मं तदन्ते स्यात् प्रचटद्वितयं ततः । ३८७०॥ कहयुग्मं वमद्वन्द्वं ततो बंधयुगं पुनः। घातय द्वितयं वर्म फडन्तः समुदाहृतः ॥३८७१।। पंचाशदेकवर्गोऽयमघोरास्त्रमहामनुः। हालाहलं समुद्धृत्य सहस्रारस्वरूपकम् ।।३८७२।। वर्मास्त्रांतं महामंत्रं कीर्तितं सुदर्शनस्य वै। मंत्रांते रक्ष रक्षेति हृदि हस्तं निधाय च ।।३८७३।। कृत्वात्मरक्षां प्रपठन् त्रिवारं साधकोत्तमः। भूतशुद्धचादि षोढान्तं न्यासजालं विधाय च।।३८७४।। जयदुर्गाख्यमंत्रेगा सर्षपान् दिक्षु निक्षिपेत् । तिलोऽसीति च मंत्रेग् तिलानिप विनिक्षिपेत् ।।३८७४।। यिष्टिविद्धं शूलविद्धं खड्गविद्धं पयोमृतम्। रज्जुविद्धं सर्पदव्टं चाण्डालं चामिभूतकम् ॥३८७६॥ तक्णं सुन्दरं शूरं रएो नष्टं समुज्ज्वलम्। पलायनविशून्यं च संमुखे ररावित्तनम् ॥३८७७॥ शवमेवंविधं प्रोक्तं तदस्यच्च विवर्जयेत्। स्वेच्छामृतं द्विवर्षं च वृद्धं स्त्रियं द्विजं तथा ।।३८७८।। श्रन्नामावमृतं कुष्ठं सप्तरात्रोर्ध्वगं तथा। एवं चाष्टविधं त्यक्तवा पूर्वोक्तान्यतमं शवम् । गृहोत्वा मूलमंत्रेग् पूजास्थाने समानयेत् ॥३८७६॥ कालीतन्त्रेऽपि-

भ्रव्यक्तिंगं कुष्ठं वा वृद्धं मिन्नं शवं त्यजेत् । दुभिक्षेण मृतं वापि तथा पर्युषितं शवम् ॥३५५ स्त्रिशीन CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by exampleri स्त्रीजनं चेहशं रूपं सर्वथा परिवर्जयेत् । ब्राह्मणं गोमयं त्यक्त्वा साधयेद् वीरसाधनम् ॥३८८१॥ महाशवाः प्रशस्ताः स्युः प्रधाने वीरसाधने । क्षुद्राः प्रयोगकर्तृं णां प्रशस्ताः सर्वसिद्धये । चाण्डालाद्यमिसूतं वा शोघ्रं सिद्धिफलप्रदम् ॥३८८२॥

वोरतंत्रे, भावचूड़ामणौ च-

प्रगावाद्यस्त्रमंत्रेगा शवस्य प्रोक्षगां चरेतु । प्ररावं कूर्चबीजं च मृतकाय नमस्तु फट् ।।३८८३।। पुष्पाञ्जलित्रयं दत्वा प्ररामेत् स्पर्शपूर्वकम् । रे वीर परमानन्द शवानन्द कुलेश्वर। म्रानन्दभैरवाकार देवीपर्यंकशंकर ।।३८८४।। वीरोऽहं त्वां प्रपद्यामि उत्तिष्ठ चण्डिकार्चने । प्रराम्यानेन मन्त्रेरा क्षालयेत् तदनंतरम् ।।३८८४।। तारं शब्दं च मृतकाय नमोऽन्तं समुच्चरन्। शवस्नानस्य मंत्रोऽयं तत् स्नानं गंधवज्जले: ।।३८८६।। संप्रोक्ष्य घूपैः संघूप्य गंधादि प्रविलिप्य च । रक्ताक्तो यदि देवेशि मक्षयेत् कुलसाधकम् ।।३८८७।। गत्वा शवस्य सान्निष्यं घारयेत् कटिदेशतः । यद्युपद्रावयेदस्य दद्यात् निष्ठीवनं मुखे ।।३८८८।। पुनः प्रक्षालितं कृत्वा जपस्थानं समानयेत् । कुशशय्यां परिस्तोर्यं तत्र संस्थापयेत् शवस् ॥३८८६॥ एलालवंगकर्पूरजातीखदिरसार्द्रकैः। तांबूलं तन्मुखे दत्वा शवं कुर्यादघोमुखस् ॥३८६०॥ तत् पृष्ठं चन्दनेनापि प्रलिप्य प्रयतः शुचिः। बाहुमूलादिकट्यंतं चतुरस्रं विभावयेत् ।।३८६१।। मघ्ये पद्मं चतुर्द्वारं दलाष्टकसमन्वितम्। प्रोठमंत्रं लिखेत तत्र तत्तत् कल्पविधानतः ॥३८६२॥
CCO. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

ततश्चे ग्येमजिनं कंबलांतरितं न्यसेत्। द्वादशांगुलमानेन यज्ञकाष्ठानि दिक्षु च ।।३८९३।। संस्थाप्य पूजयेत् तत्र इन्द्रादि दशदेवताः। विषमिन्द्रपदं प्रोच्य सुराधिपतये ततः। इमं बलि गृह्ध युग्मं गृह्धापय युगं ततः ।। ३८९४।। विघ्निनवारगां कृत्वा सिद्धि प्रयच्छ ठद्वयम् । श्रनेन मनुना पूर्वं बलि दद्याच्च सामिषम् ।।३८९४।। स्वस्वनामादिकं दत्वा पूर्ववद् बलिमाहरेत्। सर्वेषां लोकपालानां ततः साधकसत्तमः ॥३८९६॥ शवाधिष्ठातृभूतेम्यो बलि च सुरया सह। चतुःषिटयोगिनीभ्यो डाकिनीभ्यो बॉल दिशेत्।।३८६७।। पूजाद्रव्यं सन्तिधौ च दूरे चोत्तरसाधकम्। संस्थाप्यासनमभ्यच्यं स्वमन्त्रान्ते त्रपां ततः ॥३८६८॥ फडित्यनेन मंत्रेगा तत्राश्वारोहणं विशेत्। कुशान् पादतले दत्वा शवकेशान् प्रसार्य च ॥३८९९॥ हढं निबध्य जुटिकां कृतसंकल्पसाधकः । शवोपरि समारुह्य प्रागायामं विघाय च ॥३६००॥ वीरार्दनेन मंत्रेग दिक्षु लोष्टान् समाक्षिपेत्। ततो देवं च संपूज्य उपचारैः सुविस्तरैः ॥३६०१॥ शत्रास्ये विधिवद् देवि देवताप्यायनं चरेत्। उत्तथाय संमुखे स्थित्वा पठेद् मक्तिपरायगाः ॥३६०२॥ वशो मे भव देवेश ममामुकपदं ततः। सिद्धि देहि महामाग भूताश्रमपदांवर ॥३६०३॥ मूलं समुच्चरत् मंत्री शवपावद्वयं ततः। पहुसूत्रेण बन्नीयात तदोत्त्थात , न हात्यते हासि दे र क्या

मीम मीरु भयाभाव मन्यलोचन मावुक ।

त्राहि मां देवदेवेश शवानामधिपाधिप ॥३६०६॥

इति पादतले तस्य त्रिकोगां चक्रमुल्लिखेत् ।

तदोत्त्थातुं न शक्नोति शवोऽपि निश्चलो भवेत् ॥३६०६॥

ग्रथ स्वमूलमंत्रं च संस्मरन् साधकोत्तमः ।

उपविश्य पुनस्तस्य बाहू निःसार्य पार्श्वयोः ।

हस्तयोः कुसुमांस्तीर्य पादौ तत्र निधापयेत् ॥३६०७॥

श्रोष्ठौ तु संपुटौ कृत्वा स्थिरचित्तः स्थिरेन्द्रियः ।

सदा देवीं हृदि ध्यात्वा मौनी तु जपमाचरेत् ॥३६०६॥

श्रथवाऽऽरंभकालात् यावच्चोदयते रविः ॥३६०६॥

यद्यर्धरात्रिपर्यन्तं यदि किचिन्न लक्षते ।

तदा पूर्ववदध्यीदि सप्तपादगतानि च ॥३६१०॥

पूर्ववत् चितासाधनोक्तवत् । ग्रध्यं तिलसर्पपविकिरणं सप्तपादगमनं च । जयदुर्गामंत्रेण तिलोसिमंत्रेणेति ।

कृत्वोपविश्य तत्रैव जपं कुर्यादनन्यघीः ।
चलासनाद् मयं नास्ति मये जाते वदेत् ततः ॥३६११॥
यत् प्रार्थयसि देवेशि दातव्यं कुंजरादिकम् ।
दिनान्तरे प्रदास्यामि स्वनाम कथयस्व मे ॥३६१२॥
इत्युक्त्वा संस्कृतेनैव निर्भयस्तु पुनर्जपेत् ।
पुनश्चेत् मधुरं वक्ति वक्तव्यं मधुरं ततः ॥३६१३॥
तदा सत्यं कारियत्वा वरं संप्रार्थयेत् ततः ।
यदि सत्यं न कुर्याच्च वरं वा न प्रयच्छति ।
तदा पुनर्जपेद् धीमानेकाग्रं मानसं जपेत् ॥३६१४॥

ग्रस्यार्थः —यदि जपकाले ग्राकाशगत्या कुंजरादिकं प्रार्थयेत् तदा दिनान्तरे दास्यामीति मम स्थाने स्वनाम कथयेत्युक्त्वा पुनर्जपेत् । यदि स्वनाम मधुरं कथयित तदा ग्रमुकं कार्यं सत्यं कुरु, कृते सत्ये वरं प्रार्थयेत् । यदि सत्यं न करोति वरं वा न प्रयच्छिति तदा पुनर्जपेदिति ।

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

नररूपं विना तत्र देवोऽपि नोपसपंति। यत्नतस्तेन बोद्धव्यं नरो वा देवयोनयः ।।३९१५।। माता मातुः स्वसा वापि मातुलानो तथैव च। ग्रागत्य विघ्नं कुरुते मायया साघविग्रहम् ॥३६१६॥ उत्तिष्ठ वत्स ते कार्यं सर्वं जातं न संशयः। प्रमातसमयो जातस्त्वत् पिता क्रोशते गृहे ।।३६१७।। प्रायो मत्सरिएगो लोका राजानो दंडधारिएए:। कदाचित् केनचित् हष्टस्तदा कि ते भविष्यति ॥३६१८॥ इत्यादि विविधे विकयै ने जपं परिसंत्यजेत्। मृताः पितृगगास्तत्र दूरदेशनिवासिनः ॥३६१६॥ बांधवास्तत्र ग्रायान्ति देवरूपधरास्तथा । स्त्रीपुत्रसेवकादींश्च गृहीत्वा नीयते परै: ॥३६२०॥ वदन्ति पुत्रकाः सर्वे भ्रातरो निजसेवकाः । निजकांतांगसंस्पर्शं वस्त्राद्याभरगादिकम् ॥३६२१॥ गृहीत्वा नीयते पत्नी पालकस्तद् भयं त्यजेत्। दिवसे यत्तु वा शंका सैव तत्र प्रजायते ।।३६२२।। यदि न क्षुम्यते तत्र तदा कि वा न लम्यते। स्त्रीरूपधारिगाी देवी द्विजरूपधरः पुमान् ।।३६२३।। वरं गृह्हिति शब्दं वे त्रिवारान्ते वरं लभेत्। साधुनासाधुना वापि योषिच्चेत् वरदायिनी ।।३६२४।। तदा वीरपतेस्तस्य किं न सिध्यति भूतले। निष्पापपुरुषदचेव कुले चेव तु संस्कृतः ॥३६२४॥ ग्रसंस्कृतवरा देवि पापयुक्ता न संशयः। संमुखेऽसंमुखे वापि संस्कृतं विक्त चापरस् ।।३६२६।। सेव देवी न संदेहो स देवी भैरवः स्वयम्। न चेद् देवी मवेच्चेव मायापुटितविग्रहात् ॥३६२७॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

वरयेन न वरं तत्र न वरं प्रवदेत क्वचित । स चेत् संस्कृतमाख्यानं वक्ति वक्तव्यमीदृशम् ।।३६२८।। न चेत् स्वयं लौकिकोक्तचा वरं ग्राह्यं निराकुलम्। ग्रथवा उत्कटं किंचित् लम्येताप्यात्मनो हितम् । शब्दो वा जायते सम्यगमृतं वापि लम्यते ।।३६२६।। विचार्य तद्गृहीतव्यमेवं दिक् परिकोतितः। देवाकृतयो बहुधा नराद्याः कृतयः क्वचित्।।३६३०।। ग्रवश्यं तत्र भेतन्यं न तत्र प्रत्ययः क्वचित् । भैरवा वदुकाव्चेव कुलशास्त्रपरायणाः ॥३६३१॥ एतत् शास्त्रप्रसंगेन कृत्वा कुटिलविग्रहान्। पुत्रो सूत्वा वारयेत् तं नारी सूत्वा विमोहयेत् ।।३६३२॥ तस्मात् तत्त्वपरो वीरो विचारे यत्नमाचरेत्। सत्ये कृते वरं लब्ध्वा संत्यजेच्च जपादिकम् ॥३९३३॥ फलं जातिमिति ज्ञात्वा जुटिकां मोचयेत् ततः। शवं प्रक्षाल्य संस्नाप्य मोचयेत् पादबंधनम् ॥३६३४॥ पादचक्रे मार्जियत्वा पूजाद्रव्यं जले क्षिपेत्। शवं जलेऽथवा गर्ते प्रक्षिप्य स्नानमाचरेत्। ततस्तु स्वगृहे गत्वा बील दत्वा दिनांतरे ॥३६३४॥

विलमंत्रवच—

ग्रियमरात्रौ तु येषां देवानां यजमानोऽहं ते गृह्धन्तु मया दत्तं बिलिमिमम् ।

ग्रिथ ये र्याचितश्चाश्वनरकुंजरशूकरात् ।

दत्वा पिष्टमयानेव कर्तव्यं समुपोषरणम् ॥३६३६॥

तंत्रान्तरे—
यवक्षोदमयं वापि शालिक्षोदमयं तु वा ।
यवक्षोदमयं वापि शालिक्षोदमयं तु वा ।
चन्द्रहासेन विधिवत् तत्तन्मंत्रेण घातयेत् ॥३६३६॥
परेऽह्मि नित्यमाचार्यः पंचगव्यं पिबेत् ततः ।
बाह्मणान् भोजयेत् तत्र पंचिवशितसंख्यकान् ॥३६३८॥
विटिश्ते. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

सप्तपंचिवहीनान् वा क्रमेग्रैव दशाविध। ततः स्नात्वा च भुक्त्वा च निवसेदुत्तमे स्थले ॥३६३६॥ यदि न स्यात् घिप्रभोज्यं तदा निर्धनतां ब्रजेत्। यदा चेन् निर्धनत्वं स्यात् तदा देवी प्रकुप्यति ॥३६४०॥ त्रिरात्रमथ षड्रात्रं नवरात्रं तु गोपयेत्। स्त्रीशय्यां यदि गच्छेत् तदा व्याधि विनिर्दिशेत् ॥३६४१॥ गीतं श्रुत्वाथ विधरो निश्चक्षुनु त्यदर्शनात् । यदि वक्ति दिने वाक्यं तदास्य मूकता भवेत् ॥३६४२॥ पंचदशदिनांता हि देहे देवस्य संस्थितिः। न स्वीकुर्यात् गंधपुष्पं बहिर्याति यदा तदा ॥३६४३॥ तदा वस्त्रां परित्यज्य गृह्णीयाद् वसनांतरम् । गोब्राह्मणानां देवानां निंदां कुर्यात् न जातुचित्। दुर्जनं पतितं क्लीबं न स्पृशेच्च कदाचन ॥३६४४॥ देवगोबाह्म ए। दींइच प्रत्यहं तु स्पृशेत् शुचिः। प्रातिनत्यक्रियान्ते तु बिल्वपत्रोदकं पिबेत् ॥३६४५॥ ततः स्नायात् तु तीर्थादौ प्राप्ते षोडशवासरे । स्वाहांतं मूलमुच्चार्य तर्पयामि नमः पदम् ॥३६४६॥ एवं शतत्रयादूष्वं देवान् संतर्पयेज्जलः। मुनितर्पं श्राच्यस्य न स्याद् देवस्य तर्प एम् ।।३६४७।। तृप्तिरित्यर्थः।

इत्यनेन विधानेन सिद्धि प्राप्नोति निश्चितम् । इह भुक्त्वा वरान् मोगानंते याति हरेः पदम् ॥३६४८॥ ग्रसांगं सांगमिप वा निष्फलं सफलं च वा । कृत्वा साधनमेवैतत् शक्तेः प्रियतरो भवेत् ॥३६४६॥ श्वामावे श्मशाने वा कर्तव्या वीरसाधना । यो मावो यस्य वे प्रोक्तस्तै मीवे यंदि नाचंयेत् ॥३६४०॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by economic ईहराक्रमयोगेन भ्रष्टो भवति साधकः । नोपिदशेत् तत्र भावं न पूजां तत्र संदिशेत् ॥३६५१॥ रमशानान्तं गृहोतस्तु तावत् शुद्धिः प्रजायते । ततश्च दक्षिणां दत्वा कुर्याच्छिद्रावधारणम् ॥३६५२॥

इति शवसाधनम्।

ग्रन्यच्च शक्तिसंगमे—

ग्रत्रैव मृतके देवि पंचवर्षमिते शिवे। इयं च साधना कार्या महावीरमतोदिता ॥३६५३॥ तत्रौवं च विशेषो हि यथावदिमधीयते। चतुष्पथे नदीतीरे इमशाने वापि पार्वति ॥३९५४॥ ततो बलिप्रयोगार्थं पिष्टं पुष्पाण्यनेकथा । मधुमाषमांसगुडमहिषच्छागकुंजरैः ॥३६५५॥ सामिषान्नं च संगृह्य गोदुग्धं गृह्य वै तथा। सार्घयामोत्तरं रात्रौ गच्छेद् वीरसमावृतः ॥३९५६॥ श्रघोमुखं तु तं कृत्वा प्रक्षाल्य विधिना सुघीः। हं ह्रां ह्रीमिति तदावाहयेदुच्चरन् मनुम् ।।३६५७।। मायाबीजेन यजनं हंबीजेनोपवेशनम्। तस्योपरि महेशानि पूर्वोक्तक्रमयोगतः ।।३६५८।। देवोध्यानादिकं कृत्वा ततो बल्यादिकं चरेत्। यथोक्तेन च द्रव्येगा गोदुग्धेनोत्सृजेद् बलिम् ॥३९५९॥ इमशानजंभदेवाय भैरवाय ततः परस्। कालभैरवनाम्ने च कालिकायं पुनस्तथा ॥३६६०॥ पूर्वादि विश्व संपूज्य पाद्यगंधप्रसूनकैः। श्रनेन मनुना दद्याद् बील सर्वत्र साधकः ।।३६६१॥ प्रगावं कूर्चमुच्चार्य इमशानेतिपदं ततः। जंभदेताः इसं स्पेबत्वा सामिषान्तं बलि ततः ॥३६६२॥ जंभदेताः इसं स्पेबत्वा Allection, New Delhi. Digitized by eGangotri

गृह्ण गृह्णापय युगं सर्वविघ्ननिवारराम् । कृत्वा सिद्धि प्रयच्छेति द्वन्द्वं स्वाहा ततो विलम् ॥ ३६६३॥ इमशानजंभदेवाय दत्वा च दक्षिएो ददेत्। तारं मायां भैरवान्ते मयानकपदात् पुनः ।।३६६४।। इमशानाधिपशब्दान्ते इममादि च पूर्ववत् । ततश्च पश्चिमे भागे प्ररावं कूर्चमुच्चरन् ।।३६६५।। कालभैरवमुच्चार्य इमशानाधिप इत्यपि। इमित्यादि देवेशि पूर्ववत्तु समुच्चरेत् ।।३६६६॥ तथोत्तरे च प्रग्वं मायामुच्चार्यं साधकः। इमशानवासिन्युच्चार्य महाभीमे पदं वदेत् ।।३६६७।। कालि घोरस्वनेऽन्ते च गृहाऐोमं बींल पुनः। श्रनुत्तमां तथा सिद्धि देहि स्वाहान्तगो मनुः ।।३६६८।। इत्थं वलिचतुष्कं तु निर्भयः साधकाग्रएीः। ततो यथोक्तविधिना दिक्पालेभ्यो बील हरेत् ।।३६६६।। स्वस्वविद्यांगदेवेभ्यो वालं दत्वा प्रयत्नतः । वोरार्दनाघोरयोक्च चक्रपाशुपतयोस्तथा ।।३६७०।। जयदुर्गेति देवेशि पंचमन्त्राँश्च पूर्ववत्। वीरसिद्धिक्रमे देवि ज्ञेया गुरुमुखादिमे ।।३६७१।। यथोक्तेन विधानेन प्रागायामं षडंगकम्। कृत्वा ध्यात्वा स्वेष्टदेवं मंत्रमुच्चारयत् शनैः ॥३६७२॥ श्रव्यप्रचित्तः प्रजपेत् निर्भयः साधकोत्तमः । एकाक्षरे दिक्सहस्रं द्रचक्षरेऽष्टसहस्रकम् ।।३६७३।। प्रजपेद् देवदेवेशि त्र्यक्षरेष्वयुतार्धकम्। श्रष्टोत्तारसहस्रं च महामंत्रे प्रकीर्तितम् ॥३६७४॥ देवता यदि प्रत्यक्षा तदैव जपमुत्मृजेत्। देवं संपूज्य विधिवत् तदा दोहोति संसदेत्। से स्टें

देववाग्गेति सा देवी तदा छागर्बील हरेत्।
तदमावे महेशानि गुडपायसयो बंलिः ॥३६७६॥
वरं गृहीत्वा देवेशि ह्यन्यत् पूर्ववदाचरेत्।
ग्रथवान्यप्रकारेगा पुरश्चरणमुच्यते ॥३६७७॥
कुजे वा शनिवारे वा नरमुण्डं समाहृतम्।
पंचगव्येन मिलितं चंदनाद्यं विशेषतः ॥३६७६॥
निक्षिप्य भूमौ हस्तार्थमानतः काननांतरे।
तत्र तिद्वसे रात्रौ सहस्रं यदि साधकः ॥३६७६॥
एकाकी प्रजपेन्मंत्रं स भवेत् कल्पपादपः।
ग्रथवान्यप्रकारेगा पुरश्चरणमुच्यते।
शवमानीय तद्वारे तेनैव परिखन्यते ॥३६५०॥
तिद्वात् तिद्वनं यावत् तावदष्टोत्तरं शतम्।
स भवेत् सर्वसिद्धीशो नात्र कार्या विचारणा ॥३६५१॥
तद्वारे शिनमगलवारे तेनैव प्रकारेण हस्तार्थमानत इति प्रत्यहमण्टोत्तर-

शतं जपेदित्यनुषंगः।

ग्रथवान्यप्रकारेग पुरश्चरगमुज्यते ।
ग्रष्टम्यां वा चतुर्वश्यां पक्षयोष्ठभयोरिष ॥३६८२॥
सूर्योदयात् समारम्य यावत् सूर्योदयान्तरम् ।
तावज्जप्तो निरातंकः सर्वसिद्धोश्वरो भवेत् ॥३६८३॥
ग्रथ सर्वत्र होमादिबाह्यग्रभोजनांतं सर्वमिष सहैव कार्यम् ।
ग्रथवान्यप्रकारेग पुरश्चरगमुज्यते ।
शरकाले चतुर्थ्यादि नवम्यन्तं विशेषतः ॥३६८४॥
भक्तितः पूजियत्वा तु रात्रौ तावत् सहस्रकम् ।
जपेदेकस्तु विजने केवलं तिमिरालये ॥३६८४॥
ग्रष्टम्यादि नवम्यन्तमुपवासपरो भवेत् ।
स भवेत् सर्वसिद्धोशो नात्र कार्या विचारगा ॥३६८६॥
तावत् अद्सहस्रं ज्येद्वस्त्रमा निम्योरपवासं कुर्यादित्यथंः।
तावत् अद्सहस्रं ज्येद्वस्त्रमात्वम्योरपवासं कुर्यादित्यथंः।

Showing Showing

ग्रथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमुच्यते।
ग्राकृष्णायाः कुलागारे लिखित्वा मंत्रमेव च ॥३६८७॥
संपूज्य तत्र संस्कारं कृत्वा तस्ये निवेद्य च।
किंचिज्जप्त्वा मनुं नीत्वा देवताभावतत्परः ॥३६८८॥
तां विसृज्य नमस्कृत्य स्वयं सुप्यात्तु संगतः।
प्रातः स्त्रीभ्यो बींल दत्वा मंत्रसिद्धिनं संशयः॥३६८६॥
संस्कारं पंचमयागोक्तम्। ग्रत्र पूजनमात्रं न संभोगोऽपीत्यवसेयम्।
ग्रथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमुच्यते।
ग्रथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमुच्यते।
ग्रथमोसंधिवेलायामष्टोत्तरलतागृहम् ॥३६६०॥
प्रविश्य मंत्रो विधिना समभ्यच्यं प्रयत्नतः।
पूर्वोक्तकल्पमासाद्य पूजादिकमथाचरेत् ॥३६६१॥
केवलं कामदेवोऽसौ जपेदशेत्तरं शतम्।
तासां तु पत्रमूले च उप्त्वा संगृह्य मस्तके।
महासिद्धि भवेत् सद्यो लतादर्शनपूजनात् ॥३६६२॥

श्रष्टमीसंधिवेलायां श्रष्टमीनवम्योः संधिवेलायाम् । श्रष्टोत्तरलतागृहं वयासंभवमष्टमपर्यन्तानां शक्तोनां गृहं मदनमंदिरम् । पूर्वोक्तं दूतीयागाख्यं पत्रमूले वरांगे । उप्त्वा वीजं विन्यस्य तदेव बीजं मस्तके विन्यस्य तिलकं कृत्वेत्यर्थः । इदं तु वीरपरम् ॥

इति श्रीमदागमरस्ये सत्संग्रहे वीरसाधनकथनं नाम षोडशः पटलः ॥१६॥ म्रादितश्चतुश्चत्वारिंशत् ।

श्रथ सप्तदशः पटलः।

ग्रथ नवरात्रार्चा। तच्च शक्तिसंगमे देवीवाक्यम्— देवेश श्रोतुमिच्छामि नवरात्रविनिर्ण्यम् । नवरात्रे समायाते किं कर्तव्यं च तद् वद ॥ नवरात्रेति किं नाम कथं जातं किमात्मकम् ॥३६६३॥ शिवः—

नवशक्तिषु संजुद्धं नवरात्रं तदुच्यते । एकंत्र देवदेवेशी नवशा प्रसिक्षीतिताः॥ ३३६४॥ eGangotri प्रथमा शैलपुत्रीति द्वितीया ब्रह्मचारिगो।
तृतीया चंद्रघण्टेति कूष्माण्डीति चतुर्थिका ॥३६६५॥
स्कन्दमाता पंचमी स्यात् षष्ठी कात्यायनी स्मृता।
सप्तमी कालरात्रीति महागौरी तथाष्टमी ॥३६६६॥
नवमी देवदूतीति नवदुर्गाः प्रकीतिताः।
शयनं बोधनाख्यं च नवरात्रं द्विधा स्मृतम्।
शयनं चेत्रमासीयमाश्विनस्थं तु बोधनम् ॥३६६७॥
उमौ चोपोष्य विधिवत् सर्वसिद्धि लमेन्नरः।
निराहारी फलाहारी ह्योकमक्तो दृढत्रतः ॥३६६६॥
नक्तंमोजी हविष्याशी भूत्वा देवीं समर्चयेत्।
नवरात्रवताशक्तो नवनाथो भवेद् ध्रुवम् ॥३६६६॥
गौडकेरलकाश्मीरभेदात् तत् त्रिविधं स्मृतम्।
ग्रमायुक्ता न कर्तव्या प्रतिपत् कालिकार्चने ॥४०००॥

कालिकेत्युपलक्षां देवीमात्रपरम् ।

श्रष्टम्यन्तं समाचर्यं तदष्टम्यां तु होमयेत् ।

श्रर्थरात्रे समायाता मूलिबद्धापि पार्वति ॥४००१॥

साष्टमी सर्वकार्याणां कत्रौं मवित निश्चितम् ।

होमपूजादिकं तत्र कुर्याद् यत्नेन पार्वति ॥४००२॥

दितीयदिवसे चेत् सा तदैवोपोषणां चरेत् ।

प्रतिपत् स्वल्पमल्पा वा यदि न स्यात् परेऽहिन ॥४००३॥

श्रमायुक्ता तदा कार्या त्यक्तवा षोडशनाडिकाः ।

घटिकाः षोडश त्याच्या श्राद्या प्रतिपदस्तु याः ॥४००४॥

कलशस्थापनं कुर्यात् कल्यागां जायते ध्रुवम् । यदा चित्रा भवेत् तत्र वैष्टृतिश्चापि वा भवेत् ।।४००५।। तदा मुहूर्तेऽभिजिति स्थापनं कलशस्य हि । नवस्यां पारगां कुर्याद् दशस्यां तु विसर्जनम् ॥४००६॥

काश्मीराख्यक्रमं देवि शृणु यत्नेन पार्वति । नवरात्रं निराहारो निर्विकल्पो जितेन्द्रियः ॥४००७॥ श्रष्टमोनवमीसंधौ बलि देंयो महेरवरि । केरलाख्यक्रमे देवि निर्ग्यं नवरात्रजम् ॥४००८॥ तिथिक्षये तथा वृद्धौ यथोक्तेन च वर्त्मना। म्राष्टमीनवमीप्राप्तौ पूर्ववेधी न दुष्यति ॥४००६॥ श्रष्टम्यामर्घरात्रौ तु यत् किंचित् कुरुते नरः। तत् तदक्षय्यमायाति नवदुर्गाप्रसादतः ॥४०१०॥ एकोत्तरप्रवृद्धचा वा स्तोत्रपाठादिकं चरेत्। प्रथमेऽह्नि कृतं यावत् तावत् कुर्याच्च वा सुधीः ॥४०११॥ उदयास्तमयं जप्त्वा मंत्रसिद्धिमवाप्नुयात् । नवरात्रव्रते स्त्रीगां ऋतुयोगो यदा भवेत् ॥४०१२॥ सैव देवी न संदेहस्तां पूज्य विजयी कली। ताम्बूलागरुकस्तूरीदिन्यांवरिवभूषर्गैः ॥४०१३॥ शक्तीनां नवरात्रादौ ताम्बूलभक्षरां सदा। सूर्योदयं समारम्य यावत् सूर्योदयान्तरम् ॥४०१४॥ तावज्जप्त्वा निरातंकः सर्वसिद्धीश्वरो भवेत्। एकासनगतो भूत्वा नवरात्रं तु शाम्भवीस् । ४०१५॥ मुद्रामालम्बयेद् देवि नवनाथाभिधो भवेत्। गुहायां मठिकायां वा पर्वते निर्जनेऽपि वा ॥४०१६॥ ग्रघोमुखो वा देवेशि नवरात्रं निरम्बुभुक्। स्वमाच्छाद्य मृदा देवि तत्र संस्थापयेद् घटम् ।।४०१७।। यवांकुरात् समारोप्य शाम्भवीं मुद्रिकां चरेत्। हढासनी वा शयनी यथोद्दिष्टं समाचरेत् ॥४०१८॥ कापालिकावधूतानां व्रतमेतन्मयोदितम् । श्राज्ञा मवति देवेशि तदेव पारएां चरेत् ॥४०१६॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by Clangotri

ग्राज्ञा यदि न जायेत तदा ग्रामाधिपस्य च । देशाधिपस्य विप्रस्य पूजकस्य स्त्रियस्तथा ।।४०२०।। श्राज्ञां गृहीत्वा च वरं प्राप्यान्ते पारगां चरेत्। भक्तप्रिया च श्रीदुर्गा स्वयमाज्ञां प्रयच्छति ।।४०२१।। वीरशाक्तविधानेन चण्डदर्पव्रतं चरेत्। जिह्नां संत्रोट्य यत्नेन द्विवेदत्र्यंगुलां तथा ॥४०२२॥ पुनरायाति सा जिह्वा तेन सिद्धोक्वरो भवेत्। नवरात्रं समासाद्य महाष्ट्रम्यां निशामुखे । देवीं संपूज्य यत्नेन संकल्पं कामनान्वितम् ॥४०२३॥ शिर:पुष्पं कर्तयित्वा पूर्णमध्यकनिष्ठतः। यंत्रे देवे निवेद्याथ शिवतुल्यो भवेद् ध्रुवम् ॥४०२४॥ पुनः क्षिरः समायाति महावीरवरस्य तु । ग्रथवान्यप्रकारेगा प्रयोगः कथ्यते शृणु ।।४०२५।। नवरात्रं निराहारः श्रद्धामित्तसमन्वितः । ग्रर्धरात्रे महाष्टम्यामंगुष्ठान् मस्तकाविघ ॥४०२६॥ मांसं संकर्यं कुंडे तु यथोक्ते होममाचरेत्। प्रत्यक्षा जायते देवि ह्ये तत् हवनमात्रतः ॥४०२७॥ देवी देहं भवेत् तस्य नात्र कार्या विचारएा। ग्रथवान्यप्रकारेगा प्रयोगः कथ्यते शृ्णु ॥४०२८॥ नवरात्रं निराहारो गुरुभक्तो महात्रती । कुंडं पुरुषमात्रं तु कृत्वा तत्र स्वयं विशेत् ॥४०२६॥ पंचपल्लवकाष्ठानां विह्न तत्र समाचरेत्। भ्रंगुष्ठाद् मस्तकान्तं तु स्वदेहं होमयेद् व्रती ॥४०३०॥ ग्रग्निशय्यां च वा कृत्वा देवीं पश्यति निश्चितम्। नवरात्रं निराहारो गुरुमक्तो हढव्रतः। वामांगुष्ठोपरि स्थित्वा वेदरात्रं महेरवरि ॥४०३१॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

दक्षांगुष्ठोपरि तथा वेदरात्रं महेरवरि । नवम्यां पारणं कुर्यात् बिल्वपिण्डं प्रदापयेत् ॥४०३२॥ जगत्त्रयं वशीकुर्याद् नात्र कार्या विचारगा। नवरात्रं निराहारो निविकल्पो हढव्रतः ॥४०३५॥ कामबोजं साध्यनाम वशीकुर्विति चोद्धरेत्। स्वाहामुच्चार्य देवेशि प्रदीप्ते जाठरानले ॥४०३४॥ पत्रं पुष्पं फलं वापि मोजनं विविधं तथा। होमयेद् यत्नतो देवि यमुद्दिश्य वशं नयेत् ॥४०३५॥ अथवान्यप्रकारेग् पुरक्चरग्गमुच्यते । गोमूत्राशी साधकेन्द्रो नवरात्रं महेश्वरि ।।४०३६।। यं कंचिद् वै जपेन्मंत्रं नवम्यां होममाचरेत्। दशम्यां पारणं कुर्याद् गोमुखेन महेश्वरि ॥४०३७॥ देवतादर्शनं भूयाद् रात्रौ स्वप्ने न संशयः। व्रतांते ब्राह्मणांश्चैव कुमारोश्चापि मोजयेत् ॥४०३८॥ ग्रहणस्य पुरश्रयां भृरण् चन्द्रस्य वा रवेः। स्पर्शमुक्तचोः स्फुटत्वं च यस्मिन् काले प्रजायते ॥४०३६॥ स कालोऽक्षय्यरूपेगा पुरश्चरगाकर्मागा । हष्टस्पर्शे पुरश्चर्या हष्टमुक्तौ समापनम् ॥४०४०॥ चंद्रसूर्यग्रहे देवि ग्रासाविध विमुक्तितः। यावत् संख्यं मनुं जप्त्वा तावद् होमादिकं चरेत् ॥४०४१॥ ग्रथवान्यप्रकारेगा पुरक्चरगामुच्यते । सूर्यंचन्द्रोपरागे तु नाभिमात्रे जले स्थितः ।।४०४२।। ग्रासाद् विमुक्तिपर्यन्तं जपं कुर्यादनन्यधोः । तह्शांशं होमयेच्च तर्पयेद् भोजयेत् तथा ।।४०४३।। श्रनेन क्रमयोगेन सर्वसिद्धीश्वरो भवेत्। पंचांगी तु पुरवचर्या जपहोमो समो समुतौ राष्ट्रिक (CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi William R. Nagarajan R.

मलापकर्षग् स्नानं कृत्वा पूर्व विशालधीः। मुच्यमाने भवेद् दानं ग्रस्ते स्नानं प्रकीतितम् ॥४०४५॥ स्नानं मंत्रोदितं कृत्वा तर्पे एं त्वधिकारतः। संध्यां तात्कालिकीं कृत्वा विमोक्षान्तं जपं चरेत् ॥४०४६॥ ऋतुस्नातां स्त्रियं ज्ञात्वा सूर्यचन्द्रग्रहान्तरे । पतिः पार्वग्गमासाद्य पिण्डं तस्यै प्रदापयेत् ॥४०४७॥ वंध्यापुत्रप्रदो योगः सर्वसिद्धिप्रदायकः । सूर्यप्रहे महेशानि काम्यहोमं चरेत् तु यः ।।४०४८॥ तर्पर्गं कुरुते यस्तु तस्य श्रीः सर्वतोमुखी । मार्जनं तु प्रकर्तव्यं सर्वदुःखप्रशान्तये। सूर्यग्रहे समायाते परिधि यदि वा मवेत् ॥४०४६॥ पारिभवाभिधो योगः सर्वसाम्राज्यदायकः। ग्रन्त्यहुष्टे दिशां दाहे मध्यग्रामे महेश्वरि ।।४०५०॥ मेघछन्ने मुक्तिहीने स्नानदानादिकं चरेत्। जपमात्रं विधातव्यं मध्यग्रासे तु पूर्ववत् । तारापीडग्रहे प्राप्ते तथा सूर्यग्रहेऽपि च ॥४०५१॥ जपादिकं विधातव्यं शक्तिपूजां ततश्चरेत्। सर्वसिद्धोश्वरो भूयान् नात्र कार्या विचारणा ।।४०५२।। भ्रस्मिन्नेव गुरुं पूज्य तोष्य सिद्धिमवाप्नुयात् । चंद्रसूर्योपरागे तु मेरुसाधनमाचरेत् ।।४०५३।। दुष्टमंत्रोऽपि देवेशि शुद्धान्तः करणे यती । स्नात्वा यथोक्तविधिना संपूज्य जगदंबिकाम् ॥४०५४॥ शिरःपुष्पं कर्तियत्वा देवतायौ समर्पयेत्। देवतां पश्यति शिवे वरदानपरां घ्रुवम् ॥४०५५॥ सूर्योपरागे संप्राप्ते स्नात्वा प्रोक्तेन वरमंना । ्राक्तिमानीयः तद्वान्त्रे त्यासजालं प्रविन्यसेत् ॥४०५६॥
रशक्तिमानीयः तद्वान्त्रे त्यासजालं प्रविन्यसेत् ॥४०५६॥

मद्ये माँसैस्तथा मत्स्यौ भंगालिगामृतैरपि। देवतां तत्र संपूज्य सांगां सावरएां शिवे ।।४०५७।। तत्र जिह्वां प्रदत्वा तु जपात् त्रैकालविद् भवेत्। ग्रतीतानागतज्ञानं वर्तमानं च पश्यति ।।४०५८।। सूर्यग्रहे महेशानि वेश्यामानीय सादरम्। शक्ति लिगोपरि स्थाप्य जपेत् यत्नेन पार्वति ।।४०५६।। त्रैलोक्यविजयी भूयान् नात्र कार्या विचारएा। सूर्योपरागे देविशि स्नात्वा पूजां समाचरेत्। सांगां सावरएाां पूज्य सबल्यन्तं महेश्वरि ॥४०६०॥ कुमारीपूजनं कृत्वा सर्वसिद्धी इवरो भवेत्। सूर्योपरागे संप्राप्ते स्नात्वा पूज्य महेश्वरोम् ॥४०६१॥ तुलाब्रह्मांडदानादि यथाशक्तया समाचरेत्। देवतायं तिन्नवेद्य सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥४०६२॥ चंद्रग्रहे तु संप्राप्ते शवमानीय साधकः। शवासने जपेद् देवि ग्रासावधि विमुक्तितः ॥४०६३॥ सर्वसिद्धोश्वरो भूत्वा तदन्ते शिवतां व्रजेत्। सूर्योपरागे संप्राप्ते शुचिः पूर्वमुपोषितः ॥४०६४॥ ग्रासाद् विमुक्तिपर्यन्तं देहमांसानि होमयेत्। सर्वसिद्धीश्वरो मूत्वा देवतां पश्यति प्रिये ।।४०६५।। सूर्यग्रहः शिवः प्रोक्तश्चंद्राख्यः शक्तिरुच्यते । सूर्यग्रहे जित्तदोक्षां पजुदोक्षां न कारयेत् ॥४०६६॥ चंद्रग्रहे विष्णुदीक्षां पंचरात्रं न कारयेत्। चंद्रसूर्यंग्रहे दोक्षा सर्वदीक्षा गुमा मता ।।४०६७।। चंद्रग्रहे शक्तिदीक्षा सर्वेसिद्धिप्रदायिनी। ^{८८}न वारतिथिऋक्षादि न मासनियमस्त्या । १४८ हुटा।

दमनोत्सवश्रावण्यो ग्रंहरां यदि जायते । तत्र मंत्रः पुरक्चर्याविहोनोऽपि प्रसिद्धचित ।।४०६६।। चंद्रसूर्यग्रहादेव नान्यः कालश्च सिद्धिदः। प्रमादाद् गलिते योगे वसुविष्ठांदच भोजयेत् ॥४०७०॥ यद् यदंगं विहीयेत तत् सांगे द्विजमोजनम् । ग्रथवा द्विगुरां जापमंगपूर्ती प्रकीतितम् ।।४०७१।। द्वित्रिवेदबाराभेदै विप्रादीनां कमाज्जपः। इति संक्षेपतः प्रोक्तं स्तोत्रानुष्ठानमुच्यते ।।४०७२।। सहस्रनामस्तोत्रेषु कवचेष्वपि पार्वति । ग्रयुतं तु पुरश्चर्या स्तोत्रमात्रो प्रकीर्तिता । 🦪 📁 सोत्तमा रदसाहस्रो मध्यमा मानवो कला ।।४०७३।। संख्या तासां समा ज्ञेयाऽयुतसंख्या मिता तथा। सहस्रान् न भवेन् न्यूना स्तोत्रादीनां पुरस्क्रिया ॥४०७४॥ एवं पुरस्क्रियां कृत्वा दशांशं हवनादिकम्। तर्पं मार्जनं देवि तथा बाह्यसभोजनम् ॥४०७५॥ विप्रभोजनमेवात्र सर्वथा कारयेत् प्रिये । द्विजसंतोषग्रोनैव सर्वं सिद्धचित पार्वति ।।४०७६॥ स्तोत्रादीनामथो रूपं शृणु वक्ष्यामि तत्त्वतः। शिवदेव्योऽस्तु संवादो ब्रह्मरंघ्रं प्रकीतितम् ॥४०७७॥ श्रन्ये इलोकाः केशतुल्या ऋषिः शिर इतीरितम् । छंदो मुखं मवेद् देवि देवता हृदयं स्मृतम् ॥४०७८॥ बीजं गुह्यमिति प्रोक्तं शक्तिस्तु पद्युगे मता । सर्वांगकल्पनं देवि ह्यर्थवादः प्रकीतितः ॥४०७६॥ स्तोत्रमध्ये स्थितं यद् यत् तत्सर्वं स्तोत्ररूपकम् । एवं च देवदेवेशि स्तोत्ररूपं प्रकोतितम् ॥४०८०॥ CC-0.Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

तथैव कवचं देवि नामसाहस्रकं तथा। ब्राद्योपांतं पठेद् देवि स्तोत्रांगं नैव हापयेत् ।।४०८१।। श्रंगहीने भवेत् नाशः सर्वदा परमेश्वरि । फलस्तुत्यादिकं देवि गतिरित्यभिधीयते ।।४०८२।। श्राद्योपांतं विना देवि फलमर्घं प्रकीतितम् । हवनं कवचादीनां शृणु गौडे च सांप्रतम् ।।४०८३।। भ्राद्योपांतं पठित्वा तु पश्चात्तु हवनं स्मृतम् । सहस्रे देवदेवेशि नामांते हवनं मतम् ।।४०५४।। उपोद्धातोपसंहारे क्लोकांते हवनं मतम्। कवचादाविप शिवे मंत्रांते हवनं भवेत् ।।४०८४।। उपक्रमोपसंहारे पूर्ववच्च प्रकीर्तितम् । म्रादौ पूर्णं तु संपठ्य तथैवांते महेश्वरि । मध्ये नामानि पठ्यानि पुरश्चर्या प्रकीतिता ॥४०८६॥ काश्मीराख्यं क्रमं देवि शृशु यत्नेन सांप्रतम् । स्त्रोत्रमावर्त्य संपूर्णं तदंते गरानां चरेत् ॥४०८७॥ संपूर्णक्रमयोगस्तु काश्मीराख्यः प्रकीतितः। संपूर्णहोमयोगस्तु कथितक्च प्रियंवदे ।।४०८८।। मार्जनामिषेचनं कर्म कुर्यादत्र महेश्वरि । श्रवीव केरलाख्ये तु किचिद् भेदोऽस्ति पार्वति ॥४०८६॥ श्रनेनेव क्रमेगात्र कवचे होम ईरितः। सारूप्यं कवचारूयं तु सायुज्यं स्तोत्रमीरितम् ॥४०६०॥ सान्निध्यं नामसाहस्रं त्रितयं परिकोतितम्। सालोक्या वा स्तुति र्देवि तस्मात् पूर्णं पठेत् सुधीः ॥४०६१॥ श्रयमेव महादेवि केरले परिकीर्तितः। पाठमात्रे बिबदं प्रशेवतं होसाद्रो प्रस्कितितम् ॥ ४८ १२॥

कामरूपागमे होमः श्लोकांते कवचे चरेत्। ग्रक्षोभ्यनिर्मितं यच्च कामरूपागमं स्मृतस् ।।४०६३।। होमं च तर्पएां तद्वद् मार्जनं च तदंतकम् ।

त्तदंतकं श्लोकांतकम ।

तत् तत् स्तोत्रोक्तविधिना पुरश्चर्यादिकं चरेत्। व वचं वर्मरूपं स्यात स्तोत्रं सहचरो भवेत् ।।४०१४॥ सहस्रनामस्तोत्रं तु सेनास्थानं प्रकोर्तितम् । पूजा दुर्गस्वरूपं स्यात् बलिदानं तु मारएाम् ।।४०९५।। मंत्रो राजा पुरवचर्या राज्यसंपत्तिरोरिता। संपत्त्या तु विना राजा न शोमित महेश्वरि ॥४०६६॥ संपत्तिमूलमेतद्धि सर्वमेव प्रकीतितम्। होममस्त्रमिति प्रोक्तं पर्जन्यास्त्रं तु तर्पग्पम् ।।४०६७।। जलदुर्गस्वरूपं वै त्वभिषेकं प्रकीतितम् । ब्राह्मणानां भोजनं तु दृष्टसैन्यप्रधर्षणम्। देवतागुरुविद्यैक्यं त्वात्मैक्यपरिभावनम् ॥४०६५॥ सर्वसिद्धीश्वरत्वं स्यात् त्रैलोक्यस्वामिता यथा। यथा च राज्ञि राज्यादौ शत्रुसैन्यमयं मवेत् ।।४०६६।। सिद्धचागमं महादेवि तथैव परिकोर्तितस् । दुर्गाद्यस्त्रादिकं देवि यथोपकरएां हढम् ।।४१००॥ तथेव विद्धि मंत्रस्य पुरश्चर्यादिकं भवेत्। मंत्रो राजा गुरु मंत्री गंगोशा द्वारपालकाः ॥४१०१॥ साधना शवमुण्डस्य सिहासनिमतीरितस्। साधकेन तथा कार्यं येन सर्वं तु सिद्धचित ॥४१०२॥ नित्यं नैमित्तिकं चैव हयद्विरदको मतो। होमधूमः पताका स्याद् होमस्तु सिद्धमूमिका ।।४१०३।।

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

षोढान्यासादिकं सेना देवता राज्यनायिका । यंत्रं तु वज्रदुर्गं स्यात् जीवयंत्रं त्वभेदकम् । सिद्धे राज्याधिपे देवि कि न सिद्ध्यति भूतले ।।४१०४।। इति श्रीमदागमरहस्ये सत्संग्रहे नवरात्रग्रहणस्तोत्राद्यनुष्ठानकथनं नाम सप्तदशः पटलः ॥१७॥ ग्रादितः पंचचत्वारिंशत् ।

ग्रथ ग्रब्टादशः पटलः।

EXTORUPED DATE TO LEGISTRA

श्रथ देवोपचाराणां नामानि शृणु पार्वति । श्रन्नस्य देवता लक्ष्मी वैंद्गांवे तु प्रजापतिः ।।४१०५।। वानस्पत्यं तथा पुष्पे वैष्णावी गंध ईरितः। गंधर्वदच तथा घूपे घृतं सूर्याग्निदैवतम् ॥४१०६॥ घृतदीपेऽय श्रीविष्णुस्तेलदीपे वनस्पतिः। कुसरस्य रमा देवी परमान्नस्य कालिका ।।४१०७।। जलस्य वरुगो देवो बोजातां वरुगोश्वरी। मधु वै वारुग्गी ज्ञेया द्धिक्षीरं महेश्वरः ।।४१०८।। मालायाश्च तथा दुर्गा सर्वं देवीमयं च वा । दश्रयान् शृणु प्राज्ञे सावधानेन चेतसा । लोहवार्गः षोडशांगः श्रीविद्यायां प्रकीतितः ॥४१०६॥ काली विद्याविधौ देवि ग्रगरुश्च दशांगकम्। **प्रष्टादशांगें श्रीखण्डं ताराविद्याविधी स्मृतस् ।।४११०।।** छिन्नाविद्या विधौ देवि पंचींगं गुग्गुलुस्तथा । कृष्णागरः पोतसारो ब्रह्मास्त्रमनुगोचरम् ।।४१११॥ रालो ह्यगुरुसत्त्वं चं मातंग्यां परिकोतितम् । कस्तूरी चैव कर्पूरमण्टगन्धं तथैव च ॥४११२॥ भैरव्यां कीर्तितं देवि नखं चैव शिलारसः। भुवनेश्यां मया प्रोक्तं श्रीखंडं कमलामनो ॥४१ १३०।। CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Diginiza १ १३०।।।।

De 12 de Se

लाक्षागुडो हि घूमायां सिद्धविद्याविधौ शिवे।
सर्वधूपस्तु संप्रोक्तः षोडशांगिमहोच्यते ॥४११४॥
श्रीखंडश्चागुरुश्चेव गुग्गुलो लोहवाग्यकः।
रालश्च देवदारुश्च लाक्षा चेव गुडस्तथा ॥४११४॥
गोघृतं शर्करा चेव मांसोनखमतः परम्।
मलयोद्भवसारं च शिलारसमतः परम् ॥४११६॥
कपूँरं गंधसारं च षोडशांगिमदं स्मृतम्।
वोरग् वालकं चेव प्रोक्तमष्टादशांगकम् ॥४११७॥

श्रथ प्रसंगात् नित्यकर्मलोपे नियमाः—

नित्यलोपो न कर्तव्यो नित्यं तु सर्वकालिकम् । रात्रि भवति देवेशि पितृतर्पणकं न हि ।।४११८।। संध्यालोपनिवृत्ते च गायत्रीं मूलमेव वा । जपेदष्टोत्तरं देवि सहस्रं यत्नतः शिवे ।।४११६।। तथा माध्याह्निकं कृत्वा रात्रिकृत्यं ततश्चरेत्। जपादिस्तोत्रपाठान्तं सर्वमेतत् समाचरेत् ॥४१२०॥ तदंते पूजनं कर्म ततो नैमित्तिकं चरेत्। ग्रत्र केचित् समिच्छन्ति नित्यं पंचोपचारिका । ततो नैमित्तिके काम्ये कार्यं विस्तृतिवैभवम् ॥४१२१॥ ग्रथोच्यते महेशानि यंत्रस्थापननिर्णयम्। स्फाटिकं स्वर्णंजं रौप्यं यद् यंत्रं कारयेत् प्रिये ॥४१२२॥ यंत्रं तु गृहमित्युक्तं यंत्रं पीठं प्रकीर्तितम् । यंत्रे तु पूजिता देवी सहसैव प्रसोदति ॥४१२३॥ शालग्रामे बागालिंगे जीवचक्रे महेश्वरि । स्थिरयंत्रे प्रतिकृतौ नावाहनविसर्जने ॥४१२४॥ प्रतिष्ठाप्य महायंत्रं न तद् यंत्रं विसर्जयेत्। यंत्रप्रतिष्ठामासाद्य विद्यां तत्र विभावयेत् ॥४१२४॥ एट-७. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

तदा विसर्जनं नास्ति न चावाहनमेव च । कुलवारे कुलतिथौ मासर्क्षपक्षयोगतः ॥४१२६॥

ज्ञात्वा संपूजयेद् देवि सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् । तिथिनिर्गायमत्राहं वक्ष्ये पूजार्थमीश्वरि ॥४१२७॥

होमे जपे च पूजादौ घटीरात्र्युत्तरा तिथिः। सूर्योदये तु संप्राप्ते या तिथिश्चोपलभ्यते ॥४१२८॥

सा तिथिः सर्वकार्यागां कर्त्रौ प्रोक्ता महेश्वरि । महानिशाव्यापिनी या सा तिथिः शुभदायिका ॥४१२८॥

जन्माष्टमो निशाव्याप्ता सनक्षत्रा जयन्तिका। चंद्रोदयसमापन्ना चतुर्थी परिकीतिता ॥४१३०॥

श्रमा सोमयुता सा तु सा परैव महेश्वरि । श्रमायुक्ता न कर्तव्या प्रतिपत् चण्डिकार्चने ॥४१३१॥

शुक्ला परैव प्रतिपत् तथा यमितिथिः परा । भद्रोत्तरा तिथि ज्ञेंया तृतीया क्षयसंज्ञका ॥४१३२॥ गौरोपूजाविधौ शस्ता सर्वदुःखविनाशिनी ।

पूर्वाष्टमी कृष्णपक्षे शुक्लपक्षे परा तिथि: ॥४१३३॥

चतुर्दश्यिप च परा त्वर्धरात्रियुताथवा । श्रव्टमीनवमीयोगो यत्र सा नवमी तिथिः । तयोः संधौ भगवती पूजिता वरदायिनी ॥४१३४॥

निशामुखे शिवः पूज्यो निशामध्ये महेश्वरि । निशांते विबुधाः सर्वे पूजनीयास्तथापरे ॥४१३५॥

शिवं शक्ति भैरवं च रात्रावेव प्रपूजयेत्। चेत्रे या नवमी शुक्ला मध्यान्हव्यापिनी तिथि:।।४१३६॥

ग्रमा च पौरिंगमा देवि परा ज्ञेया च पूजने । चतुर्दशीं समारम्य नवम्यन्तं महेश्वरि ॥४१३७॥ gotri CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Diglinze

our who

रात्रिविद्धा तिथिर्जेया शुभदा परमेश्वरि ।
एवं ज्ञेया तिथि देवि शिवापूजनकर्मीए। ॥४१३८॥
मंत्रं साध्यमानस्तु जपादौ च तथान्तके ।
कुल्लुकां प्रजपेद् देवि मंत्रिविघ्नविनाशिनीम् ॥४१३६॥
सिद्धिरोधहरीं चैव सर्वसिद्धिकरीं तथा ।
क्रमेएा दशविद्यायाः कुल्लुकां प्रवदाम्यहम् ॥४१४०॥
काली तारा छिन्नमस्ता सुन्दरी वगलामुखी ।
मातंगी श्यामला लक्ष्मो सिद्धविद्या च भेरवी ।
धूमावती क्रमेएांव महाविद्या दशैव च ॥४१४१॥

ग्रथो कुल्लुका दशविद्यानाम् । तत्रादौ श्रीकाल्याः— कालीकूर्चं वधूर्माया फडंता कुल्लुका मता । ग्रघोराख्यो ऋषिः प्रोक्तो विराट्छंदः प्रकीर्तितम् ॥४१४२॥ देवता कुल्लुका काली बीजं मायाभिघं स्मृतम् । कामं शक्तिः तथा कूर्चं कीलकं परिकीर्तितम् ॥४१४३॥ षट् दोर्घाद्येन कामेन षडंगन्यासमाचरेत् । ध्यानपूजादिकं सर्वं कालिकावत् समाचरेत् ॥४१४४॥

ग्रथ तारायाः -

माया रमा तथा कूर्चं तारिगा कुल्लुका मता । तारिगा कुल्लुकायाश्च विरूपाक्षो ऋषिः स्मृतः ॥४१४५॥ उिष्णिक् छंदः समाख्यातं देवता नीलतारिगा । कूर्चबीजं तथा माया शक्तिवंघू च कोलकम् । मायया तु षडंगानि प्रोक्तमन्यच्च मूलवत् ॥४१४६॥

शिवषड्दीर्घयुक्तेन षडंगन्यासमाचरेत्। ध्यानपूजादिकं सर्वं छिन्नावत् समुपाचरेत् ॥४१४६॥ संपत्प्रदायाः प्रथमं बोजं श्रोभैरवीमनौ । विकराल ऋषिः प्रोक्तः पङ्तिरुछन्दः प्रकीर्तितम् ॥४१५०॥ देवता भैरवी नाम्नी कुल्लुका परिकीर्तिता । हं वीजं सें महाशक्ति रमत्र कीलकं स्मृतम् ॥४१५१॥ षड्दीर्घाद्येन बीजेन षडंगन्यासमाचरेत्। ध्यानपूजादिकं सर्वं वालावत् समुपाचरेत् ।।४१५२।। सुंदर्याः कुल्लुका देवि संप्रोक्ता द्वादशाक्षरो । वाग्भवं कामराजं च लज्जां च त्रिपुरे पदम् ।।४५५३॥ तथा भगवति प्रोच्य तदंते ठद्वयं वदेत्। सुंदरीकुल्लुकायास्तु ऋषिरानन्द भैरवः ।।४१५४।। गायत्री छंद ग्रादिष्टं वाग्सवं बीजमीरितम्। लज्जाशक्तिमंहेशानि कामबीजं च कीलकम् ।।४१५५।। देवता त्रिपुरेशी च षडंगं द्वितयेन च । ध्यानपूजादिकं सर्वं सुंदरीवत् समाचरेत् ।।४१५६।। मातंगी कमला लक्ष्मी घूमोच्छिष्टाक्रमं शृणु । तारं कूर्वं नारसिंहं पंचानां कुल्लुका मता ।।४१५७।। ऋषिभैरवनामा च यावच्छंदांसि पावंति । देवता सेव बीजादि स्वस्वदेवक्रमेगा च ध्यानपूजादिकं सर्वे स्वस्वदेववदाचरेत् ॥४१५८॥ इयन्ते कथिता देवि संक्षेपात् कुल्लुका मया। ग्रज्ञात्वा कुल्लुकामेनां जपते योऽधमः कुघी: ।।४१५६।। पंचत्वमाशु लमते सिद्धिहानिः प्रजायते । मंत्राः पराङ्मुखाः यान्ति तस्मान्त्रापोहाहित निक्फलकः ॥४१६०॥ तस्मात् सर्वप्रयत्नेन योजयेन् मूर्ध्न कुल्लुकास् । इति संक्षेपतः प्रोक्तं शृणु मंत्रांगवासनास् ।।४१६१।। श्रोत्रादीनां ज्ञानहीनो मंत्रजापं करोति यः । दारिद्रचं च विपत्ति च नरकं प्राप्नुयाच्च सः ।।४१६२।। शृणु देवि प्रवक्ष्यामि कालीमंत्रमनुक्रमात् । बिन्दुः श्रोत्रं नाद ग्रास्य ककारं हृदयं विदुः ।।४१६३।। विन्हिनेत्रं कीलकं तु दीर्घाकारं प्रियंवदे । तकारं तारिग्री मंत्रे हृदयं विद्धि पार्वति । हकारं विद्धि सर्वत्र सर्वपक्षे सुरेज्वरि ।।४१६४।।

ग्रत्र कालीविषये विशेषश्चीत्तरतंत्रे-

क्रींकारं मस्तकं देवि क्रींकारं च ललाटकम् ।
नेत्रत्रयं च ह्रींकारं हूंकार नासिका मता ॥४१६४॥
हूंकारं मुखपद्मं स्यात् ह्रीकारं कर्णयुग्मकम् ।
ह्रींकारेण भवेद् ग्रीवा दकारं चिबुकं भवेत् ॥४१६६॥
क्षिकारेण भवेद् दंतो एोकारेणोष्ठयुग्मकम् ।
काकारेण स्तनद्वन्द्वं लिकारात् पृष्ठदेशकम् ॥४१६७॥
केकारेण मवेद् वाहुः क्रींकारेणोदरो मवेत् ।
क्रींकारात् नाभिदेशं स्यात् क्रींकाराच्च नितंवकः ॥४१६८॥
हूंकारं योनिरूपं स्यात् ह्रांकारेणोरयुग्मकम् ।
ह्रींकारं जानुयुग्मं स्यात् ह्रांकारं गुह्यदेशकम् ।
स्वाशब्देन पदद्वन्द्वं हाशब्देन स्वरं तथा ॥४१६६॥

ताराविद्यायां यामले-

वाग्देव्याः समुदायः स्यादाकृतिः प्रगावो मुखम् । मायावश्च स्थितौ बिंदू लोचने समुदाहृतौ ॥४१७०॥ हसकारो श्रुती स्यातां हकेशौ हृत्करौ स्मृतौ । फद्कारो चोदरो ज्ञेयो श्रकारेग स्तनद्वयम् ॥४१७१॥ फद्कारो चोदरो ज्ञेयो श्रकारेग स्तनद्वयम् ॥४१७१॥ रेफयुग्मं पदद्वन्द्वं तकारं भाललोचनम्।
भुजवेदस्वरूपं च नादयुग्ममुदाहृतस् ॥४१७२॥
कूर्चं प्राणा एकजटा शरोरं सर्वमिष्यते।
कूर्चं मुखं तद्विज्ञेयमन्यमंत्रेषु पार्वति ॥४१७३॥

महोग्रायां प्रगावो मुखम् । प्रगावरिहताया एकजटाया क्रचं मुखमित्यर्थः । ग्रथ श्रीविद्यायां विशेषः कामधेनुतंत्रे —

श्रथान्यत् संप्रवक्ष्यामि कामिनीतत्त्वमुत्तमम् । श्रुणु तत्त्वं महेशानि ककारस्यातिदुर्लभम् ॥४१७४॥ रहस्यं परमाश्चर्यं त्रिकोग्गानां च संश्रृणु । वामरेखा भवेद् ब्रह्मा विष्णु दक्षिमारेखिका ॥४१७५॥ श्रधोरेखा भवेद् रुद्रो मात्रा साक्षात् सरस्वती । श्रंकुशा कुंडली या तु कोटिविद्युल्लताकृतिः ॥४१७६॥ कुंडली त्वंकुशाकारा मध्यशून्यं सदाशिवः । जपा पावकसंकाशा वामरेखा वरानने ॥४१७७॥ शरचन्द्रप्रतीकाशा दक्षरेखा च संस्मृता। श्रघो रेखा मवेद् रुद्रो महामारकतद्युतिः ॥४१७८॥ शंखकुंदसमाभासा मात्रा साक्षात् सरस्वती। कोटिचंद्रप्रतीकाशं मध्यशून्यं सदाशिवः ॥४१७६॥ ईश्वरो यस्तु देवेशि कलाचतुष्टयात्मकः। इच्छाशक्ति भवेद् ब्रह्मा विष्णुस्तु ज्ञानशक्तिमान् ॥४१८०॥ क्रियाशक्ति भंवेद् रुद्रः सर्वप्रकृतिमूर्तिमान् । श्रात्मविद्याशिवेस्तत्त्वेः सदाशिवः प्रतिष्ठितः ॥४१८१॥ शून्ये तु संस्थिता काली केवल्यपददायिनी। नंदिनी संस्थिता तस्याः दक्षमागे स्वरूपिसी ॥४१८२॥ वामभागे स्थिता लक्ष्मीश्रतुर्वेगप्रदायिनी । तेषां अमार्गे सिथता देवी संहर पर हेनता हा अक्षेत्र कार्

त्रयागां गर्भसंभूता त्रिपुरा भ्रत एव हि। परमात्मस्वरूपत्वात् तासां गर्भे प्रतिष्ठिता ।।४१८४।। श्रन्याश्च प्रामवन् सर्वाः कालिकाद्याश्च पार्वति । तत्र स्थितोऽसृजत् ब्रह्मा विष्णुः पालनतत्परः ॥४१८५॥ रुद्रः संहारकर्ता च ईश्वरश्च सदाशिव:। ईश्वरो यस्तु देवेशि त्रिकोएो तस्य संस्थितिः ॥४१८६॥ त्रिकोरामेतत् कथितं योनिमंडलमुत्तमम्। ककाराज्जायते सर्वं त्रेलोक्यं परमेश्वरि ॥४१८७॥ ककारादेवमुत्पन्नं कामं कैवल्यमेव च। सर्वेषां देवतानां च ककारं मूलमीरितम् ॥४१८८॥ श्रासनं त्रिपुरा देव्याः ककारं पंचदैवतम् । ककारात् कामदा कामरूपिग्गी स्फुरदव्यया ॥४१८६॥ माता सा सर्वदेवानां कैवल्यपददायिनी । कंवल्यं प्रपदे यस्याः कामिनी सा प्रकीतिता ॥४१६०॥ जपापावकर्सिदूरसहशीं कामिनीं पराम् । 🤫 🛒 📁 चतुर्भु जां त्रिनेत्रां च सर्वावयवशोभिनीम् ॥४१९१॥ कदंबकोरकाकारस्तनद्वयविभूषिताम्। शंखकंकराकेयूरैरंगदैरपशोमिताम् ॥४१६२॥ रत्नहारै: पद्महारै: शोभितां परमेश्वरीम् । एवं हि कामिनीरूपं त्रेपुरं महद्भुतम् ॥४१६३॥ एतत्त् कालिकाबीजं प्रफुल्लं शृणु सुन्दरि । पृथ्वीबीजं ततो भूत्वा वामाक्षिसंयुतं यदि ॥४१६४॥ बिन्द्वर्धसंयुतं भूत्वा प्रफुल्लं भवति प्रिये। लकारः पृथिवी साक्षात् सर्वरत्नस्वरूपिग्गी ॥४१६५॥ पोतांगो पोतवसना पोतविद्युल्लताकृतिः। सुखप्रसन्नवदना रत्नकुंडलमंडिता ॥४१६६॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

एवं हि संस्मरेद् बोजं तदूर्ध्वे कामिनीं परास्। लकारसंयुता सूत्वा प्रफुल्लं भवति प्रिये ।।४१६७।। प्रतप्तकांचनाभासां दशवाहुसमन्विताम्। त्रिभंगललिताकारां जटाजूटसमन्विताम् ।।४१६८।। त्रिलोचनां चंद्ररेखां महिषासुरमदिनीस्। सिंहासनगतां देवीं भावयेत् साधकोत्तमः ॥४१६६॥ वहुरूपमयों देवीं ककारं कामिनीं पराम्। शुक्कवर्गां पोतवर्गां रक्तवर्गां महेश्वरीस् ।।४२००।। हरिद्वर्गां कृष्णवर्गां चारुचंपकहासिनीम्। उत्पत्तिकारणं सूमे र्देवानां चैव पार्वति ।।४२०१।। बीजमेतत् महद्गुद्यं विष्णुजन्मस्थलं सदा । एवं हि संस्मरेद् भक्तचा शक्ति बीजसमाश्रयाम् ॥४२०२॥ बीजात्तु जायते ब्रह्म ज्ञानात्मा परमेश्वरि । शब्दब्रह्ममयो भूत्वा प्रसूते हरिमव्ययम् ।।४२०३!। स्वयं शक्ति हीर भूत्वा जायते नात्र संशयः। ककाररूपिएगी भूत्वा शक्तिराविरभूत् स्वयम् ।।४२०४।। जन्मकर्माणि सर्वाणि ब्रह्मणो नास्ति मामिनि । एतदेव हि शर्वािए प्रकृतेरस्ति सर्वदा ॥४२०५॥ जपे घ्याने च पूजायां प्रकृतिः सुप्रतिष्ठिता । ककारस्योर्घ्वकोर्एोषु प्राग्गो वायुः प्रतिष्ठितः ।।४२०६।। श्रपानो वामको एोषु संस्थितश्र सदा प्रिये। समानो दक्षिएो कोएो शुद्धस्फटिकसन्निमः। उदानः त्वंकुशाकारे मात्रायां व्यान एव च ॥४२०७॥ एतत् ते कथितं देवि ककारतत्त्वमुत्तमस्। नवतत्त्वं ककारस्य ज्ञात्वा यः कुरुते जपुर्यार्थे हे रेश्वद्धाः।

तज्जपं चंचलापांगि जप एव न संशयः। एतत् तत्त्वमविज्ञाय प्रजपेद् यदि कोटिघा ॥४२०६॥ न तज्जप्तं वरारोहे सदा त्वावर्तनं भवेत्। देवतत्त्व प्रारणतत्त्वं बिंदुतत्त्वं च सुंदरि ॥४२१०॥ ज्ञानतत्त्वं शक्तितत्त्वं योनितत्त्वं तथैव च। श्रंकतत्त्वं रूपतत्त्वं गर्भतत्त्वं वरानने ॥४२११॥ नवतत्त्विमदं प्रोक्तं कामधेनुमतं प्रिये। कीलितं न हिं देवेशि विद्या वा मंत्रमेव वा ॥४२१२॥ न शप्तं परमेशानि न विद्धं वरविंगति। सर्वेषां जंगमादीनां स्थावराएां महेश्वरि ॥४२१३॥ देवता मातृका प्रोक्ता सृष्टिस्थित्यंतकारिगा। भावनादक्षरश्रेण्या ब्रह्मसाक्षात् न संशयः ॥४२१४॥ श्रक्षरे दूषग्गं नास्ति सप्तादिकमलानने। दूषगां यत् कृतं देवि हृदये भावय प्रिये ॥४२१५॥ देवानां वर्गारूपार्गा रक्षार्थं गोपनाय च। न च शप्तं तथा विद्धि कोलितं न हि पार्वेति ॥४२१६॥ संदेहं त्यज चार्वंगि शप्तादिषु वरानने । सर्वकालं सदा यत्नाद् जपं कुरु निरंतरम् ॥४२१७॥ घ्यायन् हृदि परं देवं पादुकाच्यानतत्परः । स्वाभीष्टामचिरात् सिद्धि लप्स्यसे मदनुप्रहात् ॥४२१८॥ पादुकाध्यानसंपन्नो पादुकाजपतत्परः । सर्वाघं च विनिर्धूय यथेष्टां लमते गतिस् ॥४२१६॥

अत्र पादुकाध्यानं श्रीगुरुध्यानं, ाच्च श्रीकुले-व्वेतं व्वेतांबरं व्वेतगंधालंकारमूषितम्। रक्तशक्त्या युतं वामे वराभयकरं भजे ॥४२२०॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

कालीकुले तु-

नीलांबरं नीलविलेपयुक्तं शंखादिभूषासिहतं त्रिनेत्रम् । वामांकपीठस्थितनीलशक्ति वदामि वीरं करुगानिधानम् ॥४२२१॥

यनुत्तरे तु-

वंदे गुरुपदद्वन्द्वमवाङ्मनसगोचरम् । रक्तगुक्लप्रभामिश्रमतक्यं त्रेपुरं महः ॥४२२२॥

ग्रन्यच्च-

गुरुं ध्यात्वा च संपूज्य पादुकां प्रजपेत् ततः।

अत्र पादुका यथाधिकारतो ज्ञातव्या । सा च लघुस्थूलमहापदपूर्वात त्रिधा । लघुस्तु—

बाला च भुवनेशानी रमा चैव सुरेश्वरि । भावत्रयमिदं प्रोक्तं गुरुमंत्रे प्रतिष्ठितम् ॥४२२३॥

ततः स्वगुरुनामान्ते त्रानन्दनाथमालिखेत्।

रक्तशक्तिपदांते च ग्रंबापदमथालिखेत्। श्रोपादुकां समुच्चार्य पूजयामीति संजपेत् ॥४२२४॥

ग्रथ स्थूलपादुका-

प्रगावं वाग्भवं मायां लक्ष्मीबीजं समुद्धरेत्। ह स् ख फ्र तथानंदभैरवं कूटमुद्धरेत्।।४२२४।। स ह ख फ्र तथानंदभैरवीं हिरतं ततः। विपरीतं पुनस्तच्च तदंते गुरुनाम च ।।४२२६।। श्रानंदनाथशब्दांतमम्बातं शक्तिनाम च । पादुकांते पूजयामि नमोऽन्तं परिकीत्तितम् ।।४२२७।।

ग्रय महापादुका श्रीदक्षिगामूर्तिसंहितायाम् — .

ह्स्रोमादावथालिख्य ह स क्ष म ल वानिलान् । विकास विकास विकास विकास विकास समूख्येत् स्वरे: । मुख्येष्ट्रनवामांगश्चतिनेत्रस् मंहितेः । १४८२ विकास प्रेड्रने हिंदी हैं । १४८२ विकास प्रेड्रने हिंदी हैं । १४८२ विकास प्रेड्रने हिंदी हैं । १४८२ विकास प्रेड्रने हैं । १४८२ विकास प्रेड्रने हैं । १४८२ विकास प्रेड्रने हिंदी हैं । १४८२ विकास प्रेड्रने हिंदी हैं । १४८२ विकास प्रेड्रने हिंदी हैं । १४८२ विकास प्रेड्रने हैं । १४८२ विकास प्रेडें । १४८ विकास प्रेड्रने हैं । १४८ विकास प्रेड्रने हैं । १४८ विकास प्रेडें । १४८ विकास प्रे

Buttenny

Coursen

बीजत्रयमिदं मद्रे बिंदुनादकलात्मकस् ।
श्रीपरांते पावकेति सर्वाराध्यपदं लिखेत् ॥४२२६॥
सर्वमूर्ध्नपुरांते च नाथसर्वगुरुस्वयम् ।
गुरुश्रीगुरुनाथांते ह स क्ष म लवयां तथा ॥४२३०॥
रेफदीर्धश्रुतियुतान् बिंदुनादकलात्मकान् ।
पिंडीकृत्य लिखेदाद्यं चतुर्थं च ततो लिखेत् ॥४२३१॥
तृतीयं पूर्ववल्लेख्यं द्वितीयमिप पार्वति ।
ततः श्रीशंभुगुर्वतं पुनराद्यं समालिखेत् ॥४२३२॥
श्रादिक्टचतुष्कांते चाथ तार्त्तीयमालिखेत् ।
वसुसंख्येश्व देवेशि चत्वारिशिद्भरक्षरेः ॥४२३३॥
मण्डितोऽयं मनुर्देवि स्मरेन् निजगुरुं प्रिये ।

ग्रथ श्रीमदनुत्तरविषये श्रीगुरुपरमपरमेष्ठिपरात्परभेदात् चतुर्घा भेदाः।

तेवां यथाक्रमेगाद्धाराः । यथा यामले-

सरस्वत्यादिकं षट्कं प्राणो जीवस्तथापरा।
वायुरीशेन संयुक्तः स्पर्शोऽधोशस्तथैव च ॥४२३४॥
मत्स्यं क्षारं शेवरूपं वाणः कांतिर्लता युता।
तामसी रसवल्लीयुक् स्वगुरवे नमः पदम् ॥४२३५॥
प्रमुकानन्दनाथश्च ग्रमुकांबा तथैव च ।
श्रीपादुकां पूजयामीत्यष्टाविशाक्षरो मनुः ॥४२३६॥
सरस्वत्यादिकं षट्कं जीवः प्राणः शिवः पदम् ।
वायुरीशो द्युतिस्तीक्ष्णः स्पर्मसृष्टिः स्वरादिमम् ॥४२३७॥
गंधो रसः त्रिमूर्त्यांद्यः तन्द्रो मृत्युश्च यांतिकः ।
तेजो जोत्स्ना कामिनो च लांतिकः पद्मना मगः ॥४२३८॥
श्रीपरांते मगुरवे प्रोग्चरेद् हृदयं ततः ।
पूर्ववन नाम चोज्ञार्य एकत्रिशाक्षरो मनुः ॥४२३६॥
८८ त्रिमार्थकर्राते R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

सरस्वत्यादिकं षट्कं जीवः प्रागाः परा शिवः।

वायुरोशः स्वरादिश्र श्रोत्रं तंद्री स्वरादिमः ॥४२४०॥

लादिमो मातृकाद्यश्च तंद्री तीक्ष्णा च यांतिकः।

महाकालः प्रतिष्ठायुक् दीर्घा चक्षुश्र लोहितः ।।४२४१।।

रागः स्पर्शं रसः शांति लंपटः शांति धांतिकः।

ज्योत्स्ना वृषः पालिनी च शांति श्रीगुरवे नमः ॥४२४२॥

पूर्ववन् नाम चोच्चार्य परमेव्ठीगुरुस्तथा ।

चतुस्तारं कुमारीं च तेजोवायुथ वांतिकः ॥४२४३॥

विद्यायुग् रसवायुश्च प्रोतिः जीवद्वयं नमः । ठद्वयं सृष्टिसूक्ष्मायुक् रसोरूपश्च शब्दयुक् ॥४२४४॥

स्पर्शोऽर्घो तीक्ष्णवाक् स्पर्श उपस्थ श्रोत्रकामिनी । रसपुक् तोक्ष्णाग्निदोर्घा श्रोत्रं तोक्ष्णाग्नि श्रोततः ॥४२४५॥

स्मृत्यर्घीशः क्रोधिनी च इंघिका श्रीपदं ततः । पूर्ववत् नाम प्रोच्चार्य परात्परगुरुस्तथा । एवं श्रीपादुकाः स्मृत्वा मुद्रया प्रग्मेद् गुरुस् ।।४२४६॥

मुद्रया संघहमुद्रया । पंचमुद्राभिश्च संबट्टया म्मृत्वान्ते पंचमुद्राभिः प्रयामेदित्यर्थः । पूर्वोक्ता सा त्रिधा गौडकेरलकाश्मीरभेदात् । यच्च शक्तिसंगमे —

संघहनाख्या मुद्रा वै त्रिविधा परिकोतिता।
तथेह गौडे संघहा मुद्रा संकीत्यंते ह्यथ ॥४२४७॥
करद्वयं तु संयोज्य ह्यधोवक्रं सुलक्षरणम् ।
नखेनंखांन सुसंयोज्य तथांगुष्ठावधो गतौ ॥४२४८॥
मस्तके योजयेद् देवि मुद्रा संघहनाभिधा।
केरले स्यादियं किंचित् मेदतश्च निशामय ॥४२४६॥
पूर्वमुद्रां नु संयोज्य कनिष्ठे विरलीकृते।
संघहनास्या मुद्रा तु द्वितीया परिकोतिता ॥४२४०॥
विराह्मास्या मुद्रा तु द्वितीया परिकोतिता ॥४२४०॥

काश्मीरे संप्रदाये तु तस्या मेदं शृणु प्रिये।

ग्रत्रापि मेदिद्वतयं किनष्ठे भिन्नयोजिते।

तृतीया जायते मुद्रा चतुर्थी सर्वथोत्तमा ॥४२५१॥

ग्रंगुष्ठानामिका मध्या योन्याकारेण योजयेत्।

कृत्वा करद्वयस्यैवं ह्यथोवक्त्रं सुशोमनम् ॥४२५२॥

तर्जन्या तर्जनो योज्या किनष्ठायां किनिष्ठिका।

तर्जनी द्वे किनष्ठे द्वे चामितोध्वं नियोजिते।

संघट्टनाख्या मुद्रेयं जायते सर्वसिद्धिदा॥४२५३॥

एषा श्रोगुरुपादुकास्मरणावसरे मूब्नि विधेया। स्मरणांते पंचमुद्राभिस्तं प्रणमेत्। ता यथा यामले —

सुमुखं च सुवृतं च चतुरस्रं च मुद्गरम् । योनिश्च पंचमी प्रोक्ता स्राभिश्च प्रसमेद् गुरुम् ॥४२५४॥

तल्लक्षगानि यथा-

विकसितकर उत्तानांजिलः सुमुखम् । इदमेव मुष्टीकृतं सुवृत्तम् । ऊर्ध्वा-धःस्थितयोः वामकरतलयोरंगुलीनां मिथो मिए। विद्ये चतुरस्रा। ग्रधरोत्तरस्य वामदक्ष-मुष्टियुगस्य स्वाभिमुख्येन योजने मुद्गरः । तिर्येग् मिलिताग्रयोः मध्यमयोः पश्चाद्द-ध्वधिःस्थिते वामदक्षानामिकेति करः प्रसारिते तर्जनीम्यां निष्पोद्ध्य वामकिष्टिष्टं दक्षिण्या घृत्वांगुष्ठाग्रयोः मध्यमा पुरो मध्यपर्वद्वयसंबंधे योनिरिति ।

ग्रथ शावरमंत्राणां जागृति शृणु पार्वति कांस्यमाजनमानीय शुद्धं मस्मादिमिः कृतम् ॥४२५५॥ प्रजपेद् रिवरात्रौ तु यामे यामे शताष्टकम् । खादियां ताडयेद् यष्ट्या कांस्यपात्रं वदेदिति ॥४२५६॥ जागृतो भव मंत्रस्य भाषयाथ तुरीयके । वामे दद्याद् वालं काल्या मंत्रेण भैरवस्य तु ॥४२५७॥ कुक्कुटं चान्यदेवेषु स्फोटयेन् नारिकेलकम् ।

गुक्रु पार्या अवित । यह शीयमाषात्मकः शावरमंत्रः तह शीयभाषयैव मंत्रस्य शोधनं कार्यम् । जागृतो भवेति वदेत्यर्थः ।

इति श्रीमदागमरहस्येसत्संग्रहेऽष्टादशः पटलः ॥१८॥ भ्रादितः षट्चत्वारिशत्।

म्रथ एकोनविशः पटलः।

ग्रथ भावाः कुलचूडामगा। देव्युवाच-

वीरभावो महादेव कथ्यते श्रृणु भैरव।
निर्द्वन्द्वमानसो भूत्वा हृदा कामकला तनुः ॥४२५८॥
निशासु पूजा कर्तव्या हेतुयुक्तः सदैव हि।
निजं कुलं समाधाय स्वयं भैरवरूपधृक् ॥४२५६॥
कुलं च भैरवीरूपं तद्गात्रे न्यासिवस्तरम्।
विन्यस्य सकलं न्यासं नवयोन्यात्मकं तथा ॥४२६०॥

नवयोन्यात्मकमिति श्रीविद्यापरम्।

प्रसूनतूलिकामध्ये पुष्पप्रकरसंयुते । नानागंधसमाकीर्गो कुलद्रव्येरा यंत्रकम् ॥४२६१॥ लिखित्वा पूजयेत् शक्तौ घटस्थापनपूर्वकम् । ध्यात्वेष्टदेवतां तत्र जपेदष्टोत्तरं शतम् ॥४२६२॥ धेनुयोनी प्रदर्शाथ ग्रमृतं तद् विचितयेत्। दृष्ट्वामृतमुपात्तं व नृत्यंति योगिनीगर्गाः ॥४२६३॥ नृत्यंति भैरवाः सर्वे नृत्यंति मातरोऽपि च। इंद्रादयः सुराः सर्वे नृत्यंति मधुलोलुपाः ॥४२६४॥ श्रघंमांडं त्रिघा कृत्वा गुरवे चैकभागकम्। एकं कुलाय वे दत्वा एकेन देवतर्पराम् ॥४२६५॥ ततः श्रीगुरुरूपाय साक्षात् परिवावाय च । कराम्यां पात्रमुद्धृत्य सद्वितीयं समर्पयेत् ॥४२६६॥ साक्षाद् यदि गुरु नं स्यात् तदा तोये विसर्जयेत्। निर्मन्त्रं न पिबेन् मद्यं प्रायदिचत्तं विधीयते ॥४२६७॥ तस्मान् मंत्रविधानेन कर्तव्यं कुलनायिके । इदं पवित्रममृतं पिवामि भवसेषज्ञ । ध्रांके द्वाद्म (Bangotri

पशुपाशसमुच्छेदकारग् भैरवोदितम्। चित्ते स्वातंत्र्यसारत्वात् तस्यानंदमयत्वतः ॥४२६९॥ तन्मयत्वाच्च भावानां भावादचान्तर्हिता रसे। स्वस्वातंत्र्यविकासाय स्वरसः स्वेन पीयते । तस्मादिमां सुरां देवीं पूर्णाहंतां पिबाम्यहस् ॥४२७०॥ मंत्रेगानेन देवेश मूलमंत्रेग मंत्रवित्। म्रनाकुलमनाः कुर्यादलिपानं शनैः शनैः ॥४२७१॥ स्वात्ममूलित्रको एस्थे कोटिसूर्यसमप्रमे । कुण्डल्याकृतिचिद्वह्नौ हुनेद् द्रव्यं समंत्रकम् ॥४२७२॥ श्रहंतापात्रभरितमिदंतापरमामृतम् । पराहंतामये वह्नौ होमः स्वीकारलक्षणम् ॥४२७३॥ गुरुदैवतमंत्राणामैक्यं संचितयन् धिया । यावदुल्लासपर्यन्तमुपदंज्ञैः पिबेत् मघु ॥४२७४॥ भोजनांते विषं पानं पानांते भोजनं विषम्। श्रमृतं तद्विजानीयाद् यदन्तं सुरया सह ।।४२७५।। चर्वणोन विना पानं केवलं विषभक्षणम्। सहितं चर्वऐोनाथ ह्यमृतं कथितं प्रिये ।।४२७६।। दृष्टिमानसवाक्काये यीवन्त बलविभ्रमः। तावत् पानं प्रकर्तव्यं पशुपानमतः परम् ॥४२७७॥ यावन्नेन्द्रियवैकल्यं यावन्नो मुखवैकृतिः। तावदेव पिबेत् द्रव्यमन्यथा पतनं मवेत् ॥४२७८॥

ग्रत्रव पूर्णाभिषेकिनां पानं यथा कुलार्णंवे—
कराम्यां पात्रमुद्धृत्य स्मरत् मूलं च पादुकास् ।
ग्रागलान्तं पिबेद् द्रव्यं स मुक्तो नात्र संशयः ।।४२७६॥
विश्वतंजसप्राज्ञानां शोधनं यन्मलेस्त्रिमः ।

तदेव हेतुर्मुक्तेश्च गुद्धो यस्मात् सदाशिवः ।।४२८०॥ CC-0. Arutsakim R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri मलत्रयं तु श्राणवं कार्ममायीयमिति । मलत्रयरिहतत्वात् शुद्धत्वम् । शुद्धः शिव एव। तत्राणवो नाम सदाशित्रस्य स्वस्यानवमर्शः । कार्मो नाम पुण्य-पापवानहिमिति प्रतीतिः । मायीयो नाम श्रहंकारादावात्मबुद्धिरिति ।

पीत्वा कुलरसं नानावस्त्रालंकारभूषितः। भ्रानंदरूपवान् भूत्वा पूजयेत् परमेश्वरीस् ॥४२८१॥ तत् तत् कल्पविधानेन तत्र यत्नेन पूजयेत्। विसर्जनं विधायांते स्वकुले योजयेत् ततः ॥४२८२॥ तद्विबरसपानेन ह्यमृतं भुज्यते मया। जलपूतं हिवर्द्रव्यं गृहोत्वा तर्पयेत् ततः ॥४२८३॥ विधाय तर्पणं देव प्रदक्षिणमनुवजेत्। स्तुत्वा प्रग्गम्य कल्पोक्तस्तवेन तोषयेत् ततः ।।४२ ८४।। इति वीरकुलं देव देववंद्यं मनोहरम्। यह ेशे वर्तते वीरस्तत् कुलं वापि भैरवम् ।।४२८४॥ न च मारीमयं तत्र न च राजभयादिकस्। सुमंगलं सदा तत्र धनपुत्रविवर्धनम् ।।४२८६।। लक्ष्मीस्तत्र महादेव सुस्थिरा भवति ध्रुवस् । माला नृदंतसंभूता पात्रं मानुष्यमुण्डकम् ।।४२८७।। श्रासनं सिहचर्मादि कंकरां स्त्रीकचोद्भवस् । द्रव्यमासमात्माढ्यं भक्ष्यं मांसादिकं प्रिये ॥४२८८॥ चर्वणं वालमत्स्यादिमुद्रा वीगारवः कथा। मैथुनं वरकांतादिसर्ववर्णसमानता ॥४२८६॥ वीरमावे सदा कार्यमेवं साधकसत्तमै:। सुप्तं संबोधयेन् मंत्रमवश्यं वृक्षमूलके ॥४२६०॥ यदा तदा कुंजे वारे इमशानगमनं चरेत्। पूजाफलं भवेत् तत्र सप्तवासरजं तदा ॥४२६१॥ चतुर्दश्यां गते तत्र पक्षपूजाफलं लमेत्। न गच्छेद यदि तत् स्थाने पद्यारेत ति।संश्रायः व।१४ २१०२।।।

नारत्यस्मादधिकं देव इति चितापरायगः। मादकद्रव्यभोक्ता तु भवेत् कुलपरायगः ॥४२६३॥ साधके क्षोममापन्ने अम क्षोभः प्रजायते । तस्माद् यत्नाद् वीरवरो भवेद् भोगयुतः सुखी। भोगेन मोक्षमाप्नोति भोगेन कुलसाधनम् ॥४२६४॥ विना हेतुकमास्वाद्य क्षोभयुक्तो महेश्वरः। न पूजां मम संपर्कं न घ्यानमनुज्ञितनम् ॥४२६५॥ तस्माद् भुक्तवा च पीत्वा च पूजयेत् परमेश्वर । नात्र मद्युतिदोषोऽस्ति नापरं स्याद्धि दूषराम् ॥४२६६॥ यद् यद् वदति निद्राति यत् करोति यदर्चति । तत् सर्वं कुलरूपं तु ध्यात्वा च विहरेत् सुधीः ।।४२६७।। एकाकी निर्जने देशे इपशाने पर्वते वने । ज्ञून्यगेहे नदीतीरे निःसंगो विहरेन् मुदा ।।४२६८।। वीराग्गां जपकालस्तु सर्वकाले प्रशस्यते । सर्वदेशे सर्वपोठे कर्तव्यं च न संशयः ॥४२६६॥ यदि विप्रो भवेत् त्रस्तः कुलघर्मपरायगः। तदानेन विधानेन कर्तव्यं कुलतोषग्रम् ।।४३००।।

विप्रो वीर एव।

ग्रपराजिता पुष्पगर्भे कुलस्थानं मनोहरम् ।
सर्वदेवमुखं तत्र महाकामकलात्मकम् ॥४३०१॥
हयारिकुमुमे देव स्वयमस्मि सदाशिवः ।
तत्मघ्ये लघुमाधाय पुष्पमघ्ये तु चंदनम् ॥४३०२॥
रक्तं च कुसुमं दत्वा घ्यात्वात्मानं शिवात्मकम् ।
योजयेत् शिवशक्त्योस्तु तदेवयं मावयन् घिया ॥४३०३॥
क्षर्णां विचित्य तत्रैव संपूज्य परमेश्वरीम् ।
जप्त्वा तदेव कुण्डाख्यं द्रव्यं परमदुर्लभम् ॥४३०४॥
СС-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

यत्रापराजितापुष्पं जपापुष्पं च शैरव। करवीरं रक्तगुक्लं द्रोरापुष्पं च तिष्ठति ॥४३०५॥ तत्र देवी वसेन् नित्यं तद् यंत्रे मां प्रपूजयेत्। मम दत्ते जवापुष्पे पट्टवस्त्रफलं लभेत् ॥४३०६॥ ब्रह्महत्यादिकं पापं क्षरणान् नश्यति निश्चितस्। श्रपरायाइच माहात्म्यं वक्तुं शक्यं न चेश्वर । वीरसाधनकार्यं च कर्तव्यं वीरपूरुषै: ॥४३०७॥ दिन्यैरिप च कर्तन्यं पशुमि र्न च पामरैः। यद्यदन्यत् पुरा प्रोक्तं संकेतं मंत्रसाधने ॥४३०८॥ तत् सर्वमेव सततं कुर्याद् वीरो महाबलः। दिन्ये वीरे न भेदोऽस्ति यो देहः स तु कथ्यते ॥४३०६॥ शांतो विनोतो मधुरः कलालावण्यसंयुतः। दिव्यस्तु देववत् प्रायो वीरवचोद्धतमानसः ॥४३१०॥ विभूतिभूषर्गविषि चंदनेनापि लेपितः। श्राकारगोपनो वापि व्यक्तो वा कुलभैरव ॥४३११॥ रक्तचंदनदिग्धो वा वैष्णावो वाप्यवैष्णवः। श्रपमाने च पूजायां हृष्टः पुष्टः सदा भवेत् ।।४३१२॥ देविनदापरो वापि तत्पूजा तत्परोऽथवा। पूजापरस्तद्रहितः कुलाकुलमते स्थितः ।।४३१३।। निजभावसमायुक्तो देववद् विहरेत् क्षितौ। स्वकुलांते पुरवचर्या कार्या रात्रौ न चान्यथा ।।४३१४।। पतिहोना यथा नारी सर्वकर्मविवर्जिता। कुलं विना तथा देव सर्वदा मम साधने ॥४३१५॥ नाधिकारीति कौलेश तस्मात् मावपरो भवेत्। श्रविनीतं कुलं यस्य स कथं सस प्राप्तिकाशीकि है १६१६ ptri

तस्माद् यत्नात् तथा कार्यं यथा स्याद् विनयान्वितम् । भावाभावात् कुले शास्त्रे नाधिकारः कथंचन ॥४३१७॥ तेन मावविशुद्धस्तु साधकः कौलिको भवेत्। पशुभावं प्रवक्ष्यामि शृणु वत्स समाहितः ॥४३१८॥ यथाविधि पर्शाविद्यां गृहीत्वा भावतत्परः। प्रथमं गुरुसेवार्थ यत्नतः शुद्धिमाचरेत् ॥४३१६॥ न मत्स्यभोजनं कुर्यात् न स्त्रियं मनसा स्मरेत्। न परद्रव्यलोभी स्यात् न मोगे मानसं चरेत् ।।४३२०।। सिंधुतीरे पर्वते वा कानने वा सुरालये। बिल्वमूले विविक्ते च पुण्यक्षेत्रे च शोमने ॥४३२१॥ यजेत् देवं जपेन् मंत्रं देवताध्यानतत्परः । देवता शुभ्रवर्णा च ध्यातव्यानन्यचेतसा ॥४३२२॥ त्रिसंध्यं देवपूजा तु त्रिसंध्यं जपमाचरेत्। रात्रौ मंत्रं च मालां च स्पृशेन् नंव कदाचन ॥४३२३॥ न मंत्रमुचरेद् भुक्त्वा मौनी स्यात् सर्वकर्मसु । पर्वकाले स्त्रियं नैव गच्छेत् साधकसत्तमः ॥४३२४॥ मैथुनं तत् कथालापं तद् गोष्ठीं च विवर्जयेत्। ऋतुकालं विना क्वापि गच्छेत् न स्त्रियमादरात् ॥४३२५॥ पुष्पं गंधं जलं चैव स्वयमानीय पूजयेत्। पुराग्रथवंगो श्रद्धा वेदवेदार्थतत्परः ॥४३२६॥ न रात्रौ भोजनं कुर्यान् न तांबूलं महेश्वर । गुरुएगा यद् यदिष्टं स्यात् तत्सर्वं यत्नतश्चरेत् ॥४३२७॥ न शूद्रदर्शनं कुर्यात् कौटिल्यं यत्नतस्त्यजेत्। स्वजातकुसुमं चैव हेतुद्रव्यं च भैरव ॥४३२८॥ स्पृष्ट्वा तथा समाघ्राय पंचगव्येन गुद्धचित । रक्तवस्त्रं न गृह्णीयाद् देवीभक्तिपरायगः ॥४३२६॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

विष्णुतन्त्रस्थकल्पानि तदनुष्ठानमेव च । कार्यं वीरकथालापं न कुर्याद् वीरवंदित ॥४३३०॥ नित्यश्राद्धं गयाश्राद्धं संध्यावंदनमेव च। तीर्थस्नानं तथा पीठगमनं धर्मतत्परः ॥४३३१॥ कुर्याद् भक्त्या प्रयत्नेन चितयन् दैवतं निजम्। प्रभाते स्नानसंध्यादि मध्याह्ने जपमीश्वर ॥४३३२॥ श्रौर्णमासनमात्मार्थं भक्ष्यं पायसञकरा । भोगः स्वकीयकांताया ऋतावेव न चान्यथा ॥४३३३॥ पशुस्तु द्विविघो देव पूर्वेगा सह भैरव। श्रस्याधिकारः पूजायां न गुरुत्वे कदाचन । ४३३४॥ पूर्वस्य नाधिकारोऽस्ति पूजायां देशसंभ्रमे। पूर्वेस्तु सर्वकालाहें बंहिः कार्यः स्वदेशतः ।।४३३४।। पूर्वदर्शनमात्रेग कुलदर्शनमाचरेत्। ब्रह्महत्यादिकं पापं वरं तच्च वरं निह ।।४३३६।। पूर्वदर्शनमेवात्र सत्यं सत्यं वदाम्यहस् । वरं कुलपरित्यागं करं स्वकुलिहसनम् ।।४३३७।। न वरं स्यात् पशोः संगं स्वधर्मक्षयकार्गात् । कुलशास्त्रे द्वयं पापं गरिष्ठं सर्वनाशनम् ॥४३३८॥ एकं स्वकुलनिंदा स्यात् द्वितीयं पशुसंगजम् । स भावः पशुमावः स्यात् जन्मत्रयविमावनात् ॥४३३६॥ वीरभावो भवेद् देव ततो देवं प्रजायते । वीराच्च जायते देवो देवाद् वीरः प्रजायते ॥४३४०॥ सर्वथा तत्र मावौ द्वौ न प्रकाश्यौ कुलेववरै;। दिन्ये वीरे न संदेहः साम्यमित्यिमधीयते ॥४३४१॥ मावो हि मानसो धर्मः शाब्दः स हि कथं भवेत्। तस्मात भावो न वक्तव्यो दिङ्मात्रं समुद्राह्तस् स्प्रिक्रिश्रे यथेक्षुदंडमाधुर्यं मनसा जायते प्रभो । तथा भावविभावस्तु मनसा परिभाव्यते ॥४३४३॥ इति । यथ द्रव्यपंचकेऽभेदभावकथनं ज्ञानार्णवे—

निर्विकल्पस्य यद् द्रव्यं कथितं वीरवंदिते । न हि तत् सविकल्पस्य शंकातंकितचेतसः ॥४३४४॥

सर्वशंकाविनिर्म्कः सर्वज्ञः साधकोत्तमः । पंचतत्त्वं निषेव्याथ खेचरो जायते प्रिये ॥४३४५॥

ब्रर्ध्यपात्रे विह्नसूर्यसोमामृतमये शिवे। सोमामृतं तु जानीयात् नानाद्रवमयी सुरा ॥४३४६॥

सविकल्पस्य देवेशि वर्णानुक्रमभेदतः । कथ्यते द्रव्यभेदस्तु क्रमेग् वरर्वीग्गनि ॥४३४७॥

क्षीराज्यमधुमैरेया द्रव्यमेदा भवन्ति हि । सर्वज्ञत्वे वरारोहे यज्ञे दोषो न विद्यते ॥४३४८॥

श्रश्वमेघादियज्ञेषु वाजिहत्या कथं भवेत् । द्रव्यमेदा वरारोहे बहवः संति मेदतः ॥४३४६॥

जलं क्षीरं घृतं भद्रे मघुमेरेयमेक्षवम् । पौष्पं तरुभवं घान्यसंभवं चेक्षुसंभवम् ॥४३५०॥

सहकारफलं देवि विविधं बहुमेदतः । मादकं सर्वदा पापकारकं संशयावृते ॥४३५१॥

तद्विहोने तदेव स्यात् महापातकनाशनम् । ब्रह्महत्या सुरापानस्वर्णस्तेयादिपातकात् ॥४३५२॥

नाशयेत् पूजनाद् देवि निर्विकल्पश्च मंत्रवित् । विचारं च यदा कुर्यात् सर्वत्र वीरवंदिते ॥४३५३॥

घटे जलं समानीतं जले जलचरं भवेत् । स्थापितं स्याद् बहुदिनं जलं जीवसमन्वितम् ॥४३५४॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

क्षीरं वै यस्य जोवस्य तस्य मांसं न संज्ञयः। कृशा पुत्रवती नारी बंध्या पुष्टा ततः प्रिये ।।४३५५।। माकंदफलजं रम्यं द्रव्यं सेव्यं द्विजातिभिः। प्रमोदकत्वाद् देवेशि शैशवे सेव्यते नरै: ।।४३५६।। अनामिषं नास्ति किंचित् सर्वं क्षोरादिकं प्रिये। वेदशास्त्रपुराणेषु इति ज्ञानसमुच्चयः ।।४३५७॥ सर्वभूतेषु विज्ञानं ज्ञातव्यं देशिकोत्तमै:। काष्ठिनर्मथनाद् देवि प्रकटो विह्निरुच्यते ।।४३५८।। तत् काष्ठं दह्यते तेन तथा ब्रह्ममयं जगत्। पापपुण्यविनिर्मुक्तं ज्ञायते तद् वरानने ।।४३५६।। किचिदुल्लासपर्यन्तं ग्राह्यमेतत् सुरेश्वरि । यज्ञांगं सेवते लौल्यात् पातको ब्रह्महा भवेत्। मादकं वस्तु सकलं वर्जयेत् पापकर्तृकम् ॥४३६०॥ धर्माधर्मपरिज्ञानात् सर्वशोऽपि पवित्रति । विग्प्यूत्रस्त्रीरजो वापि नखाशी सकलं प्रिये ॥४३६१॥ विचारयेन् मंत्रवेत्ता पवित्राण्येव सुव्रते । श्रन्नं ब्रह्म विजानीयात् तेन तस्य समुद्भवः ॥४३६२॥ नानाजीवाश्रयं तत्र पुरीषं केन दुष्यति । नानाविधा हि देवेशि देवता सलिले स्थिता ।।४३६३।। तेनोदकेन यज्जातं मूत्रं कस्माद्धि दुष्यति । गोमूत्रप्राशनं देवि गोमयस्यापि मक्षराम् ॥ ४३६४॥ प्रायश्चित्तं तु कथितं ब्रह्महत्यादिके प्रिये। मले मूत्रे तु ये दोषाः भ्रांतिरेव नं संशयः ॥४३६५॥ स्त्रीरजः परमेशानि देहस्तेनैव जायते। क्थं तद् स्यूष्यां इतेन प्राप्यते व्याने प्रम् विकार क्षेत्र प्रम्

पौरुषं चैव यद् बीजं बिन्दुस्तद्वािमधीयते ।
बिदुस्तु परमेशािन योगोऽयं देहकारकः ॥४३६७॥
यद् योगे देहसंमूितः तत् कथं दूष्यते दुधः ।
ग्रतः पिवत्रं देहस्य कारणं केन विद्यते ॥४३६६॥
ज्ञानमार्गेण सकलं निर्विकल्पं मवेत् प्रिये ।
विकल्पे च कृते देवि पातको जायते नरः ॥४३६६॥
मानृगर्माद् विनिर्याति शिशुरेव न संशयः ।
इन्द्रियाण्यचलान्यस्य देहस्थान्यपि वत्से ॥४३७०॥
निर्विकारतया तत्र नान्यथा मवित प्रिये ।
भगिलगसमायोगो जन्मकाले भवेत् सदा ॥४३७१॥
काम्यते सा यदा देवि कि न स्यात् गुरुतल्पगः ।
ग्रतण्व सदा तस्य वासना कुत्सिता भवेत् ।
पवित्रं सकलं वस्तु वासना कलुषा स्मृता ।
ग्रतो विधिमुपािश्वत्य निर्विकल्पं मनश्चरेत् ॥४३७३॥

ग्रथ पंचमकाराणां नामान्यागमान्तरे--

कौलपंचपदार्थानां नामान्यागमजानि वे ।

निरूप्यन्ते यदेतेषां कौलिकं नाम चोच्चरेत् ॥४३७४॥

ग्रांतरव्यवहारेषु ज्ञेयमेतिदतोऽिखलेः ।

प्रथमं कारणं द्रव्यं हेतुस्तत्त्वमलीति च ॥४३७४॥

द्वितीयं साधनं शुद्धिरमंत्रं तर्पणं तथा ।

तृतीयं वारिजं शल्यं निर्निमेषं च कर्तनम् ॥४३७६॥

चतुर्थमुपभोज्यं च मुद्रा खाद्यं च वैष्णवस् ।

पंचमं संसृतिः सामरस्यमानंद एव च ॥४३७७॥

एतद् भेदस्वरूपं च कथ्यामि यथोक्तवत् ।

गौडो माध्वी च पृष्टी च त्रिविधं प्रथमं स्मृतस् ॥४३७६॥

СС-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

क्षौद्रेक्षवादि संभूतं गौडी सात्विक मुच्यते । मघूककुसुमद्राक्षातालवृक्षादिसंभवस् ॥४३७६॥ माघ्वीत्युक्तं राजसं तत् पिष्टतंडुलजादिकस् । पैष्टीत्युक्तं तामसं तद् बाह्यणे नृपवैश्ययोः ॥४३८०॥ शूद्रे च क्रमतः श्रेष्ठं पुनरेतन् निरूप्यते । द्राक्षाखर्जूरमधुभि र्गुडान्नमधुपुष्पकैः ॥४३८१॥ जातं वृक्षसमुद्भतं सप्तधेवं प्रकीतितम् । पूर्वं पूर्वमुत्तमं स्याद् दुष्टामोदिवविजतम् ॥४३८२॥ विकारतेक्ष्योष्ग्रहीनं शीघ्रबोधकरं तथा। सुगंघं रञ्जितं स्वच्छं पाकजं वाप्यपाकजम् ॥४२८३॥ स्वतः संसिद्धमिप वा प्रथमं पूजनोदितम् । निर्मितं याचितं क्रोतमुत्तमाधममध्यमम् ॥४३८४॥ छागमेषौ ग्रामभवौ वराह्यशाललकाः। खड्गी तथा रुरुमृगः गोधा ग्रष्टौ वनेचराः ॥४३८४॥ कुक्कुटौ ग्रामवनजौ चक्रसारसबहिएाः। जलकुक्कुटचटकराजहंसाश्च तित्तिरिः ॥४३८६॥ हंस एते दशविधाः खगा एवं द्वितीयकम्। कूर्ममत्स्याविति द्वेघा तृतीयं परिकोतितम् ॥४३८७॥ श्ररोगिएाः कालहताः कोमला पुष्टदेहकाः । मधुराम्लादिसहितं सुपक्वं घृतपाचितम् ॥४३८८॥ सुगंघतेलपक्वं वा सुस्वादु च मनोहरस्। माषजा चराकोत्त्था वा गोधूमतंडुलोद्भवाः ॥४३८६॥ मधुरा लवगाढ्या वा पक्कास्तेले घृतेऽपि वा। सुस्वाद्या दर्शनीयाश्च मुद्रा प्राह्मा प्रपूजने ॥४३६०॥ प्रथमादित्रयं चाष्टगंधेन तु पृथक्तमम्। पिष्ठा संवोद्ध गुद्धिका सनुष्ठाव्योदकेमा तत् भारत् रहिन्।

योजयेत् प्रथमस्यानुकल्पं मुख्यमिदं स्मृतस् । श्रथवा नारिकेलान्तर्जलं कांस्येषु संन्यसेत् ॥४३६२॥ क्षीरं वा ताम्रपात्रस्थं गुडतक्रमथापि वा। तोयमेक्षवसंयुक्तं मधुना वा समन्वितम् ॥४३६३॥ गंधोदकं वानुकल्प ग्राद्यस्यैवं प्रकीर्तितः। पलांडु र्वापि लसुनमार्द्रकं वा द्वितीयके ।।४३६४।। नृतीये विजयायुक्तवटकं चराकोद्भवम्। तदाकृतिकृतं तद्वत् मूलकं गर्जरं तथा ॥४३९५॥ चतुर्थे नानुकल्पं स्यात् न हि मुख्यं तु पंचमम्। कुसमं लिगयोन्योर्वा काइमीरचंदनेऽथवा ॥४३९६॥ श्रीपात्रे योजयेदेतत् मूलेन मूलमेव वा। ग्रष्टकृत्वो जपेदेतद् बालादौ प्रोक्त एव हि ।।४३६७॥ मुख्यालाभेऽसंभवे वानुकल्पो नान्यथा क्वचित्। मुख्यं निषिध्यानुकल्पग्रहणात् पतितो भवेत् ॥४३६८॥ एतत् सर्वं पर्यु षितं परित्याज्यं हि पूजने। लौकिकैरागमोक्तैश्च संस्कारेः संस्कृतं तु यत्। पूजासमाप्त्युत्तरं तद् यामात् पर्यु षितं भवेत् ॥४३६६॥ मार्जाराद्येरपहतं नखकेशाश्रुदूषितम् । तथा विकृतिमापन्नं प्रथमाद्यं परित्यजेत् ॥४४००॥ मक्तिमद्भि हीनवर्गैरिप संसाधितं च यत्। द्वितीयाद्यं पूजनार्थेमुपादेयं भवेत्तु तत् ॥४४०१॥ अनिमित्तं तु पूजायाः प्रथमाद्यं तु न स्पृशेत्। पूजानिमित्तमानीतं यज्ञीयं तत् पवित्रकम् ।।४४०२॥ शंका तत्र न कर्तव्या तत् स्पृष्ट्वा तु शुचिभवेत् । CC-0युजामस्ये Rसम्प्रातीतं विष्रेगान्येन वापि च ॥४४०३॥

द्वितीयाद्यं मुख्यमपि यत् किंचित् तं निवेदयेत् । संस्कृतैः प्राक् समायोज्य मुख्यैस्तैस्तै नं चान्यथा ।।४४०४।।

पूर्वानुकल्पेन परं मुख्यं मुद्रां विना भवेत् । नारिकेलोदकादौ तु न द्वितोयतृतीयके ॥४४०५॥

ग्रनुकल्पेष्विप तथा कुसुमेनैव तर्पयेत् । ग्रात्मार्चनेऽक्षताद्यैस्तु पूजयेद् गुरुमुख्यकान् ।।४४०६।।

मंत्रमावर्तयत् स्वात्मीकारं बोवं च भावयेत् । श्रत्र पूजा गुरोर्नास्ति कुमार्यादेस्तथैव च ।।४४०७।।

नैमित्तिके पूजनं तु कुर्याद् गुरुमुखस्य हि । मंत्रं पठन् भावनीयं पात्रदानादिकं क्रमात् ॥४४०८॥

घटिकापूजने त्वार्द्रमूलकेनैव नेतरत्। द्वितीयाद्यनुकल्पं तु स्थापयेदेकपात्रके ॥४४०६॥

तृतीयमात्रानुकल्पेऽप्येवं शुद्धचा सह त्यसेत् । नारिकेलोदकादौ तु यथाशक्तचा समर्चयेत् ।।४४१०।।

शक्त्या वापि समष्ट्योपचारैरावृतिमर्चयेत् । श्रन्यत्र तु यथोक्तं स्यान्नालस्येनान्यथा चरेत् ।।४४११।।

नारिकेलजलादौ तु विशेषाध्यं समाचरेत्। स्वादिष्टयेत्यादिशापमोचनं तदनंतरम्।।४४१२॥

इंदोः कलादि सर्वं च हेतुपात्रादितत् क्रियाम् । ग्रत्राशक्तस्तु सामान्यं कलशं चार्घ्यमेव च ।।४४१३।।

स्थापयेत् तत्र तु कलाः समष्टचा वापि पूजयेत्। पीठं समष्टचा संपूज्य पीठशक्ती यंजेत् क्रमात्।।४४१४।।

रपचर्य यथाशक्तचा त्रिर्मूलेन प्रपूजयेत् । एवं पूजां ततः स्तोत्रं कवचं प्रपठेतः क्रमानुस्राप्ते। ४४० स्थान सहस्रनामपाठश्व तत् तन्त्यासादिपूर्वकम् । मंत्रस्य मानसं श्रेष्ठं स्तोत्रादेवीचिको जपः । इत्येचं नित्यपूजादिविधानं प्रविवेचितम् ।।४४१६।।

इति श्रीमदागमरहस्ये सत्संग्रहे भावाद्यनुकल्पांतकथनं नामैकोनिवशः पटलः ॥ १२ ॥ ग्रादितः सप्तचत्वारिशत् ।

ग्रथ विशः पटलः ।

भ्रय प्रावश्चितम्, त्रिशक्तिरत्ने —

निषिद्धाचरणात् पुंसां विहिताकरणात् तथा । प्रायश्चित्तोपपातः स्यादिति सत्यं न संशयः ।।४४१७।। नित्यकृत्यातिक्रमे तु शांत्यै विद्यां शतं जपेत् । नैमित्तिकातिक्रमे तु सहस्रं प्रजपेन् मनुम्।।४४१८।।

लिंगागमे —

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि प्रायिश्वत्तविधि तव ।
गुरुत्यागकरः शिष्यः प्रायिश्वत्तीभवेद घ्रुवम् ॥४४१६॥
लक्षं श्रीपादुकां जप्त्वा तस्मात् पापाद् विशुद्धचित ।
मंत्रत्यागकरो यस्तु तत् संगं वर्जयेत् प्रिये ।
लक्षमेकं जपेत् मंत्रं होमतर्पग्रतः शुचिः ॥४४२०॥

श्रीपादुंकां गुरुपादुकाम् । त्यागे तु कौलिकस्यैव गुरोः कौलिकानां निषेधः। नत्वकौलिकस्य । तथा च यामले—

मधुलुब्धो यथा भृंगः पुष्पात् पुष्पान्तरं व्रजेत् । ज्ञानलुब्धस्तथा शिष्यो गुरो गुर्वन्तरं व्रजेत् ॥४४२१॥

गुरोः पशोः गुर्वन्तरं कुलीनम् । एतच्च—

यदि देवात् पशोः विद्या लम्यते कुलजेर्जनेः । CC-द्विजंत्रज्ञास्त्रीलिक्कं प्राप्य पुनविद्यामुपाश्ययेत् ।।४४२२॥ CC-द्विजंत्रज्ञास्त्रीलिक्कं प्राप्य पुनविद्यामुपाश्ययेत् ।।४४२२॥ इति वचनेन सुव्यक्तमेव। एवं पश्नामिष पशुगुरुत्यागे दोषो ज्ञेय:। लक्षजपस्तन्मंत्रस्यैव तद्दशांशेन होमादिरिष।

श्रदुष्टमंत्रत्यागेऽपि प्रायश्चित्तं तथैव हि । कृत्वा क्षमापयेत् देवीमंतेश्लोकिममं पठन् ।।४४२३।।

क्षमस्व मातस्तत् पापं हरदेवि कृपां कुरु । इति क्षमाप्य तामेव गृह्णीयात् पापनाज्ञिनीम् ॥४४२४॥

तां पूर्वप्राप्तां विद्याम् । दुष्टमंत्रस्तु त्याज्य एव ।

तथां च यामले—

सकलो बीजहीनस्तु संदिग्धो निदितस्तथा । मनवस्तु न सिध्यन्ति गुरुः स्याद् ब्रह्मघातकः । तदा तं सहसा ज्ञात्वा मंत्रं देवं गुरुं त्यजेत् ।।४४२५।। सकलादिदोषस्तूपलक्षरामात्रम् । ग्रन्येऽपि तत् तत् प्रकरणतो बोध्याः ।

स्रनेकधा पशोरन्नं भुंजते ये च कौलिकाः । लक्षत्रयं जपेद् विद्यां लक्षं चाप्यजपां जपेत् । होमयेत् हविषान्नेन निष्पापः स्यात् तदा ध्रुवम् ।।४४२६।। स्रनेकधा वर्षपर्यंतम् । पशो वीरवेष्णवादेः । स्रत्रापि दशांशमेव होमादिः ।

एकपात्रे पिबेत् द्रव्यं वीरो माहेश्वरो यदि । श्वानोच्छिष्टसमं पानं प्रायिश्वत्तं सकौलिके ॥४४२७॥

गायत्र्यास्तु सहस्रे ग् चोपवासत्रयेगा वा । सम्यक् शोधितचित्तस्तु सुवर्गं गुरवे ददेत् ॥४४२८॥ गायत्री स्वदेवगायत्री ।

बलात् स्वरसतो वापि यो रमेन् मंत्रमातरम् । दशलक्षं मनुं जप्त्वा तुषानलं समाचरेत् ॥४४२६॥ मंत्रमातरं गूरुपत्नीम् ।

मंत्रपुत्र्याः स्वपुत्र्याश्च भिगन्याश्च कुलिह्मयः । स्मर्गाल्लक्षजापेन पूतो भवति कौलिकः ।।४४६३ व्यक्तिः। CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Dightlzed () देखा मंत्रपुत्री पुत्रीत्वेन कृतोपदेशायाः। न भोग्याया शुद्धचर्यं तस्या श्रप्युपदे-शविधानात्। कुलस्त्री वीरपत्नी तद्गमनं भर्तुं रनुज्ञयैव दोषायेति। श्रन्यच्च वीरयामले—

कृत्वा वीरवधं मंत्री वृथापानं गुरोः स्नुषाम् । मंत्रपुत्रीं वीरपत्नीं रिमत्वा लक्षमाजपेत् ॥४४३१॥

इदं वामाचाराकृष्टवीरविषयम् । एवं 'त्रयोदशसहस्रं तु दिव्यवीरवधे जपेदिति । ग्रकामकृतवधविषयं वधानुकूलव्यापारमात्रविषयं वा । ग्राततायि-विषयं वा ।

तथा च-

पंचलक्षजपात् पापशांति गुँ रुवधोद्यमे । यावज्जीवं तु हनने तथा जन्मांतरेष्विप ।।४४३२।। ग्रनस्थिप्राशासंघातं जलौकादिक्षियं तथा । हत्वा चेकादशशतं जप्त्वा पापाद् विमुच्यते ।।४४३३।। सर्पमार्जारनकुलमूषकोष्ट्रखरात् हयस् । गजाद्यांश्च मृगात् सर्वात् हत्वा चाष्टशतं जपेत् । जपेदष्टसहस्रं तु क्षुद्रजंतुवधे कृते ।।४४३४।।

ग्रष्टशतमष्टोत्तरशतं ग्रष्टसहस्रमष्टोत्तरसहस्रम् । शुद्रजंतवः उक्तभिन्नारुछा-गादयः । यत्तु 'छागादिहनने जप्यात् त्रिसहस्रमिति तंत्रान्तरेषूक्तः तदभ्यासकृत-विषयम् ।

अन्यथा त्रिशक्तिरत्ने—

वितानं विना मंत्री घातयेन न पशून् क्वचित्। श्रन्यथा स्मार्त्तमुदितं प्रायश्चित्तं मनीविमिः ॥४४३५॥

गोवधे दशमिलंक्षेमुंच्यते नरकार्णवात् । लक्षे द्वादशभिमंत्री वृषं हत्वा विमुच्यते ॥४४३६॥ गुरुं हत्वा प्रमादेन पंचलक्षेभंवेत् शुचिः।

गुरुं ब्राह्मराम्।

CC-0. Arusakthi la Aतिन्व मुज्यन्ते विकल्पियत् अति। अर्थान्ते प्राप्ति स्विकायत् अति। अर्थान्ते प्राप्ति स्विकायत् अति।

यथोक्तेन ब्राह्मणापेक्षया यथाक्रमम् । द्वैगुण्याद्याधिक्येन । तच्च तंत्रे—

यद् ब्राह्मण्यवधे लक्षं क्षत्रिये द्विगुर्गः स्मृतस् । वैश्ये त्रिगुरामुद्दिष्टं पादजे स्याञ्चतुर्गुराम् ॥४४३८॥

अत्र लक्षं वघ इत्युभयमप्युपलक्षणम् । यद् विप्रकर्तृ कं प्रायिक्चत्तम् तत् क्षित्रियेण ब्राह्मणाद् द्विगुणम् । वैश्येण त्रिगुणम् । शूद्रेण चतुर्गुं णम् ।

स्रर्हत्बौद्धवधे मंत्री खाब्धिलक्षं मनुं जपेत् । खाब्धिलक्षं चत्वारिशह्मभम् । वभ्रोश्च शूकराणां च वधे पंचसहस्रकम् ॥४४३६॥

जपेदिति शेषः । वभ्रुनंकुलः । पक्षिग्गां हनने मंत्रो द्विसहस्रोगा शुद्धचिति । देवद्रोहाद् गुरुद्रोहाद् त्रिशत्कोटिं मनुं जपेत् ॥४४४०॥ सर्पमार्जारमत्स्यानां वधे वेदसहस्रकम् ।

द्रोहो मरणानुकूलव्यापारः। सर्पादीनामकामकृतवधे प्रायश्चित्तम्। देवद्रव्यं गुरुद्रव्यं भुक्तवा तावन् मनुं जपेत्।।४४४१॥

तदनुज्ञया भुक्तवा तावन् मनु विश्वत्कोटिम् । श्रीगुरोविप्लवे पंचदशकोटिं जपेन् मनुम् । विप्लवे उद्वेगे ।

निंदने समयानां च योगिनीवीरयोस्तथा। शास्त्राणां मंत्रिणां चैव सहस्रं जपमाचरेत् ॥४४४२॥

वामदक्षिरणसिद्धान्तशेवव्रतघरे हते । चतुष्कोटिमितं मंत्रो जपन् शुद्धचित किल्विषात् ॥४४४३॥

श्राद्यादिनिदने मंत्री दशावर्तेन शुद्धचित । श्रध्यमृतं पिबेत् पूर्वं देवीमुत्त्थापयेत् ततः ॥४४४४॥ पशुपानं भवेत् तस्य तत्क्षयो लक्षतो भवेत् । श्रध्यमृतं विशेषाध्यमृतम् । लक्षतो लक्षजपात् । श्रिनिवेद्यवसुनं श्रोक्षेत् श्रिक्षेत् स्वातीति होतां हिन्सिम् ॥४४४५॥ य्रिनवेद्य देव्यनुज्ञामगृहीत्वा। वीरहत्या वृथापानं वीरपत्नीनिषेवग्गम् । प्रायिवच्तं चरेन् मंत्री दिव्यवीरार्चनादिकम् ॥४४४६॥ दीपनाशे पात्रनाशे पात्रप्रस्खलने तथा । पूजियत्वा महादेवीं जपेदष्टोत्तरं शतम् । यज्ञाने च यदुद्दिष्टं ज्ञानतो द्विगुग्गं भवेत् ॥४४४७॥ इदं कामतो द्वैगुण्यं सर्वत्र वोध्यम् ।

भूतभैरवे-

भग्नं च स्फुटितं यंत्रं कृतं चौरेण वा प्रिये।
उपवासं प्रकुर्वीत दिनमेकमतंद्रितः ॥४४४८॥
लक्षमात्रं जपेद् विद्यां मोहतपंणपूर्विकाम्।
स भक्तचा च गुरुं तोष्य ब्राह्मणानिप तोषयेत् ॥४४४६॥
कदाचिल्लुप्तचिन्हं वा स्फुटितादिविद्रषितम्।
भग्नं यजित यो मर्त्यो मृत्युस्तस्य भवेद् ध्रुवम् ॥४४५०॥
तस्मात् स तीर्थराजे वा गंगादिसरितांतरे।
समुद्रे प्रक्षिपेद् देवि ग्रन्यथा दुःखमाप्नुयात् ॥४४५१॥

ग्रन्यच्च श्रोकुले चोर्ध्वाम्नाये—

ग्रथ प्रातःस्मृतिमुले प्रायिद्यतं विविच्यते ।
प्रातःकर्मादि स्नानांतस्वासनादिक्रमस्य च ॥४४५२॥
लोपे युक्तचा तु सामान्यं प्रायिद्यत्तं समाचरेत् ।
संध्यायां मूलदेव्यर्धतपंगो जप एव च ॥४४५३॥
प्रधानमन्यदंगस्य तयो लोंपे क्रमेगा च ।
ग्रष्टोत्तरक्षतां मूलं दक्षसंख्यं तथा जपेत् ।
ग्रष्टोत्तरक्षतां मूलं दक्षसंख्यं तथा जपेत् ।
ग्रप्टीत्तरक्षतां मूलं दक्षसंख्यं तथा जपेत् ।
ग्रप्टीत्तरक्षतां मूलं दक्षसंख्यं तथा जपेत् ।
ग्रप्टीत्तरक्षतां सूलं दक्षसंख्यं तथा जपेत् ।
ग्रप्टीत्तरक्षतां सूलं दक्षसंख्यं तथा जपेत् ।
ग्रप्टीत्वतां तु सामान्यमुक्तमज्ञानपूर्वकम् ।
विशेषानुपलव्यौ तु ज्ञाने तद्द्विगुगां भवेत् ॥४४५५॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

तथाज्ञानात् तदभ्यासे त्रिगुरां ज्ञानपूर्वकात्। श्रम्यासे वेदगुग्तितं शक्ताशक्तविभेदतः ।।४४५६॥ प्रायश्चित्तं चरेदुक्तं युक्तचा सामान्यमेव वा। संपूर्णसंघ्यालोपे तु मुख्यलोपवदिष्यते ॥४४५७॥ द्वितीयकालस्याप्राप्तौ संध्यां भूयः समाचरेत्। प्रधानलोपे कालातिक्रमनिष्कृतिमाचरेत् ॥४४५८॥ बुद्धचा संध्यापरित्यागे सहस्रं प्रजपेन मनुस्। त्रिरात्रं संध्यया होनो बुद्धचा जपसहस्रकम् ।।४४५६।। उपवासमहोरात्रं कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात्। एवं दिनाष्ट्रकेऽतीते त्रिरात्रोपोषएां चरेत् ।।४४६०।। सहस्रसंख्यं च जपं कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् । मासातीते तु पतितो भवेन् मंडलबाह्यगः ॥४४६१॥ श्रज्ञानात् तु त्रिरात्रादौ प्रायथित्तं समभ्यसेत् । एवमेव नित्यजपलोपेऽपि स्याद् विनिष्कृतिः ॥४४६२॥ ग्रापत्कालेष्वंगलोपे न दोषः सर्वकर्मसु । सर्वकर्मविहोनस्तु दिनैकं सूक्तकं श्रियः ।।४४६३।। पठेत् षोडशवारं तु तद्दोषस्यापनुत्तये । त्रिरात्रमेवं चेत् सूक्तपाठो जपसहस्रकम् ।।४४६४।। त्रिरात्रोर्घ्यं निराहारो जपेद् दशसहस्रकम्। बुद्धिपूर्वे प्रतिदिनं जपेत् यंचसहस्रकम् ॥४४६५॥ दिनत्रयानन्तरं तु निराहारस्त्रिरात्रकम् । मूलं जप्त्वायुतं सम्यक् चक्रराजं समर्चयेत्। संध्याया मुख्यकालस्याप्यत्यये प्रजपेद् दश ।।।४४६६॥ दशेति दशवारमिति। मध्यकालस्य तत्कालगायत्रीं प्रजपेत् शतम्। सपर्यायां महाविष्तः संकल्पानंतरं यदा ॥४४६७॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

पात्रस्थापनतः पूर्वं शक्त्यर्चां मानसीं चरेत । विष्नात्यये कृताच्छेषां पूजां कुर्यात् यथाविधि ॥४४६८॥ कृते पात्रस्थापने तु विसृष्टव्यं तु तत्र यत् । विसृज्य पात्रादिकं तत् मनसाराध्य वै ततः ॥४४६६॥ निवृत्तविघ्नः शांत्यर्थं शतमष्टोत्तरं जपेत्। पूर्ववत् पूजयेच्चापि विघ्नस्याथानतिक्रमे ॥४४७०॥ संभवेऽन्येन कर्तव्या पूजोक्तवदनन्तरम्। निवृत्तविघ्नः प्रजपेत् सहस्रं तदसं तवे ॥ ४४७१॥ निराहारस्तद्दिने तु द्वितीयदिवसेऽर्चयेत्। संकल्पं द्वारपूजादि भूयः सर्वं समाचरेत् ॥४४७२॥ पूजांगहोमतः पश्चादतीतगुरासंख्यया । त्रिस्त्रिः प्रत्येकतो हृत्वा हुनेदष्टोत्तरं शतम् ॥४४७३॥ ततस्तु प्रग्मेद् देवीमथ वस्यर्चनं ततः। विघ्ने तूद्वास्य श्रीदेवीं पात्राद्यं विसृजेत् ततः ॥४४७४॥ सहस्रं प्रजपेद् विघ्नशांत्यन्ते दोषशांतये । श्रावाहिता या देव्याश्च यदि विघ्नाद् विसर्जनम् ॥४४७५॥ तदा विघ्ननिवृत्यंते संकल्पादि विना पुनः। विसृष्टमर्घ्यादि सर्वं संस्थाप्य पीठपूजनात् ॥४४७६॥ कृत्वावाहनपर्यन्तं कुर्यात् शेषार्चनं क्रमात्। समाप्य संस्कृते वह्नो शतमष्टोत्तरं हुनेत् ॥४४७७॥ पायसेन सामयिकानभ्यच्यं देवतां गुरुस्। संप्रार्थ्यं दोषात् मुच्येत दिनातिक्रमसंभवात् ॥४४७८॥ दिनसंख्या समावृत्त्या पायसेनाहुति चरेत्। श्रष्टोत्तरशताद्धोमात् पूर्वदोषाद् विमुच्यते ॥४४७६॥ दोक्षादावप्येवमेव विघ्ने सति समाचरेत्। सर्वेषु विघ्नपक्षेषु मानसं पूजनं चरेत् ॥४४८०॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

व्रतदोक्षास्थापनासु पूजनेषु पुरस्कृतौ । न सूतकं वै संकल्पानंतरं कर्तृ ऋत्विजाम् ।।४४८१।। प्रविश्य तु मृताशौची देवतामुख्यमंडले । कुर्यात् मंडलपूजां वै तहोषस्य प्रशांतये ॥४४८२॥ कुमार्या वदुकेनापि सुवासिन्या द्वयेन च। पंचसामयिकैश्चैव युक्तं मंडलपूजनम् ॥४४८३॥ देवतोद्वासनात् पूर्वात् तत् प्रवेशे तु पूजने । दुग्धेन देवीं संस्नाप्य मालामंत्रीक्तदेवताः ।।४४८४।। क्रमात् तत् तत् पात्रतस्तु संकल्प्य हवनं घृतैः । होमांते पंचवा कुर्यात् होमेऽतीते पुनस्तथा ।।४४८५॥ श्रींन संस्थाप्य होतव्यं ब्राह्मगान् भोजयेत् ततः । कुर्यादेवं निष्कृति तु देवताकोपशांतये ॥४४८६॥ बुद्धिपूर्वप्रवेशे तु जपेद् दशसहस्रकम्। उपोष्य तु त्रिरात्रं वै ब्राह्मिए।त् भोजयेत् ततः ॥४४८७॥ एतच्चाप्युभयोस्तुत्यं ज्ञातत्वस्याविशेषके । एवं क्षतांगयुक्तानां निषिद्धानां प्रवेशने ॥४४८८॥ पुनर्मंडलपूजा तु कर्तंच्या दोषशांतये। श्रावृत्ति गुं रुनित्या च समयाम्नायपूजनम् ॥४४८६॥ पूजात्रयं समश्चेति प्रधानं पूजयेत् ततः । पात्रसंस्थापनं पीठवल्लयर्चे होम एव च ॥४४६०॥ समर्पे एं च मुख्यांगगुरुशक्त्यादि पूजनम्। द्वारपूजादिकं चापि गौगांगमिति कथ्यते ।।४४६१।। गौगांगलोपेऽष्टवारं तर्पयेन मूलदेवताम्। तपंयेच्छतमष्टौ च मुख्यांगस्य च विप्लवे ॥४४६२॥ प्रधानं च शतं तर्प्यं जपेत् तत्र सहस्रकस्। प्रसंगस्यातिक्रमे तु चैवं कृत्वा न दोषमाक । ४६६६३।। CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by et al.

तर्पयित्वाष्ट्रवारं तु कुर्याल्लुप्तं यथोक्तवत् । प्रसंगस्त्वावाहनान्तं नैवेद्योद्वासनान्तकम् । पूर्विक्रियार्गां तु भवेत् नैवेद्यं द्विविधं स्थितम् ॥४४६ ४॥ विशेषार्घ्यस्यः देव्याक्चेद्द्वासोऽपि द्विधा स्मृतः । तत् तत् पूर्वक्रियायां तु तत् तदन्तं प्रसंगकः ।। ५४६५।। प्रधानाद्येक्रदेशस्य तत् तदंतं प्रसंगकः। योग्यत्वात् तत्र सामान्यं प्रायश्चित्तं प्रकल्पयेत् ।। ४४६६॥ एवं देव्या ह्युद्वासान्ते पूजान्ते वापि तर्पग्रम् । ग्रसंभाव्यमतः कुर्याद् युक्तचा सामान्यनिष्कृतिम् ।।४४६७॥ मूलदेवी गुर्हीनत्याथावृतिश्चेति व क्रमात्। एतेषां तर्पणे पूर्वपूर्वस्मात् गौरामुत्तमम् ॥४४६८॥ मुख्यपात्रात् कृते गौरातर्परो मूलमष्ट्या। प्रतप्यं तर्पयेद् सूयो गौरणान् मुख्यप्रतर्पणे ॥४४६६॥ कृते देवीं शंखतोयमूलिन प्रोक्ष्य वै ततः। पुष्पांजींल समर्प्याथ प्रजपेन् मूलमष्ट्यां ॥४५००॥ यथोक्तं तर्पयेद् भूयो देवतोद्वासने सित । प्रायिश्वतां तु युक्तचौव सामान्योक्तं समाचरेत् ॥४५०१॥ एवं गुरुकुमार्यादेस्तर्पग्व्यत्यये सति। प्रायश्चित्तं तु सामान्यं यज्ञयुक्त्या विचक्षर्गः ॥४५०२॥ हेतुपात्रस्थद्रव्ये तु कृमिर्वा मक्षिका पतेत्। ग्रन्यद्वा च तदुद्धृत्य जपेत् मूलं तदष्ट्वा ।।४५०३॥ तेषां मृतानां संपर्के छिन्नकेशनखस्य च। द्रव्यं विसृज्य तत् पात्रं पुनः संस्थापयेत् क्रमात् ।।४५०४॥ रक्ताद्यमेध्यसंपर्के स्वस्थानाद् भ्रंशितेऽपि च। ^{CC} देवताभात्रयोरेनमुपघाते श्रुभं स्वेत् ॥४५०४॥

हेतुश्रीपात्रयोर्देव्याश्चोपघातो मृतिप्रदः। पात्रोपघाते तद्भूयः संस्थाप्य पूजयेत् क्रमात्।।४५०६॥

पश्चात् त्र्यहमनश्नन् वं जपेद् दशसहस्रकम् । म्राधारपीठविदलेषः पात्रादेभ्र व उच्यते । पात्रभ्रं शे सूर्यकलादिकां संस्कृतिमाचरेत् ॥४५०७॥ यंत्रमूर्त्याद्युपघाते चान्तःपूजादिकं क्रमात्। कृत्वा बाह्योपचारं च शेषं चैव समापयेत् ।।४५०८।। उपचारे तु दुग्धेन स्नापयेत् तदनंतरम्। होमं मूलेन वे कुर्यादष्टोत्तरशतं पुनः ॥४५०६॥ पूजयेच गुरुं शक्त्या तद्दोषविनिवृत्तये। श्रसंभवे तुर्यदिने वाप्येवं पूजयेत् क्रमात् ॥४५१०॥ श्रमेध्यस्य तु संपर्के संशोध्यैव तु स्थापयेत्। पात्रादिकं यंत्रमूर्त्यादिकं चापि प्रयत्नतः ॥४५११॥ प्रतिष्ठाया ग्रकराो प्रोक्तयंत्रादिशोधने । श्रसंमवेऽन्ययंत्रादौ पूजयेद् देवतां क्रमात् ।।४५१२।। यंत्रादिभंगे भ्रंशे वा महासांतपनं चरेत्। संकल्पानंतरं देव्यावाहनात् पूर्वमेव च ।।४५१३।। देवतोद्वासनात् पश्चात् समाप्तेः पूर्वमेव च । यंत्रादेरपघाते तु जपेन मूलं सहस्रकम् ।।४५१४।। भंगे तु युक्त्या सामान्यं प्रायिक्चत्तं समाचरेत्। विलगुर्वात्मशंखादिपात्रागामुपघातके ।।४५१५।। ग्रष्टोत्तारसहस्रं तु जिपत्वा स्थापयेत् पुनः। उपघाते स्वपात्रस्य मूलमष्टशतं जपेत् ।।४५१६।। दीपनाशे तु कर्तव्यं मंडलाख्यं प्रपूजनम्। दीप्रान्तरस्यतस्त्रत्वे ब्रुवानि सोपस्तव विद्यते वृत्रिष्ट १५००

दीक्षायां मध्यकुम्मस्य चोपघाते च देववत् । हेतुपात्रवदेव स्यादन्यकुम्मोपघातके ।।४६१८॥

श्रथवा मूलमंत्रं च जपेद् दशसहस्रकम् । देवतावाहनात् पूर्वं कलशे विघ्न ग्रागते ॥४५१६॥

कालांतरे एव कुर्यात् संकल्पादि विधानतः।
गुरोर्वरएातः पश्चाद् विघ्ने कालान्तरे तदा।
यदा दोक्षा तु संकल्पादिकं न तु पुनश्चरेत्।।४५२०॥

दीक्षांतरे तु संकल्पादिकं भूयः समाचरेत् । स्रावाहनानंतरे तु विघ्नेनोद्वासनं ततः ।।४५२१॥

प्रत्यहं पूजनं कार्यं स्वेन वान्येन वा तथा। विद्नादिक्रमपर्यन्तमतीतदिनसम्मितम्।।४५२२॥

सहस्रं प्रजपेत् वापि शतमाज्येन वा हुनेत्। पुनर्दीक्षा विघ्नशांत्यानंतर्येण समाचरेत्।।४५२३।।

न कालशोधनं कुर्याद् विलंबप्रतिषेधनात् । ग्रसमर्थो जपादींश्च ब्राह्मणोनैव कारयेत् ।।४५२४।।

विघ्नाधिक्ये देवतां चोद्वासयेदेव व ततः । पूजायां देवतोद्वासनिष्कृति च समाचरेत् ॥४५२५॥

तथा यंत्रान्यकलशानां चापि तु विसर्जने । प्रायश्चित्तं तु सामान्यमपि किंचित् समाचरेत् ॥४५२६॥

देवतानुद्वासनेऽपि चार्घ्यपात्रविसजने । पूजनस्यासंभवेऽपि पूर्वोक्ता निष्कृति भवित् ॥४५२७॥

उपदेशोत्तरं विघ्ने गुरो गुंहसमेन च । श्रन्येन वापि कर्तव्यं शेषं कर्म यथाविधि ॥४४२८॥

ततः पूर्वं गुरो विघ्ने महत्यन्यगुरोः पुनः ।

्सलक्षर्भाद्वाप्यन्यस्माद्वाहतात् संकृत्ययेत् पुनः ॥४५२६॥

उपदेशादिकं ग्राह्यं शेषकर्मपुरःसरम् । श्रत्राचार्यस्य पूजायां प्रायदिचत्तमपीव्यते ॥४५३०॥ शिष्योऽश्वि विघ्नशांत्यर्थं सहस्रं जपमाचरेत्। अन्यालाभे मृतावन्यतरस्योपवसेत् तथा ॥४५३१॥ त्रिदिनं दशसाहस्रं जपं कुर्यात् समाहितः। वृतौ विघ्ने च ब्रह्मादेरन्यं वृत्वा समापयेत् ॥४५३२॥ कर्मविष्नप्रशांत्यर्थं सहस्रजपमाचरेत्। कर्मान्तरेष्वप्याचार्यादौ सहस्रं जपं भवेत्। मंडलस्योपघाते तु मलमूत्रासृगश्रुभिः ॥४५३३॥ तत्पापस्य प्रशान्त्यर्थं सहस्रं जपमाचरेत्। मंडले रुधिरं कृत्वा क्रोधाच्चांद्रायरां चरेत् ।। ४५३४।। अज्ञानात् कृच्छुमेव स्याज्ज्येष्ठे सांतपनं चरेत्। द्रव्यबिन्दोः प्रस्खलने तत्र दत्वा जलं भुवि ॥४५३५॥ वाराह्यं नम इत्येवं प्रग्रामेद् दंडनायिकाम्। बलाद् घृत्वा स्त्रियं चैव कुर्याच्चांद्रायगावतम् ॥४५३६॥ ज्येष्ठांगत्वात् सांतपनं कृत्वा दोषात् प्रमुच्यते । न्यूनवर्णस्य पूजायां स्वातमीकृत्यायुतं जपेत् ॥४५३७॥ ग्रप्राप्तषोडशोकस्य न्यूनदोक्षावतस्तथा। एतत् सामयिकत्वेन स्वात्मीकारं प्रकीतितम् ।।४५३८।। तहोषो गुरुशक्तचादिपूजने विद्यते क्वचित्। विप्रस्य वोरपाने तु सहस्रजप इष्यते ॥४५३६॥ तथा वैश्यक्षत्रिययोः पशुपाने प्रकोतितम् । चांद्रायऐोन संगुद्धिः पशौ विप्रस्य वै भवेत् ।।४५४०॥ ग्रसंस्कृतपशौ कृच्छं चांद्रायरामपोष्यते । प्राह्यो चिछ्नुस्योग्यस्य सहस्राज्यस्य हा जिल्ला हा सिर्धि अप्र अप्राह्म

ग्रयोग्यस्य दातुरिप तुल्य एष विधिः स्मृतः । न्यूनवर्णाश्रमार्गां तु त्रिरात्रापोषर्गं जपः ।।४५४२।। ग्रप्रक्षाल्य समीष्ट वा पूर्णपात्रमथापि वा। हुत्वानुक्तसुवासिन्यै दत्वा चापि स्वशेषकम् ॥४५४३॥ प्रजप्य मुच्यते दोषादष्टोत्तरसहस्रकम्। प्राकट्यमभ्युपगतः संशुद्धौ बाह्यनिष्कृतिम् ॥४५४४॥ चांद्रायरां तथा कृच्छुं महासांतपनं चरेत्। गुरुद्रोहरच तत्पत्नीगमनं समयक्षतिः ।।४५४५।। श्राचारस्य परित्यागः पशुप्रकटनं तथा। महापातकमेतत्तु पंचकं परिकीतितम् ।।४५४६॥ गुरोवित्तादिहरगां भत्संनं शास्तिलङ्घनस् । म्राद्यं त्रिवेवं संप्रोक्तं गुरुस्तत् समयोषितोः ॥४५४७॥ गमं द्वितीयं द्विविधं पूजा देवादिमध्ययोः। विघ्नात् तृतीयं द्विविधं त्यागादाचारमंत्रयोः ॥४५४८॥ तुर्यं द्विधार्चनादेस्तु कथनं च प्रदर्शनम्। पशुभ्य एवं द्विविधं पंचमं ज्ञानपूर्वकम् ॥४५४६॥ नास्त्येषु निष्कृतिश्वाज्ञाते महायागमाचरेत्। ज्ञाताज्ञातान्यपापेषु पादुकायाश्र त्रिर्जपः ॥४५५०॥ मूलस्य दशजापो वा शतं साहस्रमेव वा। पादुकायाः शतं चापि सहस्रं वा जपस्तथा ॥४५५१॥ जपो वा मूलगायत्र्या ह्ययुतं सर्वनिष्कृतौ । निराहारस्त्रिरात्रं तु मूलायुतजपात् तथा ॥४५५२॥ सामर्थ्यात् तारतम्येन पापानां तारतम्यतः । युत्तचा प्रोक्तेषु पक्षेषु कांचित् निष्कृतिमाचरेत् ॥४११३॥ सुवासिनीनां सामान्ये पापे वापि विशेषके। CC- प्रोक्ताद्धाँ त्यापि पार्व वा प्रायश्चित्तं विगुद्धिकृत् ।।४५५४।।

बालवृद्धातुरागां वाप्येवमेव हि निष्कृति: । श्रथ सांतपनाख्यं तु व्रतं सर्वाघनाशनम् ।।४५५५॥ प्रोक्तपाये तु तप्तस्य भक्तस्य विहितं हि तत्। ग्रस्तादिदोषरिहते सिताष्टम्यामथोषसि ॥४५५६॥ मौनेन कुर्यात् संध्यांतसथाज्ञां प्रार्थ्य व गुरो:। ज्येष्ठाद् वा योग्यतोऽन्यस्मादनुज्ञातः समाचरेत् ॥४५५७॥ प्रारायामत्रयं कृत्वा जन्मादि तत्क्षराविध । कृतानामपराधानामघानां क्षयहेतवे ॥४५५८॥ श्रन्यत्र तत् तत् पापस्य क्षयद्वारेति कीर्तयेत् । परदेवताप्रोत्यर्थं महासांतपनाभिषम् ॥४५५२॥ करिष्ये त्वेवं संकल्प्य व्रतं पश्चात् शिवालये। पुण्यतीर्थतटे चैकान्ते जपेत् तिथिसंख्यकम् । शतं शतं सिद्धवह्नौ दोक्षावित्रत्यवत् तु वा ॥४५६०॥ घृताक्ते बिल्वपत्रे वी दशांशं जुहुयात् क्रमात्। रात्रावर्चां कारयेद् वे गुर्वादिद्वारतः क्रमात् ।।४५६१।। तदूहे नैव संकल्पं कुर्यात् पूजां गुरुस्तथा। श्रंते सामयिकाचार्यास्त्रिचतुःपंचसंख्यकम् ।।४५६२।। यथायोग्यं तु स्वोकुर्यात् पात्रं प्रोक्तविधानतः । प्रतिपात्रं ग्रासमेकमोष्ठासंस्पीतः मक्षयेत् ।।४५६३।। शुद्धचौदनादिकं मिश्रं सर्वान्ते तु पिबेज्जलम् । पात्रस्य समसंख्यं च चुलुकेन तती जपेत् ।।४५६४।। शतत्रयं तु तत् पश्चात् शक्त्या संभोजयेद् द्विजान् । रात्रौ स्थंडिलशायी च ब्रह्मचर्ययुतस्तथा ।।४५६५।। कुर्याज्जपादिकं त्वेवं त्रिदिनं प्रातरेव हि। संध्यानंतरमारम्य चतुर्थेऽह्नि विशेषतः ॥४५६६॥Gangotri

साधकानां च पूजान्ते गुरुमाचार्यमुख्यकान्। शक्तचा संपूज्य गुर्वाज्ञापूर्वकं तद् व्रतं कृतम् ॥४५६७॥ निवेदयेद् देवताये विप्रादीन् मोजयेत् ततः। इति व्रतं सांतपनं सर्वेपापप्रगाशनम् ॥४५६८॥ सर्वनिष्कृतिनाम्नैतत् कथितं व्रतमुत्तमम्। मरगोन्मुखकाले तु चैतदन्येन कारितम् ॥४५६६॥ कृतं वा प्रोच्यते साक्षी निष्कृतित्वेन चाथवा। कालाद्यसंभवे चान्यद्वारा कर्तुं तद्गितम् ॥४५७०॥ संकल्प्य विस् जेद् द्रव्यमेतत् स्यात् साक्षिनिष्कृतिः। चांद्रायणे तु शुक्ले वै पक्षे शुक्राख्यवासरे ॥४५७१॥ नित्यक्रियान्ते गुर्वादेराज्ञया तन्निमित्ततः। संकल्प्य प्रजपेदुक्तवत् सहस्रत्रयं ततः ॥४५७२॥ रात्रो सपर्यां संपाद्य समाराध्य सुवासिनीस्। ऐक्षवं लवगां त्यक्तवा भुक्तवा जप्तवा सहस्रकम् ।।४५७३।। प्रोक्तवत् शयनाद्यं स्यात् स्नानं त्रेकालिकं तथा। एवं कृत्वा सप्तरात्रमष्टमे होममाचरेत् ।।४५७४॥ प्रोक्तवद् बिल्वपत्रेस्तु पायसेनावृति ततः। हुत्वा रात्रौ सपर्यान्ते प्रतिपात्रं तु केनचित् ॥४५७५॥ स्वीकुर्याद् ग्रासमेकंकं ततो नान्यत् मक्षयेत्। नवमे प्रोक्तवद् वीरादीत् संभोज्य समापयेत् ।।४५७६॥ इदं चांद्रायएां ज्ञेयं कृच्छे, किचिद् विशिष्यते । जप्त्वा त्रिरात्रमेवं तु हुत्वा तुर्येऽह्मि पूर्ववत् ।।४५७७॥ समाप्य पंचमदिने व्रतं स्यात् कृच्छुसंज्ञकम्। सर्वेरिप त्रयं चैतत् कर्तव्यं प्रतिवत्सरम् ॥४५७८॥ एकं व्रतं वा शक्तेन चात्यशक्तः समाचरेत्। ्यकस्मिम् hिदवसे बद्धापि तहां सांतपनं त व ।।४५७६॥

समापयेद् द्वितोयेऽह्मि चान्यद् युग्सं तृतीयके । ग्रज्ञानेन महापापे कृतेऽप्येवं विशुद्धचित ॥४५८०॥

ग्रयान्त्येष्टिः यामले—

ग्रांबिकेयो यदा मंत्री देहधर्ममुपाथितः । श्रंत्येष्टिस्तत्र कर्तव्या तत् शिष्याद्यै विधानतः ॥४५८१॥ कर्ता नित्यक्रियां कृत्वा पंचरत्नै विशोधयेत्। पंचरत्नानि तु ग्लूं म्लूं प्लूं स्लूं न्लूमिति च क्रमात् ।।४५८२।। प्रेतं नेत्रादिना येनाध्वना लोकांतरं गतम्। श्राकृष्य स्थापयेत् तेन जीवात्मानं च प्राग्ततः ।।४५८३।। प्रारातः प्रारामंत्रेरा। नेत्रप्राग्वियोगेन वियद्वह्मचनिलात्मिः। मोक्षदे पदमुच्चार्य वदेदावाह्यामि च ।।४५४८।। श्रनेनावाहयेत् प्रेतं तत्र प्रारगांश्च विन्यसेत्। श्रंगप्रकल्पनं कुर्यात् मायया दीर्घयुक्तया । १४५८५।। प्रतिष्ठाप्य घटं मंत्री स्नापयेत् तज्जलेन तस्। पंचगव्यैरघोरेगा विद्धन्या त्विमिषिच्य तम्। शुद्धतोयेन संस्नाप्य भस्मना स्नापयेत् पुनः ॥४५८६॥ प्रेतं दक्षिणमूर्द्धानं न्यस्य दर्मास्तरे सुधीः। नववस्त्रस्रगालेपंरलंकृत्य विभूषगः।।४५८७॥ श्रम्यचेंद् गंधपुष्पाद्यं मूं लमंत्रेगा साधकः। सम्यग् विमानं संकल्प्य मृतकं तत्र विन्यसेत् ॥४५८८॥ ग्रामं प्रदक्षिग्गोकुर्वन् शंखमेर्यादिनिस्वनै: । प्रेतस्थानं समाविश्य दक्षिग्गोत्तरमायतम् ॥४५८६॥ उपलिप्य समां भूमि तत्र लाजातिलाक्षतान् । विकरेत सर्पपोपेतान विमानंस्य विन्यसेत्व । ४५ ६०।।

संस्थाप्य तत्र चित्यांन परिस्तीयं विलोमतः।
पात्राण्यासादयेव मंत्रो दक्षि हो विष्णुदेवतम् ॥४५६१॥
प्रणोतापात्रमासाद्य संपूज्य कुसुमादिमिः।
दर्भेराच्छादिते मंत्रो विल्लकोणो प्रविन्यसेत् ॥४५६२॥
दक्षमागे यजेद् देवं भैरवं मंडले क्रमात्।
उक्तेन विधिना कृत्वा वह्ले जिह्लाविकल्पनम् ॥४५६३॥
तिलतंदुलसंमिश्रं श्रपयेच्चरुमुत्तमम्।
मृत्युञ्जयेन मंत्रेण शतमष्टोत्तरं सुधोः ॥४५६४॥
साज्येन चरुणा हुत्वा पंचरत्ने विशेषतः।
जुहुयान् मूलमंत्रेण क्रमादावरणान्तकम् ॥४५६४॥
एवं विलोमतो होमात् सर्वमंत्रांस्तु तत् तनौ ।
क्रमेण विलयं नीत्वा जुहुयाद् वाग्भवेन च ॥४५६६॥
हुत्वाथ मूलमंत्रेण प्रेतदेहे विलोमतः।
तत्त्वानि विलयं नीत्वा सर्वमात्मिन योजयेत् ॥४५६७॥

तत्त्वानि शेवागमे यथा-

निवृत्तिश्च प्रतिष्ठा च विद्या शांतिरनंतरम् ।
शान्त्यतीता तथा बिन्दुः कलान्ते नाद एव च ॥४५६६॥
शक्तिः सदाशिवश्चेति तत्त्वानि दश च क्रमात् ।
सदाशिवमथारम्य निवृत्यन्तं विलोमतः ।
सर्वमात्मनि संयोज्य ध्यात्वेष्टं गुरुमात्मनः ॥४५६६॥
पुण्यपापे परेतस्य जुहुयात् मंत्रमुच्चरत् ।
प्रमुकस्य पुण्यं जुहोमि ।
ततः पूर्णाहुति दत्वा योजयेत् परमे पदे ॥४६००॥
शिवशत्त्वात्मके शुद्धे पुनरावृत्तिविजते ।
सद्वित्सुखमये साक्षात् तत्त्वात्तोते निराकृते ॥४६०१॥

इति संयोजितः प्रेतः शिष्येग परमे पदे। संत्यज्य मलकालुष्यं शंभुमावाय कल्प्यते ।।४६०२।। भ्राज्येन जुहुयाद् वह्नावघोरास्त्रेग मूलतः। श्रनुलोमविधानेन प्रायदिचत्ताय साधकः ॥४६०३॥ परेतदेहमानेन शयनं परिकल्पयेत्। वह्ने दक्षिणदिग्भागे कुलवृक्षसमुद्भवः ।।४६०४।। शंकुमि दंक्षिए।ग्रैस्तु बिल्वजै विकुलस्तिथा। श्रास्तोर्य शयनं मंत्रो त्रिगुग्गोकृततं<mark>तु</mark>ना ॥४६०५॥ संवेष्ट्य पूजयेद् गंघपुष्पाद्यैरुपचारकैः। म्राच्छाद्य नववस्त्रेग्। तत्र यंत्रं लिखेत् सुघीः ॥४६०६॥ पद्मं त्रिकोरां षट्कोराकरिंगकं साष्ट्रपत्रकम् । सोध्वंरेखं ततस्तत्र पुष्पाण्याकीयं सर्वतः ॥४६०७॥ प्रेतं दक्षिरामूर्द्धानं विन्यसेदिह साधकः। रक्षामंत्रेण संरक्ष्य ज्वालामालिनिविद्यया ॥४६०८॥ प्रज्वाल्याघोरमंत्रेगा दहेत् पादादितो बुधः। श्रघोरास्त्रेण मंत्रेण मंत्री पाशुपतेन वा ।।४६०६।। यावद् मस्मीभवत्येव तावद् होमं समाचरेत्। स्तोत्रमंत्रजपं कुर्युः समयज्ञाः समागताः ।।४६१०।। मस्मीभूते परेतेऽस्मिन् देवान् सम्यक् प्रपूजयेत्। चित्याँन रक्षयेन् मंत्री संप्राप्ते सप्तमेऽहिन ।।४६११।। निर्वाप्य पयसास्थीनि वेष्टयेन् नववाससा । तद् मस्म निक्षिपेत् कापि विशुद्धे सलिलाशये। म्रस्थिकूटं खनेन् मंत्री देवमातृगृहेऽथवा ॥४६१२॥ स्वगृहे वा निखन्येतत् त्रिसंघ्यं पूजयेदिदम् । पर्वपूजां मृतदिने प्रतिमासं प्रकल्पयेत्राती b क्रिस्थ है। (Gangotri

संपूर्णे वत्सरे कुर्यात् महोत्सवमतंद्रितः । ततोऽस्थिकूटमुद्धृत्य नद्यां वारिनिधिस्पृत्ति ।।४६१४॥ निक्षिपेत् निखनेत् कापि विशुद्धे धरगोतले । केनापि कोकसेनास्य प्रतिमां पादुकेऽथवा ।।४६१५॥

कृत्वा संपूजयेत् मंत्रो गुरुम्बितपरायणः । देशांतरमृतानां च जोक्तीमपि साधकः ॥४६१६॥

दर्भपुञ्जैः पलाशैर्वा शालिपिष्टेन वा पुनः । देहं कृत्वा यथापूर्वं शे क्रियाद् विचक्षणः ॥४६१७॥

स्रथवा मनसा कुर्यादेकांते स्वयमास्थितः । वाग्भवं दोपिनि ज्वालामालिनोति पदं ततः ॥४६१८॥

क्रोधहंसे दुहेत् पर्णान् संपुटत्वेन योजयेत् । एतानि तत्र बीजानि प्रस्तवो बीजकेशवे ॥४६१६॥

हंसेन्द्वगांतकुटिले विह्निबिद्द्त् भगाश्रितात् । शिवशक्तिक्षमेन्द्रांबु विह्निवार्ताघसंचयम् । ज्वालामालिनिमंत्रोऽयं कथितो मंत्रकोविदैः ॥४६२०॥

ॐ ह्रीं ह्रें स् ख्फ्रें म्रंहस क्षमलवर यूं ऐंदीपिनि ज्वालामालिनि हुं हं सः फट् ह्रींहस क्षमल वर यूं म्रंहस् ख्फ्रें ह्रें हीं ॐ।

मायाबीजं स्फुरद्वन्द्वं प्रस्फुरद्वितयं ततः।

घोरे घोरतरेऽत्यंते तनुरूपपदं ततः ॥४६२१॥

चटयुग्मं तदंते स्यात् प्रचटद्वितयं ततः।

कह्युग्मं वमद्वन्द्वं ततो बंघयुगं ततः ॥४६२२॥

घातय द्वितयं वर्म फडंतः समुदाहृतः।

एकपंचाशदर्गोऽयमघोरास्नमहामनुः ॥४६२३॥

तारः क्लीं पशुवर्गाते कवचास्नाक्षरं वदेत्।

मनुः पाशुपतास्त्रोऽयं सर्वरक्षाकरः स्मृतः।

C.O. Arutsaktii R. Nasarajan Collectivi तिसमन्वितान् विश्व ६ २४ से कार्यात्रकेन्द्रुपाश्चीर्णात् समधातसमन्वितान् विश्व

इंद्राल्ढान् सुधीः कुर्याद् वामकर्गोन्दुसंयुतान् ।
पंचरत्निमदं प्रोक्तं मनोऽभिलिषतप्रदम् ॥४६२४॥
ग्रंत्येष्टिरेतत् कथिता मंडलावाप्तिकारिगी ।
ग्राद्ये मासे तथा वर्षे सिंपडीकरगात् ततः ॥४६२६॥
सिंपडनात्तु वर्षान्ते तदनंतरमेव वा ।
मंडलस्थितिसिद्धचर्थं श्राद्धस्यार्हत्वसिद्धये ॥४६२७॥
दीक्षाफलप्राप्तये च कुर्यादेतद् यतेरिप ।
यस्य न क्रियते चैतत् तस्य दीक्षाफलं न हि ॥४४२८॥
ग्रंत्येष्टिविधिना हीनो मंडलस्थो न जायते ।
तस्मात् पुत्रादिमिः पित्रादोनां कर्तव्य एव हि ॥४६२६॥
ग्रज्ञानात् साधनामावात् यस्यान्त्येष्टि नं वै कृता ।
जमेत् श्राद्धाधिकारार्थमयुतं तस्य नामतः ॥४६३०॥
तदुपास्यमूलमिति शेषः।

जपासको वा तद् वंश्यो ह्य तत् संस्कारसंस्कृतः ।
प्रेतमावविनिर्मुक्तो वीरत्वमधिगच्छिति ॥४६३१॥
प्रांत्येष्टिसंस्कारयोगाद् गुरुमंडलगो मवेत् ।
दोक्षानाम्नो ह्यप्रसिद्धौ गगनेति समीरयेत् ॥४६३२॥
संप्राप्तेऽपरपक्षादौ कौलश्राद्धं समाचरेत् ।
यस्य श्राद्धं तत् किनष्ठो गुवंच्चियां यदाचितः ॥४६३३॥
प्रतोक्षेत् श्राद्धविप्राग्णां स्वात्मोकारं तु सर्वथा ।
श्राद्धमेतत् कृतांत्येष्टेः कुर्यान् नान्यस्य कुत्रचित् ॥४६३४॥
कौलश्राद्धमकृत्वा तु चान्येः श्राद्धसहस्रकः ।
नैव तृष्तिः कदाचित् स्यात् पित्रादीनां तु सर्वथा ॥४६३४॥
कर्तुः पितृगां चैतेन भवेत् फलमनंतकम् ।
प्राोरिष्कृते श्राद्धेक तस्य वीक्षाफर्कं भवेत्वी १४६३६॥

कृतनित्यक्रियः कर्ता द्वौ वाथ चतुरो द्विजान्। निमंत्र्यामुकानंदनाथनाम्नोऽम्बा वा पदात् ततः । प्रत्यब्दिकं कौलश्राद्धं तंत्रोक्तविधिना चरेत् ।।४६३७।। इति संकल्प्य च पुनः श्राद्धे ऽस्मिन् कौलसंज्ञके । करिष्ये पूजनं देव्याः श्रीसुन्दर्या यथाविधि ॥४६३८॥ संकल्प्य वरिवस्यां तु कलशांतं समाप्य वै। श्रात्मपात्राद् दक्षिण्रो तु स्थापयेद् वैश्वदेवकम् ॥४६३६॥ यैत्रं पात्रं च संस्थाप्य यजेत् क्रमसमन्वितः। सुवासिन्यंतगां पूजां कृत्वान्ते पूजयेद् द्विजान् ॥४६४०॥ चर्यानाथस्वरूपांश्च विश्वात् देवात् समर्चयेत् । मित्रीशषष्ठीशोड्डोशरूपान् पितृमुखान् यजेत् ॥४६४१॥ कृतपुष्पाञ्जलोन् पूर्वमुखान् स्यात् वैश्वदेविकान्। तथैवोदङ्मुखान् विप्रान् संवेश्य प्रग्तोऽर्चयेत् ॥४६४२॥ विश्वेषां चैव देवानामिदमासनमुत्तमम्। चर्यानाथस्वरूपागामर्पये चास्यतामिह ॥४६४३॥ श्रीचर्यानाथरूपान् विश्वान् देवान् भवत्सु च । ग्रावाहयामि चावाह्य पुष्पाक्षतकृतांजितः ॥४६४४॥ विश्वेदेवा स्वागतं वो यज्ञेऽस्मिन् स्थोयतां क्षराम्। सावधानेन मनसा स्वीकुर्वंतु समाजनम् ॥४६४५॥ इति प्रार्थ्याप्रतस्तस्य मण्डलं चतुरस्रकम्। मत्स्यमुद्रितहरतेन कृत्वा संपूजयेत् ततः ॥४६४६॥ विश्वेषां चैव देवानां पाद्यमंडलङेन्तकः। पूजामंत्रो नमोऽन्तोऽयं मण्डलक्रमपूजने ॥४६४७॥ सामान्यार्घजलेनैव पाद्यं पादौ समर्पयेत्। CC-वियोति। यस्विक्षणाञ्च देवाः वाद्यमिदं । त्र त्र हा।

समर्प्य पादौ प्रक्षाल्य सामान्यार्घोदकेन च। पुष्पाक्षतफलेनैव युक्तसघ्यं निवेदयोत् ।।४६४६।। देवाश्चर्यानाथरूपा इदमध्यं च वो नमः। सामान्यार्घोवकेन त्रि र्वद्यादाचमनीयकम् ॥४६५०॥ देवाश्रयांनाथरूपा इदमाचमनं च वः। एवं च गंघपुष्पादिध्यवीपमहार्ह्माः ॥४६५१॥ वस्त्रैराभरगौरचैव वैश्वदेवं यजेद् द्विजम्। चतुष्के बाह्मणे तत्र पितरं च पितामहम् ॥४६५२॥ पितामहं च वृद्धादि क्रमशस्त्रिषु पूजयेत्। तत् तन्नाम्ना युग्मपक्षे ह्योकं देवं च पैतृकम् ।।४६५३।। पूजयेत् परया भक्तचा श्रीचर्यानायनामकम्। वैश्वदेवेऽथ मित्रीशषष्ठीशोड्डीशनामिः ।।४६५४॥ पैत्र्येऽतो पितृदेवाश्च स्वागतं वो नमस्तथा। भोजनं चेति संप्रार्थ्यं वृत्ताकारे तु मण्डले ।।४६४४॥ दीपान्तं पूजनं कृत्वा विश्वेदेवस्य पात्रतः। गृहोत्वा कारणं किंचित् कृत्वा पात्रान्तरे च तत् ।।४६५६।। विश्वेदेवद्विजकरे दद्यान् मंत्रिममं पठन्। श्रीचर्यानाथरूपेश्यो विश्वेश्यश्च ततः परम् ॥४६५७॥ देवेम्यश्च ततः स्वाहा इति तस्मै निवेदयेत्। सद्वितीयं तथा पितृपात्रादन्यच्च पूर्ववत् ।।४६५८।। पठेन् मित्रीशरूपाय पित्रेऽमुकाय ठद्वयम् । षष्ठीशरूपाय पितामहो ङेऽन्तोऽमुकाय च ।।४६५९॥ स्वाहा ततोड्डोशरूपायान्ते प्रादिः पितामहः। ङेऽतोऽमुकाय स्वाहेति प्रत्येकं वै समपंयेत् ।।४६६०।। ते गृहीत्वा यथाम्नायं स्वीकुर्यादुक्तमार्गतः । क्रमात् भोजनपात्राधः कुर्याच्य सतुरस्रक्ष्माभाअहङ्ग्राम

सवृत्तं पूजयेत् तत् तन्नाम्ना मंडलङेयुजाः। नमोऽन्तेन च संपूज्य स्वन्नं तत्र चतुर्विघम् ॥४६६२॥ पात्रे संस्थाप्य मूलेन प्रोक्ष्य मंत्रानिमान् पठेत्। संवित्मये महापात्रे ग्रानंदमयमोज्यकम् ॥४६६३॥ भोक्ता त्वं पुरुषः साक्षी महाशक्ति महिश्वरः। सर्वमंत्रशक्तिमयो भोक्ता साक्षात् परः स्वयम् ।।४६६४।। तस्मात् सर्वं शिवः साक्षाद् भोक्ता दाता च भोज्यकम्। विश्व देवा देवता नो भुञ्जन्त्वत्र मखे मम ॥४६६५॥ यावच्छवयं ताविदह भोक्तव्यं स्वस्थमानसैः। पेयं खाद्यं मक्ष्यभोज्यौ सर्वं वः सुसर्मापतम् ॥४६६६॥ पित् गां परमानंदहेतवे तद्भवेत् शिवस्। पठित्वेतान् क्षिपेत् तोयं देवपितृस्थले तदा ॥४६६७॥ श्रापोशानं समर्पाथ प्रार्थयेच्च ततो द्विजान्। यथासंभवपाकाद्येस्तृप्ता यूयं भविष्यथ ॥४६६८॥ कुलद्रव्येश्चर्यंश्च पितृ एगं शांतिहेतवे । विश्वेदेवाश्च पितरस्तृप्ता स्थास्मिन् महामखे ॥४६६९॥ सर्वं सुमिष्टं संपन्नं भवत्वत्र यथेप्सितम्। ग्रापोशानं चोत्तरं च दत्वा तेभ्योऽतिभक्तितः ॥४६७०॥ ताबूलं दक्षिएगं पश्चात् तेभ्यश्च विनिवेदयेत्। प्रदक्षिणानमस्कारौ कुर्यात् मंत्रद्वयं पठत् ॥४६७१॥ विश्वान् देवांस्तथा पितृत् देवतारूपमास्थितात्। नमः पुरस्तात् पश्चाच्च पार्श्वयोरिप वो नमः ॥४६७२॥ श्रनेन कौलश्राद्धेन विधिना पितृमुख्यकाः। परमानंदमास्थाय भवंत्वेते सुनिवृताः ॥४६७३॥ ततो विसर्जयेद् विप्रानक्षतक्षेपगादिमिः। CC यथागत तु पितरो गण्यन्त्वस्याक् महाम्बात् ॥४६७४॥

विश्वै देंबैश्च सहिताः प्रसन्नाः सन्तु मे चिरम्।
एवं विसृज्य तत् शेषं सहवीरैश्च शक्तिभिः ॥४६७४॥
चक्रपूजाविधानेन स्वीकृत्यैवं समापयेत्।
दक्षिणां वीरशक्तिभ्यो दत्वा तांबूलपूर्वकम् ॥४६७६॥
संप्रार्थ्यं विसृजेत् तांश्च परमानंदनिर्भरः।

इति श्रीमदागमरहस्ये सत्संग्रहे प्रायश्चित्तान्त्येष्टिकौलश्राद्धादिकथनं नाम विश्वतितमः पटलः ॥२०॥ ग्रादितश्चाष्टचत्वारिंगत् ।

स्रथ एकविशः पटलः।

कौलयोगमथो वक्ष्ये स्वात्मसंविद्विमर्शकम्।

शैवागमेषु यत् प्रोक्तं तथा बै यामलादिषु ॥४६७७॥
कुलाएंवे च यत् प्रोक्तं तथा विज्ञानभैरवे ।
तत्रत्यं मूलवाक्यं यद् युत्तचा संग्रथ्य लिख्यते ॥४६७८॥
च विज्ञानभैरवादिषु देवीवाक्यम्—
श्रुतं देव मया पूर्वं रुद्रयामलसंभवम् ।
त्रिक्रभेदमशेषेण् सारात् सारं विभागशः ॥४६७६॥
त्रिक्रभेदं ग्रात्मविद्याशिवात्मकिमच्छाज्ञानिक्रयात्मकं वा ।
ग्रद्धापि न निवृत्तो मे संशयः परमेश्वर ।
कि रूपं तत्त्वतो देव शब्दराशिकलामयम् ॥४६८०॥
स हि वर्णविभेदेन देहभेदेन वा भवेत् ।
परत्वं निष्कलत्वेन सकलत्वेन वा भवेत् ।
परत्वं निष्कलत्वेन सकलत्वेन वा भवेत् ।
प्रसादं कुरु मे नाथ निःशेषं छिन्धि संशयम् ।
शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यन् मां त्वं परिपृच्छिसि ॥४६८२॥
तस्य श्रवणमात्रेण् योगः साक्षात् प्रकाशते ।
स्वरूपं तिविधं प्रोक्तं स्थूलसूक्षमपरस्वतिः ॥४६८३॥
स्वरूपं तिविधं प्रोक्तं स्थूलसूक्षमपरस्वतिः ॥४६८३॥

साकारं स्यूलिमत्युक्तं तदेव सकलं भवेत्। निराकारं तु सूक्ष्मं स्यात् शब्दब्रह्ममयं वपुः ॥४६८४॥ परं केवलचिद्रूपं यद् ज्ञात्वात्रैव मुच्यते । स्थिरार्थं मनसः केचित् स्थूलध्यानं प्रकुर्वते ।।४६८५॥ स्थूले चेत् निइचलं चेतो भवेत् सूक्ष्मेऽपि सुस्थिरस् । करपादोदरांगादिरहितं परमेश्वरम् ।।४६८६॥ सर्वतेजोमयं घ्यायेत् सच्चिदानंदलक्षराम् । नोदेति नास्तमभ्येति न वृद्धि याति न क्षयम् ॥४६८७॥ स्वयं विभात्यथान्यानि भासयेत् साधनं विना । अनस्तमितभारूपं सत्तामात्रमगोचरम् ॥४६८८॥ वचसामत्र संवेद्यं मंत्रमूर्तिमकल्मषम्। यद् देवि सकलं रूपं भैरवस्य प्रकोतितम्। तदसारतया देवि विज्ञेयमिन्द्रजालवत् ॥४६८६॥ माया स्वप्नोपमं चैव गंधर्वनगरभ्रमम्। ध्यानार्थं भ्रांतबुद्धीनां क्रियाडंबरर्वातनाम् ॥४६६०॥ केवलं विहितं पुंसां विकल्पविहतात्मनाम्। भ्रप्रबुद्धमतीनां हि एषा बालविमीषिका ॥४६९१॥ मातृमोदकवत् सर्वं प्रवृत्त्यर्थमुदाहृतम्। तत्र पूजादिमार्गं नु स्थूलज्ञानमुदाहृतम् ॥४६९२॥ सूक्ष्मं मंत्रमयं चेव तद्घ्यानं बहुघा स्थितम्। मातृकात्मतया कामकलात्मत्वेन वै तथा ॥४६६३॥ तत्त्वचक्रात्मकेनापि सूक्ष्मभावेन संस्थितिः। मातृकात्मत्वमेवादौ वक्तव्यमिति हेतुतः ॥४६६४॥ प्रसंगात् मातृकोत्पत्तिक्रममेव विविच्यते । प्रसंगान मातृकात्पाता प्रवार्धक्रमगोचरा ॥४६६४॥

CC-0. संविदेशः कार्बक्रमाति प्रवार्धक्रमगोचरा ॥४६६४॥

सर्वेषां सर्वदा सा हि स्वप्रकाशस्वरूपिर्गी। क्रमः स तु पदार्थस्थो न हि संवित्प्रतिष्ठितः ॥४६९६॥ पदार्थोऽपि न संवित् स्यात् संवित् तस्य प्रकाशिका । प्रकाश एव तद्र्पं सर्वत्र सर्वदापि च ॥४६६७॥ तस्मादेकैव संवित् स्यात् तस्या भेदो न विद्यते । एष एव परिशवः प्रोक्तः सर्वस्य कारग्गस् ॥४६६८॥ न तस्यादि नीपि चांतस्तयोः सिद्धेरभावतः। सर्वसाधकसंवित्तोराद्यन्तौ केन सिद्धचतः ॥४६९९॥ स्वप्रकाशत्वमस्त्यस्मिन् सर्वथा हि प्रकाशते । दीपादिजडवन्नायं प्रकाशितुमिहार्हति ॥४७००॥ ततो विलक्षग्रात्वेन प्रकाशेताजडत्वतः। दीपादि नीहमित्येवं प्रकाशे स्वात्मिन क्वचित् ॥४७०१॥ योग्यत्वादहमित्येवं प्रकाशेतैष हीइवरः। म्रहंभावः सोऽपि नेष स्थूलवर्णमयो भवेत् ।।४७०२।। किंतु संवित् प्रकाशैकरूपोऽन्तः सुप्रतिष्ठितः । घटादिज्ञानकालादौ यथास्माकं हि संस्थितः ॥४७०३॥ स्थितेन येन नास्मीति कदाचित् नैव भासते। सोऽहंमावस्तथामूतः सूक्ष्मः संस्कारवत् स्थितः ॥४७०४॥ श्रलंडेकरसोऽप्येष व्यवहारे विभज्यते । स एष प्रोच्यते शक्तिः शिवामिन्नतया शुमे ।।४७०५।। पूर्णाहंताविमर्शक्च स्फुरत्ता च प्रकीर्तिता। शिवात्मके जगद्बीजे संस्थितांकुरशक्तिवत् ।। ४७०६।। जगदंकुरशक्तित्वाज्जगद्व्याप्त्री शिवे स्थिता। यथांकुरदलद्वन्द्वमध्याद् वृक्षस्य संभवः ।।४७०७।। वृक्षव्याप्त्री हि सा शक्तिरेवमेव परे शिवे। वाच्यातम्का वाचकाः स्युर्वितासावसासम्वाभिष्ठिष्ठ Gangotri

ते वाचकारावरूपा म्रादिहांतात्मकाः स्मृताः । ग्रहमे मध्यमास्ते स्युः प्रत्याहारसुनीतितः ।।४७०६॥ एवं युक्त्या जगद्व्याप्त्री पराहंता शिवे स्थिता। यथा लोके तदीयस्य किर्एं। र्मास्करस्य च ॥४७१०॥ ज्ञायते दिग्विमागादि तद्वत् शक्त्या शिवः प्रिये। न वह्ने र्दाहिकाशक्ति व्यंतिरिक्ता विमाव्यते ॥४७११॥ केवलं ज्ञानसत्तायां प्रारम्भोऽयं प्रवेशने। शिवस्य कलयन्ती सा स्वांगरूपं तु तज्जगत् । १४७१२॥ यदा स्वातंत्र्यवशतः शिवः पूर्णं निजं वपुः । ऐच्छदाच्छादितुं लीलाहेतवेऽणुरभूत् तदा ॥४७१३॥ मलत्रयसमाविष्टस्तत्राद्यो मल ग्राएवः। शुद्धपूर्णिचित्स्वरूपोऽहं भावे तु तदा स्थितः ।।४७१४॥ तथाभूतोऽप्येकदेशाऽहंभावेनाभिसंयुतः । स एकदेशाहंभावोऽपूर्णस्याति ह्वाहृतः ।।४७१५।। श्रारावो मल एष स्यात् पूर्णाहंभाववर्जनात्। श्रज्ञानमिति च प्रोक्तं संसारस्यादिकारण्य ॥४७१६॥ एकस्यैवापरं रूपं देहाहंतादिकं भवेतृ। एवं स्वस्य परिच्छेदाभासनाद् भिन्नदर्शनम्। मायोयमल इत्युक्तं तस्मादन्याभिलाषया ॥४७१७॥ करोति सदसद्वाऽन्यत् यत् तत् संस्कार एव तु । कार्मी मलस्तु संप्रोक्त एवं स त्रिविधो मलः ॥४७१८॥ मलत्रयेरिमयुतः शिव एव महेश्वरः। श्रनेकघा सममवत् पुरुषास्ते हि कीर्तिताः ॥४७१६॥

विभासते बहुति भं बाह्यान्यात्तरने दितम् elhi. Digitized by eGangotri

ब्राह्यं नोलपटाद्यं स्यात् सुखदुःखाढ्यमान्तरम् ॥४७२०॥

सर्वेषां सर्वदा सा हि स्वप्रकाशस्वरूपिर्गी। क्रमः स तु पदार्थस्थो न हि संवित्प्रतिष्ठितः ॥४६९६॥ पदार्थोऽपि न संवित् स्यात् संवित् तस्य प्रकाशिका । प्रकाश एव तद्र्पं सर्वत्र सर्वदापि च ॥४६६७॥ तस्मादेकेव संवित् स्यात् तस्या भेदो न विद्यते । एष एव परिशवः प्रोक्तः सर्वस्य कारग्गम् ॥४६९८॥ न तस्यादि नीपि चांतस्तयोः सिद्धेरभावतः। सर्वसाधकसंवित्तोराद्यन्तौ केन सिद्धचतः ॥४६९९॥ स्वप्रकाशत्वमस्त्यस्मिन् सर्वथा हि प्रकाशते । दीपादिजडवन्नायं प्रकाशितुमिहार्हति ॥४७००॥ ततो विलक्षग्रात्वेन प्रकाशेताजडत्वतः। दीपादि नीहिमत्येवं प्रकाशे स्वात्मिन क्विचित् ॥४७०१॥ योग्यत्वादहमित्येवं प्रकाशेतैष होइवरः। म्रहंभावः सोऽपि नैष स्थूलवर्णमयो भवेत्।।४७०२॥ किंतु संवित् प्रकाशैकरूपोऽन्तः सुप्रतिष्ठितः । घटादिज्ञानकालादौ यथास्माकं हि संस्थितः ॥४७०३॥ स्थितेन येन नास्सीति कदाचित् नैव भासते। सोऽहं भावस्तथाभूतः सूक्ष्मः संस्कारवत् स्थितः ॥४७०४॥ म्रखंडेकरसोऽप्येष व्यवहारे विभज्यते । स एष प्रोच्यते शक्तिः शिवाभिन्नतया शुमे ।।४७०५।। पूर्णाहंताविमर्शस्च स्फुरत्ता च प्रकीतिता। शिवात्मके जगद्बीजे संस्थितांकुरशक्तिवत् ।। ४७०६।। जगदंकुरशक्तित्वाज्जगद्व्याप्त्री शिवे स्थिता। यथांकुरदलद्वन्द्वमध्याद् वृक्षस्य संभवः ।।४७०७।। वृक्षव्याप्त्री हि सा शक्तिरेवमेव परे शिवे। वाच्यात्मका वाचकाः स्युरविनाभावभासवत् ११४७ १ जिल्ह्या हो CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by कि

ते वाचकारगवरूपा भ्रादिहांतात्मकाः स्मृताः । ग्रहमे मध्यमास्ते स्युः प्रत्याहारसुनीतितः ।।४७०६।। एवं युक्त्या जगद्व्याप्त्री पराहंता शिवे स्थिता। यथा लोके तदीयस्य किर्गो मिस्करस्य च ॥४७१०॥ ज्ञायते दिग्विमागादि तद्वत् शक्तया शिवः प्रिये। न वह्ने र्वाहिकाशक्ति व्यंतिरिक्ता विभाव्यते ॥४७११॥ केवलं ज्ञानसत्तायां प्रारम्मोऽयं प्रवेशने । शिवस्य कलयन्ती सा स्वांगरूपं तु तज्जगत् । ४७१२॥ यदा स्वातंत्र्यवद्यतः शिवः पूर्णं निजं वपुः । ऐच्छदाच्छादितुं लीलाहेतवेऽणुरभूत् तदा ।।४७१३।। मलत्रयसमाविष्टस्तत्राद्यो मल ग्राएवः। शुद्धपूर्णिचित्स्वरूपोऽहं भावे तु तदा स्थितः ।।४७१४।। तथाभूतोऽप्येकदेशाऽहंभावेनाभिसंयुतः। स एकदेशाहं भावोऽपूर्णं स्पाति ह्वाहृतः ।।४७१५।। श्रारावो मल एष स्यात् पूर्णाहंभाववर्जनात्। श्रज्ञानिमिति च प्रोक्तं संसारस्यादिकारण्य ॥४७१६॥ एकस्यैवापरं रूपं देहाहंतादिकं भवेतृ। एवं स्वस्य परिच्छेदाभासनाद् भिन्नदर्शनम्। मायोयमल इत्युक्तं तस्मादन्याभिलाषया ॥४७१७॥ करोति सदसद्वाऽन्यत् यत् तत् संस्कार एव तु । कार्मी मलस्तु संप्रोक्त एवं स त्रिविधो मलः ॥४७१८॥ मलत्रयैरिमयुतः शिव एव महेश्वरः। श्रनेकथा सममवत् पुरुषास्ते हि कीर्तिताः ॥४७१६॥ विभासते बहुविधं बाह्याम्यन्तरमेदितम्। बाह्य^{े भीलपटे हिं रिक्यांत् सुबद्धः खोड्यमीन्तरेम् गा४७२०।। ग}

सुखाद्यनुभवो भोगः सविकल्पैकहेतुकः । सुषुप्त्यादौ न भोगोस्ति विकल्पामावतो यतः ॥४७२१॥ निविकल्पो ज्ञानमात्रं ज्ञेयोल्लेखविवर्जितस् ।

ज्ञेयोल्लेखसमायुक्तो विकल्पः समुदाहृतः ॥४७२२॥

ज्ञेयोल्लेखः शब्दरूपः सोऽयमित्यादिरूपकः।

श्रतः शब्दानुविद्धस्तु विकल्पः प्रोच्यते बुधैः ॥४७२३॥

ऋते शब्दानुबंधे तु ज्ञानस्य न विकल्पता ।

स शब्दो ज्ञानवपुषि निविष्टः सूक्ष्मरूपतः ॥४७२४॥

श्रत एव तिरक्चां च प्रवृत्तिः स्याद् विकल्पतः ।

भोक्तुभोगाय सा शक्ति ह इयं विविधरूपतः ॥४७२५॥

विकल्पियतुमेवेह जाता वर्णस्वरूपिगो । सुषुप्तिप्रलयादौ च ग्राह्यामासविवर्जनात् ॥४७२६॥ संविदेकस्वरूपापि तद्भोगाय द्विधाऽमवत् ।

श्रहंकारात्मना त्वाद्य उल्लासः प्रथमो हि सः ॥४७२७॥

एषोङ्कुरात्मको ज्ञेयः पूर्वस्माद् व्यक्तरूपकः ।

स्रकारस्तु शिवस्तत्र हकारः शक्तिरुच्यते ॥४७२८॥ इमौ वर्गावंकुरस्य दलयुग्मवदास्थितौ ।

तयोरेक्यं गमयितुमनुस्वारः तद्द्रव्वंगः ॥४७२६॥ एवं द्विरूपा सा संविज्जगदंकुररूपिग्गी।

पत्रपुष्पादिकं बीजादंकुरद्वारतो यथा ॥४७३०॥

एवं विकल्पामावात् सा प्रपंचः सर्व एव तु । ग्रहंकारहारतः स्थात स्पट्टः संवित सम्बन्धः

ग्रहंकारद्वारतः स्यात् स्पष्टः संवित् समुद्भवः ॥४७३१॥ ततः शक्तिहंकारात्मा प्रविष्टानुत्तरे शिवे ।

स्वरषोडशरूपाऽसूत् तत्प्रकारः प्रदर्शते ॥४७३२॥

वाक् चतुर्धा परा पश्यन्ती मध्यमा वैखरीति च । पूर्णाहंतेव सूक्ष्माहंभावरूपा परा स्मृता ॥४७३ सुधि Gangotri

सैव देहे देहिनां तु मूलाधारे स्थितोच्यते। म्रात्मशक्तिः कुण्डलिनीत्यादिशब्दै बुंधोत्तमैः ॥४७३४॥ तस्या एव स्यूलरूपं सार्धत्रिवलयाकृतिः। विकल्पनोन्मुखी सा हि निविश्य प्राग्णमारुतम् ॥४७३४॥ मूलाधारान् नाभिदेशं प्राप्य भावं मनोगतम्। पदयन्ती प्रोच्यते तज्ज्ञैः पदयन्तीत्येव सा परा ॥४७३६॥ हृदयं प्राप्य मनसा वाच्यभावेन संयुता। पश्यंतीव न सा सूक्ष्मा भिन्ना नादेन संगता ॥४७३७॥ वैखरीव न च स्थूला करगागोचरत्वतः। मध्यमेति समाख्याता ततो वक्त्रे हि वैखरी॥४७३८॥ बीजं परा स्यात् पश्यंती सूक्ष्मा खंडांकुरात्मिका। उच्छूनद्विदलांकूररूपिग्गी मध्यमा मवेत् ॥४७३६॥ काण्डशाखावृतं पत्रपुष्परूपा हि वेखरो । फलं विकल्पानुमवो रसो मोग उदीरितः ॥४७४०॥ श्रनादिकालादित्येतत् वाग्वृक्षगहने द्विजाः। जीवाइचरंति सुचिरं संविदाकाशसंश्रये ।।४७४१।। मध्यमारूपिग्गी सैव कंठतालोष्ट्रमूर्द्धसु । दंते च सूर्च्छयंती तं प्राग्तं वं पंचवाऽभवत् ॥४७४२॥ श्र इ उ ऋ लृ इत्येवं प्रत्येकं च द्विघा पुनः। एकमात्रानेकमात्रा कालांशकलिता सती ॥४७४३॥ संजातैवं तु दशघा भूयः सानुत्तरांबिका । ताल्वोष्ठविकृति र्युक्ता द्विधा ए ग्रो इतीरिता । ४७४४।। पुनराभ्यां च संयुक्ता ए ग्रौ इत्यपि चाभवत्। विकृतानेकथा चैवं वस्तुतोऽविकृतात्मना ॥४७४५॥ श्रात्मानं विख्यापयितुं तत्परा शून्यरूपिग्गो । अनुस्वार इति ख्यातः सवन्ति सग्रिपिणी गा४७४ एमण

ग्रनुत्तरं स्वस्वरूपं विभेदेनापि भाषितम । पूर्णात्मतां न त्यजतीत्येवं बोधियतुं परा ॥४७४७॥ शून्यद्वयात्मना साक्षान् निजरूपेग्ग संस्थिता । निजरूपं हकारः स्यात् सर्गस्तस्यापरं वयुः ।।४७४८।। तयोरभेदः सुस्पष्टोऽनुत्तराद्यंतयोगतः । एवं षोडशरूपेए। नित्या षोडशकात्मिका ।।४७४९।। वाच्यवाचकयोरैक्यात् नित्यात्मान इतीरिताः। उदात्तत्वाद्याश्रयतः स्वरात्मानः प्रकीतिताः ॥४७५०॥ तत्राकारः शिवस्त्वाद्यो विसर्गः शक्तिरन्त्यगः। शिवशक्तिमयं सर्वं वक्तुमेवं हि संस्थितिः ।।४७५१।। श्रथ स्वस्यां निविष्टेन शिवेन सहिता परा। षट्त्रिशद्रूपतां प्राप्ता व्यंजनात्मतयोच्यते ।।४७५२।। कंठादिदंतस्थानांतयोगाद्या पंचरूपिग्गी। तस्याः पल्लवरूपाश्च शक्तयः संति पंच वै ॥४७५३॥ चिदानंदेच्छाज्ञानिक्रयाख्या तासां तु वै भवेत्। प्रत्येकं पंचधा जाता पंचपंचकरूपिग्गी ।।४७५४।। पंचसु प्रोक्तस्थानेषु जिह्वासंस्पर्शनेन वै। श्रमिन्यक्ता यतस्तस्मादेते स्पर्शसमाह्वयाः ॥४७५५॥ पंचवर्गाः कचटतपाद्याः पंचात्मकाः पृथक् । ग्रोष्ठस्य सर्वबाह्यत्वात् कंठादिस्थानमंडले ।।४७५६।। उकारप्रभवो वर्गो याद्यः सर्वान्तसंस्थितः। ग्रयैतत् क्रमतस्तालुमुखवर्गाचतुष्टये ।।४७५७।। पृथग्युतोऽनुत्तरस्तु संजातो हि चतुर्विधः। य र ल व इत्यन्तस्था ग्रंतेऽनुत्तरसंस्थितेः ॥४७५८॥ चतुर्गां पुनरेतेषां वह्न रूक्मेव शक्तयः। चत्वारस्ते श्रषसहा ह्यूष्मागः संप्रकीतिताः ॥४७५६॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri हस्यौष्ठवर्गशक्तित्वेऽप्येषा मुख्या यतः परा। ग्रनुत्तराभिन्नरूपापीति कंठैकसंश्रया ॥४७६०॥

एतत् त्रयस्त्रिंशदादौ च स्थितोऽनुत्तरः स्वयम् । श्रकारोऽन्तेऽपि शक्तिः सा हकारस्फुटरूपिग्गी ॥४७६१॥

एतदन्ते लक्षयुग्मं मिथुनद्वितयं स्थितम् । शिवशत्तचात्मतां वक्तुं स्वरस्य व्यंजनस्य च ॥४७६२॥

लसकारमयं त्वाद्यं कषकारमयं परम् । शाक्तमाद्यं परं शैवमेवं मिथुनयुग्मकम् ॥४७६३॥

शक्तिरूपस्वरौघस्य शिवात्मव्यंजनस्य च । प्रतिबिंबात्मकं तत्र रूपं लः स तु मारुतः ॥४७६४॥

परप्रकाइयं रूपं तु परोक्षान् मारुतो भवेत् । स्रशिवात्मत्वमेतस्माज्जाडचात् शाक्तयुगं हि लः ॥४७६५॥

कः शुद्धशक्तिः षो व्योम शुद्धशक्तिस्तु चिन्मयो । स्राकाशोऽप्यपरिच्छिन्न इत्येवं शिवधर्मयुक् ॥४७६६॥

यतस्तस्मात् तन्मिथुनं क्षः शिवात्मकमुच्यते । तत् तदाधिक्यतस्तत् तन्मिथुनं परिकोर्तितम् ॥४७६७॥

षट्त्रिशत्तत्त्वरूपं वं षट्त्रिशद्व्यंजनं क्रमात्। स्वराद्यं व्यंजनाद्यं च यस्मात् सहशरूपकम् ॥४७६८॥

एवमेव भवेत् तस्मादेकपंचाशदात्मना । मातृका सा पराहंता पुंसां भोगेकहेतवे ॥४७६६॥

विकल्पयितुमात्मानं भासते प्रोक्तरोतितः । श्रनुत्तराद्या वर्णानां शक्तयस्तु पृथक्स्थिताः ४७७०॥

एकपंचाशदन्याश्च ब्राह्मचाद्या वर्गशक्तयः । पंचभूतात्ममाः चेतेविक्तित्रक्रम्भेद्रतः।।। ४७७१॥ पंचभूतात्ममाः चेतेविक्तित्रक्रम्भेद्रतः।।। ४७७१॥

वर्गाः सर्वे देवमया शक्त्या च परया युताः । श्रकारादित्रयो व्योम ईकारादित्रयोऽनिलः। ऋकारादित्रिवर्णानि चाग्निरित्युच्यते बुधैः ॥४७७२॥

लुकारादित्रयो ह्याप भ्रोकारादित्रयो मही। प्रकृतिस्तत्त्वभेदः स्याद् विकृति भूतिरुच्यते ॥४७७३॥

ङ ज ए। न म स हा वै नाभसाः संप्रकीतिताः। क च ट प य षाश्च मारुता वर्गितास्त्विमे ।।४७७४।।

ग्राग्नेयारचेव ख छ ठ थ फ र क्षाः प्रकीतिताः। वारुणा घ भ ढ घ भ व शाः संकीतिता बुधैः ॥४७७५॥

ग ज ड द व ल लेति पाथिवाः सम्यगीरिताः। सोमसूर्याग्निसंभिन्नाः स्वरस्पर्शाविशिष्टकाः ॥४७७६॥

पुंस्नीनपुंसकास्तद्वत् तद्भेदमधुनोच्यते । स्वरागां ये च चत्वार ऋ ऋ लृ लृ नपुंसकाः ॥४७७७॥

शिष्टा द्वादश पुल्लिंगा व्यंजनाश्च नपुंसकाः। विदवतंजसप्राज्ञानां मूर्तिमेदेन संस्थिताः ॥४७७८॥

श्रिधिदैवं फलं त्वेषां क्रमेगात्र प्रकीत्यंते। विश्वं वितत्य यद्रूपा संविदेषा च संस्थिता ।।४७७६।।

श्रकारं सर्वदैवत्यं रक्तं सर्ववशीकरम्। श्राकारः स्यात् परा शक्तिः क्वेतमाकर्षणं भवेत् ॥४७८०॥ इकारं विष्णुदैवत्यं श्यामं रक्षाकरं भवेत्। मायाशक्तिरितीकारः पीतं स्त्रीगां वशीकरम् ॥४७८१॥ उकारं शिवदैवत्यं कृष्णं राजवशीकरम्। उकारं सूमिदेवत्यं श्यामं लोकवशीकरम् ॥४७८२॥ ऋकारं ब्रह्मणो ज्ञेयं पीतं ग्रहविनाशनम्। शिखंडिरूपं ऋकारमजं च ज्वरनाशनम् ॥४७५ हे । Gangotri

ग्रिहिवनीसंज्ञकं लृ लृ हवेतरक्ते ज्वरापहे । एकारं वीरभद्रं स्यात् पीतं सर्वार्थसिद्धिदम् ॥४७५४॥

ऐकारं वाग्मवं विद्यात् स्फाटिकं ज्ञानसिद्धिदम् । स्रोकारं च स्वरं विद्यात् ज्योतिः सर्वफलप्रदम् ॥४७८४॥

भ्रौकारमादिशक्तिः स्यात् शुक्लं सर्वार्थसिद्धिदम् । भ्रौकारं तु महेशं स्याद् रक्तवर्णं सुखप्रदम् ॥४७८६॥

ग्रः कारं कालरुद्रं स्यात् रक्तं पापनिकृतनम् । प्राजापत्यं ककारं स्यात् पीतं पुष्टिकरं भवेत् ॥४७८७॥

खकारं जाह्नवीबीजं क्षीराभं पापनाशनम् । गकारं गग्रारूपं स्यात् रक्ताभं विघ्ननाशनम् ॥४७८८॥

घकारं भैरवं ज्ञेयं मुक्ताभं शत्रुनाशनम् । ङकारं कालबोजं स्यात् क्यामं सर्वजयंकरम् ॥४७८६॥

चकारं चंडरद्रं स्यादंजनं रिपुभोतिहृत्। छकारं भद्रकाली स्याद् राजावर्तं जयप्रदम् ॥४७६०॥

जकारं जंभहा ज्ञेयं रक्ताभं च जयावहम् । भकारं त्वर्धनारी स्यात् क्यामरक्तं जयावहम् ॥४७६१॥

ञकारं कोटिविज्ञेयं पीतं रोगविनाशनम् । भृज्जीशं स्याट्टकारं तु रक्तं सर्वसुखावहम् ॥४७६२॥

ठकारं चन्द्रबीजं स्यात् पीतं मृत्युविनाशनम् । डकारं चैव नेत्रां स्यात् पीतं कालजयप्रदम् ।।४७६३॥

ढकारं यमबीजं स्यान्तीलं मृत्युविनाशनम् । राकारं वंदिबीजं स्याद् रक्ताभं चार्थसिद्धिदम् ॥४७६४॥

तकारं वायुदैवत्यं श्वेतं सर्वजयप्रदम् । श्वकारांत्रधर्मदैवत्य्यं न्रांत्रांत्रस्यां स्याजनयप्रदम् ।।४७६५।।

दुर्गाबीजं दकारं स्यात् इयामं सर्वार्थसिद्धिदम्। धकारं धनर्द ज्ञेयं पीताभं चार्थसिद्धिदम् ।।४७६६।। नकारं चैव सावित्रां स्फाटिकं पापनाशनम्। पर्जन्यं स्यात् पकारं तु शुक्कामं पुष्टिसिद्धिदम् ॥४७६७॥ फकारं पाशुपत्यं स्याद् ज्ञानदं पापनाशनम्। बकारं तु त्रिमूर्तिः स्यात् पोतं सर्वार्थसिद्धिदम् ॥४७६८॥ मकारं भागवं विद्याद् रक्ताभं सर्वसिद्धिदम्। मकारं मदनं विद्यात् इयामं सर्वजयप्रदम् । यकारं वायुदैवत्यं कृष्णमुच्चाटनं भवेत् ॥४७६६॥ रकारं विह्निदैवत्यं रक्ताभं संहृति भंवेत्। लकारं भूमिदैवत्यं स्यात् पीतं स्तांभनं भवेत् ॥४८००॥ वारुएां स्याद् वकारं तु शुक्काभं रोगनाशनम्। लक्ष्मीबीजं शकारं स्याद् हेमाभं श्रीकरं भवेत् ॥४८०१॥ षकारं सूर्यबोजं स्यात् रक्ताभं सर्वसिद्धिदम्। सकारं शक्तिरूपं स्यात् रक्तं सिद्धिकरं भवेत् ॥४८०२॥ हकारं शिवबोजं स्यात् गुद्धस्फटिकसन्निभम्। भुक्तिमुक्तिप्रदं पुंसां महापातकनाशनम् ॥४८०३॥ लकारं त्वष्टसिद्धीनां बीजं सिद्धिप्रदायकम्। क्षकारमात्मतत्त्वं स्याद् रक्ताभं सर्वसिद्धिदम् ॥४८०४॥ इत्येते श्रधिदेवास्तु फलवर्गक्रमे्ग च। श्रकारादिक्षकारान्तवर्णानां कीर्तिताः शिवे ॥४८०५॥ मूलशक्तिस्तु सा संवित् सर्ववर्णात्मरूपिएगी। एवं वहुविधा भूत्वा संविदेव जगन्मयी ॥४८०६॥ उद्भाव्य मोगरागाद्येः पाशयित्वा भयंकरे। दुरुत्तारे गभीरेऽज्ञान् संसारे पातयत्यलम् ॥४८०७॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

विदितात्मस्वसाम्राज्यप्रदा सैव महेश्वरी। ग्रतः सा सर्वथा ज्ञेया संसारमयनाशिनो ॥४८०८॥ एवंविधा नातृका सा संविद्र्पेगा संस्थिता । मोहयत्यखिलं विश्वं फललुब्धं खगं शिवम् ॥४८०६॥ ग्रथ कामकलारूपं संविदः प्रोच्यते स्फुटम्। यद्र्पं ध्यायते योगी संवित् तादात्म्यसिद्धये ॥४८१०॥ द्विधा कामकला प्रोक्ता स्थूलसूक्ष्मविमेदतः। त्रिविन्द्वात्मक ईकारः पूर्वं स्थूलो निरूपितः ॥४८११॥ सूक्ष्मं निरूप्यते सद्यो ध्यातुं विद्यां तदात्मिकाम् । प्रोक्तस्य शुद्धसंवित्तिमात्ररूपशिवस्य तु ॥४८१२॥ या स्वस्वरूपविश्रांतिः सोऽहंभाव उदाहृतः। जडाद्यिदात्मविश्रान्ताः स्वरूपानवभासनात् ॥४८१३॥ चिदातमा स्वात्मविश्रांतः स्वस्वरूपेऽवभासनात् । चिदात्मानमृते कापि जडो नैव प्रकाशते ॥४८१४॥ ग्रतः स्वस्मिन् न विश्रांतः परतंत्रावभासनः। जडात्मानमृते संवित् सुप्तिसंधिसमाधिषु ।।४८१५।। प्रकाशतोऽपि विश्रांता स्वस्वरूपे हि सर्वदा । एषा स्वरूपविश्रांतिरहंभाव उदाहृतः ॥४८१६॥ इदंभावो जड़ानां हि संविद्विश्रांतिरुच्यते। जडानामिदमित्येव प्रकाशात् संविदात्मना ॥४८१७॥ चेतनानामहमिति भासनात् संविदात्मनः। ग्रहमित्येव विश्रांतिः स्वरूपे युज्यते स्फुटम् ॥४८१८॥ यद्यप्येवं स्वप्रकाशः स्थूलो वर्णमयो न हि। तथापि सद्योजनितशिशूनामिव संभवेत्।।४८१६॥ श्रहमित्येव युक्तत्वादेतत् प्राक् प्रविवेचितम्। सोऽहं मावः भसेमोख्यातः पूर्णाहंताविनासिम् स्थार्ड है अश्रीत

सैषैव देहिनां देहे परिच्छेदावभासिनी। स्रपूर्णाहंतया ख्याता संसाराङ्कुरकाररास् ।।४८२१।। पूर्णाहंता समाधौ सा देहावच्छेदवर्जनात्। शुद्धसंवित्स्वभावस्य पूर्णाहंतेव सा शिवा ॥४८२२॥ सूक्ष्मा कामकला प्रोक्ता भाविता बंधनाशिनी । स्वस्वरूपं विकल्पयितुं सोच्छूनाभवद् यदा ।।४८२३।। बिंदुत्रितयरूपेग्। संजाता स्थूलरूपिग्गी। बिन्दुबिन्दू चेति पाति सहकारौ क्रमेगा तौ ॥४८२४॥ श्रनुत्तरविसर्गाख्यौ प्रकाशामर्शसंज्ञकौ। तद्वर्एंद्वययोगेन विद्या कामकलात्मिका ।।४८२४।। ईकारश्चापि तद्र्यं बिंदुबिंदुद्वयात्मकम्। तद् योगाच्चापि तद्रूपा विद्या प्रोक्तागमांतरे ॥४८२६॥ सूक्ष्मकामकलारूपं पूर्णाहंता निगद्यते । पूर्णाहन्तानविच्छन्नस्वस्वरूपविमर्शनम् ॥४८२७॥ ग्रव्यापृतं सर्वमेव स्वस्वरूपिमहोच्यते । ततक्चाहं सर्वमिति पूर्णाहंताहं ईरितः ॥४८२८॥ प्रकाशामर्शयुगलसंघट्टं शुद्धचिद् वपुः। तद् वाचकत्वे शास्त्रं स्याद् ह्रींकार उमयात्मकः ॥४८२६॥ एतस्यार्थोऽपि संप्रोक्तस्तंत्रराजे मया शिवे। व्योम्ना प्रकाशमानत्वं ग्रसमानत्वमग्निना ॥४८३०॥ तयो विमर्श ईकारो बिंदुना तन्निफालनम्। सृष्टिः प्रकाशः प्रलयो ग्रसनं पालनं ततः ॥४८३१॥ संहतस्य च सृष्टस्य विमशं इति वे क्रमात्। हादित्रयार्थः कथितो व्याप्तिरेतत् त्रयस्य तु ॥४८३२॥ बिद्धर्थमेवं च सृष्टिस्थिति प्रलयव्याप्तिमत्। शृद्धसंवेदनं तुर्यं हल्लेखार्थो निगद्यते UK So Rivell by eGangotri

वस्तुप्रकाशः सृष्टिः स्यात् प्रलयस्तन्निमीलनम् । स्थितिस्तयो विमर्शः स्यादुक्तावस्थात्रयाश्रयम् ॥४८३४॥ शुद्धसंवेदनं तुर्यमेवं स्वात्मा महेश्वरः। सृष्ट्यादि कुर्वन् सततं ह्रींकारेगािभधीयते ॥४८३५॥ प्रोक्तं संवित् सर्वमिति पूर्णाहंतेव सुस्फुटा । एवमर्थकतार्तीययोगात् कामकला स्मृता ॥४८३६॥ एतदेव मंत्रवीर्यं मंत्रचैतन्यमेव वा । ग्रादिमांत्यं चैतदेव पूर्णाहंतात्मदर्शनम् ॥४८३७॥ श्रकार श्रादिमोऽन्त्यस्तु हकारः संप्रकीर्तितः । अविमान्त्यं तेन पूर्णाहंतेव प्रिगाद्यते ॥४६३६॥ देहाद्यहन्तारहितं शुद्धं संविद्विमर्शनम्। पूर्णाहंतेति कथितं यद् ज्ञानात् चैवमुच्यते । विज्ञानं प्रत्यिमज्ञानं समाधि निविकल्पकः ॥४८३६॥ पूर्णाहंतेति च प्रोक्तमेतदेव न चेतरत्। कामः शिव इति प्रोक्तः कला शक्ति निगद्यते ॥४८४०॥ शिवशक्तचर्गयोगेन विद्या कामकलात्मिका। एवं कामकलात्मत्वं संविदः सुनिरूपितम् ॥४८४१॥ संविदः प्रोच्यते तद्वत् तत्त्वात्मत्वं क्रमात् स्फुटम्। श्रा महाप्रलयस्थायो भुवनादिषु संततम् ॥४८४२॥ तत्त्वमित्युच्यते तच्च पृथिव्यादि शिवांतकम्। संक्षेपतस्त्रिधा तत् स्यादात्मविद्या शिवात्मना ॥४८४३॥ श्रगुद्धं मिश्रितं गुद्धमगुद्धं केवलं जलम्। शुद्धं तु चिन्मयं मिश्रं चिन्जडोमयरूपकम् ॥४८४४॥ एवं स्थितं त्रिधा तत्त्वमेवं षट्त्रिशदात्मकम्। पृथिक्यावि प्रकृत्यंत्मात्मत्तरमुसाहत्तम् ॥४८४५॥

विद्यातत्त्वं तु पुरुषात् मायापर्यन्तमीरितम् । शिवांतं शुद्धविद्यादिशिवतत्त्वां प्रकीतितम् ॥४८४६॥ द्रष्ट्रहश्यात्मकं विश्वं द्विधोक्तं मामके मते। कालाध्वा चापि देशाध्वा हश्यमेतद् द्विधा त्रयम् ॥४८४७॥ तेन विश्वं षडध्वात्मरूपं मम विनिमितम्। वर्गः पदं मंत्र इति कालाध्वा तु त्रिघा स्थितः ॥४८४८॥ कलातत्त्वं च भुवनं देशाध्वेति त्रिधा भवेत्। एतत् शिवपदप्राप्तौ मार्ग इत्यध्वसंज्ञितम् ॥४८४६॥ वर्णादीनां क्रियात्मत्वात् कालाध्वत्वमुदीरितम्। मूर्त्यात्मत्त्वात् कलादीनां देशाध्वत्वं निरूपितम् ॥४८५०॥ मूर्तिवैचित्रयतो देशक्रममाभासयेत् शिवः। क्रियावैचित्र्यनिर्मासात् कालत्रयमितीरितम् ।।४८५१।। वाच्यवाचकवर्गीऽयं देशकालाध्वनो र्युगम्। तत्र वर्णास्तु संप्रोक्ता एकपंचाशदात्मकाः ।।४८४२।। पदानि मंत्राश्चानंताः पदवर्शमयं भवेत् । मंत्रः पदमयश्चेति त्रयमेकात्मकं भवेत् ।।४८५३।। कला पंचविधा प्रोक्ता तत्त्वं षट्त्रिशदात्मकम् । चतुर्विशत्युत्तरं तु द्विशतं भुवनानि वै ।।४८५४।। निवृत्तिश्च प्रतिष्ठा च विद्या शांतिरनंतरम् । शांत्यतीतेति च कला पंच प्रोक्ता मया शिवे ।।४८५५।। कालाग्न्यादि शिवाख्यांतमाश्रितं भुवनं भवेत्। एतद् विश्वं भवेदण्डचतुष्टयतया स्थितम् ॥४८५६॥ पृथिवी प्रकृति मीया शिवतश्चेत्यण्डमुच्यते । ग्रनाश्रितः परशिवः शक्तचण्डाधिपति अंवेत् ॥४८५७॥ रुद्रो मायाण्डाधिपतिः प्रकृत्यण्डाधिपो हरिः। पृथिद्यण्डाधिपो ब्रह्मा ट्यापकं चोत्तरोजाराष्ट्रांप्रश्रेष्ट पृष्ट्यपूरां

ग्रनंतपार्थिवाण्डानि प्रकृत्यंडे स्थितानि वै। प्रकृत्यण्डान्यनन्तानि मायाण्डे संस्थितानि हि ॥४८५६॥ शक्तचण्डं तु शिवस्यैकदेश एव प्रतिष्ठितम् । शतकोटियोजनं व पृथ्वीतत्त्वमुदाहृतम् ॥४८६०॥ पाथिवाण्डं चैतदेव निवृत्याख्यकलाऽपि च। भुवनानां पार्थिवाण्डे स्थितमष्टोत्तरं शतम् ॥४८६१॥ पाथिवाण्डे गोलकाभं बहिरेतस्य वे क्रमात्। जलादितत्त्वमावृत्य पूर्वपूर्वं स्थितं परम् ॥४८६२॥ घरातत्त्वाद् दशगुरां जलतत्वमुदीरितम्। तेजस्तत्त्वं समारभ्य जलतत्त्वाविध क्रमात् ॥४८६३॥ पूर्वपूर्वाद् दशगुरां तत्त्वं स्यादुत्तरोत्तरम्। बुद्धितत्त्वात् शतगुगामहंकाराख्यतत्त्वकम् ॥४८६४॥ ग्रहंकारात् प्रकृतिः सहस्रगुरिएता भवेत्। एतावत् प्रकृत्यण्डं प्रतिष्ठाप्य कलापि च ॥४८६५॥ भुवनांतं स्थितं चात्र षट्पंचाशदुदाहृतम्। प्रकृतेरयुतगुरां पुंतत्त्वं लक्षधा ततः ॥४८६६॥ नियतिस्तु ततः पश्चात् कालात्तं चोत्तरोत्तरम्। दशलक्षगुरणं प्रोक्तं ततो माया तु कोटिया ॥४८६७॥ भायाण्डमेतावदुक्तं विद्याख्या च कला भवेत्। भुवनानां स्थितिश्चात्र सप्तिवशितरोरिता ॥४८६८॥ मायातत्त्वात् शुद्धविद्या दशकोटिगुरा। भवेत् । विद्यातत्त्वादैश्वरं तु शतकोटिगुर्णं भवेत् ॥४८६१॥ सदाख्यमैदंवरात् तत्त्वात् सहस्रकोटिघा स्थितम् । एतावदुक्तं शान्त्याख्यकलेति शिवशासने ॥४८७०॥ भुवनानां स्थितं त्वष्टादशकं प्रोच्यते वुधैः। सदाख्याद्रतानुहोत्युग्नितं त्यास्तिति स्रं प्रचक्षते ॥४८७१॥

विद्यातत्त्वादेतदंतं शक्तचण्डं संप्रकोतितम् ।
शक्तितत्त्वानंतरं यत् शिवतत्त्वं प्रचक्षते ॥४८७२॥
तदप्रमेयसंख्याद्यैरवच्छेदैविवर्णितम् ।
एतावत् शांत्यतोताख्या कलेति सुनिगद्यते ॥४८७३॥
भवनानि स्थितान्यत्र प्रोक्तानि दश पंच च ।
तत्त्वात्मकं तु भुवनं तत्त्वं स्यात्तु कलात्मकम् ॥४८७४॥
वाच्यवाचकयोरेक्यात् कला वर्णमयो भवेत् ।
यतो वर्णात्मिका विद्या तत्रश्राध्वस्वरूपिगो ॥४८७५॥
कलारूपा तत्त्वरूपा तथा भुवनरूपिगो ।
भुवनादेस्तु विस्तारः स्वच्छन्दे सन्निरूपितः ॥४८७६॥

इति श्रीमदागमरहस्ये सत्संग्रहे कौलगोगे स्थूलसूश्मस्वरूपकथनं नामैक-विश्वतितमः पटलः ॥२१॥ ग्रादितश्चैकोनचत्वारिशत्।

स्रथ द्वाविशः पटलः ।

पररूपानुसंधिस्तु प्रोच्यतेऽथ समासतः।
देवतायाः परं रूपं प्रोक्तं सामान्यतः ज्ञिवे ॥४८७७॥
तस्यानुसंधिः सैवाहमस्मीति प्रविभावयेत् ।
देहप्राणमनोबुद्धिप्रमुखं न भवाम्यहम् ॥४८७८॥
यतो ममैतद् भवति ह्यहं न ममताश्रयः।
सदा प्रकाशमानोऽहं चित्प्रकाशैकरूपकः ॥४८७६॥
ग्रहं नास्मीति नो भाति यतः कस्यापि कुत्रचित् ।
देहादिः सर्वदा नैव प्रकाशत इति स्फुटम् ॥४८८०॥
न मद्र्पं तु देहादी रवोऽहं संविदात्मकः।
यथा माति बहिः सर्वं घटाद्यं विविधं ज्ञिप्तामिक्षेष्ठ प्रकाशने

देहाद्यं वा सुखाद्यं वाप्यन्तरं सर्वमेव हि । सैवाहं शुद्धसंवित्तिः कालदेशैरनावृतः ॥४८८२॥

न चादिमें प्रभवति यतो भोगः सहेतुकः । सुखादेः प्राक् छताद् भोगो न हि किचिदकाररणम् ॥४८८३॥

श्रतः प्राक्कर्मग्रैवात्र देहे मोगो हितो हितः । पूर्वदेहेष्वेवमेव तस्मादादि नं विद्यते ॥४८८४॥

नान्तोऽपि मम चैतस्मिन् देहे संचितकर्मगाम् । अवश्यं भोगहेतुत्वाद्देहः तद्भोगसाधनः ॥४८८५॥ सदा भवेदत्तरत इति मेऽनंतता स्थिता ।

न च क्षरणविभेदेन भेदो मे संविदातमनः ॥४८८६॥

क्षायोरन्तरालस्य प्रकाशानुपपत्तितः । स्मराणानुपपत्तेश्चाप्येक्यस्यानुस्मृतेरिप ।।४८८७॥ संवित्सु रममाणो यो भेदः स विषयोद्भवः ।

दर्पग्स्थिबंबकृतो मेदवत् प्रतिभावितः ॥४८८८॥

ततः संविदहंसृष्टेः पूर्वं स प्रलयात् परः ।

ग्रखंडः शुद्धसंवित्तिमात्ररूपो ह्यजोऽन्ययः ॥४८८६॥

तथैव सर्वदेहेषु भेदलेशविवर्जितः।

घटादिनाकाश इव माति मेद उपाधितः ॥४८६०॥

श्रतः कालेन देशेनाप्यनावृततत्तरहम् । शास्त्रोक्त एव परमादेवताऽस्मि नचेतरः ॥४८६१॥

एवं परां देवतां तां चिन्मयीं परमेश्वरीम् ।

सदानुसंदधानोऽसौ साधको मुच्यते भयात् ॥४८६२॥

भयं भेदविभाष्तेन भेदाभाष्तो हि मायिकः। माया तस्याः पराशक्तेः स्वातंत्र्यं पूर्णमुच्यते ॥४८६३॥

सा स्वस्वातन्त्र्यवद्यतः स्वस्मिन्नेव सुघांबुधौ ।

त्रसातृत्वहारोत्मेर्वानुवाभास्य तेषु वे पुनः ।।४८६४।।

विद्दर्प ऐषु हश्यानि प्रतिविवात्मकानि वै। स्वातंत्र्यैकनिमित्तेन विबापेक्षणवर्जनात् ।।४८६५।। श्रवभासयंती परमा सदा क्रीडापरायणा। तस्मात् प्रमाता मेयं च तां विना न हि किंचन ।।४८६६।। विनाम्भोधि यथा भंगाः समासास्तद्वदुच्यते । एतावदिविदित्वा हि बंधो ज्ञात्वा विमुच्यते ।।४८६७।। एवंविघे परे तत्त्वे ज्ञातेऽवस्था च या भवेत्। योगिनः संविदात्मानस्तल्लक्ष्यं किविदुच्यते ।।४८६८।। यावस्था भरिताकारा तत्त्वसंविद्विमिशनः। सा परापररूपेगा परादेवी प्रकीर्तिता ।।४८१।। शक्तिशक्तिमतो यंस्मादभेदः सर्वदा स्थितः । श्रतस्तद्धर्मधिमत्वात् पराशक्तिः परात्मनः ॥४६००॥ कपालान्तर्मनो न्यस्य तिष्ठेन् मीलितलोचनः । घ्यातोऽन्तर्व्योम या देव्या तया देवः प्रकाशते ।।४६०१।। प्रण्वादिसमुच्चारात् युतान्ते शून्यभावनात्। शून्यया परया शक्तचा शून्यतामेति योगिराट् ।।४६०२।। प्रगाष्टे वायुसंचारे पाषागा इव निश्चलः । परजीवंककर्मज्ञो योगी योगवदुच्यते ॥४६०३॥ यदर्थमात्रनिर्मासं स्तिमितो दिधवत् स्थितम्। स्वरूपशून्यं घ्यानं यत् तत् समाधि विधीयते ।।४६०४।। न किचिचित्रतनादेव स्वयं तत्त्वं प्रकाशते। स्वयं प्रकाशिते तत्त्वे तत् क्षा्गात् तन्मयो भवेत् ॥४६०५॥ स्वप्नजाग्रदवस्थायां:स्वप्नवद् योऽवतिष्ठते । निश्वासोच्छासहोनस्तु निश्चितं मुक्त एव सः ॥४६०६॥ निष्पंदकरण्यामः स्वात्मलीनमनोनिलः। य ग्रास्ते मृतवत् साक्षाज्जीव सुक्तः स उच्यते CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi, Dightzeld & Co. St.

न जुगोति न चाघ्राति न त्रस्यति न पश्यति । एवं शिवे विलीनात्मा समाधिस्य इहोच्यते ।।४६०८।। यथा जलं जले क्षिप्तं क्षीरं क्षीरे घृते घृतम्। श्रविशेषो भवेत् तद्वत् जीवात्मपरमात्मनोः ॥४६०६॥ यथा ध्यानस्य सामर्थ्यात् कोटोऽपि भ्रमरायते । तथा समाधिसामर्थ्याद् ब्रह्मभूतो भवेन् नरः ॥४९१०॥ क्षीरोद्भतं घृतं यत् तत् तिन्निक्षिप्तं न पूर्ववत् । पृथक्कृतो गुगाभ्यासात् ग्रात्मा तद्विदहापि च ।।४६११॥ यथा गाढांधकारस्थो न किंचिदिह पश्यति। श्रमनस्कः तथा योगी प्रपंचां नैव पश्यति ॥४६१२॥ यथा निनीलने काले प्रपंची नेव दृश्यते। तथै बोन्मीलने स्याच्चेदेतद् ध्यानस्य लक्षराम् ॥४६१३॥ जनः स्वदेहकण्डूति विजानाति यथा तथा। परब्रह्मस्वरूपो च वेत्ति विश्वविचेष्टितम् ॥४६१४॥ विदिते तु परे तत्त्वे वर्णातीते ह्यविक्रिये। किंकरत्वां हि गच्छन्ति मात्रा मात्राधिपैः सह ॥४६१५॥ श्रात्मैकभावनिष्ठस्य या या चेष्टा तदर्चनम्। यो यो जल्पः स स मंत्रः तद्घ्यानं यन्निरीक्षणम् ॥४९१६॥ देहाभिमाने गलिते विज्ञाते परमात्मिन । यत्र यत्र मनो याति तत्र तत्र समाघयः ॥४६१७॥ भिद्यते हृदयग्रंथि दिख्दांते सर्वशंसयाः। क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् हुष्टे परावरे ॥४९१८॥ योगीन्द्रेगा यदा प्राप्तं निर्मलं परमं पदम् । तदा देवेश्वरपदं प्राप्तं चापि न गृह्यते ॥४६१६॥ यः पश्येत् सर्वगं शांतमानंदात्मानमद्वयम् । त्तरमार्शकिचिवाहुताहुमं ज्ञातहामं चावशिष्यते ॥४६२०॥

संप्राप्ते ज्ञानविज्ञाने ज्ञेये च हृदि संस्थिते। लब्धे शांतपदे देवि न योगो नैव धार्गा ॥४६२१॥ परब्रह्मािए विज्ञाते समस्तै नियमेरलम् । तालवृन्तेन कि कार्य लज्ये मलयमारुते । ४६२२।। श्रासिका बंघनं नास्ति नासिका बंघनं न हि। न यमो नियमो नांस्ति स्वयमोमिति पश्यताम् ॥४६२३॥ न पद्मासनतो योगो न नासाग्रनिरोक्षणम्। ऐक्यं जीवात्मनोराहुः योगं योगविज्ञारद्याः ॥४६२४॥ च्यायेत क्षरामात्रं वा शुद्धया परमं महः। यद् भवेत् सुमहत् पुण्यं तस्यांतो नैव गण्यते ॥४६२५॥ क्षरां ब्रह्माहमस्मीति यः कुर्यादात्मचितनम् । तत् सर्वं पातकं हन्यात् तमः सूर्योदये यथा ॥४६२६॥ व्रतऋतुतपस्तीर्थदानदेवार्चनादिषु । यत् फलं कोटिगुग्गितं तदेवाप्नोति तत्त्ववित् ।।४६२७।। उत्तमा सहजावस्था मध्यमा ध्यानधार्गा। जपस्तुतिः स्यादधमा होमपूजाधमाधमा ॥४६२८॥ उत्तमा तत्त्वींचता स्याज्जपिंचता तु मध्यमा। शास्त्रचिताधमा ज्ञेया लोकचिताधमाधमा ।।४६२६।। पूजाकोटिसमं स्तोत्रं स्तोत्रकोटिसमो जपः। जपकोटिसमं ध्यानं ध्यानकोटिसमो लयः ॥४६३०॥ न हि नादात् परो मंत्रो न देवः स्वांत्मनः परः। नानुंसंधेः परा पूजा नहि तृप्तेः परं फलम् ।।४६३१।। मंत्रोदकं विना संध्यां जपहोमें विना तपः। उपचार विना पूजां योगी नित्यं समाचरेत् ॥४६३२॥ देहो देवालयो देवि जीवो देवः सदाशिवः। त्यजेदज्ञाननिर्माल्यं सोऽहंभावेन पुज्ञसेष्ट्राधि अधिकृत्वाका CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection New York

जीवः शिवः शिवो जीवः स जीवः केवलः ग्रिवः। पाशबद्धः स्मृतो जीवः पाशमृक्तः सदाशिवः ॥४६३४॥ तुषेगा बद्धो वीहिः स्यात् तुषाभावे तु तंडुलः। कर्मबद्धः सदा जीवः कर्ममुक्तः शिवः प्रिये ॥४६३५॥ ग्रग्नौ तिष्ठति विप्राग्गां हृदि देवो मनीषिगाम्। प्रतिमां स्वल्पबुद्धीनां सर्वत्र विदितात्मनाम् ॥४६३६॥ यो निदास्तुतिशीतोध्एासुखदुःखादिबंधुषु । समश्रेत् स तु योगीशो हर्षामर्षविवर्णितः ॥४६३७॥ निःस्पृहो नित्यसंतुष्टः समदर्शी जितेन्द्रियः। श्रास्ते देहप्रवासीव स योगी परतत्ववित् ।।४६३८।। निःसं कल्पविकल्पश्च निलीनोपाधिवासनः । निजस्वरूपनिर्मग्नः स योगी परतत्त्ववित् ॥४६३६॥ यथा पंग्वंधवधिरक्कीबम्कजडादयः। निवसंति पराधीनास्तथा योगी च तत्विवत्।।४६४०॥ पंचमुद्रासमुत्पन्नपरमानंदनिर्भरः । य स्रास्ते स तु योगीन्द्रः पश्यन्नात्मानमात्मनि ॥४६४१॥ जिंधपानकृतोल्लासरसानंदविज्ंभणात्। मावयेद् मरितावस्थां महानंदस्ततो भवेत् ॥४१४२॥ श्रानंदे महति प्राप्ते हुब्टे वा बांधवे चिरात्। श्रानंदमुद्गतं घ्यात्वा तल्लयस्तन्मना भवेत् ॥४९४३॥ श्रलिमांसांगनासंगै र्यत् सुखं जायते प्रिये । तदेव मोक्षो विदुषामबुधानां तु पातकम् ।।४९४४।। सदा मांसासवोल्लासः सदाचरण्वितकः। सदा संशयहीनो यः कुलयोगी स उच्यते ।।४६४५।। पिबन् मद्यं पलं खादन् स्वेच्छाचारपरायणः। ्त्रहंतेसंतयोरंक्यं स्मावयन्निवतेत् गुलुम् ॥४६४६॥

श्रामिषासवयोगेन शिवशक्तचै क्यमुच्यते । यावदासवगंधः स्यात् पशुः पशुपतिस्वयम् ॥४९४७॥ विनालिमांसगंधेन साक्षात् पशुपतिः पशुः। लोके निकृष्टमुत्कृष्टं लोकोत्कृष्टं निकृष्टकम् ॥४६४८॥ कुलमार्गे समुद्दिष्टं भैरवेगा महात्मना । श्रनाचारः सदाचारस्त्वकार्यं कार्यमुत्तमम् ॥४६४६॥ श्रसत्यमपि सत्यं स्यात् कौलिकानां कुलेश्वरि । श्रपेयमपि पेयं स्यादभक्ष्यं भक्ष्यमेव च ॥४६५०॥ श्रगम्यमिप गम्यं स्यात् कौलिकानां कुलेश्वरि । न विधि नं निषेधरच न पुण्यं न च पातकम् ।।४९५१।। न स्वर्गो नैव नरकः कौलिकानां कुलेश्वरि । शत्रवश्चापि मित्रंति साक्षाद् वासन्ति भूमिपाः ।।४९५२।। बांघवंति जनाः सर्वे कौलिकानां कुलेश्वरि । दुर्मुखाः सुमुखाः सर्वे गर्विगाः प्रगामंति च ।।४६५३।। बांघवाः साधकायन्ते कौलिकानां कुलेश्वरि । दुर्गुगाः सुगुगायंते श्रकुलं स्वकुलायते ॥४९५४॥ ग्रधर्माश्चापि धर्मन्ति कौलिकानां कुलेश्वरि । मृत्यु वेंद्यायते देवि स्वर्गः साक्षाद् गृहायते ॥४६५५॥ पुण्यायतेऽङ्गनासंगः कौलिकानां कुलेश्वरि । वहुनात्र किमुक्तेन कुलयोगीश्वराः प्रिये ॥४९५६॥ सदा संकल्पसंसिद्धा नात्र कार्या विचारएा। येन केनापि वेषेएा येन केनापि लक्षितः ॥४६५७॥ यत्र कुत्राश्रमे तिष्ठन् कुलयोगी प्रवर्तते। योगिनो विविधे वंर्ग्णे र्नरागामुपकारकैः ॥४६५८॥ भ्रमंति पृथिवीमेतामविज्ञातस्वरूपिरगः। सकुन्नैवात्मविज्ञानं स्थापयेत् कुलयोगवित्। उत्मत्तमूकजडवत् लोकभध्ये सदाचरेत् ।। १९६८ diy eGangotri

म्रलक्ष्या हि यथा लोके व्योम्नि चंद्रार्कयोर्गतिः। नक्षत्राराां ग्रहाराां च तथा वृत्तं तु योगिनः ॥४९६०॥ श्राकाशे पक्षिरगां देवि जलेऽपि जलचारिसाम्। यथा गति नं हक्येत तथा वृत्ति मंहात्मनाम् ।।४६६१।। श्रसन्त इव भासन्ते चरन्त्यज्ञा इव प्रिये। पामरा इव दृश्यंते कुलयोगिवशारदाः ॥४६६२॥ जना यथावमन्येरन् गच्छेयु नैव संगतिम्। न किचिदपि भाषेरन् तथा योगी प्रवर्तते ॥४६६३॥ मुक्तो वालकवत् क्रोडन् कुशलो जडवच्चरेत्। वदेदुन्मत्तवद् विद्वान् कुलयोगी कुलेश्वरि ॥४६६४॥ यथा हसित लोकोऽयं जुगुप्सित च कुप्यति। विलोक्य दूरतो याति तथा योगी प्रवतंते ॥४६६५॥ क्विचत् शिष्टः क्विचद् भ्रष्टः क्विचद् भूतिपशाचवत्। नानावेषघरो योगी विचरेत महोतले ॥४९६६॥ योगी लोकोपकाराय भोगान् भुङ्क्ते न काङ्क्षया। जनानुग्रहमाकाङ्क्षच् क्रीडते जगतीतले ॥४६६७॥ सर्वदर्शी यथा सूर्यः सर्वमक्षी यथानलः। योगी भुक्त्वाखिलान् भोगान् तथा पार्वर्न लिप्यते ॥४६६८॥ सर्वस्पर्शी यथा वायु र्यथाकाशश्च सर्वगः। सर्वे यथा नदी स्नाता तथा योगी सदा शुचिः ॥४६६६॥ यथा ग्रामगतं तोयं नदीयुक्तं भवेत् शुचिः। तथा म्लेच्छगृहान्नादियोगिहस्तापितं शुचिः ॥४६७०॥ यदाचरति देवेशि कुलज्ञानपरायगः। त्तदेव विदुषां मान्यमात्मनो हितमिच्छताम् ॥४६७१॥ यस्मिन् चरति योगोशः स मार्गः परमो मतः । CC-0. Arubakthi R. Nagarajan Collegion Nang Estudigille ६ ७ देशा प्रस्था पुरेशित सूर्यः सा पूर्वाशा नेनु हर्म्यते हुं।।।अह

यत्र मत्तगजो याति तत्र मार्गो यथा भवेत्। कुलयोगी चरेद् यत्र स सन्मार्गः कुलेश्वरि । नदीं वक्रामृजुं कर्तुं तत् प्रवाहं निवारितुम् ।।४६७३।। स्वेच्छाविहारिएां सन्तं को वा वारियतुं क्षमः। यद्वन् मंत्रबलोपेतः क्रीडन् सर्पे नं हश्यते ॥४९७४॥ तद्वन्न दश्यते ज्ञानी क्रीडन्निद्रियपन्नगै:। निवृत्तदुःखाः संतुष्टा निर्द्वंद्वा गतमत्सराः ।।४६७५।। कुलज्ञानरताः शांतास्त्वद्भक्तास्ते च कौलिकाः। श्रमदक्रोधदंभा साहंकाराः सत्यवादिनः ॥४९७६॥ कोलिकेन्द्रा ज्ञानपरा न चेन्द्रियवशानुगाः । कीर्त्यमाने कुले येषां रोमांची गद्गदस्वरः ॥४९७७॥ श्रानंदाश्र्राए ते देवि कथिताः कौलिकेश्वराः। सर्वधर्माधिको लोके कुलधर्मः शिवोदितः ॥४६७८॥ इति ये निश्चितिधयः प्रोक्तास्ते कौलिकोत्तमाः। यो भवेत् कुलतत्त्वज्ञः कुलमार्गविज्ञारदः ।।४६७६॥ कुलार्चनपरः स स्यात् कौलिको दांमिकाः परे। कुलभक्तान् कुलज्ञांत्रच कुलाचारान् कुलवतान् ॥४६८०॥ प्रोतो भवति यो हृष्ट्वा कौलिकः स तु मे प्रियः। तत्त्वत्रयश्रोचरणमूलमंत्रार्थतत्त्ववित्। देवतागुरुमक्तइच कौलिकः स्यान्न दीक्षितः ॥४६८१॥ दुर्लभं सर्वलोकेषु कुलाचार्यस्य दर्शनम्। विपाकेनैव पुण्यानां लभ्यते नान्यथा प्रिये ॥४६५२॥ संस्मृतः कीर्तितो हुण्टो वंदितो भाषितोऽपि वा ।

सर्वज्ञो वापि मूर्जी वाप्युत्तमो वाऽधमोऽपि वा । देवि यत्र कुलज्ञानो तत्राहं च त्वया सह ॥४६५४ ध्वानुकारां CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delki. Digitike कि

पुनाति कुलर्घानष्ठः चांडालमपि स्वेच्छ्या ॥४९८३॥

नाहं वसामि कैलासे न मेरौ न च मंदरे। कूलज्ञा यत्र तिष्ठंति तत्र तिष्ठामि मामिनि ॥४६८५॥ सुदूरमपि गंतव्यं यत्र माहेश्वरो जनः। द्रष्टव्यक्च प्रयत्नेन तत्र संनिहितस्त्वहम् ॥४६५६॥ ग्रतिदूरे स्थितो वापि द्रष्टव्यं कुलदेशिकः। समीपे वर्तमानोऽपि न द्रष्टव्यः पशुः प्रिये ॥४२५७॥ कुलज्ञानी वसेद् यत्र स देशः पुण्यभाजनम् । दर्शनादचर्चनात् तस्य त्रिःसप्तकुलमुद्धरेत् ॥४६८८॥ कुलज्ञानिनमालोक्य स्वसंतानगृहे स्थितम्। नृत्यंति पितरः सर्वे यास्यामः परमां गतिम् ॥४६८६॥ सदा शंसन्ति पितरः सुवृष्टिमिव कर्षकाः। श्रस्मत्कुलेषु पुत्रो वा पौत्रो वा कौलिको भवेत्।।४६६०॥ स धन्यः खलु लोकेऽस्मिन् पुरुषः क्षीग्गकत्मषः । यत् समीपं समायाति कुलाचार्यो मुदा प्रिये ॥४६६१॥ कौलिकेन्द्रः समायाति कौलिकावसयं प्रति। समायांति सुराः देवि योगिन्यो योगिमिः सह ॥४६६२॥ प्रविक्य कुलयोगोशं भुंजते पितृदेवताः। त्तस्मात् संपूजयेद् भक्त्या कुलज्ञानेव नापरान् ॥४९६३॥ अभ्यर्चियत्वा त्वां देवि त्वद्भक्तान्नार्चयन्ति ये। पापिष्ठास्त्वत्प्रसादस्य भाजनं न भवंति ते ॥४६६४॥ नेवेद्यं पुरतो न्यस्तं दर्शनात् स्वीकृतं त्वया । रसान् भक्तस्य जिह्वाग्रादश्चामि कमलेक्षणे ॥४६६५॥ त्वद्भक्तपूजनाद् देवि पूजितोऽहं न संशयः। तस्मात् मम प्रियाकांक्षी त्वद्भक्तानेव पूजयेत् ॥४६६६॥ यत् कृतं कुलनिष्ठानां तहेवानां कृतं भवेत्। देनी: Autor प्रियोश्यसर्थे तरमात् की लिहासमूच्येत् ॥४६६७॥

न तुष्याम्यहमन्यत्र तथा भक्त्या सुपूजितः । कीलिकेन्द्रार्चने सम्यक् यथा तुष्यामि पार्वति ॥४६६ = ॥ यत् फलं कौलिकेन्द्रारगां पूजनाल्लभते प्रिये। तत् फलं नाप्नुयात् तीर्थतपोदानमखत्रतैः ॥४६६६॥ दत्तमिष्टं हुतं तप्तं पूजितं जप्तमंबिके। कौलिकस्य भवेद् व्यर्थं कौलिकं योऽवमानयेत् ।। ५०००।। इमशानं तद्गृहं देवि स पापी श्वपचाधमः। यः प्रविश्य कुलं धर्मं कुलाचारं न पालयेत् ।।५००१।। कुलनिष्ठान् परित्यज्य यञ्चान्यस्मे प्रदीयते । तद्दानं निष्फलं देवि कौलिकस्य न संशय: ।।५००२।। भिन्नभाण्डजलं यद्वदुष्तं बीजं शिलास्विव । मस्मनीव हुतं द्रव्यं तद्वद्दानमकौलिके ।।५००३।। यथाशत्तचा तु यत् किंचित् यो दद्यात् कुलयोगिने । विशेषतिथिषु प्रीत्या तत् फलं नैव गण्यते ।।५००४।। यो देवि स्वयमाह्य कुलजाँइच शुभे दिने । म्रम्यच्यं देवताबुद्धचा गंधपुष्पाक्षतादिभिः ॥५००५॥ मादिभिः पंचमुदाभिः सद्भत्तचा परितोषयेत्। तेषु तुष्टेष्वहं तुष्टस्तुष्टाः स्युः सर्वदेवताः ॥५००६॥ भ्रनिखातसनिक्षिप्तमप्रयत्नेन विधितस्। परलोकस्य पाथेयं वीरवक्रापितं मधु ।।५००७।। पापाचारसमायुक्तं सर्वलोकवहिष्कृतम् । त्रायते हि कुलद्रव्यं कुलयोगीश्वरापितम् ॥५००८॥ यस्मिन् देशे वसेद् वीरः कुलपूजारतः प्रिये। सोऽपि देशो भवेत् पूतः कि पुनस्तत्पुरस्थिताः ॥५००६॥ तस्मात् सर्वप्रयत्नेन सर्वावस्थासु सर्वदा । कुलधर्मरतो सूयात् कुलज्ञानिनमर्चयेत् ॥५ Bistadilby eGangotri

ज्ञानिनोऽज्ञानिनो वापि यावद् देहस्य घारगा। तावद्वर्गाश्रमाचारः कर्तव्यः कर्ममुक्तये ।।५०११।। कर्मगोदीरितं ज्ञानं ज्ञानेन शिवतां व्रजेत । शिवैक्यमेव मुक्तिः स्यादतः कर्म समाचरेत् ।।५०१२।। कुर्यादिनिद्यकर्मािए। निद्यकर्मािए। नाचरेतु । इहामुत्रफलाकांक्षी कंठस्थासुरपि प्रिये ।।५०१३।। सर्वकर्मािए संत्यक्तं न शक्यानीह मानवैः। त्यजेत् कर्मफलं यो वा स त्यागीत्यभिधीयते ।।५०१४।। स्वकार्येषु प्रवर्तन्ते कर्गानीति चितयेत्। भ्रहंभावमपास्यैव यः कूर्यात् स न लिप्यते । क्रियमारगानि कर्मारिंग ज्ञानप्राप्तेरनंतरम् ॥५०१५॥ न संस्पृशंति तत्त्वज्ञं जलं पद्मदलं यथा। तिन्नष्टस्य न कर्माणि पुण्यापुण्यानि संक्षयस् ॥५०१६॥ प्रयांति नैव लिप्यन्ते क्रियमागानि साधुना । उत्पन्नसहजानंदतत्त्वज्ञानरतः प्रिये ॥५०१७॥ सर्वसंकल्पसंत्यक्तो न विद्वात् कर्म संत्यजेत्। वृथेव येः परित्यक्तं कर्मकांडमपंडितैः।।५०१८।। पाखंडाः पंडितंमन्यास्ते यांति नरकं प्रिये। ऋतुं प्राप्य यथा वृक्षः पत्रं त्यजित निस्पृहः ॥५०१६॥ तत्त्वं प्राप्य तथा योगी त्यजेत् कर्मपरिग्रहम्। श्रश्वमेघायुतेनापि ब्रह्महत्यायुतेन वा ।।५०२०।। पुण्यपापं नं लिप्यन्ते येषां ब्रह्म हृदि स्थितस् । पृथिव्यां यानि कर्मािए। जिह्वोपस्थनिमित्तकम् ।।५०२१।। जिह्वोपस्थपरित्यागी कर्मगा कि करिष्यति। इति ते कथितं देवि पररूपानुसंधिकस् ॥५०२२॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

योगीशलक्षरां चैव कालज्ञानमथो श्रृणु । श्रज्ञात्वा कालपुरुषज्ञानं योगी कथं भवेत् ।।५०२३।।

यथा शंकरगीतायाम्—

यत् सदा कालकलनां प्राप्नुयात्तु पुनः पुनः । मूत्वा मूत्वाथ तस्मिन् व योगो कालं परीक्षयेत् ।।५०२४।। स्वशरीरं कालरूपं शुभाशुभनिधि च यत्। युक्तचा शुभाशुभं कालं ज्ञात्वा योगं समभ्यसेत् ।।५०२५।। श्रथातः संप्रवक्ष्यामि छायापुरुषलक्षराम् । यस्य विज्ञानमात्रेगा त्रिकालज्ञो भवेन् नरः ॥५०२६॥ कालो हरस्तथा चाद्यो येनोपायेन लक्ष्यते। तं वदाम्यप्रयासेन यथा ज्ञायेत योगिभिः ।।५०२७।। एकान्तं विजनं गत्वा कृत्वादित्यं च पृष्ठतः । पश्येच्छायां निजां तत्र सावधानेन चेतसा । हृत्कंठप्रांतरे पश्येन्निनिमेषतया चिरम् ॥५०२८॥ ततो द्रागंबरं पश्येच्छायापुरुषमात्मनः । तारं मायां परं ब्रह्म मंत्रमेनं जपन् सुधीः ।।४०२६।। मनसैव यथाकामं ततः पश्येच्च शंकरम्। शुद्धस्फटिकसंकाशं नररूपथरं हरम् ॥५०३०॥ षण्मासाभ्यासयोगेन त्रिकालज्ञो न संशयः। सतताभ्यासयोगेन नास्ति किचित् सुदुर्लभम् ॥५०३१॥ संपूर्णावयवं तं चेत् संमुखं श्वेतमीक्षते । यावदब्दं सुखं क्षेमं विजयं प्राप्नुयात् तदा ।।४०३२।। हब्टे तस्मिन् शिरोहोने मासषट्कं न जीवति । विकर्णे हायनं चैकं व्यंसे वै सप्तमासकम्। सरन्ध्रहृदये सप्त दशमासान विहस्तके प्राप्त करें है। by eGangotri

विपार्क्वे त्रीन् व्युरस्के द्वौ व्यास्ये मासं हि जीवति । द्विदेहदर्शने मृत्युः सद्य एव न संशयः ॥५०३४॥

मित्रनाशो विपादे च बंधुनाशो विहस्तके । विनष्टे दक्षिएो वाहौ बंधो वामे स्त्रियो मृतिः ॥५०३५॥

श्रात्मनाशो विशीर्षे स्यात् सर्वांमावे कुलक्षयः । श्रहष्टे दक्षिणे पाश्वें मातुर्दक्षे पितुर्मृतिः ॥५०३६॥

दुभिक्षं दारुणं देशे कर्वुरे च पराङ्मुखे । विवर्णे धूमके रुक्षे छिन्ने भिन्नेऽभिघातनम् ॥५०३७॥

पीतेऽरुजोऽरुणे हानिः कृष्णे मृत्युर्न संशयः । न च भ्रुवः सप्तघोषं पंचत्वं त्रिदिनात्मकम् ॥५०३८॥

जिह्वामेकदिनं प्रोक्तं स्त्रियते मानवो ध्रुवम् । कोरामष्टांगींबबं तु संपोड्याक्षि निरीक्षयेत् ॥५०३६॥

यदा न हश्यते बिबं दशाहाज्जायते मृतिः । यस्य न हश्यते ज्योतिर्नेत्रयोः पीडिते तथा ॥५०४०॥

मरणं तस्य निर्विष्टं चतुर्थे मासि निश्चित् । ग्ररुं घतीं ध्रुवं चेव विष्णोस्त्रीणि पदानि च । ग्रायुर्हीना न पश्यंति चतुर्थं मातृमण्डलम् ॥४०४१॥

ग्ररुं धती मवेज्जिह्वा घ्रुवी नासाग्र एव च । भ्रुवोर्मध्ये विष्णुपदं तारका मातृमंडलम् ॥५०४२॥

इति श्रीमदागमरहस्ये सत्संग्रहे कौलावघूतकालज्ञानान्तकथनं नाम द्वाविशतितमः पटलः ।।२२॥ ग्रादितः पंचाशत्तमः ।।

ग्रथ त्रयोविंशः पटलः ।

ग्रथ तत् तत् प्रकरणोपयोगि कतिचित् स्तोत्राणि लिख्यन्ते । तत्रादौ श्रीगुरुस्तुति:—

ॐ नमस्तुभ्यं महामंत्रदायिने शिवरूपिएो । ब्रह्मज्ञानप्रकाशाय संसारदुःखहारिएो ॥१॥ श्रतिसौम्याय दिव्याय वीरायाज्ञानहारिएो। नमस्ते कुलनाथाय कुलकौलीन्यदायिने ॥२॥ शिवतत्त्वप्रबोधाय ब्रह्मतत्त्वप्रकाशिने । नमस्ते गुरवे तुभ्यं साधकामयदायिने ॥३॥ ग्रनाचाराचारभावबोधाय भावहेतवे। मावामावविनिर्मु क्तमुक्तये गुरवे नमः ॥४॥ नमस्ते शंभवे नित्यं दिव्यभावप्रकाशिने । ज्ञानानंदस्वरूपाय विभवाय नमो नमः ॥५॥ ि शिवाय शक्तिनाथाय विद्यानाथाय सिच्चिदे । कामरूपाय कामाय कामकेलिकलात्मने ॥६॥ कुलपूजोपदेशाय कुलार्गावस्वरूपिएो । श्रव्यक्तनिजतच्छिक्तिसमभावविभूतये। नमस्तेऽस्तु महेशाय नमस्तेऽस्तु नमो नमः ॥७॥ इदं स्तोत्रं पठेन् नित्यं साधको गुरुदिङ्मुखः । प्रातरुत्थाय देवेशि ततो विद्या प्रसोदति ॥ ५॥

इति श्रीकुव्जिकातंत्रे गुरुस्तोत्रम्।

ग्रथ सर्वकर्मारंभे शक्तिस्तोत्रम्—

ॐ मातर्देवि नमस्तेऽस्तु ब्रह्मरूपघरेऽनघे। कृपया हर मे विघ्नं मंत्रसिद्धि प्रयुक्त त्र Delig blgitized by eGangotri CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delig blgitized by eGangotri

माहेशि वरदे देवि परमानंदरूपिशि। कृपया हर मे विघ्नं मंत्रसिद्धि प्रयच्छ च ॥२॥ कौमारि सर्वविघ्नेशि कुमारक्रीडने वरे। कृपया हर मे विघ्नं मंत्रसिद्धि प्रयच्छ च ॥३॥ विष्णुरूपधरे देवि विनतासुतवाहिनि। कृपया हर मे विघ्नं मंत्रसिद्धि प्रयच्छ च ॥४॥ बाराहि वरदे देवि दंष्ट्रोद्धतवसुंधरे। कृपया हर मे विघ्नं मंत्रसिद्धि प्रयच्छं च ॥ ॥॥ शक्ररूपधरे देवि शक्रादिसुरपूजिते। कृपया हर मे विघ्नं मंत्रसिद्धि प्रयच्छ च ॥६॥ चामुंडे मुंडमालासृक्चिंचते विघ्ननाशिनि । कृपया हर मे विघ्नं मंत्रसिद्धि प्रयच्छ च ॥७॥ महालक्ष्म महामोक्षे क्षोमसंतापहारिंगि। कृपया हर मे विघ्नं मंत्रसिद्धि प्रयच्छ च ॥ द॥ मितिमातृमये देवि मितिमातृबहिष्कृते। एके वहुविधे देवि विश्वरूपे नमोऽस्तु ते ॥६॥ एतत् स्तोत्रं पठेद् यस्तु मंत्रारंभेषु संयतः। विदग्धां वा समालोक्य विघ्नस्तस्य न जायते ॥१०॥

इति श्रीयामले शक्तिस्तोत्रम्।

अथ पात्रप्रशंसास्तोत्रम् —

पात्रं कृत्वा करे मंत्री सर्वकमं लमेत् सुखी।
इह लोके श्रियं भुक्त्वा देहान्ते भैरवो भवेत्।।१।।
देहस्थाखिलदेवता गजमुखाः क्षेत्राधिपा भैरवा
योगिन्यो वदुकाश्च यक्षपितरो भूताः पिशाचाः ग्रहाः।
ग्रन्ये भूचरखेचराजलचरावेतालकाश्चेटकाः
तृप्ताः स्युक्षकृत्वमुद्रकास्य प्रिव्यतः पानं सदीपं चरुम्।।२।।
तृप्ताः स्युक्षकृत्वमुद्रकास्य प्रिव्यतः पानं सदीपं चरुम्।।२।।

वामे रामारमण्कुशला दक्षिणे चालिपात्र-मग्रे मुद्राश्चराक्रवटकाः शूकरस्योष्ट्यगुद्धिः। तंत्रीवोगासरसमधुरा सद्गुरोः सत्कथायां कौलो मार्गः परमगहनो योगिनामप्यगस्यः ॥३॥

ग्रलिपिशितपुरंध्रोभोगपूजापरो**ऽ**हं बहुविधकुलमार्गारंभसंभावितोऽहम्। पशुजनविमुखोऽहं भैरवीमाश्रितोऽहं गुरुचरगारतोऽहं भैरवोऽहं शिवोऽहम् ॥४॥

सकलविकलदीक्षामंत्रशुद्धात्मकोऽहं विविधविवुधवर्यैः प्रार्थ्यमार्गौन्मुखोऽहम् । विमलतरतरोऽहं सुन्दरीतत्परोऽहं गुरुचरग्रतोऽहं भैरवोऽहं शिवोऽहम् ॥४॥

शिवोऽहं शक्तिरूपोऽहं दैवोऽहं दनुजोऽप्यहम्। यज्ञोऽहं मनुजश्राहं सर्वोऽहं सर्वदास्म्यहम् ॥६॥

मंत्रोऽहं मंत्रकल्पोऽहं मंत्रजाप्यहमेव च। मंत्रकृत् मंत्रविच्चाहं मंत्रानंदात्मकोऽप्यहम् ॥७॥

पूज्योऽहं पूजनीयोऽहं पूजकोऽप्यहमेव च । पूजाकृत् पूजाविच्चाहं पूजारसमयोऽस्म्यहम् ॥ ५॥

करे पात्रं मुखे स्तोत्रमानंदो हृदयान्तरे। भक्ति गुंखपदांभोजे शरणं किमतः परम् ।।६।।

एकेन शुष्कचराकेन घटं पिबामि वापीं पिबामि सहसा लवणाईकेन। श्रास्वाद्य मांसमिलरोहितमत्स्यखंडं गंगां पिबासि यमुनां सह सागरेगा शिक्षां bigitized by eGangotri

वामे चन्द्रमुखी मुखे च मिदरा पात्रं करांमोरुहे
मूहिन श्रीगुरुचितनं भगवतीध्यानास्पदं मानसम् ।
जिह्वायां जपसाधनं परिएाति: कौलक्रमाभ्यासने
ये सन्तो नियतं पिबंति सुरसं ते भुक्तिमुक्ति गताः ॥११॥
पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा यावत् पतित भूतले ।
उत्त्थाय च पुनः पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ॥१२॥
यावन्न चलते दृष्टि र्यावन्न चलते मनः ।
तावत् पानं प्रकर्तव्यं पशुपानमतः परम्॥१॥

इति श्रोपरारहस्ये पात्रप्रशंसास्तोत्रम्। अय शांतिस्तोत्रम्—

> देवि वक्ष्यामि पूजान्ते शांतिस्तोत्रमनुत्तमम् । वीरा येन परानंदपदं प्राप्स्यंति निर्भयाः ॥१॥ जयन्तु देव्यो हरपादपंकजं प्रसन्नधामामृतमोक्षदायकम् । ग्रानंतिसद्धान्तमितप्रबोधनं नमामि चाष्टाष्टकयोगिनोगग्गम् ॥२॥ योगिनोचक्रमध्यस्यं मातृमंडलवेष्टितम् । नमामि शिरसा नाथं भैरवं भैरवीप्रियम् ॥३॥ ग्रानिधोरसंसारव्याधिध्वंसैकहेतवे । नमः श्रीनाथवद्याय कुलौबधविधायिने ॥४॥

यस्यार्चनेन विधिना कमपीह लोके
कर्मप्रसादमिष नामफलं प्रसूते ।
तं संततं सकलसाधकचित्तचृत्ति—
चितामींग कुलगगाधिपींत नमामि ॥१॥

ग्रापदो दुरितं रोगाः समयाचारलंघनात् । ये सर्वे ते व्यपोहन्तु दिव्यचक्रस्य मेलनात् ॥६॥ ग्रायुरारोग्यमैश्वर्यं कीर्ति लीभसुखं जयः । कार्तिवर्मतोरयञ्जास्तु पांतु सर्वाञ्च देवताः ॥७॥ कार्तिवर्मतोरयञ्जास्तु पांतु सर्वाञ्च देवताः ॥७॥

संपूजकानां परिपालकानां यतीन्द्रयोगीन्द्रतपोधनानाम् । देशस्य राष्ट्रस्य कुलस्य राज्ञः करोतु शांति भगवान् कुलेशः ॥८॥

नंदन्तु षड्विधकुलान्वयदर्शका ये

सिंहासनाव्युषितशाक्तमहान्वया ये।

नंदंतु सर्वकुलकौलरताः परं ये-

ऽप्यन्ये विशेषपदभेदकशांभवा ये ॥६॥

नन्दन्तु सिद्धगुरवस्तदनुक्रमीघा

ज्येष्ठानुगाः समियनो वदुकाः कुमार्यः।

षड्योगिनीप्रवरवीरकुलप्रसूता

नन्दन्तु भूमिपतिगोद्विजसाघुलोकाः

नन्दन्तु नीतिनिपुग्गा निरवद्यनिष्ठा

निर्मत्सरा निरुपमा निरुपद्रवाश्च।

नित्या निरंजनरता गुरवो निरोहाः

शाक्ताश्र शांतमनसो हृतशोकशंकाः ॥११।।

नन्दन्तु योगनिरताः कुलयोगयुक्ता

श्राचार्यसामियकसाधकपुंगवा ये।

गावो द्विजा युवतयो यतयः कुमार्यो

धर्मे भवन्तु निरता गुरुभक्तियुक्ताः ॥१२॥

नन्दन्तु साधककुला ह्यांिंगादिनिष्ठाः

शापाः पतन्तु समयद्विषि योगिनीनाम् ।

सा शांभवी स्फुरतु कापि मनाप्यवस्था

यस्यां गुरोइचरगापंकजमेव लम्यम् ॥१३॥

याश्चक्रक्रमभूमिकावसतयो नाडीषु याः संस्थिता याः कायद्रुमरोमंकूपनिलया याः संस्थिता घातुषु । उच्छवासोमिमरत्तरंगनिलया निश्वासवासाश्च याः

ता देव्यो रिपुपक्षभक्षरापरास्तृप्यन्तु कोलाजिताः । ILA Mill :

या देव्यः कुलसंभवाः क्षितिगता या देवतास्तोयगा या नित्यं प्रथितप्रभाः शिखिगता याः मातरिश्वाश्रयाः । या व्योमामृतमंडलामृतमया याः सर्वगाः सर्वदाः ताः सर्वाः कुलमार्गपालनपराः शांति प्रयच्छन्तु मे ॥१५॥

अध्वं ब्रह्मांडतो वा दिवि गगनतले भूतले निष्कले वा पाताले वा वने वा पवनसिललयो यंत्र कुत्र स्थिता वा । क्षेत्रे पीठोपपीठादिषु च कृतपदा धूपदीपालिमांसैः प्रीता देव्यः सदा नः शुभविलविधिना पान्तु वीरेन्द्रवंद्याः ॥१६॥

ब्रह्माश्रीशेषदुर्गागुहवदुकगरा। भैरवाः क्षेत्रपाला वेतालादित्यरुद्रग्रहवसुमनुसिद्धाप्सरोगुह्यकाद्याः । भूतागंधर्वविद्याधरऋषिपितृयक्षासुरा हि प्रभूता योगोशाश्चररााः किंपुरुषमुनिसुराश्चक्रगाः पान्तु सर्वे ॥१७॥

सत्यं चेद् गुरुवाक्यमेव पितृदेवाशेषविद्योगिनी-प्रीतिश्चेत् परदेवता च यदि चेद् वेदाः प्रमाणं हि चेत् । शाक्तेयं यदि दर्शनं भवति चेदाशेयमेषास्ति चेत् सन्त्यत्रापि च कौलिकाश्च यदि चेत् स्यान् मे जयः सर्वदा॥१८॥

तृप्यन्तु मातरः सर्वाः समुद्राः सगगाधिपाः । योगिन्यः क्षेत्रपालाश्च मम देहे व्यवस्थिताः ॥१६॥

शिवाद्यविनपर्यन्तं ब्रह्मादिस्तंबसंयुतस् । कालाग्न्यादिशिवान्तं च जगद् यज्ञेन तृष्यतु ॥२०॥

दूरस्था व्यसनस्थाश्च ये ये साम्यका जनाः। तेषां तु खेचरीपानममृतायोपकल्पताम्।।२१।।

कामाः फलन्तु वीराणां योगिनां योगसिद्धयः । राजानो घार्मिकाः सन्तु काले वर्षन्तु वारिदाः ॥२२॥

CC-0. Arutsakthi k. Nasarajan Colbetion Notal के संक्रिक्शेयम् Angotri

S.c.

ग्रथ वीरवंदनस्तोत्रम्—

पिठत्वेदं नमेद् वीरान् वीरवंदनमाचरेत्। स्तुवेद् वीरान् नमेद् वीरान् मंत्रसिद्धिः प्रजायते ।।१।।

ॐ जगत्त्रयाभ्यचितशासनेभ्यः परार्थंसंपादनकोविदेभ्यः । समुद्धृतक्लेशमहोरगेभ्यो नमो नमः साधकनायकेभ्यः ॥२॥

प्रहोनसर्वाश्रयवासनेभ्यः सर्वार्थतत्त्वोदितसाधनेभ्यः । सर्वप्रजाभ्युद्धरगोदितेम्यो नमो नमः साधकनायकेभ्यः ॥३॥

निस्तीर्श्यसंसारमहार्श्वेभ्यस्तृष्णालतोन्मूलनतत्परेभ्यः । जरारुजामृत्युनिवारकेभ्यो नमो नमः साधकनायकेभ्यः ॥४॥

सद्धर्मरत्नाकरभाजनेभ्यो निर्वाणमार्गोत्तमदेशिकेभ्यः । सर्वत्र संपूर्णमनोरथेभ्यो नमो नमः साध्रकनायकेभ्यः ॥४॥

लोकानुकंपाम्युदितादरेम्यः कारुण्यमैत्रोपरिमावितेम्यः । सर्वार्थचर्चापरिपूरकेम्यो नमो नमः साधकनायकेम्यः ॥६॥

विध्वस्तिनिःशेषकुवासनेभ्यो ज्ञानाग्निना दग्धमलेन्धनेभ्यः । प्रज्ञाप्रतिष्ठाप्रतिपूरकेभ्यो नमो नमः साधकनायकेभ्यः ॥७॥

सर्वाथिताशापरिपूरकेम्यो वैनेयपद्माकरबोधकेम्यः। विस्तीर्णंसर्वार्थगुर्णाकरेम्यो नमो नमः साधकनायकेभ्यः॥६॥

श्रनंतकर्माजितशासनेभ्यो ब्रह्मे न्द्रच्द्रादिनमस्कृतेभ्यः । परस्परानुग्रहकारकेभ्यो नमो नमः साधकनायकेभ्यः ॥६॥

विभग्नभूताविमहाभयेभ्यो मपंचकाचारपरायागेभ्यः । समस्तसौभाग्यकलाकरेभ्योनमोनमः शाम्भविशाम्भवेभ्यः ॥ १०॥

विमग्नदुष्कमंजवासनेभ्यः समंततो जुष्टमहायशोभ्यः । लभ्यामुलुज्ञानकृतास्पदेभ्यो सारोजस्यः शांभिकाभवेभ्यः । ११॥

सर्वागमांभोधिमहाप्लवेभ्यः श्रीचक्रपूजार्थपरायणोभ्यः। श्रीवीरचर्याचरगक्षमेभ्यो नमो नमः शांमविशाम्मवेभ्यः ।।१२॥ श्रीमंत्रकोटिद्यतिभूषऐम्यो द्वाविशदुल्लासदशातिगेम्यः। श्रद्वैततत्त्वामृतभाजनेभ्यो नमो नमः शांभविशाम्भवेभ्यः ॥१३॥ षट्त्रिशता लक्षराभूषितेभ्यः प्रोत्फुल्लपद्माकरलोचनेभ्यः। प्रतप्तचानीकरविग्रहेम्यो नमो नमः शांमविशाम्भवेम्यः ॥१४॥ संबोधसं मारसुसंस्थितेभ्यः संसारनिर्वाणनिदर्शकेभ्यः। महाकृपावेष्टितमानसेम्यो नमो नमः शांभविशाम्भवेभ्यः ॥१५॥ परैकविज्ञानरसाकुलेभ्यो वामाश्रिताचारभयानकेभ्यः। स्वातंत्र्यविध्वस्तजगन्मयेभ्यो नमो नमः शांमविशाम्मवेभ्यः॥१६॥ इसशानचर्याप्तमहाफलेभ्यो मोहांधकारापहृतिक्षमेभ्यः। परस्पराज्ञापरिपालकेम्यो नमो नमः शांभविशाम्भवेम्यः ।।१७॥ विघूतकेशालिकपालकेम्यः सुरासवारक्तविलोचनेम्यः। नवीनकांतारततत्परेभ्यो नमो नमो भैरविभैरवेभ्यः ॥१८॥ विभूतिलिप्तांगदिगंबरेभ्यो चितांग्निधूमालिभयानकेभ्यः। कपालपात्रामृतपानकेम्यो नमो नमो भैरविभैरवेम्यः ॥१६॥ सिद्धचष्टकादानमहामुनिभ्यः श्रीभैरवाचारकृतादरेभ्यः। स्वाधोनतान्यक्कृतनिर्जरेभ्यो नमो नमो भैरविभैरवेभ्यः ॥२०॥ प्रशांतशास्त्रार्थविचारकेभ्यो निवृत्तनानारसकाव्यकेभ्यः। निरस्तनिःशेषविकल्पनेभ्यो नमो नमो भैरविभैरवेभ्यः ॥२१॥ स्वात्मैक्यभावांतरिताशयेभ्यः सायुज्यसाम्राज्यसुखाकरेभ्यः। श्रीसच्चिदानंदितविग्रहेम्यो नमो नमो भैरविभैरवेम्यः ॥२२॥ पराप्रसादास्पदमानसेभ्यो ब्रह्माद्वयज्ञानरसाकुलेभ्यः। शिवोऽहमित्याश्रितचेतनेभ्यो नमो नमो भैरविभैरवेभ्यः ॥२३॥ सर्वथा सर्वदास्माकं सर्वं घटपटादिमत्। CC अप्राप्ता ति विदुक्ता ते विद्या है ।। २४।।

श्रहमेव परो हंसः शिवः परमकारणम् । शिवाद्वयप्रकाशाख्यं श्यामलं धाम धीमहि ॥२५॥ श्रनेन वीरस्तवकीर्तनेन समुद्धतक्लेशसुवासनोऽहम्। संसारकांतारमहार्गावेऽस्मिन् निमज्जमानं जगदुद्धरेयम् ॥२६॥

इति श्रीपरारः इस्ये वीरवंदनस्तोत्रम् । अय स्वाचाराकरण्व्यंगतासांगकरं कुलस्तोत्रम्—

कुलस्तोत्रं पठित्वा तु कुलचक्रं विसर्जयेत्। कुलस्तोत्रस्य पाठेन व्यंगोऽपि सांगतामियात् ॥

श्रीदेव्युवाच—

त्रिपुरा त्रिपुरेशी च सुंदरी परसुंदरी। श्रीमालिनी च सिद्धांबा महात्रिपुरसुन्दरी ।।१।।

प्रकटाख्या तथा गुप्ता तथा गुप्ततरा परा । संप्रदायकुला कौला रहस्यातिरहस्यगा ।।२।।

परापररहस्या च तथा कामेश्वरी परा। मगमालिनि नित्यक्लिना भेरुंडा विह्निव।सिनी।।३।।

महाविद्येश्वरी दूती त्वरिता कुलसुंदरी। नित्या नोलपताका च विजया सर्वमंगता ॥४॥

ज्वालांशुमालिनी चित्रा विश्वानी सुमगाकुला। पूर्णांख्या च तथा वत्सा कामेशी मोदिनी तथा ।। १।।

विमला श्रव्णादेवी जयंती कुलभेरवी। सर्वेश्वरी तथा कौली वागीशी सर्वकामिनी ॥६॥

सिद्धेश्वरी तथा चोग्रा दुर्गा महिषमदिनी। स्वप्नावती शूलिनी च मातंगी सुरसुंदरी ॥७॥

महाकाली महोग्रा च चित्ररूपा महोदरी। प्राण्विद्या तथैकाक्षी चेकपादा महांकुशा । Life Digitized by eGangotri

वामा शिवा तथा ज्येष्ठा सुरूपा चारुहासिनी। त्रिखंडा त्रिशिरा गौरी विष्याचलनिवासिनी ॥ ह।। क्षोभिण्युन्मादिनी भद्रा ललिता बहुरूपिग्गी। सर्वसंपत्करी तारा भवानी विश्ववासिनी ॥१०॥ कूटेश्वरी महाविद्याः कथितास्तव भेरव। उपासकान् महादेव शृणु चैकमनाः स्वयम् ॥११॥ मनुरुचन्द्रः कुवेररुच मन्मथस्तदनन्तरम्। लोपामुद्रा मुनिर्नंदी शक्रः स्कंदः शिवस्तथा ॥१२॥ क्रोधभट्टारकश्चैव पंचमी परिकोतितः। दुर्वासा व्याससूर्यी च वसिष्ठश्च पराज्ञरः ।।१३॥ श्रौवों वन्हिर्यमञ्चेव निऋं तिर्वरुगस्तथा। वायुर्विष्णुः स्वयंभूश्च भैरवो गालवस्तथा ॥१४॥ श्रनिरुद्धो भरद्वाजो दक्षिए। मूर्तिरेव च। चटुको गरापरचैव लक्ष्मीर्गंगा सरस्वती ॥१५॥ घात्रीशेषः प्रमत्तश्च उन्मत्तः कुलभैरवः। क्षेत्रपालो हनूमांइच दक्षो गरुड एव च ॥१६॥ प्रह्लादः शुकदेवश्च रामो रावण एव च। काश्यपः कौत्सकुं मौ च यमदग्नि मृंगुस्तथा ॥ १७॥ बृहस्पतिर्यदुश्रेष्ठो दत्तात्रेयो युधिष्ठिरः। श्रर्जुनो मीमसेनश्च द्रोगाचार्यो वृषाकिपः ॥१८॥ दुर्योधनस्तथा कुंती सीता च हिमग्गी तथा। सत्यभामा द्रौपदी च उर्वशी च तिलोत्तमा ॥१६॥ पुष्पदंतो महाबुद्धो बागाः कालश्च मंदरः। कैलासः क्षीरसिंधुश्च उदिध हिमवांस्तथा ॥२०॥ नारदश्च महावीराः कथिता वीरसाधकाः । महातिहापुसादेन स्वस्वकर्मसमित्वताः ॥२१॥ महातिहापुसादेन स्वस्वकर्मसमित्वताः ॥२१॥ Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri एतेषां वत्स नामानि नित्यं विद्योपसेविनाम् ।
प्रातःकाले शुचिर्भूत्वा यः पठेत् प्रयतः सुधीः ॥२२॥
पूजायां वा महापोठे प्रसीदामि कुलप्रिय ।
प्रशुचिर्वा निरालंबः सालंबो वा कुलान्तिके ॥२३॥
नित्यपूजाफलं तस्य ददामि वरमीप्सितम् ।
चक्रसंकेतकं वत्स गुरुसंकेतकं तथा ॥२४॥
नामसंकेतकं चैव मंत्रसंकेतकं तथा ॥
समयाचारसंकेतमज्ञात्वा यः प्रवर्तते ॥२५॥
जपपूजार्चनं होममिमचाराय कल्पते ।
इदं स्त्रोत्रं पठित्वा तु भवेत् संकेतवान् ध्रुवम् ॥२६॥
इति श्रीकुलचूडामणी संकेतस्तवराजः ।

ग्रथारात्रिकं स्तोत्रं कुलाचारचंद्रोदये—

ग्रंथ भेरवरागेण गायेदारात्रिकं शुमम् ।

येन तुष्टा भवेद् देवी दद्यात् कामान् यथेप्सितान् ॥१॥

यदि तालेन पुत्रेन्द्र संबद्धं गानमाचरेत् ।

परमानंदसंदोहदानकारणसुक्षमम् ॥२॥

शृणाु पुत्रक वक्ष्यामि गानं साधकदुर्लभम् ।

वेदवाक्यसमं सर्वेरागमेरिष सेवितम् ॥३॥

श्रारात्रिकमयं पात्रं गंधपुष्पफलान्वितम् ।

श्रादाय यजमानस्तु कृत्वा वै मस्तकाविध ।४॥

उत्त्थाय चोत्त्थिताः सर्वे परमानंदसंयुताः ।

केचित् तालकराश्चान्ये मृदंगपणवोतसुकाः ॥१॥

वीगाविणुकराश्चान्ये भल्लरीशब्दभाविताः ।

यथावकाशवादित्रचामराजिविराजिताः ॥६॥

गानं कुर्यु मुंदा प्रीता द्रवीभूतांतराशयाः ।

येन कार्याणि सिध्यन्ति साधकात्रां । स्मह्ममसेद्यास्ति।।।। वेत कार्याणि सिध्यन्ति साधकात्रां । स्मह्ममसेद्यास्ति।।।। वेत कार्याणि सिध्यन्ति साधकात्रां । स्मह्ममसेद्यास्ति।।।

मृगमदचन्द्रकर्वातसमन्विततरलकुलाकुलदोपम् । मिर्गिमयभाजनमध्यगतं कुसुमाविलिनिजितनीपम् ॥ श्रारात्रिकमिदमद्भुतमम्ब गृहाग् शिवे शिवसंगे । कुटिलालकशोभितमुखपंकजपावननयनसुरंगे ॥१॥

निजितचंचलचारुशिखाचलनयनत्रपधरशोभम् । प्रकटितकोमलगंधिवलुब्धमधुत्रतर्वाद्धतलोभम् ॥ स्रारात्रिकमिदमद्भुतमम्ब गृहाग् शिवे शिवसंगे कुटिलालकशोभितमुखपंकजपावननयनसुरंगे । ॥२॥

कृपगाजनेन कृतं करुगामिय निजशक्ते रनुसारम् । यदि न दधामि मनो निजतेजसि कथमिह मक्तिविचारम् ॥ भ्रारात्रिक्तमिदमद्भुतमम्ब गृहागा शिवे शिवसंगे । कुटिलालकशोभितमुखपंकजपावननयनसुरंगे ॥३॥

सुन्दरि सुरदंदितपदयुगले कुरु निजजनपरितोषम् ।
श्रितकुटिलाशयलोकजितिमिह मा गण्यस्व कुदोषम् ।।
श्रारात्रिकमिदमद्भुतमम्ब गृहाण् शिवे शिवसंगे ।
कुटिलालकशोमितमुखपंकलपावननयनसुरंगे ।।४।।
वयमिह पापकरणकुटिला श्रिप तव चरणद्वयसंगे ।

वयमिह पापकरणकुटिला ग्रापि तव चरणद्वयसग । कथमपि बुद्धिमहो विनिधाय यमं गणयाम न रंगे ।। ग्रारात्रिकमिदमद्भुतमम्ब गृहाण शिवे शिवसंगे । कुटिलालकशोभितमुखपंकलपावननयनसुरंगे ।।४।।

कुरु करुणां मिय कामकले कमलेव यमंब नवीनाः । श्रतिकुत्सितकरणैरतिलंपटचित्तचितमितहोनाः ।। श्रारात्रिकमिदमद्भुतमम्ब गृहाण शिवे शिवसंगे । कुटिलालकशोभितमुखपंकलपावननयनसुरंगे ।।६॥

ग्रलकावलिमंडितमुखिमृगसुर्तार्नाजतनयनसुरंगे। दलितमनोजधनुःसुभगभ्रुयुगे शिवदे शिवसंगे।

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

श्रारात्रिकमिदमद्भुतमम्ब गृहागा शिवे शिवसंगे। कुटिलालकशोभितमुखपंकजपावननयनसुरंगे ।।७।।

शुकनासाश्रितवरमुक्ताफलपरिहृतहिमकरशोभे। कुंडलमंडितगंडयुगे सुकपोलकलाहरलोमे ।। श्रारात्रिकमिदमद्भुतमम्ब गृहारा शिवे शिवसंगे। कुटिलालकशोभितमुखपंकजपावननयनसुरंगे ।। ८।।

उद्धिजदररेखावरकंठसुकोकिलकलरवनादे। सुरसरिदिव शुभहारचलन्बलपरिहृतशंभुविषादे ।। श्रारात्रिकमिदमद्भुतमम्ब गृहारा शिवे शिवसंगे। कुटिलालकशोभितमुखपंकजपावनन्यनसुरंगे ।। ह।।

स्तनयुगलप्रभयाप्रतिपादितपूजनशिवयुतिंगो । लोमावलिकलयाकलुषोकृतनाभिसरोवरभूंगे ।। श्रारात्रिकमिदमद्भुतमम्ब गृहागा शिवे शिवसंगे । कुटिलालकशोभितमुखपंकजपावननयनसुरंगे ।।१०।।

विषकोमलभुजविलिशिवे कदलीनविवरिचतजंघे। चरगाकमलसुरनरमुनिमधुकरगुंजनरामसुलंघे ।। श्रारात्रिकमिदमद्भुतमम्ब गृहागा शिवे शिवसंगे। कुटि लालकशोभितमुखपंकजपावननयनसुरंगे ।। ११।।

द्वादशपद्मिदमद्भुतगोतमतीव कुरुष्व सुवेदम्। सकलागमसारं सुखदं प्रहरति निजजनखेदम्।। श्रारात्रिकमिदमद्भुतमम्ब गृहाए। शिवे शिवसंगे । कुटिलालकशोभितमुखपंकजपावननयनसुरंगे ।।१२॥

तत एवं साधका वदेयुः—

मंगलानि जगन्मात मंगलानि शिवप्रिये। श्रर्थिमध्विप सक्तेषु सर्वदा कुरु सूत्त्रस्य Deni. Digitized by eGangotri

ततस्ततेजोहस्तैरादाय वारत्रयं मुखगुद्धि कुर्युः । ततः सर्वे नमस्कारान् कुर्युः । ततो यजमानः प्रदक्षिणां कृत्वा किस्मिष्चित् पात्रे दक्षिणां निधाय ॐ ह्रीं उपचारसांगतासिध्यथंमिदं हिरण्यमिनदैवतं तन्मूल्योपकित्पतं द्रव्यं मूलमंत्रान्तेऽमुकदेवतार्पणमस्तु । एवं समर्प्यं कृतांजिलः नम्मिशारा भुजंगसुंदरं स्तोत्रं पठेत् ।

यथा श्रीदेव्युवाच-

वाच—

ॐ षडाधारपंकेरुहान्तिवराजत्

सुषुम्गान्तरालेति तेजोल्लसंतीम् ।

सुधामंडलं श्रावयंतीं पिबंतीं

सुधामूर्तिमोडेऽहमानंदरूपाम् ।।१॥

ज्वलत्कोटिवालार्कभासारुणांगीं सुलावण्यशृंगारशोभाभिरामाम्। महापद्मिकजल्कमध्ये विराजत् त्रिकोणो लसंतीं भजेऽहं भवानीम्।।२॥

क्रगत्किंकिग्गीत्रपुरोद्भासिरत्न— प्रभालीढलाक्षार्द्वपादारिवदाम् । श्रजेशाच्युताद्यैः सुरैः सेव्यमार्ते -महादेव्यहं मूध्ति तां भावयामि ॥३॥

सुशोगांवरा बद्धनीवीविराजन्
महारत्नकांचीकलापं नितम्बम् ।
स्फुरद् दक्षिगावर्तनामि च
तिस्रो वलीरंब ते रोमराजि भजेऽहम् ॥४॥

लसद्वृत्तमुत्तुंगमाणिक्य-कुंभोपमश्रीस्तनद्वन्द्वमम्बाम्बुजाक्षि । भजे दुग्धपूर्णाभिरामं तवेदं महाहारदोपं सदा प्रस्तुतं सत् ।। १।। शिरोषप्रस्नोल्लसद्वाहुदंडै
ज्वलद्बाग्यकोदंडपाशांकुशैश्च ।
चलत्कंकग्रौ हरिकेयूरभूषोज्ज्वलद्भिः स्फुरंतीं भजे श्रीभवानीम् ॥६॥

शरत्पूर्णचन्द्रप्रभापूर्णविबा-धरस्मेरवक्त्रारविन्दश्चियं ते । सुरत्नावलीहारताटंकशोभां भजे सुप्रसन्नामजस्रं भवानीम् ॥७॥

सुनासापुटां पद्मपत्रायताक्षीं नवेष्टां श्रियं दानदक्षं कटाक्षम् । ललाटोल्लसद्गंधकस्तूरिभूषो— ज्ज्वलिद्भुर्मुखाम्भोजमीडेऽहमम्बाम् ॥८॥

चलत्कुंतलांते भ्रमद्भृङ्गवृन्दं घनस्निग्धधम्मिल्लभूषोज्ज्वलांगीम् । स्फुरन्मौलिमाणिक्यबद्धे न्दुरेखा— विलासोद्भ्रमं दिव्यमूर्धानमीडे ॥६॥

स्फुरत्वंब डिंभस्य में हृत्सरोजे सदा वाङ्मयं सर्वतेजोमयं च । गणोशास्मिद्याखिलाशक्तिवृन्दस्फुरत्-श्रीमहाचक्रराजोल्लसन्तोम् ॥१०॥

इति श्रीभवानि स्वरूपं तवेदं
प्रयंचात्परं ज्योतिरूपं प्रसन्नम् ।
परां राजराजेक्वरीं त्रैपुरीं त्वां
किवाङ्कोपविष्टां किवां त्वां भजेऽहम् ॥११॥

त्वमकरत्वमानस्त्वमापस्त्वभिन्दु-स्त्वमाकाशभूर्वायवस्त्वं चिद्धारमा CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Dightized by eGangotri त्वदन्यो न किचत् प्रकाशोऽस्ति सर्वं सदानंदसंवित्स्वरूपं मजेऽहम् ।।१२।।

गुरुस्तवं शिवस्तवं च शक्तिस्त्वमेव त्वमेवासि माता पितासि त्वमेव । त्वमेवासि विद्या त्वमेवासि बुद्धि-गंति में मतिर्देवि सर्वं त्वमेव ।।१३।।

स्तुतीनामगम्या सुवेदागमज्ञा महिम्नो न जानंति पारं तवात्र । स्तुति कर्तुमिच्छामि तत्त्वां मवानीं क्षमस्वेदमम्ब प्रमुग्धः किलाहम् ॥१४॥

श्ररण्ये शरण्ये सुकारण्यमूर्ते हिरण्योदयाद्यैरगण्यस्वरूपैः । भवारण्यभीतं च मां त्राहि भद्रे नमस्ते नमस्ते नमस्ते भवानि ॥१५॥

इमामन्वहं श्रीमवानीभुजंग-स्तुति यः पठेद् भक्तियुक्तश्च तस्मे । स्वकीयं पदं शाश्वतं वेदसारं श्रियं चापि सिद्धि भवानी ददाति ॥१६॥

भुजंगसुन्दरस्तोत्रमेतत् पुत्रक सत्तम । उपचारान्तमासाद्य पठितव्यं प्रयत्नतः ॥१७॥

ब्रह्महत्यासहस्राणि नारोहत्याशतानि च । भुजंगसुंदरस्तोत्रपाठान् नश्यन्ति तत् क्षरणात् ॥१८॥

दीक्षातीर्थानियोगाद्याः सन्यासाद्यास्तथा क्रियाः । CC-भुज्ञंगसंदरस्तुत्या कलां नार्हन्ति घोडशीम् ॥१६॥
CC-भुज्ञंगसंदरस्तुत्या कलां नार्हन्ति घोडशीम् ॥१६॥ इति श्रीकुलाचारचंद्रोदये श्रीभगवतीभुजंगसु दरस्तोत्रम् । अथ श्रीपादुकापंचकस्तोत्रम् —

ॐ ब्रह्मरंध्रसरसीक्होदरे नित्यलग्नमवदातमञ्जूतम् ।
कुंडलीकनककांडमंडितं द्वादशांतसरसीक्हं भजे ॥१॥
तस्य कंदिलतर्काग्णकापुटे क्लृप्तपत्रमकथादिरेखया ।
कोग्णलक्षितहलक्षमंडलं मावलक्ष्यमनलालयं भजे ॥२॥
तत्पुटे पदुतिहित्कडारिमस्पर्धमानपरिपाटलप्रमम् ।
चित्तयामि हृदि चिन्मयं सदा विदुनादमिणि पीठमंडलम् ॥३॥
ऊर्ध्वमस्य हुतभुक्शिलाक्णं चिद्विलासपरिबृंहणास्पदम् ।
विश्वघस्मरमहञ्चटोत्कटं व्यामृशामि युगमादिहंसयोः ॥४॥
तत्र नाथचरणारविदयोः संविदामृतभरोमरंदयोः ।
द्वन्द्वमिन्दुकरकंदशीतलं मानसं स्पृशतु मंगलास्पदम् ॥४॥
निषक्तमिणिपादुकं नियमिताधकोलाहलं
स्फुरत्किसलयाक्णं नलसमुन्मिषचचिन्द्रकम् ।
परामृतसरोवरोदितसरोजरोचिष्णु तद्
भजामि शिरसि स्थितं गुरुपदारविदद्वयम् ॥६॥

पादुकापंचकस्तोत्रं पंचवक्त्रमुखोद्गतम् । षडाम्नायक्रमप्राप्तिः प्रपंचे चातिदुर्लभम् ॥७॥ इति श्रीशिवप्रोक्तं श्रीनाथपादुकास्तोत्रम् ।

स्तोत्रानेतान् पठेद्यस्तु स्वे स्वे स्थानेऽर्चनक्रमे । स विधूयाखिलान् विघ्नानभोष्टं लभतेऽचिरात् ॥ दा

इति श्रीमदागमरहस्ये सत्संग्रहे स्तीत्रकथनं नाम त्रयोविंशः पटलः । श्रादितश्चैकपंचाशत्तमः।

ग्रथ चतुर्विशः पटलः।

ग्रथ कलिजानां क्षेमाय सुगमोपायो निर्वाणतंत्रे— देवी वाक्यम्—

श्रायाते पापिनि कलौ सर्वधर्मविलोपिनि । दुराचारे दुःप्रपंचे दुष्टकर्मप्रवर्तके ॥५०४३॥ न वेदा प्रभवस्तत्र स्मृतीनां स्मरगं कुतः। नानेतिहासयुक्तानां नानामार्गप्रवर्तिनाम् ॥५०४४॥ वहुलानां पुरागानां विनाशो भविता विभो। तदा लोका भविष्यन्ति धर्मकर्मबहिर्मुखाः॥५०४५॥ उच्छ्ंखला मदोन्मत्ताः पापकर्मरताः सदा । कामुकाः लोलुपाः क्रूराः दुर्मुखाः निष्ठुराः शठाः ॥५०४६॥ स्वल्पायु मैंदमतयो रोगशोकसमाकुलाः। निश्रीकाः निर्बलाः नोचाः नोचाचारपरायणाः ॥५०४७॥ नीचसंसर्गनिरताः परवित्तापहारकाः। पर्रानदापरद्रोहपरीवादपराः खलाः ॥५०४८॥ परस्त्रीहरणे पापशंकाभयविवर्जिताः। निर्धना मिलना दोना दरिद्रादिचररोगिए: ॥५०४६॥ विप्राः शूद्रसमाचाराः संध्यावंदनवर्जिताः । श्रयाज्ययाजका लुब्धाः दुर्वृत्ताः पापकारिएाः ॥५०५०॥ ग्रसत्यमाषिणो मूर्खा दांभिका दुष्प्रपंचकाः। कन्याविक्रयिगो वात्यास्तपोन्नतपराङ्मुखाः ॥५०५१॥ लोकप्रतारगार्थीय जपपूजापरायगाः। पाखंडाः पंडितंमन्याः श्रद्धामितिविविजिताः ।।५०५२॥

कदाहाराः कदाचाराः घृतकाः शूद्रसेवकाः । cc्यूदान्नभोजितः क्रूरा वृषलीरतिकार्मुकाः ॥५०५३॥ cc्यूदान्नभोजितः क्रूरा वृषलीरतिकार्मुकाः ॥५०५३॥

दास्यंति धनलोभेन स्वदारान् नीचजातिषु । बाह्मण्यचिह्नमेतावत् केवलं सूत्रधारग्यस् ॥५०५४॥ नैव पानादिनियमो भक्ष्याभक्ष्यविवेचनम्। धर्मशास्त्रे सदा निदा साधुद्रोहो निरंतरस् ॥५०५५॥ सत्कथालापमात्रं च न तेषां मनसि क्वचित्। त्वया कृतानि तंत्रािंग जीवोद्धारगहेतवे ॥५०५६॥ निगमागमजातानि भुक्तिमुक्तिकरािए च। देवीनां यत्र देवानां मंत्रयंत्रादिसाधनम् ।।५०५७।। कथिता वहवो न्यासाः सृष्टिस्थित्यादिलक्षर्णाः । बद्धपद्मासनादीनि गदितान्यपि भूरिशः ॥५०५८॥ पशुवीरसिद्धिभावा देवतामंत्रसिद्धिदाः । शवासनं चितारोहो मुंडसाधनमेव च ॥५०५६॥ लतासाधनकर्मािए त्वयोक्तानि सहस्रशः। पशुमावदिव्यभावौ स्वयमेव निवारितौ ॥५०६०॥ कलौ न पशुभावोऽस्ति दिव्यभावः कुतो भवेत्। पत्रं पुष्पं फलं तोयं स्वयमेवाहरेत् पशुः ॥५०६१॥ न शूद्रदर्शनं कुर्यान् मनसा न स्त्रियं स्मरेत्। दिव्यश्च देवता प्रायः शुद्धान्तःकरगाः सदा ॥५०६२॥ द्वन्द्वातीतो वीतरागः सर्वभूतसमः क्षमी। कलिकल्मषयुक्तानां सर्वदा स्थिरचेतसाम् ॥५०६३॥ निद्रालस्यप्रसक्तानां भावशुद्धिः कथं भवेत्। वीरसाधनकर्माणि पंचतत्त्वोदितानि च ॥५०६४॥ मद्यं मांसं तथा मत्स्यं मुद्रा मृथुनमेव च। एतानि पंचतत्त्वानि त्वया प्रोक्तानि शंकर ॥५०६४॥ कलिजा मानवा लुब्धाः शिश्नोदरपरायणाः। लोभात् तत्र पतिष्यस्ति का किष्यस्ति साधनस् भार्षे दे दे विभाग

इन्द्रियार्गां सुखार्थाय पीत्वा च बहुलं सघू। भविष्यन्ति मदोन्मत्ता हिताहितविर्वीजताः ॥५०६७॥ परस्त्रीधर्षकाः केचिद् दस्यवो वहवो भवि। न करिष्यन्ति ते मत्ताः पापयोनिविचारणाम् ॥५०६८॥ श्रतिपानादिदोषेगा रोगिगा बहवः क्षितौ। शक्तिहीना बुद्धिहीना भूत्वा च विकलेन्द्रियाः ॥५०६६॥ ह्रदे गर्ते प्रांतरे वा प्रासादात् पर्वतादिप । पतिष्यन्ति मरिष्यन्ति मनुजा मदविह्वलाः ॥५०७०॥ केचित् विवादयिष्यन्ति गुरुभिः स्वजनेरपि । केचिन् मौना मृतप्राया ग्रपरे बहुजल्पकाः ॥५०७१॥ श्रकार्यकारिएाः क्रूरा धर्ममार्गविलोपकाः। योगहीना ज्ञानहीना क्रियाहीनास्तथा प्रभोः ॥५०७२॥ हिताय यानि कर्मािंग कथितानि त्वया प्रभो। मन्ये तानि महादेव विपरीतानि मानवे ॥५०७३॥ के वा योगं करिष्यन्ति न्यासजातानि केऽपि वा। स्तोत्रपाठं यंत्रलिपि पुरश्चर्यां जगत्पतेः ॥५०७४॥ युगधर्मप्रभावेगा स्वभावेन कलौ नराः। भविष्यन्त्यतिदुर्वृत्ताः सर्वथा पापकारिएाः ॥५०७५॥ तेषामुपायं देवेश कृपया कथय प्रभो। श्रायुरारोग्यवचस्वं बलवोर्यविवर्धनम् ॥५०७६॥ विद्याबुद्धिप्रदं नृगामप्रयत्नं शुभंकरम्। येन लोका भविष्यन्ति महाबलपराक्रमाः ॥५०७७॥ शुद्धचित्ताः परिहता मातापित्रोः प्रियंकराः। स्वदारितष्ठाः पुरुषाः परस्त्रीषु पराङ्मुखाः ॥५०७८॥ देवतागुरुभक्ताश्च पुत्रस्वजनपोषकाः। बह्मजा बह्मविद्याजा बह्मचितनमानसाः ॥५०७६॥

CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

सिद्धचर्थं लोकयात्रायाः कथयस्य हिताय तत्। सर्वथा येन क्षेमं स्याद् गतिर्वे पारलोकिको ।। १०८०।। विना त्वां सर्वलोकानां कस्त्राता भुवनत्रये। इति देव्या वचः श्रुत्वा शंकरो लोकशंकरः ।। ५०८१।। कथयामास तत्त्वेन महाकारुण्यवारिधिः। साधु पृष्टं महामागे जगतां हितकारिंग्।।४०८२॥ एताहशः शुभः प्रश्नो न केनापि कृतः परा। धन्यासि सुकृतज्ञासि हितासि कलिजन्मनाम् ।।५०८३।। यद् यदुक्तं त्वया मद्रे सत्यं सत्यं यथार्थतः। सर्वज्ञा त्वं त्रिकालज्ञा धर्मज्ञा परमेश्वरि ।। ५०८४।। यथातत्त्वं यथान्यायं यथायोग्यं न संशयः। भूतं भवद् भविष्यं च धर्ममुक्तं त्वया प्रिये ॥५०८५॥ कलिकल्मषदीनानां द्विजादीनां सुरेश्वरि । मेध्यामेध्यविचारागां न शुद्धिः श्रौतकर्मगा ।।५०८६।। न संहिताद्ये: स्मृतिभिरिष्टसिद्धि नृ गां भवेत्। सत्यं सत्यं पुनः सत्यं सत्यं सत्यं मयोच्यते ॥५०८७।। श्रुतिस्मृतिपुरागादौ मयैवोक्तं पुरानघे। श्रागमोक्तविधानेन कलौ देवान् यजेत् सुधीः ॥५०८८।। विना ह्यागममार्गेग कलौ नास्ति गतिर्यतः। कली तंत्रोदिता मंत्राः सिद्धास्तूर्गफलप्रदाः ॥५०८६॥ शस्ता कर्मसु सर्वेषु जपयज्ञक्रियादिषु । निर्वीया श्रोतजातीया विषहीनोरगा इव ॥५०६०॥ सत्यादौ सफला ग्रासन् कलौ ते मृतका इव। पांचालिका यथा मित्तौ सर्वेन्द्रियसमन्विताः ॥५०६१।। श्रमूरशक्ताः कार्येषु तथान्ये मंत्रराशयः। यथा तंत्रोदितो मार्गो मोक्षाय च सुखाय ज हिन्द्र स्टिशिक्ट

नान्यः पंथामुक्तिहेतुरिहामुत्र सुखाप्तये । तंत्रारिए बहधोक्तानि नानाख्यानान्वितानि च ।।५०६३।। सिद्धानां साधकानां च विधानानि च मुरिशः। श्रिधकारिविमेदेन पश्चवाहल्यतः प्रिये ।।५०६४।। कुलाचारोदितं धर्मं गुप्त्यर्थं कथितं क्वचित्। जीवप्रवृत्तिकारोिंग कानिचित् कथितान्यपि ।।५०६५।। देवा नानाविधाः प्रोक्ता देव्योऽपि बहुधा प्रिये। भैरवाश्चैव वेताला वटुका नायिकागणाः ॥५०६६॥ शाक्ताः शैवा वैष्णवाश्च सौरा गारापतादयः। नानामंत्राश्च यंत्रारिए सिद्धोपायान्यनेकशः ।।५०६७।। भूरिप्रयाससाध्यानि यथोक्तफलदानि च। यथा यथा कृता प्रश्ना येन येन यदा यदा ॥५०६८॥ तदा तस्योपकाराय तथैवोक्तं मया प्रिये। सर्वलोकोपकाराय सर्वप्राशिहिताय च ॥५०६६॥ युगधर्मानुसारेग याथातथ्येन पार्वति । त्वया याहक् कृतः प्रइनो न केनापि कृतः पुरा ॥५१००॥ तव स्नेहेन वक्ष्यामि सारात् सारं परात् परम्। वेदानामागमानां च तंत्राणां च विशेषतः ॥५१०१॥ सारमृद्धत्य देवेशि तवाग्रे कथ्यते मया। कि वैदेः कि पुराग्रैश्र कि शास्त्रैबंहुमिः शिवे ॥५१०२॥ विज्ञातेऽस्मिन् महामंत्रे सर्वसिद्धीश्वरो मवेत्। यतो जगन्मंगलाय त्वयाहं विनियोजितः ।।५१०३॥ श्रतस्ते कथयिष्यामि यद् विश्वहितकृद् भवेत्। कृते विश्वहिते देवि विश्वेशः परमेश्वरः ॥५१०४॥ प्रीतो भवति विश्वात्मा यतो विश्वं तदाश्रितम्। स एक एव सद्भूपः सत्योऽद्वेतः परात् परः ॥५१०५॥ CC-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

स्वप्रकाशः सदा पूर्णः सच्चिदानंदलक्षराः । निर्विकारो निराधारो निर्विशेषो निराकुलः ॥५१०६॥

गुरणातीतः सर्वसाक्षी सर्वात्मा सर्वदृग्विभुः । गूढः सर्वेषु भूतेषु सर्वन्यापी सनातनः ॥५१०७॥

सर्वन्द्रियगुणाभासः सर्वेन्द्रियविवर्जितः। लोकातीतो लोकहेतुरवाङ्मनसगोचरः ।।५१०८।। स वेत्ति विश्वं सर्वज्ञस्तं न जानाति कश्चन । तदधीनं जगत् सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम् ।।५१०६।। तदालंबनतस्तिष्ठेदविज्ञेयमिदं जगत्। तत् सत्यतामु ।श्रित्य सद्बद्भाति पृथक् पृथक् ।।५११०।। तेनेव हेतुभूतेन वयं जाता महेश्वरि । कारणं सर्वभूतानां स एकः परमेश्वरः ॥५१११॥ लोकेषु सृष्टिकरएगात् स्रष्टा ब्रह्मे ति गीयते । विष्णुः पालयिता देवि संहर्ताहं तदिच्छया ॥ ५११२॥ इंद्रादयो लोकपालाः सर्वे तद्वशर्वातनः । स्वे स्वेऽधिकारे निरतास्ते शासित तदाज्ञया ॥५११३॥ त्वं परा प्रकृतिस्तस्य पूज्यासि भुवनत्रये । तेनान्तर्यामिरूपेगा तत्तद्विषययोजिताः ॥५११४॥ स्वस्वकर्म प्रकुर्वन्ति न स्वतंत्राः कदाचन । यद्भयात् वाति वातोऽपि सूर्यस्तपति यद्भयात् ।।५११५।। वर्षन्ति तोयदाः काले पुष्यंति तरवो वने । कालं कालयते काले मृत्यो मृत्युमियो भयम् ॥५११६॥ वेदान्तवेद्यो भगवान् यत् तच्छब्दोपलक्षर्गः। सर्वे देवाइच देव्यइच तन्मया सुरवंदिते ।। ५११७।। श्राब्रह्मस्तंबपर्यन्तं तन्मयं सकलं जगत् । तिस्मस्तुष्टे जगत तुष्टं प्रीतिमते प्रीस्ति जमन्। १५१ १ १८।।

तदाराधनतो देवि सर्वेषां प्रीरानं भवेत्। तरोर्म्लाभिषेकेगा यथा तज्ज्जपल्लवाः ।।५११६।। तृप्यन्ति तदनुष्ठानात् तथा सर्वेऽमरादयः । यथा तवार्चनात् ध्यानात् पूजनाज्जपनात् प्रिये ।। ५१२०।। मवन्ति तुष्टा सुन्दर्यस्तथा जानीहि सुवते । यथा गच्छन्ति सरितोऽवशेनापि सरित्पतिम् ॥५१२१॥ तथार्चादीनि कर्माणि त्वदुद्देश्यानि पार्वति । यो यो यान् यान् यजेद् देवान् श्रद्धया यद्यदाप्तये ॥५१२२॥ तत् तद् ददाति सोऽध्यक्षस्तैस्तै देवग्गः शिवे। बहुनात्र किमुक्तेन तवाग्रे कथ्यते प्रिये ।।५१२३।। ध्येयः पूज्यः सुखाराध्यस्तं विना नास्ति मुक्तये । नायासो नोपवासक्च कायक्लेको न विद्यते । ११२४।। नैवाचारादिनियमो नोपचाराइच सूरिशः। न दिक्कालविचारोऽस्ति न मुद्रान्याससंहतिः ॥५१२५॥ यत् साधने कुलेशानि तं विना कोऽन्यमाश्रयेत्। कलौ पापयुते घोरे तपोहीनेऽतिदुस्तरे ।। ४१२६।। निस्तारबीजमेतावन्नाममंत्रस्य साधनम्। साधनानि वहूक्तानि नानातंत्रागमादिषु ॥५१२७॥ कलौ दुर्बलजीवानामसाध्यानि महेरवरि। श्रल्पायुषः स्वल्पवित्ता स्रन्नाधीनासवः प्रिये ।।५१२८।। लुब्धा धनार्जने व्यग्राः सदा चंचलमानसाः। समाधावस्थिरधियो योगक्लेशासहिष्णवः ॥५१२६॥ तेषां हिताय मोक्षाय ब्रह्ममार्गोऽयमीरितः। एवं श्रुत्वा तदा देवी परमानंदसंप्लुता ॥५१३०॥ प्रोवाच शंकरं हुव्टा वचनं संशयन्छिदम्। ्सन् त्वयोक्तः वयातिषो ब्रह्मोपासनमुत्तमम् ॥५१३१॥

निराकारं निरीहं यत् कथं तत् सेव्यते जनै: । ज्ञानिनां दुर्लभं यद्धि तत् कथं स्थूलबुद्धिभि: ।।५१३२।। स्मृतः स्मृतिपथं याति सर्वव्यापी सनातनः । कृपया सुगमोपायेनैव तत् साधनं वद ।। ४१३३।। विधानं कीहशं तस्य साधनं केन वर्त्मना । मंत्रः को वात्र विहितो ध्यानपूजादिकं च किस् ।।५१३४।। सविशेषं सावशेषमामूलाद् वक्तुमहंसि । मम प्रीतिकरं देवलोकानां हितकारकम् ॥५१३५॥ कोह्यन्यस्त्वामृते शंभो भवव्याधिभिषग्गुरुः । इति देव्या वचः श्रुत्वा देवदेवो महेश्वरः ॥५१३६॥ उवाच परया प्रोत्या पार्वतीं पार्वतीपतिः। श्रुणु देवि महामागे तदाराधनकारराम् ॥५१३७॥ येन साधनमात्रेग भुक्ति मुक्ति लभेन नरः। ब्रह्मा्गः सर्वगस्यास्य निरोहस्य चिदात्मनः ॥५१३८॥ त्वं पराप्रकृतिः साक्षात् तदिच्छावशवतिनी । त्वत्तो जातं जगत्सर्वं त्वं जगज्जननो शिवे ॥५१३६॥ महदाद्यापुपर्यन्तं यदेतत् सचराचरम् । त्वयंवोत्पादितं भद्रे त्वदघीनिमदं जगत् ॥५१४०॥ त्वं सर्वरूपिग्गो देवि सर्वेषां जननी परा। तुष्टायां त्विय देवेशि सर्वेषां तोषरां मवेत् ॥५१४१॥ सृष्टेरादौ त्वमेकासीस्तमोरूपमगोचरम्। त्वत्तो जातं जगत् सर्वं परं ब्रह्म सिसृक्षया ॥५१४२॥ महत्तत्त्वादिभूतान्तं त्वया सृष्टिमदं जगत्। निमित्तमात्रं तद्ब्रह्म सर्वकारणकारणम् ॥५१४३॥ सद्र्यं सर्वतो व्यापि सर्वमावृत्य तिष्ठति । सर्वकरूपं चित्रमात्रं निज्ञित्वातं सर्ववस्तुषु भाष्ट्र प्रश्नाप्त्र by eGangotri

न करोति न चाइनाति न गच्छति न तिष्ठति। सत्यं ज्ञानमनाद्यंतमवाङ्मनसगोचरम् ॥५१४५॥ तस्येच्छामात्रमालम्ब्य त्वं महायोगिनी परा। करोषि पासि हंस्यन्ते जगदेतच्चराचरम् ॥५१४६॥ तव रूपं महाकालो जगत्संहारकारकः। महासंहारसमये कालः सर्वं ग्रसिष्यति ॥५१४७॥ कलनात् सर्वभूतानां महाकालः प्रकीतितः । महाकालस्य कलनात् त्वमाद्या कालिका परा ॥५१४८॥ त्त्वमाद्या सर्वविद्यानामस्माकमपि जन्मभूः। त्वं ज्ञानासि जगत् सर्वं न त्वां जानाति कश्चन ॥५१४६॥ त्त्वं काली तारिग्गी दुर्गा षोडशी भुवनेश्वरी। ञ्चमावती त्वं वगला भैरवी छिन्नमस्तका ॥५१५०॥ त्वमन्नपूर्गा वाग्देवी त्वं देवि कमलालया। सर्वशक्तिस्वरूपा त्वं सर्वदेवमयी तनुः ॥५१५१॥ त्त्वमेव सूक्ष्मा स्थूला त्वं व्यक्ताव्यक्तस्वरूपिग्गी। निराकारापि साकारा कस्त्वां वेदितुमहंति ॥५१५२॥ उपासकानां कार्योर्थं श्रेयसे जगतामिप । दानवानां विनाशाय घरो नानाविघास्ततूः ॥५१५३॥ चतुर्भुजा त्वं द्विभुजा षड्भुजाष्ट्रभुजा तथा। त्वमेव विश्वरक्षार्थं नानाशस्त्रास्त्रधारिएगो ।।५१५४।। तत् तद्रूपविभेदेन नानानामविधारिएो। कलिदोषनिरासार्थं ध्यायेत् तव पदांबुजम् ॥५१५५॥ एष एव महेशानि तत्रोपायोऽस्ति नापरः । प्रायश्चित्तं तु पापानां देवि ते नामसंस्मृतिः ॥५१५६॥ न संत्यघानि तावंति यावती शक्तिरस्ति हि। िना फिनविद्या अविषया है ब्लास्ट्राह्म स्थातिः कृतोऽद्रिजे ११५१५७॥

श्रवशेनापि यन्नाम लीलयोच्चारितं यदि । ं कि कि ददाति तद् ज्ञातुं समर्था नास्मदादयः ।। ११४८।। तस्मात् कलिभयाद् देवि पुण्यक्षेत्रोऽथवा क्वचित्। निरंतरं पराम्बाया नामसंस्मरणं चरेत् ।।५१५६॥ छित्वा भित्वा च भूतानि हत्वा सर्विभिदं जगत्। यो त्वां नमति सद्भक्तचा स पापै नं विलिप्यते ॥५१६०॥ रहस्यं सर्वशास्त्राराां गुह्यमेतदुदीरितम्। कलौ नामैव नामैव नामेव मम जीवनम् ।। ५१६१। श्रतः परं हि नास्त्येव नास्त्येव भवभेषजम् । तस्मान्नाम्नि रति कुर्यात् सदा तद्गतमानसः ॥५१६२॥ सा त्वं चितिरिति प्रोक्ता जीवनाज्जीवितैषिग्गाम् । प्रकृतित्वेन सर्गस्य स्वयं प्रकृतितां गता ॥५१६३॥ हश्याभासानुभूतानां कारगात् त्वं क्रियोच्यते। वाडवाग्निशिखाकारात् शोष्या शुक्किति कथ्यते ।। ५१६४।। चंडित्वाच्चंडिका प्रोक्ता सोत्पलोत्पलवर्णतः । जया जयैकनिष्ठत्वात् सिद्धा सिद्धिसमाश्रयात् ।।४१६४।। जयंती च जया प्रोक्ता विजया विजयाश्रयात्। श्रोंकारसारशक्तित्वादुमेति परिकीर्त्यसे ॥५१६६॥ गायत्री गायनात्मत्वात् सावित्री प्रसवस्थितेः। सरएगत् सर्वेद्दष्टीनां कथिता त्वं सरस्वती ।। ५१६७।। गौरी गौरांगदेहत्वाद् भवदेहानुषंगिर्गो। सुप्तानामथ बुद्धानाममात्रोच्चारर्गाद् हृदि ।।५१६८।। नित्यं त्रैलोक्यभूतानामुमेतीन्दुकलोच्यते । प्रोक्तापराजिता वीर्या दुर्गा दुर्ग्रहरूपतः ॥५१६६॥ मंगलासि च सर्वेषां तेन त्वं सर्वमंगला । वरदासि च मत्यनां वरदा तेता किरियंसे १६६० १७ एक eGangotri

भक्तानां द्यं करोषि त्वं दांकरी तेन गीयसे । अञ्चोषान् जयसे दुर्गान् दुर्गा तेन निगद्यसे ।।५१७१।। प्राराप्रयारापाथेयं संसारव्याधिभेषजम् । दुर्गार्गावपरित्रार्गं दुर्गानामाक्षरद्वयम् ॥५१७०॥ संसारार्गवमग्नानां दुर्गेका परमं पदम्। दुगैंव देवता सर्वा दुगैंव कर्म वैदिकम् ॥५१७३॥ दुर्गैव परमं तत्वं दुर्गैव परमं बलम् । दुर्गैव परमं ज्ञानं दुर्गैव परमं तपः ।।प्र१७४।। दुर्गैव विश्वमिखलं दुर्गैव परमागितः । दुर्गैव परमं देवं दुर्गैव परमौषधम् ।।५१७५।। दुर्गेव सुखमत्यन्तं दुर्गेका निवृतिः परा। दुर्गैका परमातुष्टि दुंगैंका परमं यशः ।।५१७६॥ दुर्गैका प्राश्मिसर्वस्वं दुर्गीमन्नमिदं जगत्। न तया रहितं किचिद् भूतं स्थावरजंगमम् ।।५१७७।। दुर्गैका परमा देवी तदेव परमं पदस्। नामरत्निमदं मद्रे तव सर्वेषु नामसु ॥५१७८॥ एतत् स्मरणसंतुष्टः किचिन्नैवाभिवांर्छात । नासाध्यं विद्यते किचिदिहलोके परत्र वा। नामनिष्ठस्य देवेशि तव मक्तस्य सर्वदा ।। १९७६।। इति ।।

अन्यत्रापि-

दुर्गा जगदिदं सर्वे दुर्गा सर्वेस्य कारणम् । ग्रहं च दुर्गेत्येवं यत् तद् दुर्गास्मरणं विदुः ॥५१८०॥

श्रीदुर्गाशन्दिनरिक्तः यथा मुण्डमालातन्त्रे —

दुर्गों देत्ये महाविष्टने भवबंधे कुकर्मणि । इन्होंके दुःखे च नरके यमदंडे च जन्मनि ॥५१८१॥ CC-0. Arutsakta R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri महामये च रोगे चाप्याशब्दो हंतृवाचकः ।
एतान् हन्त्येव या देवी सा दुर्गा परिकीर्तिता ।।४१८२।।
देत्यनाशार्थंवचनो दकारः परिकीर्तितः ।
उकारो विघ्ननाशस्य वाचको वेदसंमतः ।।५१८३।।
रेफो रोगघ्नवचनो गद्दच पापघ्नवाचकः ।
भयशत्रुघ्नवचनद्दचाकारः परिकीर्तितः ।।४१८४।।
स्मृत्युक्तिश्रवणाद्यस्या एते नद्द्यन्ति निश्चितम् ।
ततो दुर्गा हरेः शक्ति हरिणा परिकीर्तिता ।।४१८५।।
दुर्गेति दैत्यवचनोऽप्याकारो नाशवाचकः ।
दुर्गं नाशयित या नित्यं सा दुर्गा प्रकीर्तिता ।।४१८६॥
भूतानि दुर्गा भुवनानि दुर्गा नराः स्त्रियश्चापि सुरासुरादिकम् ।
यद् यद्धि दृश्यं खलु सैव दुर्गा दुर्गास्वरूपादपरं न किचित् ।।४१८७॥।

दुर्गानाम जपो यस्य किं तस्य कथयामि ते।
प्रहं पंचाननः कांते तज्जपादेव सुन्नते ॥५१८८॥
धनी पुत्री तथा ज्ञानी चिरंजीवी मवेद भुनि।
प्रत्यहं यो जपेद मक्तचा शतमष्टोत्तरं शुचिः ॥५१८६॥
प्रत्यहं यो जपेद मक्तचा शतमष्टोत्तरं शुचिः ॥५१८६॥
प्रत्यहं परमेशानि तस्य पुण्यफलं शृणु ॥५१६०॥
धनार्थी घनमाप्नोति ज्ञानार्थी ज्ञानमेव च।
रोगार्ती मुच्यते रोगाद बद्धो मुच्येत बंधनात् ॥५१६१॥
भीतो मयात् प्रमुच्येत पापान् मुच्येत पातकी।
पुत्रार्थी लमते पुत्रं देवि सत्यं न संशयः ॥५१६२॥
प्रयुतं यो जपेद मक्तचा प्रत्यहं परमेश्वरि।
निग्रहानुग्रहे शक्तः स मवेत् कल्पपादपः ॥५१६३॥

СС-0. Arutsakthi R. Nagarajan Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

तस्य क्रोधे वसेन् मृत्युः प्रसादे परिपूर्णता। एवं सत्यं विजानीहि समर्थः सर्वकर्मसु ।।५१६४।। मासि मासि च यो लक्षं जपं कुर्याद् वरानने। न तस्य ग्रहपोडा स्यात् कदाचिदपि शांकरि ।।५१९५।। न चेरवर्यं क्षयं याति न च सर्पभयं भवेत । नाग्निचोरभयं क्वापि न चारण्ये जले भयम्।।५१६६।। पर्वतारोहणोनापि सिहव्याघ्रभयं तथा। भूतप्रेतिपशाचानां भयं नापि भवेत क्वचित ।।५१६७।। न च वैरिभयं कांते नापि दृष्टमयं भवेत्। परलोके भवेत् स्वर्गी सत्यं वै वीरवंदिते ।। ११६८।। चंद्रसूर्यसमो भूत्वा वसेत् कल्पायुतं दिवि । वाजपेयसहस्रस्य यत् फलं स्याद् वरानने ।।५१६६।। तत् फलं समवाप्नोति दुर्गानामजपात् प्रिये। न दुर्गा नाम सहशं नामास्ति जगतीतले ।। ५२००।। तस्मात् सर्वप्रयत्नेन स्मर्तव्यं साधकोत्तमैः। यस्य स्मर्गमात्रेग पलायन्ते महापदः ।।५२०१।।इति।

ग्रन्यच्च-

दुगा दुर्गेति वागी प्रसरित सहसा यस्य वक्त्रात् कदाचित् कृत्वांके पाति नित्यं सुतिमव कमला तं च नारायगोऽपि। कि ब्रू मस्तस्य भाग्यं प्रमथगगापितः सावधानो यदर्थे ब्रह्माशीर्वादमुज्वे निरविध कुरुते स्वस्ति वाक्यं यमोऽपि।।१२०२॥ शूलं शूली पाशमादाय पाशी चक्रं चक्री वज्रमादाय वज्री। धावत्यग्रे पृष्ठतः पाश्वयोश्च दुर्गा दुर्गावादिनो रक्षगाय ।।५२०३॥ इत्थं भगवतीनाम कीर्तनं सर्वकामदम्। वर्ततां वाचि मेऽजस्रं येन स्यां तत्कृपास्पदम्।।५२०४॥ एषेव जगतां घात्री नानाभेदविभूषिता। दिश्यान् मंगलमायुष्यं भक्तानां भक्तवत्सला ॥५२०५॥

नानाचारव्रतघरैः देवासुरनरादिभिः। याचिता पूरयत्यर्थान् दुर्लभान् सा तनोतु शस् ।। ५२०६।।

निगमेरागमे नित्यमेका चिद् या च कथ्यते। सिद्धिं कर्ममयीं दद्यात् भक्ते च्छोपात्तविग्रहा ॥५२०७॥

सत्संप्रदायत्रितयरहस्यं सारमञ्जूतम्। भूयात् श्रीमद्गुरोः प्रीत्यै संप्रदायमहेशितुः ॥५२०८॥

श्रीमद्दुर्गानंदनाथः शंकरो मक्तवत्सलः। प्रीयतां करुगामूर्ति भवभीतिहरो गुरुः ॥५२०६॥

नानागमात् संगृहोतं सदागमरहस्यकम्। भूमौ भूयात् साधकानां सदा कल्पतरूपमस् ॥५२१०॥

संप्रदायविशुद्धस्य तितीर्षोरागमांबुधेः ।

निर्मत्सरस्य सुहृदः सुखायेषोऽस्तु सत्प्लवः ॥५२११॥

हङ्घा नंदन्तु सुधियः क्षाम्यंतूल्लेखविभ्रमम्। नानावाक्येक्यलिखने प्रायो मुह्यति लेखकः ।।५२१२।।

उद्घाटितं मूढवुद्धचा ह्यतुद्धाट्यमपीह यत्। तत् क्षन्तव्यमशेषेशि रोषोऽज्ञे नोचितः सुते ॥४२१३॥

वाललौल्यमशेषं हि मातापित्रोः क्रुपास्पदम् । मवत्यपारकरुएो करुएा मिय भीयताम् ॥५२१४॥

द्विवेदिसंभवेनाथ कोशलप्रांतवासिना। रचितः सरयूदत्तेनायमागमसंग्रहः ॥४२१४॥

स्वरानलांकचंद्रेऽब्दे चतुथ्यां फाल्गुनेऽसिते। संग्रहः क्षेमदः पूर्णी वर्वर्तु कुशलं क्षिती blgrand Elangotri

रमंतु साधका देवीभक्तिनिर्भरितांतराः ग्रंबाकटाक्षसंपातो भूयात् तेष्वनिशं शुभः ॥५२१७॥

इति श्रीमदागमरहस्ये सत्संग्रहे द्विवेदिवंशोद्भव साकेतशंतपुरस्थायि सरयूप्रसादशर्मविरचिते श्रीपराम्बानाममाहात्म्यकथनं नाम चतुर्विशः पटलः ॥२४॥ ग्रादितो द्विपंचाशत्तमः ।

> समाप्तश्चायमुत्तरार्घः विक्रम संवत् १९३७ का लिखितं नानुराम ब्राह्मण दाघीचकुल उत्पन्नः । शं बोमवीतु ।

